# पलटू साहेब की बानी

अभिलाष दास

कबीर आश्रम, कबीर नगर, इलाहाबाद

# भूमिका

संत श्री पलटू साहेब का जन्मस्थान अवध क्षेत्र में नगजलालपुर कहा जाता है जो फैजाबाद जिला में पड़ता है। गाजीपुर जिला के भुड़कुड़ा गांव में बुल्ला साहेब नाम के संत रहते थे। उनके मुख्य शिष्य गुलाल साहेब थे और गुलाल साहेब के मुख्य शिष्य भीखा साहेब थे। भीखा साहेब के मुख्य शिष्य गोविन्द साहेब थे और गोविन्द साहेब के शिष्य पलटू साहेब हुए। गोविन्द साहेब का आश्रम फैजाबाद जिले के अहरौला गांव में था। जिसे पीछे 'गोविन्द साहेब' ही कहा जाने लगा। इसका विवरण 'कबीर दर्शन' अध्याय छह में सातवां संदर्भ बावरी पंथ देखें। पलटू साहेब वैश्य परिवार में जन्मे थे। इनका जीवनकाल विक्रम संवत् अठारह-उन्नीस सौ के बीच लगता है। इनकी बानी में आता है—

*संवत अठारह सौ छब्बीस गुरुसब्द जन्मपत्र है।*
*अरे हां पलटू हुलास को दिया सिंहासन अटल छत्र है॥*

अर्थात संवत् अठारह सौ छब्बीस (1826) में पलटू साहेब ने अपने शिष्य हुलासदास को गुरुगद्दी दी।

उक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि श्री पलटू साहेब अठारहवें-उन्नीसवें विक्रमी संवत में विद्यमान थे।

श्री पलटू साहेब ने अपने वैराग्य के लिए लिखा है—

*शहर जलालपुर मूँड़ मुँड़ाइनि, अवध तोरिनि करधनियां।*
*पलटू दास सतगुरु बलिहारी, पाइनि भक्ति अमनियां॥*

*(इस पुस्तक में, खण्ड 3, शब्द 80)*

श्री पलटू साहेब ने घर-गृहस्थी का त्याग कर अयोध्या में हनुमानगढ़ी के उत्तर अपनी साधना और सत्संग का स्थान बनाया जो आज तक 'पलटू साहेब का अखाड़ा' नाम से प्रसिद्ध है, और वहां आज तक विरक्त संतों का क्रम चल रहा है।

श्री पलटू साहेब अखंड वैराग्यवान संत थे। उनके वैराग्य और फक्कड़ानापन की मस्ती उनकी बानी में सर्वत्र व्याप्त है। उनका मन भक्ति और आत्मलीन से सराबोर था। उनकी बानी इतनी चोखी और विदग्धात्मक है कि हाथ में लेकर पढ़ते समय छोड़ने का मन नहीं करता। अतएव शांति-इच्छुक को इसका अध्ययन अवश्य करना चाहिए।

बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद के मालिकों को कोटिशः धन्यवाद है कि वे निर्गुणी धारा के प्रमुख संतों की मूल बानी सौ वर्ष पूर्व से छापते आ रहे हैं। इस प्रेस में पलटू साहेब की मूल बानी तीन खण्डों में छपी है। वहीं से लेकर टीका करने का काम किया गया है। आश्चर्य है कि ऐसी महत्त्वपूर्ण बानी की आज तक कोई टीका-व्याख्या नहीं की गयी थी।

इस संकलन में उपर्युक्त तीनों खण्डों से चुनाव करके बानियां ली गयी हैं और अधिकतम ली गयी हैं और उन पर शब्दार्थ, भावार्थ तथा कहीं-कहीं विशेष में बानियों का अर्थ स्पष्ट करने की चेष्टा की गयी है। सारी विषय-वस्तुएं अनेक बार आयी हैं। इसलिए इस संकलन में पलटू साहेब के दिये हुए ज्ञान का पूरा अभ्यास हो जाता है।

कबीर आश्रम, कबीर नगर, इलाहाबाद —**अभिलाष दास**

15 अगस्त, 2012

सद्गुरवे नमः

# पलटू साहेब की बानी

## खंड-एक

## कुंडलिया

### 1. सद्गुरु का महत्त्व

कुंडलिया-1

**पूरा सतगुरु मिलै जो पूजै मन की आस॥
पूजै मन की आस पिया को देय मिलाई।
छूटा सब जंजाल बहुत सुख हमने पाई॥
देखा पिय का रूप फिरा अहिबात हमारा।
बहुत दिनन की राँड़ माँग भर सेंदुर धारा॥
सासु ननद को मारि अदल मैं दिहा चलाई।
उनकै चलै न जोर पिया को मैं हि सुहाई॥
पिय जो बस में भये पिया को जादू कीन्हा।
ऐसी लागी नेह पिया तब मोको चीन्हा॥
प्रसाद पिया को पाय के मिले गुरु पलटू दास।
पूरा सतगुरु मिलै जो पूजै मन की आस॥**

**शब्दार्थ**—अहिबात= सुहाग। राँड़= पतिविहीन। अदल= न्याय। जादू= प्रेम कर अपना बना लेना।

**भावार्थ**—यदि मुमुक्षु शिष्य को पूर्ण सद्गुरु मिल जाय, तो उसकी परम शांति पाने की आशा पूरी हो जाती है। मनोवृत्ति रूपी दूल्हन आत्मा रूपी पति के बिना दुख में तड़पती है। सद्गुरु उसे उपदेश देकर आत्मा-पति से मिला देता है इसलिए मनोवृत्ति की आशा पूरी हो जाती है। आत्म-पति में लीन

होकर मनोवृत्ति कहती है कि अब सब जंजाल टूट गया और मुझे आत्मशांति का आत्यंतिक सुख मिल गया। जब मैंने अपने आत्मा रूपी पति को पहचान लिया तो मेरा सुहाग लौट आया। मैं अनादिकाल से पति-विहीन रांड़ थी, इसलिए दुखी थी। अब मैंने आत्मा-पति का बोध पाकर मानो मांग भर सेंदुर लगाया। अब मैंने संशय रूपी सासु और मोह रूपी ननद को मारकर हृदय-घर में अपना आत्मज्ञान का न्याय चलाया। अब संशय और मोह रूपी सासु-ननद का बल मेरे हृदय-घर में नहीं चलता है। अब मैं आत्मा-पति की प्यारी हो गयी। मेरा आत्मा-पति जब मेरे वश में हो गये तब मैंने उन पर ऐसा प्रेम का जादू किया कि उनका भी प्रेम मुझ शांतिवृत्ति-पत्नी में लग गया और उन्होंने मुझे पहचान लिया कि शांतिवृत्ति में ही दुखों का अंत है। श्री पलटू साहेब कहते हैं कि जब सद्गुरु मिले तब उनके उपदेश-प्रसाद से मनोवृत्ति-दुल्हन आत्मा-पति से एकमेक होकर कृतार्थ हो गयी। अतएव यह सिद्ध हुआ कि जब पूर्ण सद्गुरु मिलते हैं तब मन की आशा पूरी होती है, वह है शाश्वत शांति को उपलब्ध होना।

**विशेष**—चेतन आत्मा पति है, मनोवृत्ति पत्नी है। दोनों का वियोग दुख का कारण है। जब मनुष्य की मनोवृत्ति सब संशय से छूटकर केवल आत्मा-पति में लीन होती है, तब वह परम शांति पाती है। आत्मा ही परमात्मा है। जब मनोवृत्ति आत्मलीन हुई तब यही परमात्मा से मिलन हुआ। अंततः तो मनोवृत्ति शून्य हो जाने पर चेतन आत्मा केवल रह गया। पति-पत्नी का भाव परोक्ष ईश्वर और जीव हो सकता है जो कल्पित अवधारणा होने से भावनात्मक है, तथ्यात्मक नहीं।

### कुंडलिया-2

**सतगुरु सिकलीगर मिलैं तब छुटै पुराना दाग॥**
**छुटै पुराना दाग गड़ा मन मुरचा माहीं।**
**सतगुरु पूरे बिना दाग यह छूटै नाहीं॥**
**झाँवाँ लेवै जोग तेग को मलै बनाई।**
**जौहर देय निकार सुरत को रंद चलाई॥**
**सब्द मस्कला करै ज्ञान का कुरँड लगावै।**
**जोग जुगत से मलै दाग तब मन का जावै॥**
**पलटू सैफ को साफ करि बाढ़ धरै बैराग।**
**सतगुरु सिकलीगर मिलैं तब छुटै पुराना दाग॥**

**शब्दार्थ**—सिकलीगर=सान पर लोह के औजार को चढ़ाकर तेज करने वाला। झाँवाँ= गलकर कठोर हो जाने वाली ईंट। तेग= तलवार। जौहर-रत्न, चमक। रंद=रंदा, लोह का वह औजार जिससे लकड़ी की सतह छीलकर चिकनी की जाती है। मस्कला= मांजना। कुरंड= एक तरह का पत्थर जिससे लोह का औजार घिस कर साफ किया जाता है। सैफ= सैफ़, तलवार। बाढ़= धार।

**भावार्थ**—मन को मांजकर साफ कर देने वाले सद्गुरु सिकलीगर जब मिलते हैं, तब विषय-वासना के अनादिकालीन दाग छूटते हैं। मन में अनादि अभ्यस्त विषय-वासना का मुरचा जमा है। बोध और रहनी संपन्न पूर्ण सद्गुरु के बिना यह दाग नहीं छूट सकता। योगाभ्यास का झांवा लेकर ज्ञान की तलवार को अच्छी तरह रगड़कर साफ करें। आत्मज्ञान संबलित मनोवृत्ति का रंदा चलाकर ज्ञान की तलवार की चमक उद्घाटित कर दे। निर्णय शब्दों का मस्कला देकर स्वरूपज्ञान के पत्थर से मन के मैल को रगड़कर साफ कर दे। ध्यानाभ्यास विधि से मन को निरंतर मांजे तब मन की विषयासक्ति का मल दूर होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मज्ञान की तलवार साफ करके उस पर वैराग्य की धार करे। इस प्रकार जब सद्गुरु रूपी सिकलीगर मिलते हैं तब शिष्य के मन का पुराना दाग दूर होता है।

**विशेष**—जिनको अपरोक्ष स्वरूपज्ञान है और पवित्र रहनी में जो स्थित हैं, वे पूर्ण सदगुरु हैं। वे जब मिलते हैं और संसार से उपराम शिष्य जब ऐसे सद्गुरु की शरण में पूर्ण समर्पित होकर उनके उपदेश के अनुसार अभ्यास करता है, तब धीरे-धीरे वह मन के विकारों से मुक्त होकर अपने आप में पूर्ण शांति पाता है।

## कुंडलिया-3

**सरबंगी कोउ एक है राखै सबकी लाज॥**
**राखै सबकी लाज काज वो सबके आवैं।**
**अंधा पंगुल लूल सबन को डगर बतावैं॥**
**मारि पीटि संसार सभन को राह चलावैं।**
**उनकी मारी खाइ भेष सब रोटी पावैं॥**
**बड़े बहादुर मर्द भेष का परदा राखैं।**
**सुनि कै बचन कठोर संत जन जनि कोऊ भाखैं॥**

**पलटू जो कोउ संत है सब हमरे सिरताज।**
**सरबंगी कोउ एक है राखै सबकी लाज॥**

**शब्दार्थ**—सरबंगी= पूर्ण निष्काम, उदार तथा समतालु।

**भावार्थ**—संसार में ऐसे बिरले पूर्ण समतज्ञ और निष्काम संत होते हैं जो सबकी मर्यादा रखते हैं। वे सबका कल्याण करते हैं; अंधे, पंगुले, लूले—उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ सबको सन्मार्ग का उपदेश करते हैं। वे प्रेमियों को मार-पीटकर-स्नेहमय ताड़ना देकर कल्याण का रास्ता दिखाते हैं। उनकी ताड़ना जो सह लेता है उसका कल्याण हो जाता है। सद्गुरु के दिये हुए साधुवेष के प्रभाव से ही तो सब साधुवेषधारी गृहस्थ भक्तों के द्वारा आदरपूर्वक भोजन पाते हैं। वे संत बड़े वीर और साहसी होते हैं। वे साधु-वेष की मर्यादा में चलते हैं। ऐसे संत कठोर वचन सुनकर भी कटु नहीं बोलते, अपितु निर्मानतापूर्वक मीठे वचन ही बोलते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि सभी संत हमारे सिर के ऊपर हैं, परन्तु उनमें जो पूर्ण निष्काम और समतालु हैं वे कोई इक्के-दुक्के होते हैं जो सबकी मर्यादा रखते हैं।

## कुंडलिया-4

**पर स्वारथ के कारने संत लिया औतार॥**
**संत लिया औतार जगत को राह चलावैं।**
**भक्ति करैं उपदेस ज्ञान दे नाम सुनावैं॥**
**प्रीति बढ़ावैं जक्त में धरनी पर डोलैं।**
**कितनौ कहै कठोर बचन वे अमृत बोलैं॥**
**उनको क्या है चाह सहत हैं दुःख घनेरा।**
**जिव तारन के हेतु मुलुक फिरते बहुतेरा॥**
**पलटू सतगुरु पाय के दास भया निरवार।**
**पर स्वारथ के कारने संत लिया औतार॥**

**शब्दार्थ**—निरवार= निर्णय, बंधनमुक्त।

**भावार्थ**—संतजन लोककल्याण करने के लिए भ्रमण करते हैं। वे संसार के लोगों को सन्मार्ग पर चलने के लिए रास्ता बताते हैं। वे भक्ति-भाव से चलने का उपदेश देते हैं, आत्मज्ञान देकर मंत्र-दीक्षा भी देते हैं जिसमें सत्य का नाम सुनाते हैं। वे सभी मनुष्यों में पारस्परिक प्रेम बढ़ाने की राय देते हैं और इन सबके लिए पृथ्वी पर भ्रमण करते हैं। उनको कोई चाहे कितना ही

कटु वचन कहे, परंतु वे निर्मानतापूर्वक मीठे वचन ही बोलते हैं जो सुनने में अमृत के समान लगते हैं। आत्मसंतुष्ट संत पुरुष को संसार से क्या चाहना है? वे लोक-कल्याण के लिए ही नाना दुख सहकर जगत के लोगों को बोध देते हैं। वे जीवों का उद्धार करने के लिए ही अनेक देशों में घूमते रहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु की शरण पाकर इस दास का बंधन कट गया। संत जगज्जीवों के कल्याण के लिए ही संसार में घूमते हैं।

## कुंडलिया-5

**धुन आनै जो गगन की सो मेरा गुरुदेव॥**
**सो मेरा गुरुदेव सेवा मैं करिहौं वाकी।**
**सब्द में है गलतान अवस्था ऐसी जाकी॥**
**निस दिन दसा अरूढ़ लगै ना भूख पियासा।**
**ज्ञान भूमि के बीच चलत है उलटी स्वासा॥**
**तुरिया सेती अतीत सोधि फिर सहज समाधी।**
**भजन तेल की धार साधना निर्मल साधी॥**
**पलटू तन मन वारिये मिलै जो ऐसा कोउ।**
**धुन आनै जो गगन की सो मेरा गुरुदेव॥**

**शब्दार्थ**—धुन= ध्वनि, नाद, अनाहतनाद। गगन= गगनगुफा, सिर के भीतर। गलतान= लवलीन, रत।

**भावार्थ**—गगनगुफा में उठते हुए अनाहतनाद की जो साधना करता है, वह मेरा गुरुदेव है। मैं उसकी सेवा करूंगा। अनाहतनाद सुनने में जो लीन है, जिसकी उसमें तदगत अवस्था है, वह उसी में रात-दिन दृढ़ रहता है। उसे भूख-प्यास मिटाने की चिंता नहीं रहती। जो आत्मज्ञान की भूमिका में ठहरकर श्वास का अनुलोम-विलोम-रेचक-पूरक करके प्राणायाम करता है और ब्रह्मज्ञान की तुर्यगा अवस्था को भी शोधकर उसके ऊपर स्वरूपस्थिति की सहज समाधि में स्थित हो गया और इस साधना में निरंतरता ऐसी हुई कि तेल-धारावत अटूट निर्मल दशा की स्थिति हो गयी। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि ऐसा कोई समाधिलीन संत मिल जाय, तो उसके चरणों में अपना तन-मन निछावर कर दीजिए। जो गगनगुफा की ध्वनि में लीन है वह मेरा गुरुदेव है।

**विशेष**—कुछ लोगों की यह कल्पना है कि पहले केवल एक शब्द ही था। उसी से फूटकर संसार की सृष्टि हुई। वह सिर के भीतर निरन्तर गूंजता है। उसे ही अनाहतनाद कहते हैं। उसे निरंतर सुनना जीवन की सफलता है। परन्तु ध्यान देने योग्य है कि शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गंध पांचों विषयों से भरा संसार नित्य प्रवहमान है। शब्द एक जड़ विषय है। मन को एकाग्र करने के लिए अनाहतनाद सुनना एक आरंभिक साधना है। इसको छोड़कर सहज समाधि में जाना चाहिए जो स्मरणों के शांत होने पर स्वरूपस्थिति मात्र है। इसको पलटू साहेब ने ऊपर तुरिया से भी अतीत एवं ऊपर कहा है।

## कुंडलिया–6

**नाव मिली केवट नहीं कैसे उतरै पार॥**
**कैसे उतरै पार पथिक बिस्वास न आवै।**
**लगै नहीं बैराग यार कैसे कै पावै॥**
**मन में धरै न ज्ञान नहीं सतसंगति रहनी।**
**बात करै नहिं कान प्रीति बिन जैसे कहनी॥**
**छूटि डगमगी नाहिं संत को बचन न मानै।**
**मूरख तजै बिबेक चतुरई अपनी आनै॥**
**पलटू सतगुरु सब्द का तनिक न करै बिचार।**
**नाव मिली केवट नहीं कैसे उतरै पार॥**

**शब्दार्थ**—नाव= मनुष्य शरीर। केवट= सद्गुरु।

**भावार्थ**—मानव शरीर रूपी नाव भवसागर से पार जाने के लिए तो मिली है, परन्तु सद्गुरु रूपी केवट नहीं है, तो संसार-सागर से कैसे पार होओगे? संसार के पथिक मनुष्य को यह विश्वास नहीं होता कि सद्गुरु के उपदेश से ही संसार-सागर से तर सकते हैं। जब तक विषयों से वैराग्य नहीं होगा, तब तक आत्मबोध रूपी मित्र नहीं मिलेगा—आत्मतृप्ति नहीं मिलेगी। न मन में आत्मज्ञान धारण करता है, न सत्संग करता है और न दया, क्षमा, शील, संतोष आदि सद्गुणों का आचरण करता है। संतों के उपदेशों को सुनता नहीं है। श्रोता के मन में श्रद्धा न हो तो जैसे उपदेशक का ज्ञान-कथन व्यर्थ जाता है, वैसे उसकी दशा है। न संतों के वचन पर ध्यान देता है और न मन की दुविधा जाती है। मूर्ख मनुष्य विवेक छोड़कर अपनी बुद्धिमत्ता का बखान करता है। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे लोग सद्गुरु के शब्दों पर

थोड़ा भी विचार नहीं करते। मानव-शरीर नाव तो मिली है, परन्तु सद्गुरु केवट न होने से संसार-सागर से कैसे पार होगा?

## कुंडलिया-7

**धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय॥**
**चादर लीजै धोय मैल है बहुत समानी।**
**चल सतगुरु के घाट भरा जहँ निर्मल पानी॥**
**चादर भई पुरानि दिनों दिन बार न कीजै।**
**सतसंगत में सौंद ज्ञान का साबुन दीजै॥**
**छूटै कलमल दाग नाम का कलप लगावै।**
**चलिये चादर ओढ़ि बहुरि नहिं भवजल आवै॥**
**पलटू ऐसा कीजिये मन नहिं मैला होय।**
**धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय॥**

**शब्दार्थ**—धुबिया= धोबी, साधक, मनुष्य। बार= देर, विलंब। सौंद= भिगाना, सानना। कलप= कलफ़, मांड़ी।

**भावार्थ**—जो अपनी मन-चादर के वासना-मल को धो सकता है, वह मनुष्य पहले के समान पुनः मर जायगा; इसलिए हे साधक ! अपने मन की चादर को धो ले। मल-विषयासक्ति अनादि अभ्यस्त होने से मन-चादर में परत-पर-परत जमा है। हे साधक ! इसे धोने के लिए सद्गुरु के सत्संग-घाट पर चल, जहां ज्ञान का निर्मल जल भरा है। यह शरीर-मन की चादर पुरानी हो गयी है और दिन प्रतिदिन पुरानी हो रही है, इसलिए इसको धोने में देरी न कर। ज्ञान का साबुन लेकर सत्संग में इसे भिगाकर साबुन लगाओ और धोओ। जब इसके मोह का दाग छूट जाय तब इस पर सत जिसका नाम है, उस आत्मज्ञान की मांड़ी चढ़ाकर इसको सुंदर बना लो, और इसको ओढ़कर पूरे जीवन की दिव्य रहनी में चलो, फिर भवसागर में नहीं आना होगा। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसी दिव्य रहनी में जीवनपर्यन्त रहो जिससे मन मैला न हो। ध्यान रखो, यह मनुष्य-धोबी पहले की तरह पुनः मर जायेगा, इसलिए जीवन की चादर शीघ्र धो लो।

**विशेष**—सद्गुरु केवल उपदेश देता है, अपने मन की चादर मनुष्य को स्वयं धोना पड़ता है। इसलिए ग्रंथकार कहते हैं कि हे साधक मनुष्य ! तू जैसे अनादिकाल से शरीर छोड़ता आ रहा है, वैसे इस बार भी आज-कल में मर जायगा। अतएव शीघ्र सत्संग में अपनी मन-चादर को धो ले।

कुंडलिया-8

**साहिब वही फकीर है जो कोइ पहुँचा होय॥**
**जो कोई पहुँचा होय नर का छत्र बिराजै।**
**सबर तखत पर बैठि तूर अठपहरा बाजै॥**
**तम्बू है असमान जमीं का फरस बिछाया।**
**छिमा किया छिड़काव खुसी का मुस्क लगाया॥**
**नाम खजाना भरा जिकिर का नेजा चलता।**
**साहिब चौकीदार देखि इबलीसहुँ डरता॥**
**पलटू दुनिया दीन में उनसे बड़ा न कोय।**
**साहिब वही फकीर है जो कोइ पहुँचा होय॥**

**शब्दार्थ**—नर का छत्र=विवेक का छत्र। सबर=सब्र, संतोष। तूर= तुरही नाम का बाजा जो फूंककर बजाया जाता है। फरस=फ़र्श, बिछावन, धरती। मुस्क=मुश्क, कस्तूरी। जिकर=जिक्र, चर्चा, सत्संग। नेजा=भाला, बरछा। इबलीसहुं=इबलीस भी, शैतान भी। इबलीस इस्लाम में वह शैतान है जो मनुष्यों को ईश्वर से विमुख करता है।

**भावार्थ**—वही फकीर सर्वश्रेष्ठ है जो अपने आत्मधाम की शांति में पहुंच गया है। जो पहुंच गया है उसके ऊपर विवेक का छत्र विराजता है। वह सदैव संतोष के तख्त पर विराजमान रहता है और उसके सामने चौबीसों घंटे स्थिर सुख की तुरही बजती है। उसने आसमान को तंबू बनाया, जमीन को फर्श, क्षमा का छिड़काव किया और प्रसन्नता की सुगंधित कस्तूरी लगाया। सत्य जिसका नाम है उस आत्मज्ञान का वहां खजाना भरा है और वहां निरंतर सत्संग का भाला चलता है जिसमें मन के सारे विकार-शत्रु मारे जाते हैं। सद्गुरु स्वयं रखवाला चौकीदार है जिसे देखकर इबलीस शैतान भी डरता है। पलटू साहेब कहते हैं कि संसार और धर्म में उनसे बड़ा कोई नहीं है जो फकीर आत्मशांति-धाम में निरंतर निवास करता है।

कुंडलिया-9

**रैयत कौन कहावै घर घर हाकिम होय॥**
**घर घर हाकिम होय अदल फिर कौन चलावै।**
**सब नायक होइ जाय बैल फिर कौन लदावै॥**
**गदहा चलै हर बैल कौन फिर बेसहै तुरकी।**
**मिलै कूप में मुक्ति गंग को देवै बुड़की॥**

**काँच छुए होइ कनक पारस की रहै न इच्छा।**
**घर घर सम्पत्ति होइ कौन फिर माँगै भिच्छा॥**
**पलटू तैसे संत हैं भेष बनावै कोय।**
**रैयत कौन कहावै घर घर हाकिम होय॥**

**शब्दार्थ**—हाकिम= हुकूमत करने वाला, शासक। रैयत= रियाया, प्रजा। अदल= न्याय, इंसाफ। नायक= अगुआ, लोगों को लेकर चलने वाला, पथ-प्रदर्शक। तुरकी= तेज घोड़ा।

**भावार्थ**—यदि घर-घर शासक हों तो प्रजा कौन कहलायेगी? न्याय कौन करेगा? यदि सब अगुआ एवं पथ-प्रदर्शक हो जायं तो बैल पर सामान लाद कर व्यापार कौन करे? यदि गधे हल खींचने लगें तो बैल कौन खरीदेगा और तेज तुर्की घोड़ा कौन खरीदेगा? यदि कुएं के जल में स्नान करने से मुक्ति मिले तो गंगा नदी में नहाने कौन जायेगा? यदि कांच के स्पर्श से लोहा सोना बन जाय तो पारस के स्पर्श से लोहा को सोना बनाने की इच्छा ही नहीं रह जायगी। यदि हर घर में संपत्ति भरी हो तो भिक्षा कौन मांगेगा? पलटू साहेब कहते हैं कि इसी प्रकार संत का वेष बनाने वाले तो बहुत हैं, किन्तु सच्चे संत बिरले होते हैं। अतएव यदि घर-घर शासक हों तो प्रजा कौन कहलायेगी?

**विशेष**—पूज्य संत पलटू साहेब का यह विचार नहीं है कि घर-घर संपत्ति न हो तथा कुछ लोग भिक्षा मांगते रहें, और वे न गंगा में नहाने से मुक्ति मानते हैं। पारस पत्थर भी काल्पनिक ही है। उसकी कहावत केवल बात समझाने के लिए चलती है। ग्रंथकार निर्मल संत हैं। वे सच्चे संत की विरलता पर बल देने के लिए कई उदाहरण देते हैं, क्योंकि वे कवि-हृदय तथा प्रत्युत्पन्न प्रगल्भ बुद्धि वाले भी हैं।

## कुंडलिया-10

**जग खीझै तो का भया रीझै सतगुरु संत॥**
**रीझै सतगुरु संत आस कुछ जग की नाहीं।**
**एक द्वार को छोड़ और ना माँगन जाही॥**
**जिउ मेरो बरु जाय जन्म बरु जाय नसाई।**
**करों न दूसर आस संत की करों दुहाई॥**
**तीन लोक रिसियाय सकल सुर नर और नारी।**
**मोर न बांकै बार पठंगा पाया भारी॥**

**पलटू सब रोवै पड़ा मोर भया सलतंत।**
**जग खीझै तो का भया रीझै सतगुरु संत॥**

**शब्दार्थ**—खीझै= खीजे, क्रुद्ध हो। रीझै= प्रसन्न हो। दोहाई= दुहाई, पुकार, गोहार। रिसियाय= क्रोधित हो, नाखुश हो। बांकै बार= बाल बांका होना, बाल कटना। पठंगा= बल, शक्ति। सलतंत= सल्तनत, राज्य, बादशाहत।

**भावार्थ**—संसार के लोग मेरे ऊपर क्रोध करते हैं तो मेरा क्या बिगड़ेगा? मेरी लालसा है कि सद्गुरु-संत मेरे ऊपर कृपादृष्टि रखकर प्रसन्न रहें। मुझे सांसारिक भोगों की कोई आशा-कामना नहीं है। एक संत-गुरु का द्वार छोड़कर अलग कहीं मैं कुछ मांगने नहीं जाता हूं। मेरा जीना और जन्म भले नष्ट हो जाय, मैं दूसरे की आशा नहीं करता हूं। मैं संतों के सामने ही गोहार करके उनसे अपनी रक्षा चाहता हूं। तीनों लोक के लोग—सारे संसार के मनुष्य हम पर क्रोध करें; सारे सुर, नर, मुनि, नर और नारी हमसे नाखुश हो जायं, इससे मेरा बाल भी बांका नहीं होगा—मेरा कुछ भी नहीं बिगड़ेगा। क्योंकि मैंने गुरु-संतों द्वारा आत्मज्ञान का भारी बल पा लिया है। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरे ऊपर क्रुद्ध होकर सभी लोग रोते पड़े रहें, मैं इसकी परवाह नहीं करता। मेरा तो स्वरूपस्थिति का साम्राज्य हो गया हूं, मैं परमानन्द में हूं। अतएव जगत के लोग मुझसे खीझते हैं तो खीझते रहें। सद्गुरु-संत हम पर प्रसन्न हैं तो हमारा बेड़ा पार है।

## 2. नाम का महत्त्व

कुंडलिया-11

**नाम नाम सब कहत है नाम न पाया कोय॥**
**नाम न पाया कोय नाम की गति है न्यारी।**
**वही सकस को मिलै जिन्होंने आसा मारी॥**
**हौं को करै खमोस होस ना तन को राखै।**
**गगन गुफा के बीच पियाला प्रेम का चाखै॥**
**बिसरै भूख पियास जाय मन रँग में लागै।**
**पाँच पचीस रहै वार संग में सोऊ भागै॥**
**आपुइ रहै अकेल बोलै बहु मीठी बानी।**
**सुनतै अब वह बनै कहा मैं कहौं बखानी॥**

**पलटू गुरु परताप तें रहै जगत में सोय।**
**नाम नाम सब कहत है नाम न पाया कोय॥**

**शब्दार्थ**—सकस= शख्स, मनुष्य। हौं= अहंकार। खमोस= खामोश, चुप, मौन, शांत। वार= आघात, प्रहार।

**भावार्थ**—सभी धार्मिक लोग नाम-जप का महत्त्व बताते हैं और कहते हैं कि नाम के मिल जाने पर बेड़ा पार हो जाता है, परन्तु इन लोगों ने उस आत्मस्थिति को नहीं पाया, जिसका नाम सत्य है। नाम की दशा तो विलक्षण है। सत्य जिसका नाम है उसे उस मनुष्य ने पाया जिसने सारी सांसारिक आशाओं और इच्छाओं को समाप्त कर दिया। वह अपने मन के अहंकार को शांत कर देता है और शरीर के अभिमान को मिटा देता है। वह आत्मशांति की प्रपंचशून्य गगन-गुफा में बैठा निरंतर आत्माराम का प्रेम-प्याला पीता है। वह भूख-प्यास की परवाह नहीं करता, अपितु यथाप्राप्त में संतुष्ट रहकर और भौतिक धरातल से उठकर अपने मन को स्वरूपस्थिति के भाव में डुबा देता है। वह पांच ज्ञानेन्द्रियां और पचीस प्रकृतियों के विषय-वासनात्मक संस्कारों पर प्रहार करता है। अतएव वे एक साथ भाग जाते हैं। वह बोधवान अपने स्वरूपबोध में रहने से सदैव अकेला एवं असंग रहता है। वह जगत व्यवहार में आने पर विनम्रतापूर्वक अत्यंत मीठी वाणी बोलता है। उसकी बात सुनते ही बनती है। मैं उसकी बड़ाई करके कहां तक कहूं? पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु की कृपा से वही संसार में मुक्त होकर रहता है। केवल नाम-नाम चिल्लाने से कुछ नहीं होता है।

**विशेष**—एक नाम, तीन नाम, पांच नाम, सात नाम आदि सब शब्दों के जोड़ हैं जो गुरु द्वारा दीक्षा के समय शिष्यों को सुनाये जाते हैं। वे प्रतीकात्मक हैं। असली बात है स्वरूपज्ञान, स्वरूपस्थिति और स्वरूपस्थिति की दिव्य रहनी, जिनका वर्णन ग्रंथकार ने उक्त कुंडलिया में कर दिया है और पूरे ग्रंथ में है।

## कुंडलिया-12

**लहना है सतनाम का जो चाहै सो लेय॥**
**जो चाहै सो लेय जायगी लूट ओराई।**
**तुम का लुटिहौ यार गाँव जब दहिहै लाई॥**
**ताकै कहाँ गँवार मोट भर बाँध सिताबी।**
**लूट में देरी करै ताहि की होय खराबी॥**

**बहुरि न ऐसा दावँ नहीं फिर मानुष होना।**
**क्या ताकै तू ठाढ़ हाथ से जाता सोना॥**
**पलटू मैं उतृन भया मोर दोस जिन देय।**
**लहना है सतनाम का जो चाहै सो लेय॥**

**शब्दार्थ**—लहना= पाना, लेना। लूट= प्राप्ति। ओराई= समाप्त। दहिहै= जलावेगा। लाई= लाइ, अग्नि। मोट भर= बड़ा गट्ठर। सिताबी= शिताबी, शीघ्रता। उतृन= उऋण, मुक्त, उत्तरदायित्वरहित।

**भावार्थ**—सत्य जिसका नाम है उस आत्मा का ज्ञान पाना ही जीवन का मुख्य प्राप्तव्य है। जिसकी इच्छा हो, वह इसे प्राप्त करे। आत्मबोध की प्राप्ति का समय देखते-देखते समाप्त हो जायेगा। हे मित्र! तुम आत्मबोध क्या प्राप्त करोगे जब तुम्हारे शरीर रूपी गांव को मौत आकर काल की आग से जलायेगी। हे अनाड़ी! तू दुविधा में क्या पड़ा है? जल्दी से आत्मज्ञान का भारी मोट बांध ले। जो आत्मज्ञान की प्राप्ति में देरी करता है उसकी बरबादी होना है। ऐसा सुनहला अवसर फिर से मिलना कठिन है। तत्काल मनुष्य शरीर पुनः मिलना भी सहज नहीं है। हे असावधान! तू खड़ा होकर क्या देखता है? तेरे हाथ से सोना जैसा समय भागा जा रहा है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने उचित सलाह देकर अपना कर्तव्य निभा दिया। अब मैं उत्तरदायित्व रहित हो गया हूं। अब मुझे दोष मत देना। जो चाहे सत्य आत्मज्ञान लेकर अपना कल्याण कर ले।

## कुंडलिया-13

**मीठ बहुत सतनाम है पियत निकारै जान॥**
**पियत निकारै जान मरै की करै तयारी।**
**सो वह प्याला पियै सीस को धरै उतारी॥**
**आँख मूँदि कै पियै जियन की आसा त्यागै।**
**फिरि वह होवै अमर मुए पर उठि कै जागै॥**
**हरि से वे हैं बड़े पियो जिन हरि रस जाई।**
**ब्रह्मा बिस्नु महेश पियत कै रहे डेराई॥**
**पलटू मेरे बचन को ले जिज्ञासू मान।**
**मीठ बहुत सतनाम है पियत निकारै जान॥**

**शब्दार्थ**—सतनाम=जो सतनाम से जाना जाय वह आत्मा है। जान= अहंकार।

**भावार्थ**—जो सतनाम से जाना जाता है वह आत्मा है। जब जिसको आत्मबोध हो जाता है तब आत्मबोध साधक का अहंकार मार देता है। आत्मबोध का रस पीते ही साधक मरने की तैयारी करता है—सारा अहंकार छोड़कर प्रपंच-शून्य केवल दशा में रहना चाहता है। आत्मबोध का प्याला वह पीता है जो अपने सिर को उतारकर रख देता है—देहाभिमान सर्वथा दूर कर देता है। मुमुक्षु को चाहिए कि वह अपने सत्स्वरूप आत्मा के बोध का प्याला आंख मूंदकर पिये, जीने-भोगने-जानने की आशा छोड़ दे। फिर तो वह अपने अभिन्न अमृत आत्मस्वरूप में स्थित होकर शाश्वत एवं अमर हो जाता है। वह अहंकारशून्य हो जाने पर अपने आप में जाग जाता है और मोह-नींद से उठ खड़ा होता है। हरि-रस पीने वाला हरि से श्रेष्ठ है—जो आत्मलीन हो गया, उसका परोक्ष परमात्मा खो जाता है। वह स्वयं परमात्मा है। ब्रह्मा, विष्णु और महादेव आत्मरस पीने से डरते हैं, क्योंकि वे जगत प्रपंच में उलझे हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जिज्ञासु मेरी बात को मान जाय। आत्मबोध का परिचय कराने वाले वचन ग्रहण करते ही साधक अहंकार-शून्य होकर आत्मतृप्त हो जाता है।

**विशेष**—ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर रज, सत तथा तम गुण के प्रतिनिधित्व करने वाले काल्पनिक पौराणिक देवता हैं।

सत क्या है? प्रश्न करने वाला आत्मा ही सत है। जिस नाम, संज्ञा, शब्द एवं वाणी से उसका बोध हो वही सतनाम है। आत्मबोधपरक वाणी ही सतनाम है। सतनाम-सतनाम जपना तो एक साधारण धार्मिक क्रिया है। अपने आपको पहचानकर अपने आप में ही लीन और मस्त रहना सतनाम की सार्थकता है। इसी भाव की मस्तानगी संतप्रवर पलटू साहेब की वाणी में सर्वथा गूंजती है।

## कुंडलिया-14

**संत सनेही नाम है नाम सनेही संत॥**
**नाम सनेही संत नाम को वही मिलावैं।**
**वे हैं वाकिफकार मिलन की राह बतावैं॥**
**जप तप तीरथ बरत करै बहुतेरा कोई।**
**बिना वसीला संत नाम से भेंट न होई॥**

**कोटिन करै उपाय भटक सगरौ से आवै।**
**संत दुवारे जाय नाम को घर तब पावै॥**
**पलटू यह है प्रान पर आदि सेती औ अंत।**
**संत सनेही नाम है नाम सनेही संत॥**

**शब्दार्थ**—वाकिफकार= जानकार।वसीला= सहायता,जरिया,द्वार, संबंध। सगरौ= सर्वत्र। प्रान पर= प्राण से ऊपर।

**भावार्थ**—सतनाम मानो संतों का प्रेमी है, क्योंकि संत सतनाम के प्रेमी हैं। संत ही सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मा का बोध कराते हैं। आत्मबोध में स्थित संत आत्मबोध और आत्मस्थिति के अनुभवी होते हैं। वे ही आत्मबोध का रास्ता दिखा सकते हैं। कोई चाहे जितने जप, तप, तीर्थ, व्रत करे, बिना संत का सहारा लिये आत्मबोध नहीं होगा। आदमी सब तरफ भटककर तथा सारे उपाय करके थक जाय, परंतु आत्मबोध नहीं पायेगा। जब वह संत के पास जायेगा तभी सतनाम के अर्थस्वरूप में आत्मस्थिति रूपी घर पायेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मज्ञान भौतिक प्राण से ऊपर है और बोध होने के शुरू से लेकर जीवन के अंत के लिए आनन्दमय है। जीवन के अंत तक आनन्द है तो शरीरपात पश्चात अनंतकाल के लिए आनन्द है। जीवन्मुक्ति ही विदेहमुक्ति में पहुंचाती है। आत्मज्ञान के प्रेमी संत से इसका भेद मिलता है।

## कुंडलिया-15

**दीपक बारा नाम का महल भया उजियार॥**
**महल भया उजियार नाम का तेज बिराजा।**
**सब्द किया परकास मानसर ऊपर छाजा॥**
**दसों दिसा भई सुद्ध बुद्ध भई निर्मल साची।**
**छुटी कुमति की गाँठि सुमति परगट होय नाची॥**
**होत छतीसों राग दाग तिरगुन का छूटा।**
**पूरन प्रगटे भाग करम का कलसा फूटा॥**
**पलटू अंधियारी मिटी बाती दीन्ही टार।**
**दीपक बारा नाम का महल भया उजियार॥**

**शब्दार्थ**—मानसर= हिमालय की प्रसिद्ध झील, निर्मल मन। दसों दिसा= पूर्ण जीवन।

**भावार्थ**—सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मज्ञान का दीपक जलाया और हृदय-भवन प्रकाशित हो गया। जीवन ज्योतित हो जाने पर आत्मज्ञान की गरिमा जीवन में छा गयी। आत्मज्ञानपरक निर्णय शब्द का प्रकाश होने पर जीवन के ऊपर निर्मल-मन रूपी मानसरोवर शोभायमान हो गया। जीवन की दसों दिशाएं निर्मल हो गयीं और बुद्धि का बरताव सत्यतापूर्ण और पवित्र हो गया; कुबुद्धि की गांठ कट गयी और सुंदर मति जीवन में सर्वत्र व्यवहृत होने लगी। अब तो जीवन में आनन्द के छत्तीसों राग बजने लगे और रजोगुण, सतोगुण तथा तमोगुण के दाग धुल गये। इन सबके परिणाम में जब रागात्मक कर्मों का घड़ा फूट गया तब साधक का पूर्ण भाग्योदय हो गया। संत पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मज्ञान की बत्ती उद्गार देने पर अंतःकरण की अविद्या-अंधियारी नष्ट हो गयी। इस प्रकार आत्मज्ञान का दीपक जला देने पर जीवन-मंदिर में पूर्ण ज्ञानप्रकाश हो गया।

**विशेष**—आत्मज्ञान हो जाने पर जब पूर्ण आत्मलीनता हो जाती है, तब सारा भय मिट जाता है और जीवन में अखंड आनन्द एवं शाश्वत शांति का साम्राज्य स्थिर हो जाता है। यही सतनाम का प्रकाश है।

## कुंडलिया-16

**नाम केरे परताप से भये आन कै आन॥**
**भये आन कै आन बड़े के पाँव पड़ूँगा।**
**का बपुरा तिल तेल फूल संग बिकता महँगा॥**
**संत हैं बड़े दयाल आप सम मोको कीन्हा।**
**जैसे भृंगी कीट सिच्छा कुछ ऐसी दीन्हा॥**
**राई किहा सुमेर अजया गजराज चढ़ाई।**
**तुलसी होइगा रेंड़ सरन की पैज बड़ाई॥**
**पलटू जातिन नीच मैं सब औगुन की खान।**
**नाम केरे परताप से भये आन कै आन॥**

**शब्दार्थ**—आन कै आन=अन्य का अन्य, कुछ का कुछ। बपुरा= बेचारा, दीन-हीन। पैज=टेक, आधार।

**भावार्थ**—मैं आत्मज्ञान के प्रभाव से कुछ का कुछ हो गया। तुच्छ से महान हो गया। इसलिए मैं बड़ों के चरणों में झुकता हूं। बेचारे तिल के तेल का क्या महत्त्व है? परन्तु वह सुगंधित फूलों के रस में मिलकर महंगा बिकने

लगता है। संत बड़े दयालु होते हैं। उन्होंने मुझे अपने समान उत्तम बना लिया। जैसे भृंग (भंवरा) कीड़े को अपना शब्द सुनाकर उसे अपने समान बना लेता है, वैसे विवेकवान संतों ने मुझे कुछ ऐसी ही शिक्षा देकर अपने समान बना लिया। उन्होंने मुझे राई के दाने से उच्च सुमेरु पर्वत बना दिया और बकरी को हाथी पर बैठा दिया। सद्गुरु-संतों की शरण का आधार लेने पर मैं तुच्छ वैसे ही महान हो गया जैसे एरंड का पेड़ सुगंधित तथा गुण प्रद तुलसी का पौधा बन जाय। संत पलटू साहेब कहते हैं कि मैं जातियों में नीच बनिया जाति का आदमी और सारे दुर्गुणों की खान हूं, परन्तु सद्गुरु के उपदेश-प्रभाव से तुच्छ से महान हो गया।

**विशेष**—भंवरा अपने शब्द सुनाकर कीड़े को अपने समान भंवरा बना लेता है, यह कहावत है। सद्गुरु अपना ज्ञान सुनाकर शिष्य को अपने समान बना लेते हैं, यह यथार्थ है।

विनम्रता के लिए अपने को तुच्छ मानना उत्तम है। ध्यान रहे, मानव की एक जाति है। उसमें उत्तम, मध्यम तथा अधम नहीं हैं। अपने कर्मों से मनुष्य उत्तम, मध्यम तथा अधम बनते हैं। इसलिए काल्पनिक जाति की मान्यता को मन में रखकर कोई अहम और हीनत्व की भावना न रखे। पलटू साहेब ने अपने को नीच जाति का कहा, यह सामाजिक गलत प्रभाव का परिणाम था। उनके सामने तो कबीर साहेब का गरिमामय मानव-उच्चता का प्रभाव था। चलो, यह भी पलटू साहेब की विनम्रता थी।

## कुंडलिया-17

**हाथी घोड़ा खाक है कहै सुनै सो खाक॥**
**कहै सुनै सो खाक खाक है मुलुक खजाना।**
**जोरू बेटा खाक खाक जो साचै माना॥**
**महल अटारी खाक खाक है बाग बगैचा।**
**सेत सपेदी खाक खाक है हुक्का नैचा॥**
**साल दुसाला खाक खाक मोतिन कै माला।**
**नौबतखाना खाक खाक है ससुरा साला॥**
**पलटू नाम खुदाय का यही सदा है पाक।**
**हाथी घोड़ा खाक है कहै सुनै सो खाक॥**

**शब्दार्थ**—खाक= मिट्टी। सेत सपेदी= चमक-दमक। नैचा= हुक्का की नली। नौबतखाना= राजद्वार के ऊपर शहनाई-नगाड़ा बजाये जाने का बना स्थान; नौबत= मंगलसूचक बाजा।

**भावार्थ**—अंततः हाथी-घोड़े मिट्टी हैं। इनकी बड़ाई करने-सुनने वाले मिट्टी हो जाते हैं। देश और खजाना मिट्टी हैं। पत्नी-पुत्र जो सत माने जाते हैं, अंततः खाक हो जाते हैं। महल-अटारी, बाग-बगीचे, सारी चमक-दमक, हुक्के तथा हुक्के की नलियां, शाल-दुशाले, मोतियों की मालाएं, नौबतखाने और श्वसुर-साले मिट्टी हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि एक खुदा का नाम ही सदैव पवित्र है। जड़ दृश्य तो सब खाक मिट्टी है।

**विशेष**—ईश्वर की कल्पना पवित्र है, इसके लिए कल्पित नाम खुदा, अल्लाह, ईश्वर, गॉड भी पवित्र भाव उत्पन्न करने वाले हैं, परन्तु सच्चा बोध तो तब होगा जब मन की कल्पनाओं से मुक्त होकर खुद खुदा में स्थिति होगी।

## कुंडलिया-18

**हाथ जोरि आगे मिलै लै लै भेंट अमीर॥**
**लै लै भेंट अमीर नाम का तेज बिराजा।**
**सब कोउ रगरै नाक आइ कै परजा राजा॥**
**सकलदार मैं नहीं नीच फिर जाति हमारी।**
**गोड़ धोय षट करम बरन पीवै लै चारी॥**
**बिन लसकर बिन फौज मुलुक में फिरी दुहाई।**
**जन महिमा सतनाम आपु में सरस बड़ाई॥**
**सतनाम के लिहे से पलटू भया गँभीर।**
**हाथ जोरि आगे मिलै लै लै भेंट अमीर॥**

**शब्दार्थ**—सकलदार= सुंदर। दुहाई= वाहवाही।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि मुझमें सतनाम के फलस्वरूप आत्मशांति का तेज आ गया है। इससे प्रभावित होकर बड़े-बड़े अमीर भेंट ले-ले कर और हाथ जोड़कर सामने आकर मिलते हैं। प्रजा से राजा तक सब मनुष्य आकर सामने नतमस्तक होकर नाक रगड़ते हैं। मैं देह से सुंदर नहीं हूं। मेरी जाति भी नीच बनिया की है। लेकिन षटकर्म करने वाले ब्राह्मण से लेकर चारों वर्ण मेरे पैर धोकर पीते हैं। मेरे पास सेना नहीं है, किन्तु देश में

मेरी जयजयकार हो रही है। वस्तुतः यह सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मज्ञान और आत्मशांति की महिमा और मीठी विशेषता है। सतनाम की परिभाषा स्वरूप आत्मज्ञान और आत्मस्थिति प्राप्त होने पर पलटू दास गंभीर हो गया। इसलिए छोटे-बड़े सब करबद्ध हो भेंट लेकर मुझसे मिलते हैं।

## 3. साधु-संत

कुंडलिया-19

**बड़ा होय तेहि पूजिये संतन किया बिचार॥**
**संतन किया बिचार ज्ञान का दीपक लीन्हा।**
**देवता तैंतिस कोट नजर में सब को चीन्हा॥**
**सब का खंडन किया खोजि के तीनि निकारा।**
**तीनों में दुइ सही मुक्ति का एकै द्वारा॥**
**हरि को लिया निकारि बहुर तिन मंत्र बिचारा।**
**हरि हैं गुन के बीच संत हैं गुन से न्यारा॥**
**पलटू प्रथमै संत जन दूजे हैं करतार।**
**बड़ा होय तेहि पूजिये संतन किया बिचार॥**

**शब्दार्थ**—तीन= ब्रह्मा, विष्णु, शंकर। हरि= विष्णु, ईश्वर।

**भावार्थ**—संतों ने विचार किया कि जो बड़ा हो उसकी पूजा की जाय। उन्होंने ज्ञान का दीपक लिया और उसके प्रकाश में तैंतीस करोड़ देवताओं की अपनी ज्ञान दृष्टि से पहचान कर और उन्हें निरर्थक समझकर उनका त्याग कर दिया। उन देवताओं में से खोजकर तीन को निकाल लिया—ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर। उनमें भी ब्रह्मा और शंकर को रज-तम गुण जानकर उन्हें भी छोड़ दिया। इसके बाद संतों ने हरि पर भी विचार किया कि ये भी सतगुण युक्त भले हैं, परन्तु गुण के भीतर ही हैं; किन्तु आत्मलीन संत सभी गुणों—त्रिगुणों से परे हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि इसलिए प्रथम श्रेणी में संत हैं, ईश्वर तो दूसरे नंबर में है। अतएव संतों ने विचार किया कि आत्मलीन मनुष्य सर्वश्रेष्ठ और पूज्य है।

**विशेष**—वस्तुतः सारे देवता और ईश्वर मनुष्य के मन के खिलौने हैं। मनुष्य सर्वोच्च ज्ञान-निधान है। मनुष्यों में जो भौतिक धरातल से ऊपर उठकर आत्मलीन है, वह सर्वोच्च पूज्य है। उसी की उपासना से कल्याण है।

## कुंडलिया-20

**सीतल चंदन चंद्रमा तैसे सीतल संत॥**
**तैसे सीतल संत जगत की ताप बुझावैं।**
**जो कोइ आवै जरत मधुर मुख बचन सुनावैं॥**
**धीरज सील सुभाव छिमा ना जात बखानी।**
**कोमल अति मदु बैन बज्र को करते पानी॥**
**रहन चलन मुसकान ज्ञान को सुगंध लगावैं।**
**तीन ताप मिटि जाय संत के दर्सन पावैं॥**
**पलटू ज्वाला उदर की रहै न मिटै तुरंत।**
**सीतल चंदन चंद्रमा तैसे सीतल संत॥**

**शब्दार्थ**—ज्वाला उदर की= मन का संताप।

**भावार्थ**—जैसे चंदन और चन्द्रमा शीतल होते हैं वैसे संत शीतल होते हैं। वे जगत जीवों के मन के ताप को अपने सत्योपदेश से शीतल करते हैं। मन की ज्वाला में जलते हुए जो मनुष्य संत के पास आता है, संत अपने मुख से मीठे वचन सुनाकर उसे शांत करते हैं। संत में धैर्य, क्षमा और शील स्वभाव होता है जो वर्णन करके नहीं बताया जा सकता। संत कोमल एवं विनम्र होते हैं। वे अत्यंत मीठे वचन सुनाकर वज्र जैसे कठोर स्वभाव वाले व्यक्ति को पानी के समान कोमल कर देते हैं। वे अपनी पवित्र रहनी और आचरण से तथा पवित्र मुस्कान से ज्ञान की सुगंधी बिखेरते हैं। यदि ऐसे पवित्र संत के दर्शन सत्पात्र व्यक्ति पा जाय तो उसके तीनों ताप मिट जायंगे। पलटू साहेब कहते हैं कि उस मुमुक्षु के मन की जलन तुरंत मिट जायगी। फिर वह नहीं जलेगा, क्योंकि संत शीतल होते हैं।

## कुंडलिया-21

**संत बराबर कोमल दूसर को चित नाहिं॥**
**दूसर को चित नाहिं करैं सब ही पर दाया।**
**हित अनहित सब एक असुभ सुभ हाथ बनाया॥**
**कोमल कुसुमी चाह नहीं सुपने में दूषन।**
**देखैं परहित लागि प्रेम रस चूखैं ऊखन॥**
**मिलनसार मुसकान बचन मृदु बोली मीठी।**
**पुलकित सीतल गात सुभग रतनारी दीठी॥**

**पलटू कौनो कछु कहै तनिको ना अकुताहिं।**
**संत बराबर कोमल दूसर को चित नाहिं॥**

**शब्दार्थ**—कुसुमी चाह=फूल जैसी कोमल मनोवृत्ति। ऊखन=ऊख, गन्ना। दीठी=दृष्टि। अकुताहिं=बेचैन होना।

**भावार्थ**—संत के समान कोमल चित्त दूसरे का नहीं होता है। वे सब पर दया करते हैं। संत अपने हित करने वाले तथा अहित करने वाले सब पर समता का बरताव करते हैं। पाप और पुण्य अपने हाथों के बनाये होते हैं। संत उन दोनों से ऊपर उठ जाते हैं। संत विनम्र होते हैं। उनकी मनोवृत्ति फूल जैसी कोमल और सद्‌गुण सुगंध से भरी होती है। उनके मन में स्वप्न में भी दोष नहीं आते। वे दूसरों के कल्याण के लिए उसे देखते हैं। वे प्रेमरस के मीठे गन्ने चूसते हैं। वे सबसे हिल-मिलकर रहने वाले स्वभाव के होते हैं। वे मुस्कराते हुए विनम्र और मीठी बोली बोलते हैं। उनका शरीर प्रफुल्ल और शीतल होने से दर्शनीय होता है। उनकी प्रेम भरी रतनारी दृष्टि होती है। पलटू साहेब कहते हैं कि उन संत को कोई कुछ भी भला-बुरा कहे वे उससे थोड़ा भी उद्विग्न नहीं होते। संत के समान कोमल मन दूसरे का नहीं होता है।

## कुंडलिया-22

**राम समीपी संत हैं वे जो करैं सो होय॥**
**वे जो करैं सो होय हुकुम में उनके साहिब।**
**संत कहैं सोइ करैं राम ना करते बायब॥**
**राम के घर के बीच काम सब संतै करते।**
**देवता तैंतिस कोट संत से सबही डरते॥**
**राई पर्बत करैं करैं पर्बत को राई।**
**राम के घर के बीच फिरत है संत दुहाई॥**
**पलटू घर में राम के और न करता कोय।**
**राम समीपी संत हैं वे जो करैं सो होय॥**

**शब्दार्थ**—बायब=विरुद्ध। दुहाई=प्रभाव।

**भावार्थ**—संत राम के निकट रहने वाले होते हैं। वे आत्माराम में लीन होते हैं। अतएव संत जो करते हैं वही होता है। संत की ही आज्ञा में राम चलते हैं। संत जो आज्ञा देते हैं राम वही करते हैं। वे संत के विरुद्ध कुछ

नहीं करते। राम के घर में सारा काम संत ही करते हैं। तैंतीस कोटि के सारे देवता संत से भय करते हैं। संत विषयासक्ति में पड़े दीन-हीन जीवों को आत्मज्ञान के उपदेश देकर महान बना देते हैं और पर्वत के समान महान मोह-बंधन को राई के समान तुच्छ कर देते हैं। अतएव राम के घर में संत का ही प्रभाव व्याप्त रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि राम के घर में अन्य कोई कर्ता-धर्ता नहीं है। राम के निकट निवास करने वाले संत जो कुछ करते हैं वही होता है।

**विशेष**—ऊपर का कथन काव्यात्मक है। राम, ब्रह्म, ईश्वर, खुदा, गॉड, परमात्मा, अल्लाह आदि केवल शब्द हैं। इनकी चरितार्थता आत्मज्ञान और आत्मशांति में ही है। सब कुछ का ज्ञाता, बोद्धा और स्थापक चेतन आत्मा है। आत्मज्ञान आत्मस्थिति मानव जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है। इसमें रमने वाले संत कहलाते हैं। इसलिए उक्त पदों में संत की बड़ाई की गयी है। राम या ईश्वर कोई अलग नहीं है जिसके घर में संत रहते हैं। आत्मा ही परमात्मा है और उसमें संत स्थित होते हैं, इसलिए वे परमात्मा के घर में रहते हैं। ईश्वर तथा तैंतीस कोटि के देवता सब काल्पनिक हैं। कल्पना करने वाला मनुष्य है। जो मनुष्य अपने आप में लीन है वह संत है।

## कुंडलिया-23

**संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास॥**
**जैसे सहत कपास नाय चरखा में ओटै।**
**रुई धर जब तुमै हाथ से दोऊ निभोटै॥**
**रोम रोम अलगाय पकरि कै धुनिया धूनी।**
**पिउनी नँह दै कात सूत ले जुलहा बूनी॥**
**धोबी भट्ठी पर धरी कुन्दीगर मुंगरी मारी।**
**दरजी टुक टुक फारि जोर कै किया तयारी॥**
**परस्वारथ के कारने दुख सहै पलटू दास।**
**संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास॥**

**शब्दार्थ**—सासना = कष्ट। तुमै = अंगुलियों से नोचकर रुई को साफ करना।निभोटै = नोचना। पिउनी = रुई का पिंड। नह = नख, नाखून। कुन्दीगर = कपड़े की सिलवट दूरकर उसे सुंदर बनाने के लिए लकड़ी की मुंगरी (कुंदा) से कूटने वाला। टुक-टुक = टूक-टूक।

**भावार्थ**—संत आत्म-सुधार तथा दूसरों को कल्याण मार्ग में लगाने के लिए वैसे ही कष्ट सहते हैं जैसे कपास सहता है। रुई को चरखे में डालकर उसे ओटा जाता है। दोनों हाथों से नोच-नोच कर उसे साफ किया जाता है। धुनिया रुई को धुनता है और उसके रोयें-रोयें को अलग कर साफ कर देता है। कपास की पिउनी में नख लगाकर सूत काता जाता है। फिर उससे जोलाहा चरखे में ताना-बाना करके कपड़ा बुनता है। उस कपड़े को धोबी भट्ठी पर चढ़ाता है। कुन्दीगर उस कपड़े की सिलवट दूर कर उसे सुंदर बनाने के लिए कुन्दी (मुंगरी) से पीटता है। दरजी उस कपड़े को टूक-टूक फाड़कर सिलता है और पहनने का वस्त्र तैयार करता है। इतना कष्ट सहकर कपास दूसरे का शरीर ढांकता है। पलटू साहेब कहते हैं कि इसी प्रकार संत आत्मकल्याण और दूसरे के कल्याण के लिए नाना कष्ट सहते हैं।

## कुंडलिया-24

**संतन के सिर ताज है सोई संत होइ जाय॥**
**सोई संत होइ जाय रहै जो ऐसी रहनी।**
**मुख से बोलै साच करै कछु उज्जल करनी॥**
**एक भरोसा करै नहीं काहू से माँगै।**
**मन में करै संतोष तनिक ना कबहूँ लागै॥**
**भली बुरी कोउ कहै ताहि सुनि नहिं मन माखै।**
**आठ पहर दिन रात नाम की चरचा राखै॥**
**पलटू रहै गरीब होय भूखे को दे खाय।**
**संतन के सिर ताज है सोई संत होइ जाय॥**

**शब्दार्थ**—माखै= क्रोध या उद्वेग होना।

**भावार्थ**—वही सर्वश्रेष्ठ संत है जो इस प्रकार की रहनी में रहता है—मुख से सदैव सत्य बोले, पवित्र कार्य करे, एक प्रारब्ध एवं अपने कर्तव्य पर विश्वास रखे, किसी से कभी कुछ न मांगे, मन में सदैव संतोष रखे, कभी थोड़ी भी तृष्णा न रखे, कोई के भला-बुरा कहने पर मन में उद्वेग न लावे, आठों पहर तथा रात-दिन आत्मस्मरण एवं आत्मलीनता में रहे। पलटू साहेब कहते हैं कि थोड़ी वस्तुओं में सादगी से निर्वाह ले और सामने मिले हुए भूखे को खिलाकर खाय, ऐसे संत सर्वश्रेष्ठ होते हैं।

## कुंडलिया-25

**तीन लोक से जुदा है उन संतन की चाल॥**
**उन संतन की चाल करम से रहते न्यारे।**
**लोभ मोह हंकार ताहि की गरदन मारे॥**
**काम क्रोध कछु नाहिं लगै न भूख पियासा।**
**जियतै मिर्तक रहैं करैं ना जग की आसा॥**
**ऋद्धि सिद्धि को देख देत हैं खाक चलाई।**
**माया से निर्विर्त भजन की करैं बड़ाई॥**
**सभै चबैना काल का पलटू उन्हैं न काल।**
**तीन लोक से जुदा है उन संतन की चाल॥**

**शब्दार्थ**—मिर्तक=मृतक, अहंकार-शून्य। ऋद्धि-सिद्धि=संपत्ति, स्वामित्व और प्रतिष्ठा। निर्विर्त=निवृत्त, परे।

**भावार्थ**—उन संतों का आचरण सारी दुनिया से परे है। वे रागात्मक कर्म-प्रपंच से दूर रहते हैं; लोभ, मोह तथा अहंकार को जड़ मूल से नष्ट कर देते हैं। उनके मन में काम-क्रोधादि मनोविकार नहीं होते। उनको सांसारिक भोगों की तृष्णा नहीं रहती। वे जीते जी संसार से मरे हुए के समान अहंकार शून्य होते हैं। वे जगत की आशा नहीं रखते। वे संपत्ति, स्वामित्व एवं प्रतिष्ठा पर धूल चला देते हैं। वे माया-मोह से परे रहकर आत्मलीनता की महत्ता में जीते हैं। सारा संसार काल का चबैना है। पलटू साहेब कहते हैं कि उन संतों के लिए काल नहीं है, क्योंकि वे कालातीत अमर आत्मा में स्थित हैं। अतएव उच्च संतों की रहनी सारी दुनिया से परे है।

## कुंडलिया-26

**फाका जिकर किनात ये तीनों बात जगीर॥**
**तीनों बात जगीर खुसी की कफनी डारै।**
**दिल को करै कुसाद आई भी रोजी टारै॥**
**इबादत दिन रात याद में अपनी रहना।**
**खुदी खूब को खोइ जनाजा जियतै करना॥**
**सीकन्दर और गदा दोऊ को एकै जानै।**
**तब पावै टुक नसा फना का प्याला छानै॥**

**पलटू मस्त जो हाल में तिसका नाम फकीर।**
**फाका जिकर किनात ये तीनों बात जगीर॥**

**शब्दार्थ**—फाका—फ़ाक़ा, निराहार रहना, उपवास। जिकर=जिक्र, चर्चा, सत्संग। किनात=संतोष। जगीर=जागीर, राज्य से मिला भूमिखण्ड, धन। कुसाद=उदार। इबादत=उपासना। खुदी=अहंकार। जनाजा=जनाज़ा, शव, लाश, अर्थी, लाश रखने की संदूक। सीकन्दर=सिकंदर महान, राजा। गदा=भिखारी, भिखमंगा। टुक नसा=थोड़ी मस्ती। फना=नाश, मृत्यु। हाल=दशा, वर्तमान, उपस्थित, आत्मलीनता। फकीर=फ़क़ीर, त्यागी।

**भावार्थ**—समय से भूखे रह जाना, सत्संग करना तथा संतोष रखना ये तीनों त्यागी की संपत्ति हैं। वह प्रसन्नता का कफन पहन लेता है, दिल को उदार रखता है, आयी हुई द्वंद्वात्मक संपत्ति भी हटा देता है। जो आत्मचिंतन में रहता है वह मानो रात-दिन उपासना करता है। अहंकार को पूर्णतया मिटा देता है और जीवित अवस्था में ही अपने माने हुए शरीर को मुरदा रूप में देखता है। वह बादशाह और भिखारी को समान समझता है। वह सब कुछ की नश्वरता सब समय देखता है और मृत्यु-स्मरण का प्याला सब क्षण पीता है। ऐसी रहनी में ही आत्मलीनता का थोड़ा नशा चढ़ता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो वर्तमान में पूर्ण निश्चिंतता की मस्ती में रहता है, वह फकीर है। उसका समय से भूखा रह जाना, सत्संग एवं आत्मस्मरण और संतोष ही अचल संपत्ति है।

## कुंडलिया-27

**कबही फाका फकर है कबही लाख करोर॥**
**कबही लाख करोर गमी सादी कछु नाहीं।**
**ज्यों खाली त्यों भरा सबुर है मन के माहीं॥**
**कबही फूलन सेज हाथी की है असवारी।**
**कबही सोवै भुईं पियादे मंजिल गुजारी॥**
**कबहीं मलमल जरी ओढ़ते साल दुसाला।**
**कबही तापै आग ओढ़ि रहते मृगछाला॥**
**पलटू वह यह एक है परालब्ध नहिं जोर।**
**कबही फाका फकर है कबही लाख करोर॥**

**शब्दार्थ**—फाका= भूखा। फकर= फ़क्र, दरिद्रता। गमी= ग़मी, शोक का समय। सादी= शादी, ख़ुशी, आनंदोत्सव, विवाह। सबुर= सब्र, संतोष, सहनशीलता। जरी= ज़री, स्वर्णिम।

**भावार्थ**—कभी भूखे रह जाना होता है और दरिद्रता रहती है और कभी पास में लाख-करोड़ की संपत्ति हो जाती है। विवेकवान के मन में न शोक है और न आनन्द का उत्सव। उनके लिए जैसे खाली है वैसे भरा है। उन्हें संपन्नता और विपन्नता दोनों दशाओं में मन में संतोष और सहनशीलता है। कभी फूलों से सजी शय्या है और हाथी की सवारी है तो कभी जमीन पर सोते हैं और पैदल ही रास्ता तय करते हैं। कभी मलमल तथा स्वर्णिम वस्त्र पहनते हैं और शाल-दुशाले ओढ़ते हैं। कभी आग तापकर और मृगछाला ओढ़कर दिन काटते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि विवेकवान उसे और इसे—अनुकूल और प्रतिकूल एक मानते हैं। प्रारब्ध पर किसी की जबर्दस्ती नहीं चल सकती। कभी भूखे और दरिद्रता में दिन कटते हैं और कभी-कभी करोड़ द्रव्य आ जाता है।

**विशेष**—अनुकूल तथा प्रतिकूल स्थिति में समता-संतोष में जीना ज्ञान का फल है और इसी में शांति है।

## कुंडलिया-28

**साध महातम बड़ा है जैसो हरि यस होय॥**
**जैसो हरि यस होय ताहि को गरहन कीजै।**
**तन मन धन सब वारि चरज पर तेकरे दीजै॥**
**नाम से उत्पत्ति राम संत आनाम समाने।**
**सबसे बड़ा अनाम नाम की महिमा जाने॥**
**संत बोलते ब्रह्म चरन कै पियै पखारन।**
**बड़ा महापरसाद सीत संतन कर छाड़न॥**
**पलटू संत न होवते नाम न जानत कोय।**
**साध महातम बड़ा है जैसो हरि यस होय॥**

**शब्दार्थ**—आनाम= अनाम, नाम से परे शुद्ध आत्मस्थिति।

**भावार्थ**—हरि-यश के समान साधु का माहात्म्य श्रेष्ठ है। इसलिए उसे ग्रहण करना चाहिए। साधु-संतों के चरणों पर अपने तन, मन और धन न्योछावर कर दो। राम, अल्लाह, ईश्वर आदि सारे नाम शब्द से उत्पन्न

होते हैं, परन्तु संत नाम-रूप से परे आत्मस्थिति में लीन होते हैं। नाम-रूप से परे अनाम पद—स्वरूपस्थिति सर्वोच्च है। नाम-रूप की महिमा जानने-कहने वाला चेतन आत्मा ही है। संत बोलते हुए ब्रह्म हैं। उनके चरण धोकर पीयो और उनके खाये हुए से छुटा हुआ महाप्रसाद खाओ। पलटू साहेब कहते हैं कि संत न होते तो राम, ईश्वर, अल्लाह आदि नाम कौन कहता? कोई नाम का भेद भी नहीं जानता। अतएव हरियश के समान संत की महिमा बड़ी है।

**विशेष**—सारे अज्ञान को हरण करने वाले सद्गुरु ही हरि हैं, और अंततः अपना आत्मस्वरूप चेतन ही हरि है जिसके बोध और स्थिति से सारे दुखों का अंत होता है। परोक्ष हरि तो मन की अवधारणा है।

## कुंडलिया-29

**हरि हरिजन को दुइ कहै सो नर नरकै जाय॥**
**सो नर नरकै जाय हरिजन हरि अंतर नाहीं।**
**फूलन में ज्यों बास रहैं हरि हरिजन माहीं॥**
**संत रूप अवतार आप हरि धरि कै आये।**
**भक्ति करे उपदेस जगत को राह चलाये॥**
**और धरै अवतार रहै सर्गुन संजुक्ता।**
**संत रूप जब धरै रहै सर्गुन से मुक्ता॥**
**पलटू हरि नारद सेती बहुत कहा समुझाय।**
**हरि हरिजन को दुइ कहै सो नर नरकै जाय॥**

**शब्दार्थ**—हरि= परमात्मा, ज्ञान, आत्मा। हरिजन= परमात्मलीन, आत्मलीन, संत।

**भावार्थ**—जो मनुष्य हरि और हरिजन को दो कहता है वह देहाभिमान की गंदगी में ही पड़ा रहता है। वस्तुतः हरि और हरिजन में भेद नहीं है। जैसे फूलों में सुगंधी होती है, वैसे हरि हरिजन में रहते हैं। हरि स्वयं संत का अवतार लेकर आते हैं और भक्ति का उपदेश देकर जगत जीवों को सन्मार्ग में चलने की प्रेरणा देते हैं। अन्य अवतार तीनों गुणों से संयुक्त होते हैं किन्तु संत अवतार तीनों गुणों से मुक्त होते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि श्री विष्णु ने नारद से अच्छी तरह समझाकर कहा है कि हरि और हरिजन, परमात्मा और संत को जो दो कहता है वह भवधारा में ही भटकता है।

## कुंडलिया-30

**हरि अपनो अपमान सह जन की सही न जाय॥**
**जन की सही न जाय दुर्बासा की क्या गत कीन्हा।**
**भुवन चतुर्दस फिरे सभै दुरियाय जो दीन्हा॥**
**पाहि पाहि करि परै जबै हरि चरनन जाई।**
**तब हरि दीन्ह जवाब मोर बस नाहिं गुसाँई॥**
**मोर द्रोह करि बचै करौं जन द्रोहक नासा।**
**माफ करै अंबरीक बचौगे तब दुर्बासा॥**
**पलटू द्रोही संत कर तिन्हैं सुदर्सन खाय।**
**हरि अपनो अपमान सह जन की सही न जाय॥**

**शब्दार्थ**—दुरियाय= दुर-दुर कह कर हटा दिया। पाहि-पाहि= शरण-शरण, रक्षा करो-रक्षा करो।

**भावार्थ**—विष्णु अपना अपमान सह लेते हैं, किन्तु हरिजन का अपमान नहीं सह सकते। विष्णु ने दुर्वासा की क्या गति की, यह सब जानते हैं। दुर्वासा चौदह भुवनों में सुदर्शन चक्र की मार से बचने के लिए भागते रहे, परन्तु सभी ने उनको दुत्कार कर भगा दिया, किसी ने उनकी रक्षा नहीं की। जब दुर्वासा विष्णु के पास जाकर "रक्षा करो-रक्षा करो, मैं आपकी शरण में हूं।" कहकर गोहार मचाये, तब विष्णु ने उनको उत्तर दिया कि हे गोस्वामी ! यह मेरे वश की बात नहीं है। उन्होंने कहा कि मुझसे वैर करके कोई बच सकता है, परन्तु जो हरिजन का द्रोह करेगा, मैं उसको अवश्य दंड दूंगा। हे दुर्वासा ! जब भक्त अंबरीष तुम्हें क्षमा कर देंगे तब तुम बच सकोगे। पलटू साहेब कहते हैं कि संत से वैर करने वाले को सुदर्शन खा जायेगा। अतएव हरि अपना अपमान सह सकते हैं, किन्तु हरिजन का अपमान नहीं सह सकते।

**विशेष**—एक पौराणिक काल्पनिक कहानी है कि राजा अंबरीष एकादशी व्रत उपवास रहे और द्वादशी को पारण के समय के लिए उन्होंने दुर्वासा को भोजन के लिए निमंत्रित किया। द्वादशी के प्रातः थोड़े समय तक पारण का मुहूर्त था। दुर्वासा को न आते देखकर अंबरीष ने सालग्राम का धोवन-जल पारण के रूप में मुख में डाल लिया। इतने में दुर्वासा आ गये और उन्होंने यह देख लिया। दुर्वासा तो दुर्वासा, तुरंत क्रुद्ध हो गये और उन्होंने अंबरीष को शाप देना चाहा, तो विष्णु का सुदर्शन चक्र दुर्वासा को मारने के लिए उनके पीछे चल पड़ा। दुर्वासा सभी लोकों में भागते फिरे कि कोई देवी-

देवता या राजा-महाराजा मुझे सुदर्शन की मार से बचा ले, किन्तु किसी ने उनको शरण नहीं दी। अंततः दुर्वासा हारकर विष्णु की शरण में गये और उन्होंने उनसे कहा कि भगवान, मुझे बचाइये। तब विष्णु ने कहा कि मेरा द्रोह करके तो कोई बच सकता है, परन्तु संत-भक्त का द्रोह करके नहीं बच सकता। यदि आप बचना चाहते हैं, तो अंबरीष की शरण में ही जाइए। अंततः अंबरीष की शरण में ही जाकर दुर्वासा का बचाव हुआ।

इसका सार अभिप्राय यह है कि गलत काम करके कोई उसके फल से बच नहीं सकता। निरपराध और सज्जन-संत को संताप देकर कोई उसके बुरे परिणाम से उबर नहीं सकता।

## कुंडलिया-31

**काम क्रोध जिनके नहीं लगै न भूख पियास॥**
**लगै न भूख पियास रहै तिरगुन से न्यारा।**
**लोभ मोह हंकार नींद की गरदन मारा॥**
**सत्रु मित्र सब एक एक है राजा रंका।**
**दुख सुख जीवन मरन तनिक ना ब्यापै संका॥**
**कंचन लोहा एक एक है गरमी पाला।**
**अस्तुति निन्दा एक एक है नगन दुसाला॥**
**पलटू उनके दरस से होत पाप को नास।**
**काम क्रोध जिनके नहीं लगै न भूख पियास॥**

**शब्दार्थ**—भूख पियास= भोगों की आशा-तृष्णा। नींद= असावधानी, मोह-नींद।

**भावार्थ**—जिनके मन में काम-क्रोध नहीं है और जिन्हें सांसारिक भोगों तथा ऐश्वर्य की आशा-तृष्णा नहीं है; वे सत, रज तथा तम तीनों गुणों को जीतकर गुणातीत आत्म स्वरूप में स्थित रहते हैं। वे लोभ, मोह और अहंकार को समूल नष्ट किये रहते हैं। उनकी दृष्टि में शत्रु और मित्र तथा राजा और दरिद्र समान रहते हैं। दुख-सुख और जीवन-मृत्यु के विषय में उनके मन में शंका, संदेह, लालसा और भय नहीं होते। उनकी दृष्टि में सोना-लोहा और गरमी-ठंडी समान है। वे अपने ऊपर आयी हुई प्रशंसा और निन्दा को समान समझते हैं। समय से नंगे शरीर रहना पड़े, अथवा शाल-दुशाले ओढ़ने को मिले, दोनों में वे हर्ष-शोक से रहित रहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे

निर्मल मन के समता प्राप्त संत के दर्शन से मन के मैल धुलते हैं। वे काम-क्रोधादि मनोविकारों तथा आशा-तृष्णा से मुक्त होते हैं।

कुंडलिया-32

**ना काहू से दुष्टता ना काहू से रोच॥**
**ना काहू से रोच दोऊ को इकरस जाना।**
**बैर भाव सब तजा रूप अपना पहचाना॥**
**जो कंचन सो काँच दोऊ की आसा त्यागी।**
**हारि जीत कछु नाहिं प्रीति इक हरि से लागी॥**
**सुख दुख सम्पत्ति बिपति भाव ना यहु से दूजा।**
**जो बाम्हन सो सुपच दृष्टि सम की पूजा॥**
**ना जियने की खुसी है पलटू मुए न सोच।**
**ना काहू से दुष्टता ना काहू से रोच॥**

**शब्दार्थ**—दुष्टता= दुर्व्यवहार। रोच= मोह। सुपच= भंगी। सम= समान।

**भावार्थ**—मेरा न किसी के प्रति दुर्व्यवहार है और न किसी से मोह है। मैं शत्रु और मित्र को एक समान समझता हूं। मैंने सारे वैर और मोह को त्यागकर अपने आत्म-स्वरूप को पहचान लिया है और उसमें स्थित हो गया हूं। मेरे लिए जैसे सोना है वैसे कांच है। मैंने दोनों को पाने की आशा त्याग दी है। न मुझे कभी कहीं अपनी हार लगती है और न जीत। मेरा प्रेम तो आत्मस्वरूप हरि से लग गया है। दुख में, सुख में, संपत्ति में और विपत्ति में मेरा द्वैत भाव नहीं है। मेरे लिए सब समान है। मेरी दृष्टि में ब्राह्मण कहलाने वाले और भंगी कहलाने वाले समान हैं। मैं सारे मानव को समान मानकर सबका सत्कार करता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि मुझे न जीने में प्रसन्नता है और न मरने की याद कर चिंता है। मुझे किसी से दोस्ती-दुश्मनी नहीं है।

## 4. पाखंडी

कुंडलिया-33

**पिसना पीसै राँड़ री पिउ पिउ करै पुकार॥**
**पिउ पिउ करै पुकार जगत को प्रेम दिखावै।**
**कहवै कथा पुरान पिया को तनिक न भावै॥**

**खिन रोवै खिन हँसै ज्ञान की बात बतावै।**
**आप न रीझै भाँड़ और को बैठि रिझावै॥**
**सुनै न वाकी बात तनिक जो अन्तर जानी।**
**चाहै भेटा पीव चलै न सुपथ रहानी॥**
**पलटू ऊपर से कहै भीतर भरा बिकार।**
**पिसना पीसै राँड़ री पिउ पिउ करै पुकार॥**

**शब्दार्थ**—राँड़ = विधवा, पाखंडी। भाँड़ = मसखरा। रहानी = रहनी, आचरण।

**भावार्थ**—विधवा चक्की से आटा पीसते हुए पीउ-पीउ पुकारती है। अर्थात आत्मा रूपी परमात्मा का बोध हुए बिना पाखंडी मनुष्य राग-द्वेष की चक्की चलाता है और बाहर परमात्मा की चर्चा करता है और संसार के लोगों में यह प्रदर्शित करता है कि मैं परमात्मा का बड़ा प्रेमी हूं। वह परमात्मा के गुणानुवाद में पुराणों की कथा करता है, परंतु उसकी बात परमात्मा को तनिक भी अच्छी नहीं लगती—अंतरात्मा प्रसन्न नहीं होता। ऐसे लोग अपनी भगवत भक्ति दिखाने के लिए झूठी विरह भावना का प्रदर्शन करते हैं। वे क्षण में रोते हैं, क्षण में हंसते हैं और क्षण में ज्ञान की बातें करते हैं। नाच-नाटक का मस्खरा स्वयं तो नहीं रीझता है, अन्य को हावभाव करके रिझाता है। जो अंतरात्मा की बात जानते और कहते हैं उनके निर्णय वचन ऐसे लोग थोड़ा भी नहीं सुनना चाहते। वे चाहते तो हैं कि प्रियतम परमात्मा में लीन हो जायं, किन्तु सदाचार के पथ पर न चलते हैं और न अंतर्मुख रहनी अपनाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे लोग भक्ति-ज्ञान की बातें केवल दिखावे के लिए करते हैं, किन्तु उनके मन में विषय-वासना के विकार भरे रहते हैं। विवेकहीन मनुष्य राग-द्वेष में डूबा रहता है और ऊपर-ऊपर आत्मा-परमात्मा का प्रेम प्रदर्शित करता है।

## कुंडलिया-34

**पर दुख कारन दुख सहै सन असंत हैं एक॥**
**सन असंत हैं एक काट के जल में सारै।**
**कूँचै खैंचै खाल ऊपर से मुँगरा मारै॥**
**तेकर बटि कै भाँजि भाँजि के बरतै रसरा।**
**नर की बाँधे मुसुक बाँधते गउ और बछरा॥**

**अमरजाल फिर होय बझावै जलचर जाई।**
**खग मृग जीवा जंतु तेही में बहुत बझाई॥**
**जिव दे जीव संतावते पलटू उनकी टेक।**
**पर दुख कारन दुख सहै सन असंत हैं एक॥**

**शब्दार्थ**—असंत=दुष्ट। सन=जिसकी रस्सी बनती है वह पौधा। भुसुक=बंधन।

**भावार्थ**—दुष्ट और सन, ये दोनों दूसरों को दुख देने के लिए स्वयं दुख सहने में एक समान हैं। सन को काटकर और जल में डालकर सड़ाया जाता है। उसकी खाल खींची जाती है, फिर मुंगरी मारकर उसे कूटा जाता है। फिर उसे बटते हैं, ऐंठते हैं और उसकी रस्सी बनाते हैं। उस रस्सी से मनुष्य का मुसुक बांधते हैं; गाय, बछड़े आदि जानवरों को बांधते हैं। सन का मजबूत जाल बनाकर उसमें मछली आदि अनेक जल-जंतु को फंसाते हैं। आकाश में उड़ने वाले तथा वन में विचरने वाले बहुत जीवों को सन से बनी रस्सी तथा जाल में फंसाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि दुष्ट लोग इसी प्रकार अपने जीव को कष्ट देकर भी दूसरे जीव को दुख देते हैं। उनका ऐसा ही हठ होता है। इस प्रकार दूसरों को देख देने के लिए सन और दुष्ट स्वयं दुख सहते हैं।

## कुंडलिया-35

**बिस्वा किये सिंगार है बैठी बीच बजार॥**
**बैठी बीच बजार नजारा सब से मारै।**
**बातैं मीठी करै सभन की गाँठि निहारै॥**
**चोवा चंदन लाइ पहिरि के मलमल खासा।**
**पंचभतारी भई करै औरन की आसा॥**
**लेइ खसम को नाँव खसम से परिचै नाहीं।**
**बेचि बड़न को नाँव सभन को ठगि-ठगि खाही॥**
**पलटू तेकर बात है जेकरे एक भतार।**
**बिस्वा किये सिंगार है बैठी बीच बजार॥**

**शब्दार्थ**—बिस्वा=वेश्या। गांठि=पैसे-रुपये। खसम=पति।

**भावार्थ**—वेश्या श्रृंगार करके बीच बाजार में बैठती है और पुरुषों को मोहित करने के लिए सब पर नजारा मारती है। वह सभी पुरुषों से मीठी-

मीठी बातें करती है, किन्तु वह सबकी गांठ के रुपये-पैसे पर ध्यान रखती है। चोवा-चंदन का लेपन कर तथा खासा मलमल एवं कीमती वस्त्र पहनकर सबको लुभाती है और पंचों को—सबको अपना भतार बनाती है। इसके आगे भी वह अन्य-अन्य पुरुषों की आशा करती है। इसी प्रकार पाखंडी लोग पति परमात्मा का नाम तो लेते हैं, परन्तु उन्हें असली पति आत्मा से परिचय नहीं है। ऐसे लोग बड़े प्रसिद्ध पुरुषों के नाम लेकर उनके भक्त बनते हैं और लोगों को अपने जाल में फंसाकर उनको ठग-ठग कर भोग-विलास करते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि उनकी प्रतिष्ठा होती है जिसका प्रियतम निज स्वरूप आत्मा है। वेश्या के समान नाना देवी-देवताओं में उलझे हुए लोगों का महत्त्व नहीं है।

## कुंडलिया-36

**हवा हिरिस पलटू लगी नाहक भये फकीर॥**<br>
**नाहक भये फकीर पीर की सेवा नाहीं।**<br>
**अपने मुँह से बड़े कहावैं सब से जाहीं॥**<br>
**धमधूसर होइ रहे बात में सबसे लड़ते।**<br>
**लाम काफ वो कहैं इमान को नाहीं डरते॥**<br>
**हमहीं हैं दुरवेस और ना दूसर कोई।**<br>
**सब को देहिं मुराद यकीन से ओकरे होई॥**<br>
**मन मुरीद होवै नहीं आप कहावैं पीर।**<br>
**हवा हिरिस पलटू लगी नाहक भये फकीर॥**

**शब्दार्थ**—हिरिस= हिर्स, लालच, तृष्णा, लोभ, इच्छा का वेग। पीर= गुरु, सद्गुरु। धमधूसर= मोटे तगड़े, लड़ाकू। लाम काफ= फारसी वर्णमाला के अक्षर लाम और काफ़; गालीगलौज, दुर्वचन। दुरवेस= दरवेश=फकीर, त्यागी। यकीन= यक़ीन, विश्वास। ओकरे=उसके। मुराद= कामना, अभिलाषा। मुरीद= शिष्य, चेला।

**भावार्थ**—जिनके मन में भोग-सम्मान के लोभ-लालच की आंधी चलती है, वे व्यर्थ में साधु का वेष धारण करते हैं। ऐसे लोग सद्गुरु की सेवा नहीं करते। वे सबके पास पहुंचकर अपने मुंह से अपनी बड़ाई करते हैं। वे खा-पीकर मुस्टंड बने सबसे लड़ने में आगे रहते हैं। वे लोगों को कटु वचन कहते, गाली-गलौज देते हैं। उन्हें सत्यपथ पर चलने का कोई ध्यान

नहीं रहता और बुराई से भय नहीं करते। वे कहते हैं कि हम ही सच्चे त्यागी संत हैं। हमारे सामने दूसरा कोई नहीं है। वे सिद्ध बने अपने आशीर्वाद से सबकी कामनाएं पूरी करने का ढोंग करते हैं और उनके विश्वास का दुरुपयोग करते हैं। ऐसे लोग अपने मन को अपना शिष्य नहीं बनाये, उसे अपने वश में नहीं किये और स्वयं सद्गुरु बनकर दूसरों को तारने का दिखावा करने लगे। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे लोगों के मन में सांसारिक कामनाओं की आंधी चलती रहती है। वे व्यर्थ ही साधु का बाना पहन लिये।

## कुंडलिया-37

**जौं लगि फाटै फिकिर ना गई फकीरी खोय॥**
**गई फकीरी खोय लगी है मान बड़ाई।**
**मोर तोर में परा नाहिं छूटी दुचिताई॥**
**दुख सुख संपति बिपति सोच दोऊ की लागी।**
**जीवन की है चाह मरन की डेर नहिं त्यागी॥**
**कौड़ी जिव के संग रैन दिन करै कल्पना।**
**दुष्ट कँहैं दुख देइ मित्र को जानै अपना॥**
**पलटू चिंता लगी है जनम गँवाये रोय।**
**जौं लगि फाटै फिकिर ना गई फकीरी खोय॥**

**शब्दार्थ**—फिकिर=फिक्र, चिंता। दुचिताई=दुविधा, खींचतान। डेर= डर, भय। दुष्ट=दुश्मन।

**भावार्थ**—जब तक फिक्र फटी नहीं—मन की चिंता पूर्णतया मिटी नहीं, तब तक फकीरी व्यर्थ है। मन में मान-बड़ाई का लोभ लगा है। अहंता-ममता में उलझा है और मन दोनों तरफ भाग रहा है। दुख-सुख, संपत्ति और विपत्ति दोनों तरफ चिंता लगी है। जीने की लालसा लगी है, मरने का भय त्याग नहीं सका है। मन में कामना है कि पैसे कैसे आवें। रात-दिन धन-दौलत पाने की ही कल्पना मन में चलती रहती है। शत्रु को दुख देने का प्रयत्न करता है और मित्र में ममता करता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मन में दुनियादारी की चिंता लगी है और जीवन रो-रोकर बिता रहे हैं। अतएव जब तक मन से चिंता दूर नहीं हुई, साधुता खोयी हुई है।

# 5. चेतावनी

कुंडलिया–38

**क्या सोवै तू बावरी चाला जात बसंत॥**
**चाला जात बसंत कंत ना घर में आये।**
**धृग जीवन है तोर कंत बिन दिवस गँवाये॥**
**गर्ब गुमानी नारि फिरै जोवन की माती।**
**खसम रहा है रूठि नहीं तू पठवै पाती॥**
**लगै न तेरो चित्त कंत को नाहिं मनावै।**
**का पर करै सिंगार फूल की सेज बिछावै॥**
**पलटू ऋतु भरि खेलि ले फिर पछितैहै अंत।**
**क्या सोवै तू बावरी चाला जात बसंत॥**

**शब्दार्थ**—चाला जात= चला जा रहा है। खसम= पति। पाती= पत्र, चिट्ठी।

**भावार्थ**—हे पगली ! तू असावधानी में पड़ी क्यों सोती है? वसंत ऋतु की बहार बीती जा रही है, किन्तु तुम्हारा पति तुम्हारे घर में नहीं आ सका। तेरे जीवन को धिक्कार है जो तू पति-विहीन होकर दिन खो रही है। नारी तो गर्व में मतवाली है और जवानी की मस्ती में मस्त है। तेरा पति तेरे से अप्रसन्न है। तू उसके पास चिट्ठी-पत्र भी नहीं भेजती है। तेरा मन अपने पति में नहीं लग रहा है। तू अपने प्रियतम को मनाने का प्रयत्न नहीं करती है। तू किसको मन में रखकर शृंगार करती है और फूलों की शय्या बिछाती है? पलटू साहेब कहते हैं कि पूरी वसंत ऋतु फाग खेल लो, अन्यथा अंत में पश्चाताप करना पड़ेगा। हे पगली ! तू क्यों गफलत में पड़ी है, वसंत ऋतु भागी जा रही है।

**विशेष**—मनोवृत्ति-युवती मोहमाया में उन्मत्त है। आत्मा रूपी पति का स्वागत करने का उसे ध्यान नहीं है। स्वस्थ जीवन का वसंत भागा जा रहा है। इसी सुनहले अवसर पर मनोवृत्ति आत्मलीन हो तो जीवन सफल है, अन्यथा रोना है।

कुंडलिया–39

**खेलु सिताबी फाग तू बीती जात बहार॥**
**बीती जात बहार सम्बत लगने पर आया।**
**लीजै डफ्फ बजाय सुभग मानुष तन पाया॥**

**खेलो घूँघट खोलि लाज फागुन में नाहीं।**
**जे कोउ करिहैं लाज काज ना सपनेहुँ माहीं॥**
**प्रेम की माट भराय सुरति की करु पिचुकारी।**
**ज्ञान अबीर बनाय नाम की दीजै गारी॥**
**पलटू रहना है नहीं सुपना यह संसार।**
**खेलु सिताबी फाग तू बीती जात बहार॥**

**शब्दार्थ**—सिताबी= शिताबी= शीघ्रता, जल्दी। बहार= वसंत ऋतु, आनंद, यौवन का आनंद, सुहावनापन। डफ्फ= डफ बाजा। माट= मटकी, घड़ा।

**भावार्थ**—जल्दी फाग खेल, वसंत ऋतु बीती जा रही है। नया वसंत लगने का समय निकट आ गया है—शरीर छूटने का समय समीप आ रहा है। यह कल्याणप्रद मानव शरीर मिला है। अपना नौबत-नगाड़ा बजा लो—साधना करके कल्याण कर लो। घूंघट खोलकर खेलो। फागुन में लज्जा करने का नियम नहीं है—लोकलाज छोड़कर भक्ति एवं साधना करो। जो कुलकानि की लज्जा एवं झूठी मर्यादा में फंसा रहेगा उसका स्वप्न में भी कल्याण नहीं होगा। प्रेम की मटकी में वैराग्य का रंग भरकर मनोवृत्ति की पिचकारी में उसे भरो और छोड़ो; और ज्ञान का अबीर उड़ाओ तथा जिससे आत्मज्ञान हो उस सतनाम की गारी दो—आत्माराम की चर्चा करो। पलटू साहेब कहते हैं कि इस संसार में रहना नहीं है। यह संसार सपना है। इसलिए शीघ्र आत्मज्ञान की साधना का खेल खेल लो, सुनहले समय की वसंत ऋतु बीती जा रही है।

**विशेष**—जीवन का समय बहार है, वसंत ऋतु है। इसमें भक्ति, ज्ञान तथा वैराग्य का फाग खेल लो। आज-कल में यह सुनहला समय बीत जायेगा। इस दुनिया को आज-कल में सदा के लिए छोड़ देना है। यह जीवन और संसार सपना है। इसमें न उलझो, अपितु इससे निर्मोह होकर शांति लो।

## कुंडलिया-40

**तू क्यों गफलत में फिरै सिर पर बैठा काल॥**
**सिर पर बैठा काल दिनो दिन वादा पूजै।**
**आज काल में कूच मुरख नहिं तोकहँ सूझै॥**

**कौड़ी कौड़ी जोरि ब्याज दे करते बट्टा।**
**सुखी रहै परिवार मुक्ति में होवत ठट्टा॥**
**तू जानै मैं ठग्यो आप को तुही ठगावै।**
**नाम सजीवन मूर छोरि के माहुर खावै॥**
**पलटू सेखी ना रही चेत करौ अब लाल।**
**तू क्यों गफलत में फिरै सिर पर बैठा काल॥**

**शब्दार्थ**—बट्टा= दलाली का धन, ब्याज बट्टा, ब्याज के नाम पर दूसरों को ठगना। ठट्ठा= हंसी मजाक, तिरस्कार। माहुर= विष, जहर। सेखी= घमंड, अहंकार।

**भावार्थ**—तू क्यों असावधान होकर घूम रहा है? तेरे सिर काल मड़ला रहा है। दिन-दिन यहां से जाने का वादा पूरा हो रहा है। आज-कल में यहां से चल देना है। मूर्ख! तुझे काल का जलवा दिखाई नहीं देता है। कौड़ी-कौड़ी धन इकट्ठा करता है। ब्याज पर रुपये देकर गरीबों को ठगता है। तेरी आशा है कि जायज-नाजायज धन बटोरने से तेरा परिवार सुखी रहेगा; परन्तु तू समझ ले कि तू अपनी मोक्ष साधना के साथ मजाक कर रहा है। तू समझता है कि मैं लोगों को ठग-ठग कर सम्पन्न हो रहा हूं। परन्तु ध्यान दे, तू स्वयं अपने दुष्कर्मों द्वारा ठगा जा रहा है। आत्मज्ञान जो संजीवनी बूटी है जिसमें स्थित होने से अमृत पद की प्राप्ति होती है, उसको छोड़कर तू विषय-वासना रूपी विष खा रहा है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे लाल, हे प्यारे मुन्ना ! तू चेत कर, तेरी दुनियादारी का घमंड रहने वाला नहीं है। सब थोड़े दिनों में उड़ जाने वाला है। तू असावधानी में क्यों भटकता है? तेरे सिर पर काल बैठा है।

## कुंडलिया-41

**गरमै गरमै हेलुवा गंफा लीजै मारि॥**
**गंफा लीजै मारि मनुष तन जात सिराना।**
**भजि लीजै भगवान काल सिर पर नियराना॥**
**मीठा है हरि नाम जियन का नाहिं भरोसा।**
**खाय लेहु भरिपेट आगे से जात परोसा॥**
**लीजै लाहा लूटि दिना दुइ संतन पासा।**
**अजहूँ चेत गंवार जात है खाली स्वासा॥**

**पलटू अटक न कीजिये कूच है साँझ सकारि।**
**गरमै गरमै हेलुवा गंफा लीजै मारि॥**

**शब्दार्थ**—गंफा= गफ्फा, ग्रास। लाहा= लाभ। अटक= रुकना, अड़चन, अटकना।

**भावार्थ**—गरमागरम हलुआ परोसा है। जल्दी-जल्दी खा लो—उत्तम मानव शरीर मिला है, इसमें रहकर तीव्रता से अपनी कल्याण-साधना कर लो। मनुष्य शरीर का समय समाप्त होता जा रहा है। संत भगवान की सेवा कर लो और आत्मचिंतन में रम जाओ। मृत्यु सिर पर है। उसका समय निरंतर निकट आ रहा है। हरिनाम मीठा है—आत्माराम में रमना अमृत है। शरीर रखने का भरोसा मत रखो। तुम्हारे सामने व्यंजन परोसा जा रहा है, उसे पेट भर खा लो—संतों से आत्मज्ञान मिल रहा है उसका आचरण कर लो। दो दिन का जीवन है। विवेकवान संतों के सत्संग में जाकर आत्मकल्याण का लाभ लूट लो। हे भोले ! आज भी सावधान हो जा। तेरे श्वास भजन बिना निरर्थक जा रहे हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि आलस्य करके रुको मत, अपितु, शीघ्र कल्याण-साधना कर लो। सांझ-सकारे—देखते-देखते यहां से चल देना है। अतएव सावधान।

## कुंडलिया-42

**सुर नर मुनि जोगी जती सभै काल बसि होय॥**
**सभै काल बसि होय मौत कालौ की होती।**
**पारब्रह्म भगवान मरै ना अबिगत जोती॥**
**जाको काल डेराय ओट ताही की लीजै।**
**काल की कहा बसाय भक्ति जो गुरु की कीजै॥**
**जरा मरन मिटि जाय सहज में औना जाना।**
**जपि कै नाम अनाम संत जन तत्व समाना॥**
**बेद धनंतर मरि गया पलटू अमर न कोय।**
**सुर नर मुनि जोगी जती सभै काल बसि होय॥**

**शब्दार्थ**—जती= यती, त्यागी। अबिगत= अविगत, मन-इन्द्रियों से परे। औना जाना= आना-जाना, जन्म-मरण। बेद धनंतर= वैद्य धन्वंतरि।

**भावार्थ**—देवता, मनुष्य, योगी, त्यागी सबके शरीर को काल खा जाता है। काल की भी मृत्यु हो जाती है जैसे विगत कल का काल (समय) आज

नहीं है परन्तु जो मन-इन्द्रियों से परे आत्मा है जिसे परब्रह्म, भगवान, ज्ञान ज्योति आदि कह सकते हैं, वह नहीं मरता। हे कल्याणार्थी! जिसका भय काल भी करता है उसका आधार लो। आत्मलीन सद्गुरु काल से ऊपर है। यदि उसकी भक्ति करके आत्मा को समझ लिया और निरंतर आत्मलीन है, तो उसका काल क्या बिगाड़ सकता है? आत्मलीन मनुष्य का इस देह के पात-पश्चात आना-जाना, जन्म लेना और मरना सब मिट जाता है। संतजन नाम रूप से परे आत्मा में स्थित होकर सत्स्वरूप अपने आप में लीन हो जाते हैं। देह किसी की अमर नहीं है। धन्वंतरि वैद्य तक मर गये। पलटू साहेब कहते हैं कि कोई देहधारी अमर नहीं है। देवता, मनुष्य, योगी, त्यागी, सबकी देह नाशवान है।

**विशेष**—नाम-रूप से परे अमर आत्मा में लीन संत अमर पद में स्थित हो जाते हैं। चेतन आत्मा अमर होने से काल से परे है; अतएव जो मनुष्य आत्मलीन हुआ, वह काल से परे हो गया।

## कुंडलिया-43

**चोला भया पुराना आज फटै कि काल॥**
**आज फटै कि काल तेहु पै है ललचाना।**
**तीनों पन गे बीत भजन का मरम न जाना॥**
**नख सिख भये सपेद तेहू पै नाहीं चेतै।**
**जोरि जोरि धन धरै गला औरन का रेतै॥**
**अब का करिहौ यार काल ने किहा तगादा।**
**चलै न एकौ जोर आय जब पहुँचा वादा॥**
**पलटू तैहु पै लेत है माया मोह जँजाल।**
**चोला भया पुराना आज फटै कि काल॥**

**शब्दार्थ**—चोला= शरीर। तगादा= लौटाने का वादा। वादा= इकरार, प्रतिज्ञा।

**भावार्थ**—शरीर पुराना हो गया है। यह आज नष्ट हो या कल। इतने पर भी मनुष्य भोग और सम्मान पाने के लोभ में पड़ा है। बालपन, जवानी और बुढ़ापा तीनों पन बीतकर जरजरता आ गयी, इतने पर आत्मशोधन की साधना नहीं सीखी। सिर से पैर तक के बाल सफेद हो गये। तब पर भी सावधान

नहीं होता है। प्रत्युत दूसरे का गला काट-काट कर धन जोड़कर जमा करता है। हे मित्र ! अब क्या उपाय करोगे? काल ने चलने की नोटिसें दे दी हैं। जब मौत का वारंट आ जायेगा तब बचने का तुम्हारा एक भी बल नहीं चलेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि इतने पर भी मनुष्य माया-मोह के जंजाल को अपने ऊपर ओढ़े रहता है। सावधान! शरीर पुराना हो गया है। यह आज-कल में नष्ट हो जायेगा।

## कुंडलिया-44

**धूआँ का धौरेहरा ज्यों बालू की भीत॥**
**ज्यों बालू की भीत ताहि को कौन भरोसा।**
**ज्यों पक्का फल डारि गिरत से लगै न दोसा॥**
**कच्चे घड़े ज्यों नीर पानी के बीच बतासा।**
**दारू भीतर अगिनि जिवन की ऐसी आसा॥**
**पलटू नर तन जात है घास के ऊपर सीत।**
**धूआँ का धौरेहरा ज्यों बालू की भीत॥**

**शब्दार्थ**—धौरेहरा= धरहरा, लाट। दोसा= दूसरी बार। दारू= दारु, लकड़ी।

**भावार्थ**—जैसे धुआ की ऊंची लाट और रेत की दीवार क्षणिक और दुर्बल है। उनका क्या भरोसा करना? जैसे फल डाल से गिरकर उसमें दूसरी बार नहीं लगता; जैसे मिट्टी के कच्चे घड़े में पानी बहुत समय तक नहीं टिकता; जैसे पानी के बीच बताशा गलने में देरी नहीं लगती वैसे क्षणिक जीवन पर भरोसा करने योग्य नहीं है। जैसे लकड़ी में आग रहती है, वैसे शरीर में काल रहता है। घास के ऊपर पड़े ओस-बूंद के समान शरीर के नष्ट होने में देरी नहीं लगती। यह शरीर तो धुआं की लाट और बालू की दीवार की तरह देखने भर का है। यह क्षण में नष्ट हो जायगा।

## कुंडलिया-45

**यही दिदारी दार है सुनहु मुसाफिर लोग॥**
**सुनहु मुसाफिर लोग भेट फिर बहुरि न होना।**
**को तुम को हम आय मिले सपने में सोना॥**

**हिल मिल दिन दस रहे ताहि को सोच न कीजै।**
**कोऊ है थिर नाहिं दोस ना हमको दीजै॥**
**अहिर बाँधि के गाय एक लेहड़े में आनी।**
**कूवाँ की पनिहारि गई ले घर घर पानी॥**
**पलटू मछरी आब ज्यों नदी नाव संयोग।**
**यही दिदारी दार है सुनहु मुसाफिर लोग॥**

**शब्दार्थ**—दिदारी=दीदार, दर्शन, देखना। दार=स्थान, मकान, सराय। अहिर=ग्वाला। आब=पानी॥

**भावार्थ**—हे मुसाफिरो! सुनो, इस मुसाफिरखाने में हम एक-दूसरे के दर्शन कर लें। आगे हम लोगों की भेंट होने वाली नहीं है। तुम कौन हो, मैं कौन हूं? सोते समय जैसे सपने में बहुत लोग मिले, किन्तु जागने पर कुछ नहीं, वैसे हम लोगों का परस्पर मिलना है। हम लोग इस दस दिन के जीवन में हिल-मिलकर रहें। दुनियादारी चीजों के लिए चिंता न करें। न किसी का जीवन स्थिर है और न किसी की प्रभुता स्थिर है। अतएव एक दूसरे को दोष न देकर समता से रहें। ग्वाला गाय को बांधकर अपने गायों के झुंड में लाता है। पानी भरने वाली पनिहारिन घर-घर पानी भरती है। जैसे मछली नदी-नाले के पानी में रह लेती है और जैसे नदी की नाव में अनेक दिशा के लोग बैठकर नदी पार होते हैं और सब अपना-अपना रास्ता अपनाते हैं, वैसे हम-आप सब थोड़े समय के लिए इकट्ठे हुए हैं और देखते-देखते सदा के लिए बिछुड़ जायंगे। बस, इस संसार-सराय में हम थोड़े समय के लिए मिले हैं। यही दर्शन से दर्शन है, फिर न मिल सकेंगे।

## कुंडलिया-46

**भजन आतुरी कीजिये और बात में देर॥**
**और बात में देर जगत में जीवन थोरा।**
**मानुष तन धन जात गोड़ धरि करौ निहोरा॥**
**काँचे महल के बीच पवन इक पंछी रहता।**
**दस दरवाजा खुला उड़न को नित उठि चहता॥**
**भजि लीजै भगवान एही में भल है अपना।**
**आवागौन छुटि जाय जनम की मिटै कलपना॥**
**पलटू अटक न कीजिए चौरासी घर फेर।**
**भजन आतुरी कीजिये और बात में देर॥**

**शब्दार्थ**—आतुरी= शीघ्र। निहोरा= प्रार्थना। दस दरवाजा= दो आंख, दो नाक, दो कान, मुख, गुदा, लिंग तथा कपाल कुहर का तालुमूल। अटक= देर, विलंब, आलस्य।

**भावार्थ**—आत्मशोधन का काम शीघ्र कर लीजिए। अन्य काम करने में भले ही विलम्ब करें। संसार में थोड़े दिन का जीवन है। मैं तुम्हारे पैर पकड़कर तुमसे प्रार्थना करता हूं। मनुष्य शरीर ही महा धन है और वह बीता जा रहा है। इस कच्ची काया रूपी महल के बीच में एक प्राण पखेरू रहता है। इस महल के दसों द्वार हर क्षण खुले हैं। इसमें से पक्षी के उड़ जाने में क्या देर है? सद्गुरु भगवान की सेवा करो और अपने आत्माराम में विश्राम। इसी में अपना कल्याण है। इस साधना के फल में जन्म-जन्मांतर की विषय-कल्पना नष्ट हो जायेगी और जीव का जन्म-मरण बंधन कट जायगा। पलटू साहेब कहते हैं कि देरी तथा आलस्य मत करो और पुनः चौरासी के घर में न पड़ो। आत्मशोधन में शीघ्रता करो, भले अन्य काम में विलम्ब करो।

## कुंडलिया-47

**यही समय गुरु पाँय में गोता लीजै खाय॥<br>गोता लीजै खाय नाम के सरवर माहीं।<br>अवधि आइ नगिचान दावँ फिर ऐसा नाहीं॥<br>मानुष तन सकराँत महोदधि जात सिरानी।<br>ऐसी परबी पाइ नहीं तुम महिमा जानी॥<br>सतसंगत के घाट पैठि कै कर असनाना।<br>तन मन दीजै दान बहुरि नहिं औना जाना॥<br>पलटू बिलम न कीजिये ऐसा औसर पाय।<br>यही समय गुरु पाँय में गोता लीजै खाय॥**

**शब्दार्थ**—सरवर= सरोवर, तालाब। सकराँत= घटता जा रहा है। महोदधि= समुद्र, जीवन का विस्तार। सिरानी= समाप्त। परबी= पर्व, शुभ अवसर। औना जाना= जन्म-मरण।

**भावार्थ**—हे कल्याणार्थी! आज का समय सुनहला है। सद्गुरु की चरण-शरण में रहकर सत्संग-सरोवर में गोता लगा लो। जीवन की समय-सीमा पूरी होती जा रही है। ऐसा सुनहला समय मिलना दुर्लभ है।

मनुष्य शरीर का समय घटता जा रहा है और जीवन-समुद्र का जल सूखता जा रहा है। ऐसा पर्व का दिन पाकर तुमने इसके महत्त्व को नहीं समझा। सत्संग के घाट पर बैठकर आत्मज्ञान-सरोवर में स्नान कर लो। आत्मज्ञान की साधना में अपने तन-मन को समर्पित कर दो, फिर तो जन्म-मरण का बंधन कट जायगा। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसा सुनहला समय पाकर विलम्ब मत करो। इसी समय में सद्गुरु के सत्संग-सरोवर में गोता लगा लो।

## कुंडलिया-48

**भया तगादा साहु का गया बहाना भूल॥**
**गया बहाना भूल नफा में मूर गँवाया।**
**भया साहु से झूठ बैठि के पूँजी खाया॥**
**नहीं लिहा हरि नाम करी नहिं संतन सेवा।**
**तीनों पन गये बीत पूजते देबी देवा॥**
**सारी सरहज सास धाइ के लूटि मजा री।**
**तुम्हरे सीस बिसान कोऊ ना संग तुम्हारी॥**
**पलटू मानै काल ना कठिन चलावै सूल।**
**भया तगादा साहु का गया बहाना भूल॥**

**शब्दार्थ**—तगादा= तक़ाज़ा, अधिकारपूर्वक मांग। साहु= पूंजीपति, प्रकृति, मृत्यु। मूर= मूलधन। धाइ= धाय, सेविका। बिसान= आ पड़ा, ऊपर आ पड़ा।

**भावार्थ**—जब पूंजी वाले की मांग हुई तब बहाना करने की आदत भूल गयी। जब प्रकृति ने शरीर को लौटाने की मांग की तब सब बहानेबाजी गुम हो गयी। मनुष्य ने लाभ खाने के चक्कर में अपना मूल धन खो दिया—विषय-भोग और सम्मान पाने के चक्कर में अपना विवेक-धन खो दिया। बिना कमाई किये साहु से उधारी में पाया धन खा लिया—आत्मसुधार न कर जीवन को भोग-विलास में बिता दिया। न हरि का नाम लिया और न संतों की सेवा की—न सद्गुरु से आत्मज्ञान का उपदेश लिया न बड़ों की सेवा की। काल्पनिक जड़ देवी-देवता पूजते-पूजते जीवन के तीनों पन—कौमार्य, जवानी तथा बुढ़ापा बीत गये। बालपन में धाय की सेवा में आनन्द माना और जवानी में साली, सरहज, सासु आदि से सेवा-सम्मान पाने में आनंद माना।

परंतु ध्यान रखो, अपने सारे कर्म फल भोगों का बोझ तुम्हारे ही सिर पर आकर पड़ेगा। तुम्हारे कर्मफल भोगों में कोई अंगीकार न होगा। पलटू साहेब कहते हैं कि काल-चक्र तुम्हारे ऊपर दया-मया नहीं करेगा, अपितु विनाश का कठिन शूल चलाकर तुम्हारा सब कुछ छीन लेगा। जब प्रकृति तुम्हारी देह को लौटाना चाहेगी तब तुम्हारी सारी बहानेबाजी भूल जायगी।

## कुंडलिया-49

**काल महासिल साहु का सिर पर पहुँचा आय॥**
**सिर पर पहुँचा आय उजुर कछु एकौ नाहीं।**
**पहुँचा धै अगुआय लिहे धरि मारत जाही॥**
**मार परे भा चेत लगा तब करन बिचारा।**
**मूरख के परसंग बैठि कै बात बिगारा॥**
**चलै न एकौ जोर बहाना काको लेवै।**
**नहीं ब्याज नहिं मूर साहु को का लै देवै॥**
**पलटू वादा टरि गया पूँजी गई वराय।**
**काल महासिल साहु का सिर पर पहुँचा आय॥**

**शब्दार्थ**—महासिल= महसूल (टैक्स) वसूलने वाला सिपाही। उजुर= उज्र, बहाना, प्रार्थना। धै= पकड़कर। अगुआय= आगे। वराय= समाप्त।

**भावार्थ**—प्रकृति रूपी साहू का तहसीलदार सिपाही मृत्यु है, वह आकर सिर पर पहुंच गया। उसके सामने कोई बहाना, प्रार्थना चलने वाला नहीं है। मौत आ पहुंची और प्राणी को पकड़ लिया और आगे मारते हुए ले चली। जब मौत की मार पड़ी, चलने का समय आया, तब मनुष्य को होश और पश्चाताप हुआ और विचार करने लगा कि मैं जीवनपर्यन्त मूर्खों के बीच में बैठकर अपना कल्याण करने का समय व्यर्थ खो दिया। अब समय बीत गया है। मौत से अपना जोर चलनेवाला नहीं है। बहाना भी किसका लिया जावे। मूल धन ही नहीं बचा है, तो ब्याज कैसे दिया जाय-विवेक ही खो गया, तो कल्याण कहां से हो? अब प्रसन्नतापूर्वक प्रकृति को शरीर कैसे लौटाया जाय? पलटू साहेब कहते हैं कि मूल पूंजी खो जाने से ब्याज सहित धन लौटाने की प्रतिज्ञा टल गयी—विवेक द्वारा आत्मकल्याण करके प्रसन्नता पूर्वक प्रकृति को शरीर लौटने की बात खटाई में पड़ गयी। प्रकृति का तहसीलदार सिपाही काल सिर पर आ धमका।

## कुंडलिया-50

**ज्यों ज्यों सूखै ताल है त्यों त्यों मीन मलीन॥**
**त्यों त्यों मीन मलीन जेठ में सूख्यो पानी।**
**तीनों पन गये बीति भजन का मरम न जानी॥**
**कँवल गये कुम्हिलाय हंस ने किया पयाना।**
**मीन लिया कोउ मारि ठाँव ढेला चिहराना॥**
**ऐसी मानुष देह बृथा में जात अनारी।**
**भूला कौल करार आप से काम बिगारी॥**
**पलटू बरस औ मास दिन पहर घड़ी पल छीन।**
**ज्यों ज्यों सूखै ताल है त्यों त्यों मीन मलीन॥**

**शब्दार्थ**—मीन= मछली। चिहराना= फट गया। कौल-क़ौल= प्रतिज्ञा, वादा। करार= क़रार, वादा, प्रतिज्ञा।

**भावार्थ**—जैसे-जैसे तालाब सूखता है वैसे-वैसे मछली दुखी होती है। जेष्ठ महीना में तालाब का पूरा पानी सूख गया—बुढ़ापा आ जाने पर शरीर दुर्बल हो गया। बाल, जवानी तथा बुढ़ापा तीनों पन बीत गये, किन्तु आत्मशोधन का रहस्य नहीं समझ सका। तालाब सूख जाने से कमल फूल कुम्हला गये और उसमें रहने वाला हंस उड़ गया। मछुवारे ने मछलियां मार लीं और तालाब की मिट्टी सूखकर फट गयी और जगह-जगह ढेले हो गये—शरीर जर्जर हो गया। अंग सूख गये। इन्द्रियां निस्तेज हो गयीं। जीव देह छोड़कर चल दिया और देह नष्ट हो गयी। हे मूढ़! कल्याण-साधना करने योग्य मनुष्य-शरीर व्यर्थ में बीत रहा है। 'हम अपना कल्याण करेंगे' यह प्रतिज्ञा भूल गयी। तूने अपनी असावधानी से अपना काम बिगाड़ लिया। पलटू साहेब कहते हैं कि वर्षा, मास, दिन, पहर, घड़ी तथा पल के नाम से जाना जाता हुआ समय क्षण-क्षण क्षीण हो रहा है। जैसे-जैसे तालाब सूखता है, वैसे-वैसे मछली दुखी होती है—जैसे-जैसे शरीर क्षीण होता है, वैसे-वैसे मनुष्य निराश होता है।

## कुंडलिया-51

**बूड़ी जात जहाज है नाम निवर्तिक बोल॥**
**नाम निवर्तिक बोल हाथ से तेरे जाती।**
**माँझ धार में फटी सूम की जोगवै थाती॥**

**ऐसे मूरख लोग लालच में जनम गँवावैं।**
**गई हाथ से चीज तेहू पर लेखा लावैं॥**
**कंठा रूँधन भये मोह में लागा अजहूँ।**
**कीन्हे प्रान पयान नाम ना सुमिरे तबहूँ॥**
**पलटू नर तन रतन सम भा कौड़ी के मोल।**
**बूड़ी जात जहाज है नाम निवर्तिक बोल॥**

**शब्दार्थ**—निवर्तिक=बचाने वाला। लेखा=हिसाब, चिंता। कंठा=कंठ, गला।

**भावार्थ**—मानव-शरीर भवसागर तरने का जहाज है, परंतु वह विषय-वासना के सागर में डूबा जा रहा है। उसको बचाने वाले आत्मज्ञान के निर्णय के शब्द एवं बोल हैं, परन्तु वे तेरे हाथ से खिसकते जा रहे हैं। तू उनका उपयोग नहीं करता है। तेरा जहाज बीच में ही फटा है। जैसे कंजूस मनुष्य अपने धन की थैली सम्हालने में लगा रहता है, वैसे तू माया-मोह में डूबा है। लोग ऐसे मूर्ख हैं कि मिथ्या भोगों के लोभ में पड़कर जीवन खो रहे हैं। जो वस्तु हाथ से छूट गयी है, उसको लेकर भी चिंता करते हैं। शरीर जरजर है। सांस गले में अटकी है, ऐसी स्थिति में भी मन मोह में फंसा है। प्राण-पखेरू उड़ने का समय आ गया है, इतने पर भी सतनाम का स्मरण नहीं करता। पलटू साहेब कहते हैं कि मनुष्य-शरीर उत्तम रत्न है, परंतु उसका दुरुपयोग करने से वह कौड़ी की कीमत पर बिक रहा है। भवसागर से तारने वाला मानव-शरीर रूपी जहाज माया-मोह के सागर में डूबा जा रहा है। सतनाम ही उसको डूबने से बचाने वाला बोल है।

**विशेष**—सत चेतन आत्मा है। उसका बोध करने वाला निर्णय वचन ही सतनाम है।

## 6. भक्ति और प्रेम

### कुंडलिया-52

**एक भक्ति मैं जानौं और झूठ सब बात॥**
**और झूठ सब बात करै हठजोग अनारी।**
**ब्रह्म दोष वो लेय काया को राखै जारी॥**
**प्रान करै आयाम कोई फिर मुद्रा साधै।**
**धोती नेती करै कोई लै स्वासा बाँधै॥**

**उनमुनि लावै ध्यान करै चौरासी आसन।**
**कोई साखी सबद कोइ तप कुस कै डासन॥**
**पलटू सब परपंच है करै सो फिर पछितात।**
**एक भक्ति मैं जानौं और झूठ सब बात॥**

**भावार्थ**—मैं एकमात्र भक्ति जानता हूं। इसके अतिरिक्त सब बातें झूठी हैं। अनाड़ी लोग हठयोग करते हैं। वे शरीर को अधिक कष्ट देते हैं इससे तो ब्रह्मदोष ही लगता है, क्योंकि वे देह में रहने वाले आत्मा रूपी ब्रह्म को दुख देते हैं। वे प्राण को साधते हैं, मुद्रा साधते हैं, नेति-धौति आदि करके श्वास को बांधते हैं। वे कहते हैं कि हम उन्मनि ध्यान करते हैं। वे योग के चौरासी आसन करते हैं। कोई सारशब्द गाते फिरते हैं। कोई कुश घास का बिस्तर बनाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि यह सब प्रपंच है। जो यह सब करेगा वह अंत में पश्चाताप करेगा। मैं तो केवल एक भक्ति जानता हूं। इसके बाद सब झूठ है।

## कुंडलिया-53

**संत न चाहैं मुक्ति को नहीं पदारथ चार॥**
**नहीं पदारथ चार मुक्ति संतन की चेरी।**
**ऋद्धि सिद्धि पर थुकैं स्वर्ग की आस न हेरी॥**
**तीरथ करहिं न बर्त नहीं कछु मन में इच्छा।**
**पुन्य तेज परताप संत को लगै अनिच्छा॥**
**ना चाहैं बैकुंठ न आवागवन निवारा।**
**सात स्वर्ग अपवर्ग तुच्छ सम ताहि बिचारा॥**
**पलटू चाहै हरि भगति ऐसा मता हमार।**
**संत न चाहैं मुक्ति को नहीं पदारथ चार॥**

**शब्दार्थ**—पदारथ चार=चार पदार्थ—अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष। थुकैं=तिरस्कार करते हैं। अनइच्छा=इच्छा-रहित।

**भावार्थ**—संत न मुक्ति चाहते हैं और न चार पदार्थ। मुक्ति तो संतों की सेविका है। वह निरंतर उनके पीछे लगी रहती है। संत ऋद्धि-सिद्धि का तिरस्कार करते हैं। वे स्वर्ग पाने की भी इच्छा नहीं करते। न वे तीर्थ करते हैं, न व्रत के नाम पर उपवास करते हैं। उनके मन में कोई इच्छा ही नहीं रहती। संत अपने पुण्य कर्मों के प्रभाव से सब समय इच्छाशून्य रहते

हैं। न वे बैकुण्ठ चाहते हैं और न आवागमन का निवार चाहते हैं। उनके लिए सात स्वर्ग और अपवर्ग निरर्थक हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा ऐसा मत है, मैं केवल हरि-भक्ति चाहता हूं। संत मुक्ति और चार पदार्थ नहीं चाहते।

**विशेष**—संत तीर्थ-व्रत न करें, स्वर्ग-बैकुंठ न चाहें, यह तो ठीक है, किन्तु मुक्ति और आवागमन का निवारण भी नहीं चाहते हैं, यह बात सामान्य लोगों को अजीब लगेगी, किन्तु अजीब कुछ नहीं है। पहले साधक जन्म-मरण से मुक्त होना चाहता है, अतएव मुक्ति चाहता है, परंतु जब वह इच्छाशून्य होकर आत्मलीनता में रहता है, तब कुछ नहीं चाहता है। तब वह मुक्त ही रहता है। इसलिए मुक्ति सेविका बनी उसके साथ निरंतर रहती है। पूर्ण संत मुक्ति में निरंतर जीता है। उसे तब मुक्ति पाने की इच्छा क्या रहेगी ! वह तो नित्य मुक्त ही है। अब उसे आवागमन से छूटना नहीं रह गया। वह तो भवसागर से निरंतर पार ही है। मंजिल पा जाने पर मंजिल पाने की इच्छा नहीं रह जाती। जो निरंतर मुक्त है वह अब मुक्ति क्या चाहेगा? हरिभक्ति आत्मलीनता ही है।

## कुंडलिया-54

**ऐसी भक्ति चलावै मची नाम की कीच॥<br>मची नाम की कीच बूढ़ा औ बाला गावै।<br>परदे में जो रहै सब्द सुनि रोवत आवै॥<br>भक्ति करै निरधार रहै तिर्गुन से न्यारा।<br>आवै देय लुटाय आपु ना करै अहारा॥<br>मन सबको हरि लेय सभन को राखै राजी।<br>तीन देख ना सकै बैरागी पंडित काजी॥<br>पलटू दास इक बानिया रहै अवध के बीच।<br>ऐसी भक्ति चलावै मची नाम की कीच॥**

**शब्दार्थ**—कीच= कीचड़, बहुतायत, गूंज। निरधार= असंग दशा। तिर्गुन = सत, रज, तम।

**भावार्थ**—मैंने ऐसी भक्ति चलाई कि सतनाम की गूंज हो गयी। बालक से बूढ़े तक उसे गाने लगे। जो घर के भीतर रहता है वह मेरे शब्द सुनकर विरह-कातर होकर रोते हुए सामने आता है। भक्ति आत्मा की असंग दशा है

जो तीनों जड़ गुणों से परे है। ऐसी ही भक्ति करना चाहिए। जो माया की वस्तु आवे उसे लोगों की सेवा में खर्च करे। उसको स्वयं के विलास में न लगावे। ऐसी निर्मल भक्ति करने वाले का मन सबको अपने वश में कर लेता है और सबको प्रसन्न कर लेता है। परंतु इस भक्ति को तीन वर्ग के लोग नहीं देख सकते—वैरागी, पंडित और काजी। पलटू दास तो एक बनिया है जो अयोध्या नगरी के बीच में रहता है। उसने ऐसी ही निराधार भक्ति चलायी है जिसकी सर्वत्र गूंज है।

**विशेष**—संत पलटू साहेब की भक्ति आत्मलीनता थी और उनकी रहनी फक्कड़ाना वैराग्यमय। इससे प्रभावित होकर आम जनता उनकी सुकीर्ति गाती थी। अयोध्या के कर्मकांडी और बहिर्मुखी भक्ति करने वाले वैरागी, पंडित और काजी इसे नहीं सह पाते थे, अतएव वे पलटू साहेब की निन्दा करते थे। संसार की यही कथा है।

## कुंडलिया-55

**मेरे तन मन लग गई पिय की मीठी बोल॥**
**पिय की मीठी बोल सुनत मैं भई दिवानी।**
**भंवरगुफा के बीच उठत है सोहं बानी॥**
**देखा पिय का रूप रूप में जाय समानी।**
**जब से भया मिलाप मिले पर ना अलगानी॥**
**प्रीत पुरानी रही लिया हम ने पहिचानी।**
**मिली जोत में जोत सुहागिन सुरत समानी॥**
**पलटू सब्द के सुनत ही घूँघट डारा खोल।**
**मेरे तन मन लग गई पिय की मीठी बोल॥**

**शब्दार्थ**—पिय=प्रियतम आत्मा। भंवरगुफा=हृदय, मस्तिष्क। सोहं=सोहम्, वह मैं। घूंघट=अविद्या, द्वैतभाव।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति कहती है कि प्रियतम आत्मा की चर्चा सुनकर मेरे तन-मन में उसका बोध समा गया। मैं उससे एकमेक होने के लिए पगली हो गयी। अब हृदय में निरंतर गहरी ध्वनि उठती है कि 'वह मैं हूं।' जब प्रियतम आत्मा के स्वरूप का बोध हुआ तब मैं उसमें जाकर लीन हो गयी। जब से मैं आत्मलीन हुई, तब से उनसे अलग नहीं हुई। चेतन आत्मा ही अपना शाश्वत स्वरूप है, इसको मैंने पहचान लिया। मनोवृत्ति ज्योति आत्मज्योति में मिल

गयी। मैं आत्म-पति वाली होकर सोहागिन हो गयी और आत्मभाव के लक्ष्य में लीन हो गयी। पलटू साहेब कहते हैं कि गुरु के आत्मबोधपरक शब्द कि 'मैं वही हूं जिसे मैं चाहता हूं।' सुनते ही अविद्या का परदा हट गया। आत्मबोध की बात मेरे तन-मन में व्याप्त हो गयी।

**विशेष**—शब्दों का घटाटोप बहुत होता है। सार अर्थ है कि स्वरूपज्ञान होने पर मनोवृत्ति आत्मलीन हो गयी।

## कुंडलिया-56

**पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय॥**
**आपुइ गई हिराय कवन अब कहै सँदेसा।**
**जेकर पिय में ध्यान भई वह पिय के भेसा॥**
**आगि माहिं जो परै सोऊ अग्नी ह्वै जावै।**
**भृंगी कीट को भेंट आपु सम लेइ बनावै॥**
**सरिता बहि के गई सिन्धु में रही समाई।**
**सिव सक्ती के मिले नहीं फिर सक्ती आई॥**
**पलटू दिवाल कहकहा मत कोउ झाँकन जाय।**
**पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय॥**

**शब्दार्थ**—पिय= आत्मा रूपी परमात्मा। हिराय= खो गयी। दिवाल कहकहा= चीन देश की कहकहा नाम की दीवार; तात्पर्य में दृश्य माया।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति कहती है कि पिय-परमात्मा को खोजने चली तो मैं स्वयं खो गयी। अब लौटकर कौन संसार को यह संदेश दे। जिसको प्रियतम की ध्यानमग्नता है, वह प्रियतम का स्वरूप हो जाता है। जो वस्तु अग्नि में पड़ती है, वह अग्नि रूप हो जाती है। भृंगी के शब्द सुनकर कीड़े भृंगी हो जाते हैं। नदी समुद्र में मिलकर समुद्र रूप हो जाती है। जब शक्ति शिव से मिल गयी तब वह शिव रूप हो जाती है। इसी प्रकार मनोवृत्ति आत्मारूपी परमात्मा में मिलकर तदाकार हो जाती है। संत पलटू साहेब कहते हैं कि सांसारिक माया रूपी कहकहा की दीवार पर चढ़कर भोगों को देखने कोई मत जाओ। मनोवृत्ति आत्मा में लीन होकर तदाकार हो जाती है।

**विशेष**—जब मन स्वरूपलीन हुआ, तब अन्य कुछ खोजने की बात व्यर्थ हो गयी।

### कुंडलिया-57

**मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कंथ॥**
**जब से पाया कंथ पंथ सतगुरु बतलाया।**
**सतगुरु बड़े दयाल करी उन मो पर दाया॥**
**स्वस्ता मन में आइ छुटी मेरी दुचिताई।**
**सोऊँ कंथ के साथ अंग से अंग लगाई॥**
**अभ्यन्तर जागी प्रीत निरन्तर कंथ से लागी।**
**दरस परस के करत जगत की भ्रमना भागी॥**
**पलटू सतगुरु सब्द सुनि हृदय खुला है ग्रंथ।**
**मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कंथ॥**

**शब्दार्थ**—मेरी माइजी= मनोवृत्ति। कंथ= पति, आत्मा। स्वस्ता= शांति। दुचिताई= दुविधा। अभ्यंतर= भीतर। ग्रंथ= ग्रंथि, व्यसन।

**भावार्थ**—मेरी मनोवृत्ति माता जब से आत्मा रूपी पति को पा गयी तब से उसी में डूब गयी। सद्‌गुरु ने इसका बोध दिया। सद्‌गुरु बड़े कृपालु हैं। उन्होंने मेरे ऊपर कृपाकर मुझे स्वरूप-बोध दिया। आत्मबोध पाकर मेरे मन में शांति आ गयी और यह दुविधा दूर हो गयी कि परमात्मा कहीं अलग है। अब तो मनोवृत्ति निरंतर आत्म-पति में एकमेक होकर विश्रांति पा गयी। अब भीतर आत्म-पति का प्रेम निरंतर जगा रहता है। आत्मबोध होते ही जगत में भटकना बन्द हो गया। पलटू साहेब कहते हैं कि सद्‌गुरु के आत्मबोधपरक शब्द सुनकर हृदय की ग्रंथियां खुल गयीं, मन निर्भ्रांत और निर्मल हो गया। अब मनोवृत्ति निरंतर आत्मलीन है।

### कुंडलिया-58

**आठ पहर निरखत रहै जैसे चंद चकोर॥**
**जैसे चंद चकोर पलक से टारत नाहीं।**
**चुगै बिरह से आग रहै मन चन्दै माहीं॥**
**फिरै जेही दिस चंद तेही दिसि को मुख फेरै।**
**चंदा जाय छिपाय आग के भीतर हेरै॥**
**मधुकर तजै न पदम जान से जाइ बँधावै।**
**दीपक में ज्यों पतंग प्रेम से प्रान गँवावै॥**
**पलटू ऐसी प्रीत कर पर धन चाहै चोर।**
**आठ पहर निरखत रहै जैसे चंद चकोर॥**

**शब्दार्थ**—चंद= चन्द्रमा। मधुकर= भ्रमर। पदम= कमल फूल।

**भावार्थ**—साधक को रात-दिन वैसे आत्मलीनता में रहना चाहिए जैसे चकोर पक्षी चंद्रमा को सब समय देखता रहता है। चकोर चंद्रमा को अपनी आंखों से हटाता नहीं है। जब चंद्रमा नहीं दिखता तो वह आग को चंद्रमा मानकर उसको चुगने लगता है, क्योंकि उसका मन सदैव चंद्रमा में ही रहता है। चंद्रमा आकाश में जिस तरफ घूमता है, चकोर उसी तरफ अपना मुंह घुमाकर उसे देखता रहता है। जब चंद्रमा छिप जाता है तब चकोर उसे आग में खोजता है। भंवरा कमल फूल में मस्त हो जाता है। उसी में उसकी जान भले जाय, परन्तु भंवर कमल फूल नहीं छोड़ता। पतिंगे दीपक की ज्योति में अपने प्राण खो देते हैं। चोर पराये धन को चुराने के लिए अपने प्राण न्योछावर करता है। पलटू साहेब कहते हैं कि उक्त उदाहरणों को सामने रख कर स्वरूपस्थिति में अखंड प्रेम करना चाहिए। रात-दिन साक्षीभाव में रहकर आत्मलीन रहना चाहिए।

**विशेष**—चन्द्र-चकोर, भ्रमर-कमल फूल, पतिंगे-ज्योति तथा चोर पर-धन आदि का उदाहरण देकर ग्रंथकार कहते हैं कि जब ये सब जीव अनर्थ में अपने जीवन को समर्पित कर देते हैं, तब कल्याणार्थी अपने कल्याण के लिए मन, वाणी, कर्म से क्यों न समर्पित हो! अखंड अनुराग के बिना कोई काम ठीक से नहीं होता। जन्म-जन्म का दुख मिटाकर शाश्वत शांति प्राप्ति के लिए साधक को प्राणपण से डट जाना चाहिए।

## कुंडलिया-59

**अम्मा मेरा दिल लगा मुझ से रहा न जाय॥**
**मुझ से रहा न जाय बिना साहिब को देखे।**
**जान तसद्‌दुक करौं लगै साहिब के लेखे॥**
**मुझको भया है रोग जायगा जीव हमारा।**
**एकर दारू यही मिलै जो प्रीतम प्यारा॥**
**पड़ा प्रेम जंजाल जिकिर सीने में लागी।**
**मैं गिरि परी बेहोस लोक की लज्जा भागी॥**
**पलटू सतगुरु बैद बिन कौन सकै समझाय।**
**अम्मा मेरा दिल लगा मुझ से रहा न जाय॥**

**शब्दार्थ**—अम्मा= माता, आत्मस्थिति। साहिब= श्रेष्ठ, आत्मा। तसद्दुक = न्योछावर। एकर= इसका। दारू= दवा, औषध। जिकिर= जिक्र, आत्मस्मरण। वैद= वैद्य।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति आत्मस्थिति से कहती है कि हे माता! मेरा मन आत्मा-पति में लग गया है। मुझे उनके बिना रहना कठिन है। बिना आत्मसाक्षात्कार के अब मैं चैन से नहीं रह सकती। आत्मसाक्षात्कार होने पर मैं अपनी जान उनको समर्पित कर दूंगी। मुझको विरह की व्याधि हो गयी है। इसी में मेरा जीवन जायगा। इस व्याधि से छूटने के लिए एक ही दवा है कि मेरा प्रियतम प्यारा आत्मा मुझे मिल जाय। अब मेरे दिल में प्रेम का जंजाल पड़ गया है और मेरे दिल में निरंतर आत्मचिंतन की धारा लगी है। मैं उसी नशे में अचेत होकर संसार से छूटकर गिर पड़ी हूं। अब मेरी लोक की लज्जा भाग गयी है। पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु वैद्य के बिना मेरी चिकित्सा कौन कर सकेगा? मुझे कौन बोध देगा? हे स्वरूपस्थिति रूपी अम्मा! मेरा दिल प्रियतम आत्मदेव में लगा है। उनके बिना मुझसे रहा नहीं जाता है।

**विशेष**—संत पलटू साहेब का पूरा काव्य व्याकरण और पिंगल की कसौटी में भले न खरा हो, परंतु उनकी काव्यशक्ति का लोहा सबको मानना पड़ेगा। वे कैसी गूढ़ बात को सरल लौकिक रूपकों में स्पष्ट व्यक्त कर देते हैं, यह स्पष्ट है। ऊपर आत्मलीनता की मस्तानगी का वर्णन है।

## कुंडलिया-60

**सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं॥**
**सहज आसिकी नाहिं खाँड़ खाने को नाहीं।**
**झूठ आसिकी करै मुलुक में जूती खाही॥**
**जीते जो मरि जाय करै ना तन की आसा।**
**आसिक को दिन रात रहै सूली पर बासा॥**
**मान बड़ाई खोय नींद भर नाहीं सोना।**
**तिल भर रक्त न मांस नहीं आसिक को रोना॥**
**पलटू बड़े बेकूफ वे आसिक होने जाहिं।**
**सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं॥**

**शब्दार्थ**—आसिकी = आशिक़ी, प्रेम। खांड़ = खाड़, शकर, मीठा। आसिक = आशिक़, प्रेमी।

**भावार्थ**—आत्म-प्रेम सहज नहीं होता, अपितु अपने हाथ से अपना सिर उतारकर सद्गुरु के चरणों में रख देना होता है। यह मीठा खाना नहीं है कि गप से मुख में डाल लिया। जो मनुष्य साधुता से झूठा प्रेम करेगा वह संसार

में जूते खायेगा। आत्मसाक्षात्कार के लिए प्रेम करना है जीते जी मर जाना, शरीर की आशा छोड़ देना। आत्मसाक्षात्कार के प्रेमी का निवास सदैव संयम की शूली पर होता है। वह मन को संसार से दूर रखकर उसे कसे रहता है। वह मान-बड़ाई को खो देता है। वह एक क्षण भी असावधान नहीं होता। वह अपने शरीर के मोह में नहीं रहता। सच्चा आशिक रोता नहीं। वह कभी चिंतित नहीं होता, अपितु सदैव प्रसन्न रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि वे बड़े बेवकूफ हैं जो ऊपरी मन से आत्मकल्याण के प्रेमी बनने जाते हैं। यह तो अपना सिर अपने हाथों से उतारकर जमीन पर रख देना है। प्रेमी होना सहज नहीं है।

## कुंडलिया-61

**भूली जग की चाल सब भई जोगिनि अलमस्त॥**
**भई जोगिनि अलमस्त खबर कछु तन की नाहीं।**
**खाय पियै अब कौन रहै मन भजनै माहीं॥**
**ऐसी लागी नेह तुरिया से भई अतीता।**
**आठ पहर गलतान जोति के घर को जीता॥**
**है गई दसा अरूढ़ ज्ञान तजि भई बिज्ञानी।**
**धरती नभ जरि गई जरा है पवन औ पानी॥**
**पलटू दिनकर उदय भा रजनी भै गई अस्त।**
**भूली जग की चाल सब भई जोगिनि अलमस्त॥**

**शब्दार्थ**—अलमस्त= नशे में चूर। गलतान= लीन।

**भावार्थ**—मेरी मनोवृत्ति सभी सांसारिक चाल भूल गयी और वैराग्य के नशा में चूर होकर योगिनि हो गयी। अब यह शरीर की भी खबर नहीं रखती है। अब खाने-पीने के चक्कर में कौन पड़े ! मन सदैव आत्म-चिंतन में रहता है। मन ऐसा अंतर्मुख हुआ कि तुरिया से भी ऊपर उठ गया। कल्पित ज्योति को जीतकर आठों पहर आत्मा में लीन रहता है। मन की स्वरूपस्थिति में आरूढ़ दशा हो गयी और लौकिक ज्ञान से उठकर विज्ञान दशा में पहुंच गया। अब पृथ्वी, आकाश, वायु, जल आदि सारा जड़ जगत जलकर खाक हो गया है। जड़ प्रकृति से मन ऊपर उठ गया। पलटू साहेब कहते हैं कि अविद्या की रात समाप्त हो गयी और आत्मज्ञान का सूर्य उदय हो गया। मेरी मनोवृत्ति जगत की चाल भूलकर अलमस्त योगिनि हो गयी।

**विशेष**—समाधिलीन ज्ञानी को भी खाना-पीना पड़ता है, परन्तु वह उसमें आसक्त नहीं होता।

## कुंडलिया-62

**फनि से मनि जो बीछुरै जल से बिछुरै मीन॥**
**जल से बिछुरै मीन प्रान को तुरत गँवावै।**
**रहे न कोटि उपाय दूध के भीतर नावै॥**
**ऐसी करै जो प्रीति ताहि की प्रीति सराही।**
**बिछुरै पर नर जियै प्रीति वाहू की नाहीं॥**
**पटकि पटकि तन रहै बिछोहा सहा न जाई।**
**नैन ओट जब भये प्रान को संग पठाई॥**
**पलटू हरि से बीछुरे ये ना जीवैं तीन।**
**फनि से मनि जो बीछुरै जल से बिछुरै मीन॥**

**शब्दार्थ**—फनि= सर्प। मनि= मणि।

**भावार्थ**—यदि सांप से उसकी मणि बिछुड़ जाय और पानी से मछली बिछुड़ जाय तो सांप और मछली तुरंत प्राण त्याग देते हैं। मछली को करोड़ों उपाय करके, दूध में भी डाल करके जीवित नहीं रख सकते। इसी प्रकार साधक अपनी स्वरूपस्थिति दशा से बिछुड़कर जब न रह सके तब उसका आत्मस्थिति का प्रेम पक्का माना जायगा। यदि प्रियतम के बिछुड़ने पर प्रेमी जीवित रहे तो उसका प्रेम कच्चा है। प्रियतम के बिछुड़ने पर शरीर तड़फड़ाने लगे और प्रियतम का बिछुड़न सहना असंभव हो जाय। प्रियतम के ओझल होने पर प्रेमी मर जाय, तब सच्चा प्रेम है। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मा रूपी परमात्मा के विस्मरण में न साधक जीवित रहता है, मणि से बिछुड़ने पर न सांप जीवित रहता है और पानी से बिछुड़ने पर न मछली जीवित रहती है।

**विशेष**—सांप की मणि नहीं होती है। यह केवल कहावत है और बात समझाने के लिए इसका उदाहरण दिया जाता है। पानी से बिछुड़कर मछली मर जाती है, यह प्रत्यक्ष है। यहां ग्रंथकार का जोर है साधक पर। वह सच्चा साधक है जो आत्मस्थिति एवं शांति का वियोग न सह सके। तात्पर्य है कि सच्चा साधक सदैव शांति में रहता है।

## कुंडलिया-63

**प्रेम बान जाके लगा सो जानैगा पीर॥**
**सो जानैगा पीर काह मूरख से कहिये।**
**तिल भरि लगै न ज्ञान ताहि से चुप भै रहिये॥**
**लाख कहै समुझाय बचन मूरख नहिं मानै।**
**तासे कहा बसाय ठान जो अपनी ठानै॥**
**जोहि के जगत पियार ताहि से भक्ति न आवै।**
**सतसंगति से बिमुख और के सन्मुख धावै॥**
**जिन कर हिया कठोर है पलटू धसै न तीर।**
**प्रेम बान जाके लगा सो जानैगा पीर॥**

**शब्दार्थ**—बसाय= शक्ति चलना। हिया= हृदय।

**भावार्थ**—आत्मलीनता का प्रेम-बाण जिसके हृदय में लगता है, वही इसे समझ सकता है। इस विषय को मूर्ख मनुष्य से कहकर क्या होगा? जिसके दिल में तिल भर भी ज्ञान का प्रभाव नहीं पड़ता है, उससे तो चुप ही होकर रहना चाहिए। लाख प्रकार से समझाकर कहने पर भी ज्ञान की बात मूर्ख नहीं स्वीकारता। जो मोह का हठ पकड़ रखा है उससे अपना क्या वश चलेगा? जिसको संसार के रागरंग प्रिय हैं उसके मन में भक्ति का प्रवेश नहीं हो सकता। वह सत्संग से दूर रहता है और प्रपंच की तरफ दौड़ता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जिसका हृदय विषय-वासना तथा अहंकार से कठोर है उसको आत्मज्ञान का तीर नहीं बेध सकता। जिसको आध्यात्मिक उन्नति का प्रेम जगता है, वही इसका मर्म समझ सकता है।

## कुंडलिया-64

**अपने पिया की सुंदरी लोग कहै बौरान॥**
**लोग कहैं बौरान काहि की पकरौं बानी।**
**घर घर घोर मथान फिरौं मैं नाम दिवानी॥**
**घूँघट डारेउ खोलि ज्ञान कै ढोल बजाई।**
**चढ़िउँ बाँस पर धाइ सहर के बिचै गड़ाई।**
**देखि देखि सब चिढ़ैं लोग मैं अधिक चिढ़ावौं।**
**लगी गुरु से डोरि मगन ह्वै ताहि रिझावौं॥**

**पलटू हमरे देस की जानैं संत सुजान।**
**अपने पिय की सुंदरी लोग कहैं बौरान॥**

**शब्दार्थ**—पिया= पति, प्रियतम आत्मा। मथान= चर्चा। हमरे देस= आत्मदेश।

**भावार्थ**—मेरी मनोवृत्ति अपने प्रियतम आत्मा-पति की सुंदरी पत्नी है और वह आत्मलीनता में मग्न है। लोग कहते हैं कि यह पागलपन है। मैं किसकी जीभ पकड़ूं कि वे ऐसा न कहें। मेरे विषय में घर-घर घोर चर्चा हो रही है, परन्तु मेरी मनोवृत्ति आत्मलीनता में दीवानी है। मैंने अविद्या का घूंघट फाड़ फेंका है और आत्मज्ञान का ढोल बजाकर उस का गीत गाता हूं। शहर के बीच में बांस गड़वाकर और उस पर चढ़कर मैं ढिंढोरा पीटकर ज्ञान-भक्ति का प्रचार करता हूं। लोग मेरे इस व्यवहार को देख-देख कर चिढ़ते हैं, तो मैं अपने ज्ञान का जोर से प्रचार कर उन्हें और अधिक चिढ़ाता हूं। मेरी प्रेम की डोरी सद्गुरु से लगी है। मैं उत्साहित और आत्ममग्न होकर सद्गुरु को प्रसन्न करता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि हमारे आत्मदेश की उच्च स्थिति की बात कोई ज्ञानी संत समझेगा। मेरी मनोवृत्ति अपने आत्मपति की प्रियतमा है। वह आत्मलीनता में मतवाली है। लोग कहते हैं कि यह पागलपन है।

**विशेष**—प्रत्यक्ष भोग को छोड़कर योग में लगने वालों को अनभिज्ञ लोग पागल समझते हैं। पलटू साहेब अयोध्या शहर में ढिंढोरा पीटकर अपना ज्ञान फैलाते रहे।

### कुंडलिया-65

**सतगुरु सब्द के सुनत ही तन की सुधि रहि जात॥**
**तन की सुधि रहि जात जाय मन अंतै अटका।**
**बिसरी भूख पियास किया सतगुरु ने टोटका॥**
**दतुइन करी न जाय नहीं अब जाय नहाई।**
**बैठा उठा न जाय फिरी अब नाम दुहाई॥**
**कौन बनावै भेष कौन अब टोपी देवै।**
**बिसरा माला तिलक कौन अब दर्पन लेवै॥**
**पलटू झुका है आपु को मुख से भूली बात।**
**सतगुरु सब्द के सुनत ही तन की सुधि रहि जात॥**

**शब्दार्थ**—अंतै= अलग। टोटका= जादू। दुहाई= महिमा।

**भावार्थ**—सद्‌गुरु के ज्ञान-वैराग्य प्रेरक शब्द सुनते ही अपने शरीर का स्मरण होता है कि मैं क्या कर रहा हूं। फिर दुनियादारी को छोड़कर अलग आत्मचिंतन में लग गया। भूख-प्यास भूल गयी। सद्‌गुरु ने मेरे ऊपर ऐसा जादू चलाया कि न मुझसे दातौन किया जाता है, न नहाया जाता है, न बैठा-उठा जाता है। अब तो आत्मज्ञान का महत्त्व जीवन पर छा गया। अब कौन साधु वेष बनावे, कौन टोपी लगावे। माला पहनना तथा तिलक लगाना भूल गया। अब दर्पण लेकर कौन तिलक ठीक करे। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं अपने आप में मुड़ गया। अब मुख से बाहरी बात करना भी भूल गया। सद्‌गुरु के निर्णय शब्द सुनते ही अपने जीवन के कर्तव्य पर ध्यान गया।

**विशेष**—दातौन करना, स्नान करना, भोजन करना, अपनी भेष-भूषा ठीक रखना आत्मज्ञान तथा आत्मलीनता में बाधक नहीं है। ग्रंथकार के कथन का सार है कि ये सब गौण हो जाते हैं। आत्मलीनता का अनुराग जीवन की रहनी बन जाता है, शेष बातें साधारण हो जाती हैं।

## कुंडलिया-66

**की तौ इक ठौरै रहै की दुइ में इक मरि जाय॥**
**दुई में इक मरि जाय रहत है दुबिधा लागी।**
**सुचित नहीं दिन रात उठत बिरहा की आगी॥**
**तुम जीवो भगवान मरन है मेरो नीका।**
**तुम बिन जीवन धिक्क लगै कारिख को टीका॥**
**की तुम आवो इहाँ लेव की प्रान अपाना।**
**दोऊ को दुख होय हँस जोड़ी अलगाना॥**
**कह पलटू स्वामी सुनो चिन्ता सही न जाय।**
**की तौ इक ठौरै रहै की दुइ में इक मरि जाय॥**

**शब्दार्थ**—सुचित= सावधान, स्थिर चित्त, चैन।

**भावार्थ**—या तो दोनों एक जगह रहें या दोनों में से एक मर जाय, तब आनंद है। दो तरफ मन रहने से दिल में दुविधा रहती है। चैन से न रात बीतती है और न दिन बीतता है, अपितु बिछुड़न को लेकर विरह की आग जलाती है। हे परमात्मा ! तुम ही जीयो, मेरा ही मरना अच्छा है। तुम्हारे बिना जीवन को धिक्कार है और अपने माथे पर कालिख का टीका लगाना है। हे परमात्मा ! तुम या तो मेरे पास आ जाओ अथवा मेरा अपना प्राण ले लो।

हंस की जोड़ी का बिलगाव हो जाने से दोनों को दुख होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे स्वामी ! मेरी चिंता की बात सुनो। वह मुझसे सहा नहीं जा रहा है। या तो हम दोनों एक जगह रहें अथवा दोनों में से एक मर जाय।

**विशेष**—आत्मा से अलग परमात्मा की कल्पना करने से दुख के अलावा कुछ नहीं है। पलटू साहेब का परमात्मा आत्मा ही है जहां द्वैत नहीं रहता। इस बात का स्पष्टीकरण उनकी वाणी में पर्याप्त है। यहां आत्मा-परमात्मा की पृथकता की कल्पना को लेकर उनका मार्मिक कथन है। स्व और पर का द्वंद्व दुखद है। पर के मर जाने पर साधक स्व में विश्राम पाता है। पर है प्रत्यक्ष और परोक्ष जो इन्द्रियों और मन का विषय है; और स्व है आत्म-अस्तित्व, जिसमें स्थिति परम विश्राम है।

दूसरे ढंग से कहें तो नकली स्व है देहाभिमान। इसके मर जाने पर असली स्व आत्मा का अनुभव होता है। अंततः साधक यह ध्यान रखे कि परोक्ष परमात्मा मन की कल्पना है। उसे त्यागकर ही आत्मा रूपी परमात्मा में परम विश्राम मिलता है।

## कुंडलिया-67

**यह तो घर है प्रेम का खाला का घर नाहिं॥<br>खाला का घर नाहिं सीस जब धरै उतारी।<br>हाथ पाँव कटि जाय करै न संत करारी॥<br>ज्यों ज्यों लागै घाव तेहूँ तेहुँ कदम चलावै।<br>सूरा रन पर जाय बहुरि ना जियता आवै॥<br>पलटू ऐसे घर मँहैं बड़े मरद जे जाहिं।<br>यह तो घर है प्रेम का खाला का घर नाहिं॥**

**शब्दार्थ**—खाला=ख़ाला, माता की बहिन, मौसी। करारी=ठहराव, रुकना।

**भावार्थ**—अंतर्मुखता एवं आत्मलीनता आत्मानुराग की दशा है। यह मौसी का घर नहीं है जहां खाना-पीना और वाक-विलास चलता है। अंतर्मुख होने का रास्ता तो है अपने सिर को उतारकर जमीन पर रख देना—अपना पूरा देहाभिमान मिटा देना। हाथ-पांव कट जाने पर भी संत रुकते नहीं हैं। अर्थात सब प्रकार की प्रतिकूलता सहकर भी अंतर्मुखता की साधना करते हैं।

रण में शूरवीर के शरीर में जैसे-जैसे घाव लगता है, वैसे-वैसे वह युद्ध में आगे पैर बढ़ाता है। शूरवीर जब रणक्षेत्र में जाता है तब वह या तो शत्रु को मारता है या स्वयं मारा जाता है। वह हारकर जीवित नहीं लौटता। इसी प्रकार शूरवीर साधक असंख्य विघ्न-बाधा सहकर अंतर्मुखता की साधना करता है। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मशांति एवं स्वरूपस्थिति-घर में बड़े शूरवीर ही जाते हैं। इस स्वरूपस्थिति-घर में पहुंचकर निरंतर निवास करना अटूट आत्मप्रेम का परिणाम है। यह गम्मत करने का स्थान मौसी का घर नहीं है।

**विशेष**—सारा अपमान, अनादर, गाली, निन्दा और सब प्रकार की प्रतिकूलता निर्विकार भाव से सह लेने वाला ही अंतर्मुखता के शाश्वत भवन में ठहर सकता है। आध्यात्मिक साधना तथा उसके लक्ष्य की प्राप्ति हंसी-मजाक की चीज नहीं है। सद्‌गुरु की साखी प्रसिद्ध है—

*यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।*
*शीश उतारै भुइं धरै, सो पैठे घर माहिं॥*

## कुंडलिया-68

**आसिक का घर दूर है पहुँचै बिरला कोय॥**
**पहुँचै बिरला कोय होय जो पूरा जोगी।**
**बिंद करै जो छार नाद के घर में भोगी॥**
**जीते जी मरि जाय मुए पर फिर उठि जागै।**
**ऐसा जो कोइ होइ सोई इन बातन लागै॥**
**पूरजे पुरजे उड़ै अन्न बिनु बस्तर पानी।**
**ऐसे पर ठहराय सोई महबूब बखानी॥**
**पलटू आपु लुटावही काला मुँह जब होय।**
**आसिक का घर दूर है पहुँचै बिरला कोय॥**

**शब्दार्थ**—आसिक= आशिक़, प्रेमी। बिंद= वीर्य, तात्पर्य में कामवासना। नाद= शब्द, ज्ञान एवं निर्णय शब्द, आत्मज्ञानपरक शब्द। महबूब= प्रिय पात्र, प्यारा।

**भावार्थ**—साधक आशिक़ है, प्रेमी है। उसका महबूब एवं प्रियतम स्वरूपविश्राम है। वह दूर है—समस्त विषयासक्ति से बहुत दूर है। जो सारी विषयासक्ति से सर्वथा पार हो जाता है, वह उसे पाता है। इसलिए उसे कोई

बिरला पाता है। जो पूरा योगी होता है, जो अपने को सभी अशुभ-शुभ से समेट लेता है, वह अपने प्रियतम के घर-स्वरूपस्थिति में पहुंचता है। जो काम-वासना-क्रिया से सर्वथा पार हो जाता है और स्वरूपज्ञानपरक निर्णय वचनों का अभ्यासी होता है। शरीर में रहते हुए शरीर के मोह से सर्वथा मुक्त होता है—जीते जी मर जाता है और अपने आप में पूर्ण जागता रहता है, जो ऐसा करने वाला कोई हो, वह इन बातों में लगे। नाना प्रकार की प्रतिकूलताओं को निर्विकार भाव से सह सके, भोजन, पानी तथा वस्त्र के अभाव को सहर्ष सह सकता हो, ऐसी कठिन स्थिति में रहकर भी जो अपनी शांति स्थिति में अविचल भाव से ठहरा रहे, वही प्रियतम स्थिति—स्वरूपस्थिति पाने योग्य कहा गया है। जब मनुष्य अपने आप की स्थिति एवं पवित्र रहनी को खो देता है, तब उसका मुंह काला हो जाता है, जीवन बरबाद हो जाता है। इस प्रकार प्रेमी का घर, प्रियतम आत्मलीनता की दशा सारी मोह-माया से दूर है। जो सब मोह-माया छोड़ देता है वह वहां पहुंचता है, उस स्थिति में ठहरता है।

**विशेष**—शुभ-अशुभ सारे दृश्यों के मोह से पूर्ण पार पहुंचा साधक अपने आप में शाश्वत विश्राम पाता है।

## कुंडलिया-69

**जहाँ तनिक जल बीछुड़ै छोड़ि देतु है प्रान॥**
**छोड़ि देतु है प्रान जहाँ जल से बिलगावै।**
**देइ दूध में डारि रहै ना प्रान गवाँवै॥**
**जा को वही अहार ताहि को का लै दीजै।**
**रहै ना कोटि उपाय और सुख नाना कीजै॥**
**यह लीजै दृष्टान्त सकै सो लेइ बिचारी।**
**ऐसो करै सनेह ताहि की मैं बलिहारी॥**
**पलटू ऐसी प्रीति करु जल और मीन समान।**
**जहाँ तनिक जल बीछुड़ै छोड़ि देतु है प्रान॥**

**शब्दार्थ**—तनिक= थोड़ा। बिलगावै= अलग हो।

**भावार्थ**—मछली पानी से थोड़ा ही बिछुड़न होते प्राण त्याग देती है। जल से बिछुड़ी मछली को भले दूध में डाल दो, वह जीवित नहीं रह सकती, प्राण खो देगी। जिसका जो भोजन है उसके अलावा उसे क्या देकर जिलाया

जा सकता है? करोड़ों उपाय करके तथा नाना सुख देकर भी उसे जीवित नहीं रखा जा सकता है। जो मीन-जल के दृष्टान्त से विचार कर सके और इसी के अनुसार आत्मलीनता में प्रेम करे, और उसके बिना क्षण भर न रह सके, मैं उसके चरणों में अपने को न्योछावर करता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि हे साधको ! जैसे जल के बिना मछली नहीं रह सकती, वैसे तुम शाश्वत शांति के बिना न रह सको। ऐसा अखंड प्रेम स्वरूपस्थिति से करो। मछली पानी से बिछुड़ते ही प्राण त्याग देती है। तुम भी आत्म-शांति के बिना एक क्षण भी न रहो। सब समय आत्मलीन रहो।

## कुंडलिया-70

**जो मैं हारौं राम की जो जीतौं तौ राम॥**
**जो जीतौं तौ राम राम से तन मन लावौं।**
**खेलौं ऐसो खेल लोक की लाज बहावौं॥**
**पासा फेंकौं ज्ञान नरद बिस्वास चलावौं।**
**चौरासी घर फिरै अड़ी पौबारह नावौं॥**
**पौबारह सिरवाय एक घर भीतर राखौं॥**
**कच्ची मारौं पाँच रैनि दिन सत्रह भाखौं॥**
**पलटू बाजी लाइहौं दोऊ बिधि से राम।**
**जौ मैं हारौं राम की जौ जीतौं तौ राम॥**

**शब्दार्थ**—नरद= नर्द, चौसर या शतरंज आदि की गोटी, मोहरा; एक प्रकार का खेल। अड़ी= आवश्यक समय। पौबारह= जीत। पाँच= काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा भय। सत्रह= पांच ज्ञानेन्द्रियां—आंख, नाक, कान, जीभ और चाम; पांच कर्मेन्द्रियां—हाथ, पैर, मुख, गुदा और शिश्न; पांच विषय—शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध; दो—मन और बुद्धि—ये सत्रह। बाजी = दावं।

**भावार्थ**—यदि मैं अहंता-ममता को हार जाऊं, उन्हें सर्वथा खो दूं, तो राम में विश्राम हो जाय, और यदि मैं मन-इन्द्रियों को जीत लूं, तो राम में विश्राम मिल जाय। मैं सब विधि से अपने तन-मन राम में ही लगाऊंगा। मैं ऐसी खुलकर साधना करूंगा जिसमें लोकलज्जा सर्वथा खो दूंगा। मैं आत्मज्ञान का पासा फेंकता हूं और विश्वास की गोटी चलाता हूं। मैं इस उत्तम समय में ऐसा खेल खेलता हूं कि चौरासी चक्कर—अनात्म-घर से

लौटकर अपने आत्मस्थिति के घर में आ जाऊं। आत्मविजय की सीमा है भीतर अद्वितीय स्वरूपस्थिति में ठहर जाना। मैं उसी में स्थित हूं। काम, क्रोध, लोभ, मोह और भय ये जो पांच कच्चे सौदा हैं, इन्हें मारकर, रात-दिन सत्रह पर विजय की बात कहता हूं—पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, पांच विषय और मन-बद्धि पर विजय करने का काम और भाषण करता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं हार या जीत, दोनों में अपने लाभ में रहूंगा। यदि मैं हारता हूं तो अहंता-ममता खोता हूं और जीतता हूं तो मन-इन्द्रियों को। दोनों में मुझे आत्माराम में विश्राम मिलता है।

## 7. विश्वास की कसौटी

### कुंडलिया-71

**लगन महूरत झूठ सब और बिगाड़ै काम॥**
**और बिगाड़ै काम साइत जनि सोधै कोई।**
**एक भरोसा नाहिं कुसल कहवाँ से होई॥**
**जेकर हाथै कुसल ताहि को दिया बिसारी।**
**आपन इक चतुराई बीच में करै अनारी॥**
**तिनका टूटै नाहिं बिना सतगुरु की दाया।**
**अजहूँ चेत गँवार जगत है झूठी काया॥**
**पलटू सुभ दिन सुभ घड़ी याद पड़ै जब नाम।**
**लगन महूरत झूठ सब और बिगाड़ै काम॥**

**शब्दार्थ**—साइत=शुभ दिन, काम की शुरुआत। एक भरोसा=कर्म सिद्धान्त, अपने शुभ कर्म पर विश्वास।

**भावार्थ**—लग्न-मुहूर्त की बात झूठी है। इनके चक्कर में पड़ने से अपना काम अधिक बिगड़ता है। इसलिए हे लोगो ! तुम शुभ मुहूर्त शोधने-शोधवाने के चक्कर में मत पड़ो। जो अपने कर्म-सिद्धान्त का भरोसा नहीं करता है उसका कल्याण कैसे होगा? अपना कुशल-मंगल अपने शुभ कर्मों के हाथ में है; मनुष्य ने उसको भुला दिया। मूर्ख मनुष्य बीच में अपनी चतुराई करता है लग्न-मुहूर्त शोधने-शोधवाने की। सद्गुरु के कृपास्वरूप यथार्थ ज्ञान हुए बिना तृण मात्र का बंधन नहीं टूट सकता। हे भोले ! आज भी सावधान हो जा। ये संसार-शरीर झूठे हैं। लग्न-मुहूर्त झूठे हैं। इनका विचार करने पर काम अधिक बिगड़ता है।

## कुंडलिया-72

**मोर राम मैं राम का तासे रहौं निसंक॥**
**तासे रहौं निसंक तनिक मोर बार ना बाँकै।**
**जो कोई मानै बैर हारि के आपुइ थाकै॥**
**दोऊ बिधि से राम भार उनके सिर दीन्हा।**
**मो पर परै जो गाढ़ राम आपुइ पर लीन्हा॥**
**राम भरोसा पाय डेरौं काहू से नाहीं।**
**फूल में है ज्यों बास राम हैं हमहीं माहीं॥**
**पलटू सब में राम है क्या राजा क्या रंक।**
**मोर राम मैं राम का तासे रहौं निसंक॥**

**शब्दार्थ**—निसंक= निर्भय। दोऊ विधि= स्वार्थ-परमार्थ। गाढ़=कठिनाई।

**भावार्थ**—राम मेरा है, मैं राम का हूं; इसलिए मैं निर्भय हूं। मेरा कभी कोई थोड़ा भी बाल बांका नहीं कर सकता। यदि कोई मुझसे वैर मानता है, तो वह थोड़े दिनों में स्वयं थककर हार जाता है। स्वार्थ और परमार्थ दोनों की उन्नति के लिए मेरा बोझ राम पर ही है। यदि मेरे ऊपर कोई कठिनाई आती है तो उसे राम अपने ऊपर लेकर सम्हाल लेता है—आत्मविचार से वह दूर हो जाता है। मैं अपने आत्माराम पर विश्वास करता हूं, इसलिए कभी किसी से नहीं डरता हूं। जैसे फूल में उसकी सुगंध रहती है, वैसे राम मेरे आत्म अस्तित्व में है। पलटू साहेब कहते हैं कि राजा हो या दरिद्र, सब में राम रम रहा है। राम मेरा है और मैं राम का हूं इसलिए सब समय निर्भय होकर विचरता हूं।

**विशेष**—फूल में सुगंध उदाहरण मात्र है। वस्तुतः आत्मा ही राम है। जिसे अपने आत्माराम का पूर्ण ज्ञान और उसमें स्थिति है, वह सब समय सर्वत्र निर्भय है।

## कुंडलिया-73

**मगन आपने ख्याल में भाड़ परै संसार॥**
**भाड़ परै संसार नाहिं काहू से कामा।**
**मन बच करम लगाय जानिहौ केवल रामा॥**
**लोक लाज कुल त्यागि जगत की बूझ बड़ाई।**
**निन्दा कोउ कै जाय रहौ संतन सरनाई॥**

**छोड़ौ दिन दिन संग सुनौ ना बेद पुराना।**
**ठान आपनी ठानि आन न करिहौ काना॥**
**पलटू संसै छूटि गई मिलिया पूरा यार।**
**मगन आपने ख्याल में भाड़ परै संसार॥**

**शब्दार्थ**—ठान= निश्चय। आन= अन्य बात।

**भावार्थ**—मैं अपने आप में लीन हूं, जगत के भोगैश्वर्य और मान-बड़ाई चूल्हे-भाड़ में जायं। मुझे जगत के संपति-स्वामित्व की आवश्यकता नहीं है। मैं मन, वचन और कर्मों को केवल आत्माराम के बोध में लगाकर उसी का अनुभव करना चाहता हूं। लोक की लज्जा, कुल की मर्यादा, सांसारिक चतुरता और मान-बड़ाई को त्यागकर मैं संतों की शरण में रहूंगा। कोई मेरी निन्दा कर ले, मुझे कोई परवाह नहीं है। मैं दिन-ब-दिन लोगों की संगत छोड़ता जाता हूं। वेद-पुराणों की दिखाऊ वाणियों को भी नहीं सुनता हूं। मैं अपनी आत्मलीनता की दृढ़ता में स्थिर हूं। दूसरी बातों पर कान भी नहीं देता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा सब संशय समाप्त हो गया है। मेरा प्रियतम प्यारा आत्माराम है, उसका बोध मिल गया है। मैं अपने आत्मा की स्थिति में डूबा हूं। संसार के भोग और मान-बड़ाई चूल्हे-भाड़ में जायं।

## 8. सत्संग का महत्त्व

कुंडलिया-74

**जो कोउ चाहै अभय पद जाइ करै सतसंग॥**
**जाइ करै सतसंग प्रान बैराग उठावै।**
**स्त्रवन करै बेदान्त मनन करि मन समुझावै॥**
**तब साधै हठ योग बिपर्जय कौ घर पावै।**
**प्रान करै आयाम पुरुष तब नजरि में आवै॥**
**देखै अपनो रूप होय तब ज्ञान समाधी।**
**तब दे साधन छोड़ि लेइ जब पहिले साधी॥**
**पलटू खोवै आपु को तब लागैगा रंग।**
**जो कोउ चाहै अभय पद जाइ करै सतसंग॥**

**शब्दार्थ**—बिपर्जय= आपा (अहंकार) को भूल जाना।

**भावार्थ**—जो मनुष्य निर्भय स्थिति चाहे, वह विवेकवान संतों की संगत में जाकर उनसे अपने संशयों का समाधान करावे। सत्संग के द्वारा सत्य-असत्य को समझकर अपनी प्राणशक्ति में वैराग्य को उत्तेजित करे। वेदों का अंतिम उपदेश आत्मज्ञान का विषय सुनकर और उसका मनन कर मन में स्वरूपज्ञान पक्का करे। इसके बाद हठयोग की साधना करे और देह का अहंकार भूलकर अपने आत्मस्वरूप घर में आ जाय। प्राणायाम भी करना हितकर है। स्वरूप-शोधन से स्वरूप का साक्षात्कार होता है। साधक जब अपने स्वरूप का साक्षात्कार कर लेता है तब उसका स्वरूपज्ञान ही समाधि बन जाता है। जब पहले साधना कर लिया, तब साधना छोड़ दे। पलटू साहेब कहते हैं कि जब साधक अपने अहंकार को पूर्णतया खो देता है, तब उसे निरंतर समाधि का रंग लगता है। अतएव जो कोई अभयपद चाहता है वह विवेकवान संतों का सत्संग करे।

**विशेष**—उपर्युक्त बातों में कहा गया है कि हठयोग भी करे, प्राणायाम करे। प्राणायाम स्वास्थ्य के लिए अच्छा है, परन्तु आध्यात्मिक उन्नति में उसका बड़ा महत्व नहीं है। हठयोग की तो बिलकुल आवश्यकता नहीं है। इसलिए शायद इन्हीं बातों को लेकर ग्रंथकार ने कहा है—"तब दे साधन छोड़ि।" खास बात है सत्संग से स्वरूपज्ञान पाकर स्वरूपशोधन, स्वरूपसाक्षात्कार और तब निरंतर साक्षी भाव तथा सहज समाधि में रहना। इन सबका परिणाम है "खोवै आपु को" सारा अहंकार खोकर शांत होना।

## कुंडलिया-75

**बैरागिन भूली आप में जल में खोजै राम॥**
**जल में खोजै राम जाय के तीरथ छानै।**
**भरमै चारिउ खूँट नहीं सुधि अपनी आनै॥**
**फूल माहिं ज्यों बास काठ में अगिन छिपानी।**
**खोदे बिनु नहिं मिलै अहै धरती में पानी॥**
**जैसे दूध घृत छिपा छिपी मिहँदी में लाली।**
**ऐसे पूरन ब्रह्म कहूँ तिल भरि नहीं खाली॥**
**पलटू सत्संग बीच में करि ले अपना काम।**
**बैरागिन भूलि आप में जल में खोजै राम॥**

**शब्दार्थ**—बैरागिन=बैरागी नाम से कहे जाने वाले वैष्णव, तात्पर्य में अपने से भिन्न बाहर परमात्मा खोजने वाले सभी भक्त।

**भावार्थ**—वैरागी वैष्णव लोग अपने आप के टंट-घंट में उलझे हैं। वे सरयू आदि नदियों के जल में राम को खोजते हैं। वे भारत के अनेक तीर्थों को छानकर राम को पाना चाहते हैं। वे चारों दिशाओं में भटकते हैं, किन्तु अपने आत्मस्वरूप का स्मरण नहीं करते। देखो, फूल में सुगंध है। लकड़ी में आग है। धरती में पानी है, वह बिना खोदे नहीं मिलता। जैसे दूध में घी है और मेंहदी में लाली है, वैसे ब्रह्म सब में विद्यमान है। कहीं तिल भर खाली नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि सत्संग में रहकर अपना कल्याण-काम कर लो, किन्तु वैरागी लोग तो स्वयं को भूलकर पानी में परमात्मा खोजते हैं।

**विशेष**—पलटू साहेब अंतर्मुख संत थे। उनके सामने अयोध्या के वैरागी थे और वे ही नहीं, संसार के अधिक साधक अपने आप को छोड़कर बाहर परमात्मा खोजते हैं। फूल में सुगंध, काठ में आग, धरती में जल, दूध में घी, मेंहदी में लाली आदि को छिपे बताकर ग्रंथकार कहते हैं कि वैसे ब्रह्म सब में पूर्ण है, उससे तिलभर खाली नहीं है। इसका सरल अर्थ है कि प्राणी के घट-घट में जो चेतन निवास करता है वही ब्रह्म है, महान है, ईश्वर, परमात्मा, खुदा और गॉड है। आत्मा को छोड़कर परमात्मा कहीं मिलने वाला नहीं है।

एक ब्रह्म सर्वत्र ठसाठस भरा है। यह भाव केवल भावुकता है। एक अखंड तत्त्व सर्वत्र व्याप्त होने से न दूसरा होगा और न क्रिया-स्फूर्णा और गति होगी। किन्तु संसार ही गति का स्वरूप है। अतएव गतानुगतिका तथा भावुकता में न पड़कर विवेक से सत्यता को समझना चाहिए। सरल अर्थ है कि परमात्मा पत्थर-पानी में नहीं है, किन्तु सभी प्राणी परमात्मा हैं। अतएव सबके साथ सुंदर बरताव करें और अपने आप में शांत हों।

## कुंडलिया-76

**मलया के परसंग से सीतल होवत साँप॥**
**सीतल होवत साँप ताप को तुरत बुझाई।**
**संगत के परभाव सीतलता वामें आई॥**
**मूरख ज्ञानी होय जाय ज्ञानी में बैठै।**
**फूल अलग का अलग बासना तिल में पैठै॥**
**कंचन लोहा होय जहाँ पारस छुइ जाई।**
**पनपै उकठा काठ जहाँ उन सरदी पाई॥**

**पलटू संगत किये से मिटते तीनिउँ ताप।**
**मलया के परसंग से सीतल होवत साँप॥**

**शब्दार्थ**—मलया=मलय, एक सुगंधित शीतलप्रद पेड़, मलय चंदन। पनपै=पुनः पत्र-पल्लव दे। उकठा काठ=सूखा पेड़। तीनिउँ ताप=दैहिक, दैविक और भौतिक।

**भावार्थ**—मलयगिरि शीतल चंदन के पेड़ के स्पर्श से सर्प भी शीतल हो जाता है और उसकी गरमी तुरंत बुझ जाती है। संगत के प्रभाव से उसमें शीतलता आ जाती है। मूर्ख भी ज्ञानियों की संगत में बैठते-बैठते ज्ञानी हो जाता है। फूल का वास तिल के तेल में पड़ते ही वह सुगंधित हो जाता है जबकि फूल अलग का अलग ही रह जाता है। कहावत के अनुसार लोहा पारस पत्थर से छू जाने पर सोना हो जाता है। यदि कोई पेड़ सूख गया, किन्तु उसमें कुछ सार है तो पानी पाकर वह पुनः हरा-भरा हो जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि वैसे संत संगत करने से प्राणी के तीनों ताप मिट जाते हैं। जैसे मलयगिरि चंदन के स्पर्श से सांप की भी गरमी शांत हो जाती है।

## कुंडलिया-77

**पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान॥**
**लोहा महँग बिकान छुए से कीमत निकरी।**
**चंदन के परसंग चंदन भई बन की लकरी॥**
**जैसे तिल का तेल फूल संग महँग बिकाई।**
**सतसंगति में पड़ा संत भा सदन कसाई॥**
**गंग में है सुभगंग मिली जो नारा सोती।**
**सीप बीच जो पड़े बूँद सो होवै मोती॥**
**पलटू हरि के नाम से गनिका चढ़ी बिमान।**
**पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान॥**

**शब्दार्थ**—परसंग=स्पर्श। गनिका=गणिका, वेश्या।

**भावार्थ**—पारस पत्थर से छू जाने पर लोहा सोना होकर महंगा बिकता है। इस प्रकार स्पर्श से उसका मूल्य बढ़ गया। चंदन के संसर्ग से वन के अन्य पेड़ भी चंदन हो गये। तिल का तेल फूलों की सुगंध पाकर महंगा बिकता है। सदन कसाई सत्संग पाकर संत हो गया। नालों और अन्य स्रोतों

का जल गंगा में मिलकर गंगा हो जाता है। जल की बूंद सीप में पड़कर मोती बन जाती है। पलटू साहेब कहते हैं कि हरि के नाम के प्रभाव से गणिका विमान पर बैठकर स्वर्ग चली गयी। इसी प्रकार सत्संग से गलत लोग भी सुधरते हैं।

**विशेष**—ऊपर कच्चे-पक्के उदाहरणों से एक ही बात कही गयी है कि सत्संग के प्रभाव से मलिन मनुष्य भी सुधरता है। पारस पत्थर और विमान पर बैठकर स्वर्ग में जाना काल्पनिक है। अच्छी संगत से अच्छा फल होता है, यह तथ्य है।

## कुंडलिया-78

**फिर फिर नहीं दिवारी दियना लीजै बार॥**
**दियना लीजै बार महल में ह्वै उँजियारा।**
**उदय होय ससि भान अमावस मिटै अँधियारा॥**
**ज्ञान होय परगास कुमति जूआ में हारै।**
**दुतिया खंडन करै एक को बैठि बिचारै॥**
**रचि रचि तीसौ सखी अभूषन प्रेम बनाई।**
**गोबरधन मन पूजि बहुरि सब घर को आई॥**
**पलटू सतसंगत मिला खेलि लेहु दिन चार।**
**फिर फिर नहीं दिवारी दियना लीजै बार॥**

**शब्दार्थ**—परगास= प्रकाश। दुतिया= द्वैत भाव, अनात्म भाव। तीसों सखी= पांच विषय और पच्चीस प्रकृतियां।

**भावार्थ**—बारंबार दीवाली नहीं आती। शुभ अवसर मिला है, आत्मज्ञान का दीपक जला लो जिससे हृदय-भवन में प्रकाश हो जाय। भक्ति और ज्ञान के चंद्रमा और सूर्य हृदयाकाश में उदय हो, जिससे अमावस्या की अंधियारी अविद्या का तम नष्ट हो जाय। आत्मज्ञान का प्रकाश हो और ज्ञान के जुआ में कुबुद्धि को हार जाय—कुबुद्धि समाप्त हो जाय। समस्त द्वैत भाव अनात्म का त्याग करे और ध्यान में बैठकर केवल एक अपने आत्मा का विचार करे। पांच विषय अथवा पांच तत्त्व और पचीसों प्रकृति रूपी सखियों ने इस शरीर रूपी आभूषण को बनाया है, जो स्नेहास्पद हो गया है। ये सारी सखियां मन रूपी गोबर्धन की पूजा कर अपने घर में-अपने रूप में लौट आती हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संतों का सत्संग मिला है। चार दिनों का अवसर मिला है।

इसमें आत्मज्ञान का जुआ खेल लो और सारे दुर्गुणों को हारकर उन्हें खो दो और आत्मज्ञान में स्थित हो जाओ। बारंबार मानव देह तथा सत्संग की दीवाली नहीं मिलने वाली है। अतएव आज सुनहले अवसर में आत्मज्ञान का दीपक जला लो।

## कुंडलिया-79

**जंगल जंगल मैं फिरौं घर में रहै सिकार॥**
**घर में रहै सिकार भेद न कोउ बतावै।**
**गया अहेरी भूलि कहाँ से सावज पावै॥**
**खोजा चारिउ खूँट कहीं कुछ नजर न आवै।**
**कतहूँ ना सुधि आइ नहीं कोउ भेद बतावै॥**
**जप तप तीरथ बरत किया बहु नेम अचारा।**
**खोजा बेद पुरान सबै सतसंग पुकारा॥**
**सतगुरु किया इसारा पलटू लीन्हा मार।**
**जंगल जंगल मैं फिरौं घर में रहै सिकार॥**

**शब्दार्थ**—सिकार=लक्ष्य, उद्देश्य। अहेरी=शिकारी। सावज=शिकार-पशु। खूँट=दिशा।

**भावार्थ**—मैं अपना शिकार मारने के लिए वन-वन भटकता रहा, परंतु वह तो शरीर रूपी घर में है। यह रहस्य कोई नहीं बताता है कि तुम्हारा शिकार घर में ही है। भूलकर उसे बाहर खोजता है तो वहां शिकार कहां पावे? चारों दिशाओं में अपना शिकार खोजा, परंतु वह दिखाई नहीं दिया। कभी भी यह ख्याल नहीं आया कि अपना शिकार अपने शरीर में है। दूसरे ने भी यह भेद नहीं बताया। जप, तप, तीर्थ, व्रत, नियम, आचार आदि बहुत किया, वेदों-पुराणों में भी खोजा, अंततः सबने बताया कि विवेकवान संतों के सत्संग में इसका भेद मिलेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि सत्संग में पहुंचने पर सद्‌गुरु ने संकेत दिया कि तुम्हारा शिकार तुम्हारे शरीर में है। फिर तो मैंने उसको मार लिया। मैं अज्ञानवश उसे जंगलों में खोजता रहा, परन्तु वह तो अपने हृदय-घर में ही रहा।

**विशेष**—यह शिकार जीवन का लक्ष्य है। जीवन का लक्ष्य आत्मशांति है। वह आत्मशोधन से ही संभव है। बाहर भटकने से नहीं।

## कुंडलिया-80

**बिन खाये चित चैन नहिं खाये आलस होय॥**
**खाये आलस होय कहो कैसी बिधि कीजै।**
**दोऊ बिधि से बिपति दोस काको हम दीजै॥**
**मन बैरी है बड़ा कहे में अपने नाहीं।**
**पुन्न में करता पाप पाप में पुन्न कराही॥**
**सुभ आसुभ के बीच पड़ा है जीव बिचारा।**
**दोऊ में वह मिला बात सब वही बिगारा॥**
**पलटू सतसंगत दोऊ छुटै करै जो कोय।**
**बिन खाये चित चैन नहिं खाये आलस होय॥**

**शब्दार्थ**—विचारा= बेचारा, विवश।

**भावार्थ**—यदि भोजन न किया जाय तो मन में शांति नहीं मिलती और यदि भोजन किया जाय तो आलस्य उत्पन्न होता है। बताइए, अब क्या किया जाय ! दोनों प्रकार से मेरे ऊपर विपत्ति है। मैं किसको दोष दूं? मन मेरा बड़ा शत्रु है। वह मेरे कहने में नहीं रहता। यह पुण्य की आड़ में पाप करता है। और पाप में पुण्य भी करता है। इसी शुभ और अशुभ के बीच में जीव विवश होकर उलझा है। मन दोनों में मिला है। सारी बातें मन ने बिगाड़ी है। पलटू साहेब कहते हैं कि संतों के सत्संग में समझ-बूझकर चलने पर शुभ-अशुभ, पुण्य-पाप दोनों छूट जाते हैं। बिना भोजन किये मन में शांति नहीं मिलती। और भोजन करने से आलस्य उत्पन्न होता है।

**विशेष**—भोजन न करने तथा करने की बात तो उदाहरण मात्र है। खास बात है मन बदमाश है, किन्तु इसी से अच्छे काम भी होते हैं। इसके बिना कुछ भी नहीं हो सकता। शुभ और अशुभ मन से होते हैं। जब मनुष्य सत्संग करता है, तब उसे आत्मबोध होता है। आत्मबोध हो जाने पर अशुभ कर्म छूट जाते हैं और आगे चलकर शुभ कर्म का मोह भी छूट जाता है। जिससे आत्मा को पूर्ण शांति मिलती है।

## कुंडलिया-81

**जो जो गा सतसंग में सो सो बिगरा जाय॥**
**सो सो बिगरा जाय फूल संग तेल बसाना।**
**ज्ञानी के संग परा ज्ञान मूरख ने जाना॥**

**पारस के परसंग बिगरि गा लोहा जाई।**
**लोहा से भा कनक आपनी जाति गँवाई॥**
**सलिता गइ है बिगरि मिली गंगा में जाई।**
**मलया के परसंग काठ चंदन कहवाई॥**
**पलटू काग से हंस भा और काग पछिताइ।**
**जो जो गा सत्संग में सो सो बिगरा जाइ॥**

**शब्दार्थ**—सलिता= सरिता, नदी।

**भावार्थ**—जो-जो मनुष्य सत्संग में गया, वह-वह बिगड़ गया। देखो, प्रसिद्धि है कि फूल की सुगंध के साथ तेल बिगड़कर सुगंधित हो गया। ज्ञानी की संगत करके मूर्ख बिगड़कर ज्ञानी हो गया। पारस पत्थर के साथ लोहा बिगड़कर सोना हो गया। इस प्रकार उसने अपनी जाति बिगाड़ डाली। नदी तब बिगड़ गयी जब वह गंगा में मिल गयी। मलयगिरि चंदन के साथ अन्य पेड़ बिगड़कर चंदन हो गये। पलटू साहेब कहते हैं कि काग बदलकर हंस हो गया तो अन्य काग पश्चाताप कर रहे हैं कि यह हमारी गोल से निकल गया। इस प्रकार जो-जो मनुष्य सत्संग में गया वह-वह बिगड़ गया।

**विशेष**—यहां व्यंग्य में बनने एवं सुधरने को बिगड़ना कहा गया है।

## कुंडलिया-82

**पलटू मेरी बनि परी मुद्दा हुआ तमाम॥**
**मुद्दा हुआ तमाम परे सतसंगति माहीं।**
**निस दिन तौलै पूर घाट अब सपनेहु नाहीं॥**
**पूँजी पाई साच दिनों दिन होती बढ़ती।**
**सतगुरु के परताप भई है दौलत चढ़ती॥**
**कोठी दसवें द्वार सहज की खेप चलावो।**
**कोई न टोकनहार नफा घर बैठे पावो॥**
**दूनों पाँव पसारि कै निस दिन करो अराम।**
**पलटू मेरी बनि परी मुद्दा हुआ तमाम॥**

**शब्दार्थ**—मुद्दा= मुद्दआ, उद्देश्य, अभिप्राय, प्रयोजन। तमाम= पूरा, संपूर्ण। घाट= कमी। दसवें द्वार= कपालकुहर, तात्पर्य में शून्य। सहज= आत्मशांति। खेप= भरा, भरी गाड़ी, तात्पर्य में पूर्ण शांति।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा कल्याण हो गया। मेरा उद्देश्य था आत्मशांति, वह काम पूरा हो गया। अब मैं सत्संग में आ गया हूं। अब सब दिन पूरा तौलता हूं, स्वप्न में भी कमी नहीं तौलता हूं—अब कभी असंतोष नहीं है, सब समय संतोष है। अब मैंने आत्मज्ञान का सच्चा धन पा लिया है। उसकी अब दिनोंदिन बढ़ोत्तरी हो रही है। सद्गुरु के उपदेश प्रताप से मेरी आत्मज्ञान की दौलत उन्नति करती जा रही है। अब शरीर महल के दसवें द्वार—शून्य स्थान पर सहज समाधि लगाता हूं। तात्पर्य है कि संकल्पों को शून्य कर सहज समाधि आत्मविश्राम में रह रहा हूं। कोई मुझे अपने साधना-मार्ग में अड़चन डालने वाला नहीं है। घर बैठे धन-लाभ हो रहा है। अब मैं दोनों पैर फैलाकर रात-दिन विश्राम करता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा काम बन गया है, मेरा उद्देश्य पूरा हो गया है।

**विशेष**—आत्मशांति जीवन का मुद्दा है, उद्देश्य है। सत्संग में आत्मज्ञान मिलता है और सत्संग में ही आत्मशोधन कर आत्मशांति मिल जाती है और जीवन का उद्देश्य पूर्ण हो जाता है।

## कुंडलिया-83

**सतगुरु सबको देत हैं लेता नाहीं कोय॥**
**लेता नाहीं कोय सीस को धरै उतारी।**
**वही सकस को मिलै मरै की करै तयारी॥**
**कड़ु बहुत सतनाम देखत कै डेरै सरीरा।**
**रोटी खावनहार खायगा क्योंकर हीरा॥**
**अंधा होवै नीक बैद का पथ जो खावै।**
**मलयागिर की बास बाँस में नहीं समावै॥**
**पलटू पारस क्या करै जो लोहा खोटा होय।**
**सतगुरु सबको देत हैं लेता नाहीं कोय॥**

**शब्दार्थ**—सकस= शख्स, मनुष्य। वैद= वैद्य।

**भावार्थ**—सद्गुरु सबको आत्मज्ञान देना चाहते हैं, परन्तु कोई ले नहीं रहा है। आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए अपने सिर को उतारकर जमीन पर धर देना होता है। उसी मनुष्य का आत्मज्ञान चरितार्थ होता है जो मरने की तैयारी कर लेता है। आत्मबोध का परिचायक सतनाम-सत्यनिर्णय बड़ा कड़वा लगता है। उसको देखकर शरीर कांपने लगता है। रोटी खाने वाला हीरा क्यों

कर खायेगा—विषयभोगी मन आत्मज्ञान में कैसे ठहरेगा? यदि वैद्य की दी हुई औषध और पथ्य अंधा खायेगा तो उसकी आंखें ठीक हो जायेंगी, किन्तु मलयगिरि की सुगंधी बांस में नहीं समाती। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि लोहा खोटा है तो पारस उसे सोना कैसे बना सकता है। सद्‌गुरु तो सबको उपदेश देते हैं, लेने वाला बिरला है।

**विशेष**—उपर्युक्त कुंडलिया में अपात्र मनुष्य का स्पष्टीकरण किया गया है।

## 9. शब्द, ध्यान और आत्मबोध

### कुंडलिया-84

**सबद छुड़ावै राज को सबदै करै फकीर॥**
**सबदै करै फकीर सबद फिर राम मिलावै।**
**जिनके लागा सबद तिन्हैं कछु और न भावै॥**
**मरै सबद की घाव उन्हें को सकै जियाई।**
**होइगा उनका काम परी रोवैं दुनियाई॥**
**घायल भा वह फिरै सबद कै चोट है भारी।**
**जियतै मिरतक होय झुकै फिर उठै संभारी॥**
**पलटू जिनके सबद का लगा कलेजे तीर।**
**सबद छुड़ावै राज को सबदै करै फकीर॥**

**शब्दार्थ**—सबद= शब्द, आत्मज्ञान के वचन। फकीर= त्यागी।

**भावार्थ**—ज्ञान-वैराग्य के वचन सुनकर लोग राज-काज को छोड़कर त्यागी साधु हो जाते हैं। बोधदायक शब्द आत्माराम का बोध कराता है। जिनको आत्मज्ञान के शब्द लग जाते हैं उन्हें अन्य बातें अच्छी नहीं लगतीं। ज्ञान के शब्दों को सुनकर जो सांसारिकता से उदास हो गया है, उसे कौन मनुष्य मोह-माया में लगा सकता है? जिनकी अहंता-ममता मर गयी, उनका कल्याण हो गया। दुनिया के लोग उनके विषय में भला-बुरा कहते हैं, इससे उनको कोई अंतर नहीं पड़ता है। वह तो ज्ञान के शब्दों से घायल होकर घूमता है क्योंकि आत्मज्ञान की चोट गहरी होती है। आत्मलीन व्यक्ति जीते जी मर जाता है—सारी अहंता-ममता छोड़ देता है। वह झुकता है और उठकर सम्हलता है—संसार का उचित व्यवहार करते हुए

अपने आप में तृप्त रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जिनके हृदय में आत्मज्ञान के शब्द का तीर लग गया है, वे दुनियादारी से विरक्त होकर फकीर हो जाते हैं।

## कुंडलिया-85

**सुरत सब्द के मिलन में मुझको भया अनंद॥**
**मुझको भया अनंद मिला पानी में पानी।**
**दोऊ से भा सूत नहीं मिलि कै अलगानी॥**
**मुलुक भया सलतन्त मिला हाकिम को राजा।**
**रैयत करै अराम खोलि के दस दरवाजा॥**
**छूटी सकल बियाधि मिटी इन्द्रिन की दुतिया।**
**को अब करै उपाधि चोर से मिलि गई कुतिया॥**
**पलटू सतगुरु साहिब काटौ मेरी बंद।**
**सुरत सब्द के मिलन में मुझको भया अनंद॥**

**शब्दार्थ**—सुरत= मनोवृत्ति। शब्द= आत्मज्ञानपरक शब्द। सूत= सूद, लाभ। सलतन्त= सल्तनत, राज्य। सुभीता=आराम, आनन्द। रैयत= प्रजा, साधक। दस दरवाजा= दसवां द्वार, तालुमूल।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति निर्णय शब्दों को पा गयी, इसलिए यथार्थ आत्मज्ञान हो गया और मुझको आनंद आ गया। जैसे पानी में पानी मिल जाय तो दोनों पानी के मिलने से लाभ हुआ। फिर वे कभी अलग नहीं होते। हृदय-देश में अपने आत्मज्ञान का राज्य हो जाने से शांति मिल गयी। मन-हाकिम को आत्म-राजा मिल गया—मन आत्माकार हो गया। साधक दसवां दरवाजा खोलकर-प्रपंचशून्य के ऊपर आत्मा में स्थित होकर विश्राम करने लगा। मन की सारी व्याधि छूट गयी। मन-इन्द्रियां जो आत्मा से अलग द्वैत भाव में लगती थीं, वह छूटकर केवल आत्मा में विश्राम मिल गया। अब प्रापंचिक टंट-घंट कौन करे? चोर से कुतिया मिल गयी तो चोरी करना सहज हो जाता है, परन्तु यहां व्यंग्य लगता है। तात्पर्य है कि मन चोर बना था, परंतु अब उसे सद्बुद्धि मिल गयी, तो उसकी विषय-वासना की चोरी छूट गयी। पलटू साहेब कहते हैं कि हे सद्गुरु साहेब! हमारे बंधनों को काटो। निर्णय वचनों को जब मनोवृत्ति पायी, तब मुझको आनंद आ गया।

## कुंडलिया-86

**जोग जुगत आसन नहीं साधन नहीं बिबेक॥**
**साधन नहीं बिबेक साधन सब कै कै छूटा।**
**लागी सहज समाधि शब्द ब्रह्माण्ड में फूटा॥**
**खंडन तनिक न होय तेलवत लागी धारा।**
**जोति निरंतर बरै दसों दिसि भा उजियारा॥**
**ज्ञान ध्यान सब छूटि छूटि संजम चतुराई।**
**तन की सुधि गइ बिसरि अरूढ़ अवस्था आई॥**
**पलटू मैं भजनै भया रही न दूजी रेख।**
**जोग जुगत आसन नहीं साधन नहीं बिबेक॥**

**शब्दार्थ**—तेलवत=तेल की अखंड धारा के समान। आरूढ़=आत्म-स्थिति में स्थिरता।

**भावार्थ**—न योग, न युक्ति, न आसन, न साधन और न विवेक। यह तो कर-करके छूट चुका है। अब तो हर क्षण सहज समाधि लगी है। ब्रह्माण्ड में शब्द की धारा फूटी। तेल की धारा अखंड होती है, वैसे सहज समाधि एकरस हो गयी है, वह थोड़ी भी खंडित नहीं होती है। आत्मज्ञान की ज्योति हृदय में निरंतर जलती है जिसका प्रकाश दसों इन्द्रियों में फैलता है। इसलिए इन्द्रियों के व्यवहार पवित्र हो गये हैं। अब बाहरी ज्ञान, ध्यान, संयम, चतुरता आदि छूट गये। शरीर की सुध-बुध खो गयी। अब आत्मज्ञान की दृढ़ स्थिति हो गयी—निरंतर आत्माराम। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं भजन स्वरूप हो गया। अब मन में मैल की रेखा नहीं रह गयी। अब योग, युक्ति, आसन, साधन और विवेक से ऊपर निरंतर आत्मलीनता की दशा है।

**विशेष**—सिर के तालुमूल में शब्द उठने की कल्पना पुरानी है। यह मन रोकने का एक कल्पित साधन है, साध्य नहीं। साध्य तो आत्मलीनता एवं स्वरूपस्थिति है। शब्द बड़ा नहीं, शब्द सुनने तथा उसका विश्लेषण करने वाला आत्मा बड़ा है।

## कुंडलिया-87

**कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान॥**
**सो ध्यानी परमान सुरति से अंडा सेवै।**
**आप रहै जल माहिं सूखे में अंडा देवै॥**

**जस पनिहारी कलस भरे मारग में आवै।**
**कर छोड़े मुख बचन चित्त कलसा में लावै॥**
**फनि मनि धरै उतारि आपु चरने को जावै।**
**वह गाफिल ना परै सुरति मनि माहिं रहावै॥**
**पलटू सब कारज करै सुरति रहै अलगान।**
**कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान॥**

**शब्दार्थ**—कमठ= कच्छप, कछुआ। फनि= सर्प। मनि= मणि।

**भावार्थ**—वह ध्यान करने वाला प्रामाणिक ध्यानी है जो कच्छप की तरह अपना लक्ष्य रखता है। कहा जाता है कि कच्छप स्वयं जल में रहता है, परंतु अपने अंडे सूखी जगह में रखता है और अपनी सुरति से उसका सेवन करता है। जैसे पनिहारिन पानी का घड़ा सिर पर रखकर चलती है वह घड़े से हाथ हटा लेती है और हाथों से हाव-भाव करते हुए सखियों से बातें करती है, परन्तु उसका लक्ष्य घड़े पर रहता है। जैसे सर्प अपनी मणि जमीन पर रखकर उसके प्रकाश में अपना आहार खोजता है, परन्तु अपना लक्ष्य मणि पर रखता है। वह उससे असावधान नहीं होता। पलटू साहेब कहते हैं कि इसी प्रकार व्यवहार का सब काम करते हुए भी साधक का मन सारे प्रपंच से अलग रहे। ऐसा कच्छप दृष्टि वाला साधक प्रामाणिक ध्यानी है।

**विशेष**—अखंड आत्मानुराग का यही फल होता है कि व्यवहार का काम करते हुए भी मन आत्मभाव में रहता है।

## कुंडलिया-४४

**जैसे कामिनि के बिषय कामी लावै ध्यान॥**
**कामी लावै ध्यान रैन दिन चित्त न टारै।**
**तन मन धन मर्जाद कामिनि के ऊपर वारै॥**
**लाख कोऊ जो कहै कहा न तनिकौ मानै।**
**बिन देखे ना रहै वाहि को सर्बस जानै॥**
**लेय वाहि को नाम वाहि की करै बड़ाई।**
**तनिक बिसारै नाहिं कनक ज्यों किरपिन पाई॥**
**ऐसी प्रीति अब दीजिये पलटू को भगवान।**
**जैसे कामिनि के बिषय कामी लावै ध्यान॥**

**शब्दार्थ**—मर्जाद= मर्यादा। किरपिन= कृपण, कंजूस।

**भावार्थ**—जैसे कामी मनुष्य अपनी प्रेयसी कामिनी का निरंतर ध्यान करता है। वह रात-दिन अपने मन को उससे नहीं हटाता। कामी अपने तन, मन, धन, मर्याद आदि कामिनी के ऊपर न्योछावर कर देता है। कोई उसे लाख समझावे, परंतु वह उसकी सीख तनिक भी नहीं मानता। वह अपनी प्रेयसी को देखे बिना नहीं रह पाता। वह कामिनी को ही अपना सर्वस्व मानता है। वह उसी का नाम लेता है, उसी की बड़ाई करता है। कामी अपनी प्रेयसी को उसी प्रकार नहीं भूलता है जिस प्रकार कृपण आदमी ने सोना पाया हो तो वह उसको सदैव सम्हाल कर रखता है। पलटू साहेब कहते हैं, हे भगवान! मुझे ऐसा अटूट प्रेम-भक्ति, आत्मज्ञान और अखंड वैराग्य के लिए दीजिए, जैसा कामिनी के लिए कामी प्रेम करता है।

## कुंडलिया-89

**साहिब साहिब क्या करै साहिब तेरे पास॥**
**साहिब तेरे पास याद करु होवै हाजिर।**
**अंदर धसि कै देखु मिलेगा साहिब नादिर॥**
**मान मनी हो फना नूर तब नजर में आवै।**
**बुरका डारै टारि खुदा बाखुद दिखरावै॥**
**रूह करै मेराज कुफर का खोलि कुलाबा।**
**तीसौ रोजा रहै अंदर में सात रिकाबा॥**
**लामकान में रब्ब को पावै पलटू दास।**
**साहिब साहिब क्या करै साहिब तेरे पास॥**

**शब्दार्थ**—साहिब=साहेब, श्रेष्ठ, परमात्मा। नादिर=अनोखा, विलक्षण, दुष्प्राप्य। मान मनी=अहंता-ममता। फना=नष्ट, नाश। नूर=ज्योति, ज्ञान-स्वरूप आत्मा। बुरका=देह सहित मुंह का आवरण, अविद्या। बाखुद=अपने में। रूह=आत्मा। मेराज=ऊपर चढ़ना। कुफर=कुफ्र, नास्तिकता। कुलाबा=लोहे का किवाड़। रिकाबा=रकाब, पैर रखने का स्थान, घोड़ों की काठी का पावदान जिससे बैठने में सहारा लेते हैं। लामकान=मकान रहित, जिसके रहने का कोई स्थान न हो। रब्ब=रब, पालन-पोषण करने वाला, ईश्वर।

**भावार्थ**—सब लोग साहेब, अल्लाह, खुदा, ईश्वर आदि नाम लेकर परोक्ष में पुकारते हैं। ईश्वर तो तेरे पास है। यदि तू अपने आप में जग जा तो

वह हाजिर हुजूर है। अपने अंदर में प्रविष्ट होकर, अंतर्मुख होकर अनुभव कर फिर विलक्षण परमात्मा मिलेगा। जब तू सारी भौतिक अहंता-ममता त्याग देगा, तब आत्मा रूपी ज्ञान-ज्योति नजर में आयेगी। अविद्या का बुरका दिल से हटा लेने पर खुदा खुद में ही दिखाई देगा। नास्तिकता का किवाड़ खोलकर आत्मा ऊपर चढ़ेगा—सारे मनोविकारों से मुक्त हो जायेगा। भीतरी संयम ही तीसों रोजा रहना है और पांचों ज्ञान इन्द्रियों तथा मन-बुद्धि से ऊपर उठ जाना ही भीतरी सात तपक्र पर चढ़ना है। पलटू साहेब कहते हैं कि स्थान रहित में परमात्मा मिलता है। ईश्वर-ईश्वर क्या करता है? ईश्वर तो तेरे पास तेरा स्वरूप है।

**विशेष**—लोग परोक्ष में परमात्मा को पुकारते हैं। पलटू साहेब कहते हैं, वह तो तेरे पास तेरा स्वरूप है—"बुरका डारै टारि खुदा बाखुद दिखरावै॥" अविद्या का आवरण हट जाने पर खुदा खुद में अनुभव होता है। इसी भाव को पुष्ट करने के लिए ग्रंथकार अनेक युक्तियां देते हैं।

## कुंडलिया-90

**दिल में आवै है नजर उस मालिक का नूर॥**
**उस मालिक का नूर कहाँ को ढूँढ़न जावै।**
**सब में पूर समान दरस घर बैठे पावै॥**
**धरती नभ जल पवन तेही का सकल पसारा।**
**छुटै भरम की गाँठि सकल घट ठाकुरद्वारा॥**
**तिल भर नाहिं कहीं जहाँ नहिं सिरजनहारा।**
**वोही आवै नजर फुरा बिस्वास हमारा॥**
**पलटू नेरे साच के झूठे से है दूर।**
**दिल में आवै है नजर उस मालिक का नूर॥**

**शब्दार्थ**—नूर= प्रकाश, ज्ञान ज्योति। फुरा= सच हुआ।

**भावार्थ**—उस परमात्मा की ज्ञान ज्योति अपने दिल में प्रत्यक्ष होती है। तू परमात्मा को बाहर खोजने कहां जाता है? वह तो सबके दिल में बैठा है। तू अंतर्मुख हो जा, फिर अपने आप में उसका साक्षात्कार होगा। धरती, आकाश, जल, पवन, सब जगह तो उसका विस्तार है—सब जगह चेतन प्राणी रूप परमात्मा है। यदि उसे बाहर पाने का भ्रम मिट जाय तो अनुभव होगा कि प्राणियों की सारी देहें ठाकुरद्वारा हैं और सबके दिल में आत्मा रूपी

परमात्मा बैठा है। ज्ञान-विज्ञान का सृजेता आत्मा सब जगह घट-घट में बैठा है। उससे खाली तिल भर भी नहीं है। मेरा विश्वास सच निकला कि अपने भीतर परमात्मा है। पलटू साहेब कहते हैं कि सच्चे ज्ञानी के आत्मबोध से परमात्मा उसके निकट है और परोक्ष में भटकनेवाले झूठे भक्त के लिए वह दूर है। अतएव बोधवान परमात्मा को अपने भीतर अनुभव करता है।

**विशेष**—आत्मा परमात्मा है। उसे बाहर खोजना अज्ञान है।

## कुंडलिया-91

**खोजत खोजत मरि गये घर ही लागा रंग॥**
**घर ही लागा रंग कीन्ह जब संतन दाया।**
**मन में भा बिस्वास छूटि गइ सहजै माया॥**
**बस्तु जो रही हिरान ताहि का लगा ठिकाना।**
**अब चित चलै न इत उत आपु में आपु समाना॥**
**उठती लहर तरंग हृदय में सीतल लागे।**
**भरम गई है सोय बैठि कै चेतन जागे॥**
**पलटू खातिर जमा भई सतगुरु के परसंग।**
**खोजत खोजत मरि गये घर ही लागा रंग॥**

**शब्दार्थ**—रंग= भाव, आनन्द। हिरान= खोयी। खातिर जमा= ख़ातिर जमा= संतोष, इत्मीनान, तसल्ली। परसंग= प्रसंग, संगत।

**भावार्थ**—परमात्मा को बाहर खोजते-खोजते थक गया। जब अंतर्मुख हुआ, तब दिल ही में उसका दीदार होने से आनंद आ गया। जब संतों ने दया करके आत्मबोध दिया तब मन में-अंतरात्मा में विश्वास हुआ और बाहर परमात्मा खोजने की माया सहज ही छूट गयी। हमारे अविवेक से आज तक परमात्मा खोया था, अब संतों के निर्णय से आत्मबोध हुआ और पता लगा कि हृदय में बैठा आत्मा परमात्मा है। अब मेरा मन इधर-उधर नहीं चल रहा है। मैं अपने आप में लीन हो गया हूं। अब आत्मानुभव की तरंगें मन में उठती हैं। इससे हृदय शीतल हो गया है। अब बाहर ईश्वर खोजने का भ्रम सो गया-खो गया है। अब मैं निरंतर अपने चेतन स्वरूप में जाग रहा हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु की संगत पाकर हृदय में आत्मसंतोष आ गया। ईश्वर को खोजते-खोजते हैरान हो गया था। जब अपने भीतर झांका तो आनंद आ गया।

कुंडलिया-92

**नजर मँहै सब की पड़ै कोऊ देखै नाहिं॥**
**कोऊ देखै नाहिं सीस पै सबके छाजै**
**पूरन ब्रह्म अखंड सकल घट आपु बिराजै॥**
**दिवसै फिरै भुलान रहै तिरगुन महँ माता।**
**देखि देखि दै छाड़ि पंडित पहँ पूजन जाता॥**
**भूला सब संसार भेद नहिं जानै वाकी।**
**देखत है इक संत ज्ञान की दीठी जाकी॥**
**पलटू खाली कहुँ नहिं परगट है जग माहिं।**
**नजर मँहै सब की पड़ै कोऊ देखै नाहिं॥**

**शब्दार्थ**—तिरगुन= सत, रज तथा तम। पहँ= पास। दीठी= दृष्टि।

**भावार्थ**—वह सबकी नजरों के सामने है। परंतु कोई देखता नहीं है। वह तत्त्व तो सबके सिर पर शोभा पाता है। जिसको पूर्ण अखंड ब्रह्म कहा जाता है, वह सबके हृदय में विराजमान है। मनुष्य शरीर के ज्ञान प्रकाश रूपी दिन में लोग भूले फिरते हैं और त्रिगुणात्मक भौतिक जगत के नशा में मतवाले होकर भटकते हैं। सब देहधारी में आत्मा रूपी परमात्मा है, परंतु उन्हें देख-देख कर उनकी उपेक्षा कर देते हैं और पंडित के पास नकली ईश्वर पूजने जाते हैं। संसार के सारे लोग भूले हैं। आत्मतत्त्व का भेद नहीं जानते। आत्मतत्त्व को कोई बिरला संत देखता है जिसके पास ज्ञान की दृष्टि है। पलटू साहेब कहते हैं कि खाली कहीं नहीं है, जगत में वह चेतन आत्मा के रूप में प्रकट है। वह सबकी नजरों में है, परन्तु कोई देखता नहीं है।

**विशेष**—प्राणी परमात्मा है। यह दृष्टि सबकी नहीं है। लोग शून्य या पत्थर की पिंडियों में परमात्मा मानते हैं। वस्तुतः आत्मा परमात्मा है।

## 10. दासातन का महत्त्व

कुंडलिया-93

**पहिले दासातन करै सो बैराग प्रमान॥**
**सो बैराग प्रमान सेवा साधुन की कीजै।**
**तब छोड़ै संसार बूझ घर ही में लीजै॥**
**काढ़ै रस रस गोड़ कछुक दिन फिरै उदासी।**
**सतगुरु उहवाँ बसैं जहाँ काया की कासी॥**

**आसन में दृढ़ होय घटावै नींद अहारा।**
**काम क्रोध को मारि तत्व का करै बिचारा॥**
**भक्ति जोग के पीछे पलटू उपजै ज्ञान।**
**पहिले दासातन करै सो बैराग प्रमान॥**

**शब्दार्थ**—दासातन=सेवकाई, सेवा। प्रमान=प्रमाण, सच्चा, मानने योग्य। रस-रस=धीरे-धीरे। गोड़=पैर।

**भावार्थ**—पहले घर में रहकर संतों की सेवा करे तब उसका वैराग्य प्रामाणिक होगा। पहले संतों की सेवा करके भक्ति दृढ़ कर ले। घर में रहकर स्वरूपज्ञान और साधुता की रहनी अच्छी तरह समझ-बूझ ले। इसके बाद घर-गृहस्थी का त्यागकर सद्गुरु की शरण में समर्पित हो। धीरे-धीरे त्याग की तरफ अपने पैर बढ़ावे। घर में रहते हुए कुछ दिन उदासीनतापूर्वक बरताव करते हुए अपने को तौले। सद्गुरु काया की काशी में बसते हैं। अतएव सद्गुरु की शरण में रहना काशी में बसना है। स्थिर आसन से देर तक बैठने का अभ्यास करे और भोजन तथा नींद कम करे। काम-क्रोध को मारकर आत्मतत्त्व का विचार करे। पहले सेवा-भक्ति उसके बाद ध्यान-समाधि, फिर इसके बाद आत्मज्ञान उदय होता है। पहले सेवा-भक्ति करके मन को मांज ले, तब उसका वैराग्य प्रामाणिक होता है।

## कुंडलिया-94

**खामिंद कब गोहरावै चाकर रहै हजूर॥**
**चाकर रहै हजूर होइ ना निमक हरामी।**
**डेरत रहै दिन राति लगै ना कबहीं खामी॥**
**आठ पहर रहै ठाढ़ सोई है चाकर पूरा।**
**का जानी केहि घरी हरी दै देइ अजूरा॥**
**निवाले रोह बरोह सलाम में रहता चोटा।**
**वह काफिर बेपीर खायगा आखिर सोटा॥**
**पलटू पलक न भूलिये इतना काम जरूर।**
**खामिंद कब गोहरावै चाकर रहै हजूर॥**

**शब्दार्थ**—खामिंद=ख़ाविंद, स्वामी, मालिक। खामी=चूक, भूल। अजूरा=मेहनताना, मजदूरी। निवाले=खाने के समय। रोहबरोह=रू-ब-रू, सामने। सलाम=बंदगी, सेवा। चोटा=चोर। सोटा=डंडा, दुख।

**भावार्थ**—स्वामी कब पुकारे, सेवक सब समय सेवा में सामने उपस्थित रहे। नमकहरामी कभी नहीं करना चाहिए। सदैव सेवा काम में डरता रहे कि मुझसे सेवा में कमी न हो जाय। वही पूर्ण सेवक है जो आठों पहर सेवा में खड़ा रहे। पता नहीं किस समय ज्ञानदाता मजदूरी दे दे। जो लोग खाने के लिए तो सामने खड़े रहते हैं और सेवा-बंदगी में कामचोर हैं, वे बेपीर काफिर हैं। वे अंत में दुख पायेंगे। पलटू साहेब कहते है कि यह काम अवश्य करो कि अपने स्वामी को पलक मात्र मत भूलो क्योंकि स्वामी कब सेवा के लिए पुकारे, इसलिए सेवक सब समय सामने उपस्थित रहे।

## 11. संत शूरवीर

कुंडलिया-95

**संत चढ़े मैदान पर तरकस बाँधे ज्ञान॥**
**तरकस बाँधे ज्ञान मोह दल मारि हटाई।**
**मारि पाँच पचीस दिहा गढ़ आगि लगाई॥**
**काम क्रोध को मारि कैद में मन को कीन्हा।**
**नव दरवाजे छोड़ि सुरत दसएँ पर दीन्हा॥**
**अनहद बाजै तूर अटल सिंहासन पाया।**
**जीव भया संतोष आय गुरु नाम लखाया॥**
**पलटू कफ्फन बांधि कै खेंचो सुरति कमान।**
**संत चढ़े मैदान पर तरकस बाँधे ज्ञान॥**

**शब्दार्थ**—पाँच=पांच ज्ञान की इंद्रियां। पचीस=पचीस प्रकृतियां। नौ दरवाजे=दो आंख, दो नाक, दो कान, मुख, गुदा और उपस्थ। दसएँ =ब्रह्मरंध्र, कपालकुहर। तूर=बाजा।

**भावार्थ**—संत ज्ञान का तरकस बांधकर मानस युद्ध के मैदान पर चढ़ गये। उन्होंने मोह के दल को मारकर पछाड़ दिया। पांच ज्ञानेन्द्रियों को जीतकर पचीस प्रकृतियों को भी वश में कर लिया और कायागढ़ में ज्ञान-वैराग्य की आग लगा दी। काम-क्रोध को मार कर मन को वश में कर लिया। नौ दरवाजे को छोड़कर दसवें पर मन लगाया—इन्द्रियों के विषयों को त्यागकर संकल्पशून्य दशा में पहुंच गये। गगनगुफा में अनाहतनाद का बाजा बज रहा है। स्वरूपस्थिति का अविचल सिंहासन मिल गया। सद्गुरु ने आकर सतनाम का अर्थ आत्मज्ञान लखा दिया। इससे जीव को संतोष मिल

गया। पलटू साहेब कहते हैं कि सिर पर कफन बांधकर जीवन की क्षण-भंगुरता समझकर मनोवृत्ति रूपी कमान पर ज्ञान रूपी बाण रखकर खैंचो और लक्ष्य को बेधो। संत ज्ञान का तरकस बांधकर मानस युद्ध के मैदान में चढ़ गये।

## कुंडलिया-96

**बाना बाँधै लड़ि मरै संत सिपाही क पूत॥**
**संत सिपाही क पूत इसिम में दाग न लागै।**
**महा मोह दल टारि बहुरि ना पानी माँगै॥**
**मारै पाँच पचीस बचै ना तिरगुन पावै।**
**लालच का सिर काटि मुलुक में अदल चलावै॥**
**तृस्ना और हंकार माया की गर्दन मारै।**
**मन को लेवै पकरि कैद करि बेरी डारै॥**
**पलटू टरै न खेत से सोई है अवधूत।**
**बाना बाँधै लड़ि मरै संत सिपाही क पूत॥**

**शब्दार्थ**—बाना= साधु वेष। लड़ि मरै= अटूट युद्ध करे। इसिम= इस्म, नाम, संज्ञा। पानी= वासना। अदल= कानून, शासन। बेरी= बेड़ी। अवधूत = मस्त फकीर।

**भावार्थ**—साधक संत-योद्धा का पुत्र है, शिष्य है। वह साधुवेष पहनकर मानस युद्ध में अटूट युद्ध करे। वह अपने साधु नाम में दाग न लगने दे। मोह की महान सेना को मार डाले और पुनः किसी वस्तु की वासना न बनावे। पांचों ज्ञानेन्द्रियों और पचीसों प्रकृतियों को मार दे और सत, रज, तम तीनों गुणों के विकार रहने न पावें। लालच-लोभ को मारकर आत्म-देश में साधुता का शासन करे। तृष्णा, अहंकार तथा मोहाकर्षण को नष्ट कर दे। मन को पकड़कर कैद कर ले और उसके पैर में बेड़ी पहना दे—मन की चाल शांत कर दे। पलटू साहेब कहते हैं कि मोह दल के युद्ध से जो पीछे न हटे, वही मस्त फकीर है। संत-योद्धा का शिष्य साधु का वेष पहनकर मन से घोर युद्ध करे।

## कुंडलिया-97

**काया कोट छुड़ावै सोई है रजपूत॥**
**सोई है रजपूत देइ गढ़ आगि लगाई।**
**मुरचा पाँच पचीस बात में लेइ छड़ाई॥**

**काया गढ़ के बीच जाय के थाना करना।**
**मन है बड़ा मवास पकरि के ठौरै मरना॥**
**काम क्रोध को मारि लोभ औ मोह हंकारा।**
**लालच को सिर काटि बहै लोहू की धारा॥**
**पलटू अठहँ लोक में अमल करै अवधूत।**
**काया कोट छुड़ावै सोई है रजपूत॥**

**शब्दार्थ**—कोट= किला। गढ़= किला। मुरचा= मोर्चा, सामना। थाना = स्थान, स्थिति। मवास= ठग। अठहं लोक= पांच ज्ञानेन्द्रिय, मन तथा बुद्धि से परे आठवां आत्मदेश। अमल= व्यवहार, शासन।

**भावार्थ**—असली क्षत्रिय वह है जो शरीर रूपी किला से जीव को मुक्त कर ले। वही राजपूत है जो देह रूपी किला में ज्ञान-वैराग्य की आग लगा दे। पांच ज्ञानेन्द्रियों और पचीस प्रकृतियों का सामना कर बात-बात में तुरंत उन पर विजय करके अपने को छुड़ा ले। फिर काया गढ़ के बीच में जीत का स्थान बना ले। मन बड़ा ठग है। इसको पकड़कर उसी दम मार दिया जाय। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार को मार दे और लालच-लोभ का सिर काट दे, फिर इनके रक्त की धारा बह निकलेगी—सारे विकार नष्ट हो जायेंगे। पलटू साहेब कहते हैं कि पांच ज्ञानेन्द्रिय, मन और बुद्धि के ऊपर आठवें आत्मदेश में मस्त फकीर शासन करता है। इस काया-किला से जो अपने आप को मुक्त कर ले, वह सच्चा क्षत्रिय है।

## कुंडलिया-98

**संत चढ़े जो मोह पर काया नगर मँझार।**
**काया नगर मँझार ज्ञान का तरकस बाँधे।**
**दम की गोली साधि विस्वास बंदूक है काँधे॥**
**घोड़ा है संतोष छिमा का जीन बँधाई।**
**बखतर पहिरे प्रेम गगन में लै दौड़ाई॥**
**मुरचा पाँच पचीस बात में लिहा छुड़ाई।**
**मन के बेरी डारि नगर में अदल चलाई॥**
**पलटू सुरति कमान करि नाम निसाना मार।**
**संत चढ़े जो मोह पर काया नगर मँझार॥**

**शब्दार्थ**—दम= दमन। बेरी= बेड़ी। अदल= शासन, न्याय।

**भावार्थ**—इस शरीर-नगर के बीच में संत मोह की सेना पर चढ़ाई करते हैं। वे ज्ञान का तरकस बांधते हैं, आत्मविश्वास की बंदूक कांधे पर रखकर उसमें आत्मदमन की गोली भर कर मोह-सेना पर चलाते हैं। वे संतोष रूपी घोड़ा पर क्षमा का जीन बांधते हैं, प्रेम का कवच पहनते हैं, फिर साधना के आकाश में घोड़ा दौड़ाते हैं। पांच ज्ञानेन्द्रियों और पचीस प्रकृतियों के मोरचा में आगे बढ़कर उन्हें बात-बात में परास्त कर देते हैं और अपने को बंधनों से छुड़ा लेते हैं। वे मन के पैर में बेड़ी डालकर उसकी चाल बंद कर अंतःकरण नगर में अपना शांति का शासन चलाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि वे चित्तवृत्ति रूपी धनुष पर ज्ञान का बाण चढ़ाकर सतनाम के अर्थ रूपी आत्मबोध पर निशाना मारते हैं और आत्मलीन हो जाते हैं। इस प्रकार संत काया-गढ़ में मोह-राजा की सेना को मारकर अपना स्वतंत्र शांति का राज्य स्थापित करते हैं।

## कुंडलिया-99

**लागी गोली नाम की पलटू गया है लोट॥**
**पलटू गया है लोट चोट सब्दन की लागी।**
**रंजक दै कै ज्ञान दिया संतन ने दागी॥**
**लोथ परी भहराय उठत हैं गिद्ध मसाना।**
**भागे कादर देखि खेत सूरा ठहराना॥**
**मारै भरि भरि भेद छेद भा तन में तिल तिल।**
**कड़खा दै ललकार खाल गिरि परी है छिल छिल॥**
**सतगुरु के मैदान में रही न तनिकौ ओट।**
**लागी गोली नाम की पलटू गया है लोट॥**

**शब्दार्थ**—लोट= जमीन में पड़ जाना, तात्पर्य में मस्त। रंजक= बारूद। लोथ= लाश, शव। कादर= कायर। सूरा= वीर। कड़खा= युद्ध के गीत। ओट= परदा।

**भावार्थ**—सतनाम के अर्थ द्वारा आत्मज्ञान की गोली लगी और पलटू घायल होकर जमीन पर सो गया, क्योंकि आत्मज्ञानपरक शब्दों की चोट लग गयी। संतों ने आत्मज्ञान की बारूद भरकर बोध की गोली दाग दी। अब लाश भहराकर गिर पड़ी और श्मशान में उसे खाने के लिए गिद्ध-चील्ह घूमने

लगे। यह दशा देखकर कायर लोग तो भाग खड़े हुए और शूरवीर युद्ध में अड़े रहे। सद्गुरु आत्मज्ञान के रहस्य की गोली अपने विवेक-बंदूक में भर-भरकर मारते हैं और उससे मेरे शरीर में तिल-तिल की जगह में छेद हो गया है। इस मानस युद्ध में सद्गुरु ज्ञान-वैराग्य के वीरताप्रेरक गीत सुनाकर ललकारते हैं। युद्ध क्षेत्र में थोड़ा भी बचने का आधार नहीं रह गया है। आत्मज्ञान की गोली लगने से पलटू मैदान में लोट गया है।

**विशेष**—अलंकारों में कहे गये सारे वर्णनों का अर्थ है कि सद्गुरु के उपदेश से आत्मज्ञान पाकर साधक संसार के मोह से पार होकर आत्मलीन हो जाता है और जीवनपर्यन्त आत्मलीनता की दशा में रहता है और इसलिए वह कायागढ़ की लड़ाई में डटा रहता है।

## कुंडलिया-100

**लागी गाँसी सबद की पलटू मुआ तुरंत॥**
**पलटू मुआ तुरंत खेत के ऊपर जाई।**
**सिर पहिले उड़ि गया रुंड से करै लड़ाई॥**
**तन में तिल तिल घाव परदा खुलि लटकत जाई।**
**हैफ खाइ सब लोग लड़ै यह कठिन लड़ाई॥**
**सतगुरु मारा तीर बीच छाती में मेरी।**
**तीर चला होई पवन निकरि गा तारू फोरी॥**
**कहने वाले बहुत हैं कथनी कथैं बेअंत।**
**लागी गाँसी सबद की पलटू मुआ तुरंत॥**

**शब्दार्थ**—गांसी=बाण का नोक। खेत=युद्ध क्षेत्र। रुंड=धड़। परदा=चाम, अविद्या। हैफ=हैफ़, अफ़सोस, दुख, आश्चर्य। तारू=पैर का तलवा।

**भावार्थ**—आत्मज्ञान के शब्दों के बाण लगे और पलटू युद्धक्षेत्र में तुरंत मर गया। सिर कटकर तुरंत उड़ गया। अब वह केवल धड़ से लड़ाई कर रहा है—देहाभिमान तुरंत नष्ट हो गया। अब केवल अनासक्त होकर साधना कर रहा है। शरीर के तिल-तिल जगह में घाव हो गया है और अविद्या का परदा फटकर लटक गया-गिर गया—पूरा जीवन वैराग्यमय हो गया। लोग आश्चर्यचकित होकर देखते और कहते हैं कि यह कठिन लड़ाई लड़ रहा है। सद्गुरु ने आत्मज्ञान का बाण मेरी छाती के बीच में मार दिया। वह तीर हवा

के समान तेज होकर पैर के तलवे को फोड़कर निकल गया—पूरा जीवन आत्मज्ञान से ओत-प्रोत हो गया। ज्ञान की बढ़-बढ़ कर बात करने वाले तो बहुत हैं, परन्तु आत्मज्ञान के बाण से जिसकी अहंता-ममता मर जाय वह बिरला है।

## कुंडलिया-101

**जियतै मरना भला है नाहिं भला बैराग॥**
**नाहिं भला बैराग अस्त्र बिन करै लड़ाई।**
**आठ पहर की मार चूके से ठौर न पाई॥**
**रहै खेत पर ठाढ़ सीस को लेय उतारी।**
**दिन दिन आगे चलै गया जो फिरै पछारी॥**
**पानी माँगै नाहिं नाहिं काहू से बोलै।**
**छकै पियाला प्रेम गगन की खिड़की खोलै॥**
**पलटू खरी कसौटी चढ़ै दाग पर दाग।**
**जियतै मरना भला है नाहिं भला बैराग॥**

**शब्दार्थ**—खेत= युद्ध क्षेत्र, साधना क्षेत्र। छकै= पिये।

**भावार्थ**—जीते जी मर जाना अच्छा है, केवल वैराग्य का वेष लेना अच्छा नहीं है। बाहरी अस्त्र-शस्त्र के बिना भीतरी लड़ाई करना है। मन की लड़ाई में आठों पहर की लड़ाई है। यदि साधक एक क्षण भी असावधान हो गया तो उसकी स्थिति खराब हो जायगी। साधक साधना के युद्ध क्षेत्र में हर समय खड़ा युद्ध करता रहे और अपने सिर को उतारकर लड़े—अहंकार को त्याग कर मन से लड़े। दिन प्रतिदिन साधना में आगे बढ़ता जाय। जो कायर होकर पिछड़ा, वह डूब गया। घाव लगने पर शरीर से रक्त निकल जाता है तो तुरंत प्यास लगती है और घायल पानी मांगता है—साधना करते-करते मन कभी-कभी संसार की तरफ ललचाने लगता है, परंतु सावधान साधक किसी प्रकार वासना की पूर्ति न करे और लाख प्रतिकूलता आने पर भी किसी से विवाद न करे। निरंतर आत्म-प्रेम का प्याला पिये और प्रपंचशून्यता रूपी आकाश की खिड़की खोलकर असंग दशा में स्थित हो जाय। पलटू साहेब कहते हैं कि साधक की कसौटी यह है कि जैसे युद्ध करनेवाले योद्धाओं के अंगों पर अस्त्र-शस्त्र चलाते-चलाते दाग पड़ जाते हैं, वैसे साधक की साधना की निरंतरता से उसके जीवन में संयम के चिह्न संसार से उदासीनता

दिखे। वैराग्य का वेष मात्र भला नहीं है, अपितु जीते जी मर जाना—अहंता-ममता-शून्य हो जाना भला है।

## 12. पातिव्रत्य

कुंडलिया-102

**पतिबरता को लच्छन सबसे रहै अधीन॥**
**सबसे रहै अधीन टहल वह सबकी करती।**
**सास ससुर औ भसुर ननद देवर से डेरती॥**
**सब का पोषन करै सभन की सेज बिछावै।**
**सब को लेय सुताय पास तब पिय के जावै॥**
**सूतै पिय के पास सभन को राखै राजी।**
**ऐसा भक्त जो होय ताहि की जीती बाजी॥**
**पलटू बोलै मीठे बचन भजन में है लौलीन।**
**पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन॥**

**शब्दार्थ**—भसुर= जेष्ठ, जेठ। लौलीन= तद्गत, तन्मय।

**भावार्थ**—पतिव्रता स्त्री का लक्षण है कि वह सबसे विनम्र रहे, सबकी सेवा करे; सासु, ससुर, जेठ, ननद, देवर, सबका अदब-लिहाज रखे। सबको भोजन दे, सबकी शय्या बिछा दे और सबके शय्या पर चले जाने पर अपने पति के पास जाय। सबको प्रसन्न रखने की चेष्टा करे, परन्तु केवल अपने पति के साथ शयन करे। इसी प्रकार जो भक्त-साधक सबके साथ सुन्दर बरताव करते हुए अपने आत्मा में लीन रहता है, उसने जीवन का दावं जीत लिया—मोक्ष प्राप्त कर लिया। पलटू साहेब कहते हैं कि सबसे मीठे वचन बोले, और अपने आत्मचिंतन तथा आत्मलीनता में तत्पर रहे। जैसे पतिव्रता का लक्षण होता है कि अन्य से भी विनम्र और सेवापरायण रहती है, वैसे सच्चा साधक सबसे विनम्र रहकर आत्मलीन रहता है।

कुंडलिया-103

**सोई सती सराहिये जरै पिया के साथ॥**
**जरै पिया के साथ सोई है नारि सयानी।**
**रहै चरन चित लाय एक से और न जानी॥**

**जगत करै उपहास पिया का संग न छोड़ै।**
**प्रेम की सेज बिछाय मेहर की चादर ओढ़ै॥**
**ऐसी रहनी रहै तजै जो भोग बिलासा।**
**मारै भूख पियास याद संग चलती स्वासा॥**
**रैन दिवस बेहोस पिया के रंग में राती।**
**तन की सुधि है नहीं पिया संग बोलत जाती॥**
**पलटू गुरु परसाद से किया पिया को हाथ।**
**सोई सती सराहिए जरै पिया के साथ॥**

**शब्दार्थ**—मेहर= मेह्र, दया, कृपा। हाथ= स्ववश।

**भावार्थ**—वही नारी सती एवं पतिव्रता कहलाती है जो पति की सेवा में अपने शरीर को जीर्ण करे। वही नारी समझदार है जो अपने पति के चरणों में चित लगाकर रहे और केवल अपने पति में अनुराग रखे, अन्य पुरुष के ऊपर उसका मन न जाय। इसी प्रकार साधक की वही मनोवृत्ति प्रशंसनीय है जो केवल आत्माराम में रमे। वह अन्य जगह न लगे। जगत के लोग भले उसका मजाक उड़ायें, परन्तु वह आत्मलीनता को छोड़कर अलग न हो। प्रेम की शय्या बिछाकर और दया की चादर ओढ़कर आत्मलीनता की साधना में रहे। ऐसी अंतर्मुख रहनी से रहे और संसार के सारे भोग-विलासों को छोड़ दे। भूख-प्यास की परवाह न कर संयम से रहे और आत्मचिंतन के साथ श्वास चले—निरंतर आत्मरत रहे। ऐसी मनोवृत्ति संसार से सब समय बेभान होकर केवल आत्माराम पति की भावना में ही मस्त रहती है, शरीर की आसक्ति से रहित रहकर अंतरात्मा से ही बात करती रहती है—आत्मचिंतन में ही सदैव डूबी रहती है। पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु की कृपा से मैंने आत्माराम-स्वामी को स्ववश कर लिया है। वही प्रशंसनीय पतिव्रता है जो पति की सेवा में लीन रहे। इसी प्रकार वही मनोवृत्ति प्रशंसनीय है जो निरंतर आत्माराम में रमण करे।

## 13. महत्त्वपूर्ण उपदेश

### कुंडलिया-104

**हरि को दास कहाय के गुनह करै ना कोय॥**
**गुनह करै ना कोय जेहि बिधि राखै रहिये।**
**दुख सुख कैसउ पड़े केहू से तनिक न कहिये॥**

**तेरे मन में और करनवाला है औरै।**
**तू ना करै खराब नाहक को निस दिन दौरै॥**
**वाको कीजै याद जाहि की मारी टूटै।**
**आधी को तू जाय घरहि में सम्मै फूटै॥**
**पलटू गुनह किये से भजन माहिं भँग होय।**
**हरि को दास कहाय के गुनह करै ना कोय॥**

**शब्दार्थ**—गुनह= गुनाह, पाप, दोष, अपराध। सम्मै= पूरा, सबका सब।

**भावार्थ**—हरि-गुरु का भक्त कहलाकर कोई किंचित भी अपराध न करे। हरि-गुरु जैसा रखें वैसा रहे। चाहे दुख मिले और चाहे सुख मिले, किसी से किसी की निन्दा-प्रशंसा की बात न कहिए। तुम्हारे मन में कुछ अन्य खिचड़ी पक रही है, परन्तु होता वही है जो कारण-कार्य-व्यवस्था के अनुसार है। जैसा कर्म वैसा फल। तू अहंता-ममता में पड़कर अपने मन और करनी को खराब मत कर। तू व्यर्थ ही मन की तृष्णा में पड़कर रात-दिन दौड़ता है। उस सत्य स्वरूप का स्मरण कर जिसके विवेक से सारे बंधन टूटते हैं। तू दुनिया की आधी-अधूरी लौकिक उपलब्धियों के लिए भटकता है, किन्तु यह नहीं समझता कि इस बहिर्मुखता में पड़ने से हृदय-घर का आत्मशांति का सारा धन बिखरकर नष्ट हो जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि अपराध करके आत्मशांति की साधना में भंग पड़ता है। इसलिए हरि-गुरु का दास कहलाकर कोई अपराध न करे।

**विशेष**—जो हमारे अज्ञान को हरण कर ले वही हरि है और वह प्रत्यक्ष सद्‌गुरु है और संत हैं। अतएव संत-गुरु ही हरि हैं। इनसे अलग कहीं हरि मिलने वाला नहीं है।

## कुंडलिया-105

**अपनी ओर निभाइये हारि परै की जीति॥**
**हारि परै की जीति ताहि की लाज न कीजै।**
**कोटिन बहै बयारि कदम आगे को दीजै॥**
**तिल तिल लागै घाव खेत से टरना नाहीं।**
**गिरि गिरि उठै सम्हारि सोई है मरद सिपाही॥**
**लरि लीजै भरि पेट कानि कुल अपनि न लावै।**
**उन की उनके हाथ बड़न से सब बनि आवै॥**

**पलटू सतगुरु नाम से साची कीजै प्रीति।**
**अपनी ओर निभाइये हारि परै की जीति॥**

**शब्दार्थ**—कानि कुल= कुल की कानि, कुल-जाति की मर्यादा, लज्जा।

**भावार्थ**—तुम अपने कर्तव्य को पूर्णतया निभाओ, चाहे हानि हो अथवा लाभ, प्रशंसा मिले या निन्दा, इस बात की लज्जा न करो। स्तुति-निन्दा की चाहे जितनी आंधी आये कल्याण-साधना में सदैव आगे पैर बढ़ाओ। शरीर के तिल तिल में चाहे घाव लगे, परन्तु युद्ध क्षेत्र से भागना नहीं है। जो गिर-गिरकर भी अपने को सम्हालता है और उठता है, वह साहसी योद्धा है। जी छककर साधना कर लो, इसमें अपने कुल, कुटुंब, जाति-बिरादरी की मर्यादा-लज्जा की भी परवाह न करो। बड़े लोगों पर अंगुली न उठाओ। उनकी बात उनके हाथों में है। बड़े लोग सब बना लेते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि सद्‌गुरु के दिये हुए सतनाम के अभिप्राय में आत्मज्ञान है। उससे सच्चा प्रेम करो। अपने कल्याण-पथ में डटे रहो। हानि-लाभ, स्तुति-प्रशंसा की परवाह मत करो।

## कुंडलिया-106

**काजर दिहे से का भया ताकन को ढब नाहिं॥**
**ताकन को ढब नाहिं ताकन की गति है न्यारी।**
**इक टक लेवै ताकि सोई है पिय की प्यारी॥**
**ताकै नैन मिरोरि नहीं चित अंतै टारै।**
**बिन ताके केहि काम लाख कोउ नैन सँवारै॥**
**ताके में है फेर फेर काजर में नाहीं।**
**भंगि मिली जो नाहिं नफा क्या जोग के माहीं॥**
**पलटू सनकारत रहा पिय को खिन खिन माहिं।**
**काजर दिहे से का भया ताकन को ढब नाहिं॥**

**शब्दार्थ**—काजर= काजल। ढब= विधि, कायदा, तरीका। नैन मरोरि= तिरछी चितवन, गहराई से देखना। भंगि= युक्ति। सनकारत= इशारा एवं संकेत करना।

**भावार्थ**—कोई युवती यदि देखने का तरीका नहीं जानती है तो उसका आंखों में काजल लगाने से क्या लाभ हुआ? देखने की दशा अलग है। जो

युवती एक गहरी निगाह से अपने पति को देख ले, वही अपने प्रियतम पति की प्यारी है। अपने तिरछे चितवन से पति को देखे और अपने मन को अन्य तरफ न ले जाय। बिना पति को प्रेम भरी निगाह से देखे उसका काम अन्य लाखों लोग भी नहीं बना सकते। देखने में ही अंतर है, काजल लगाने में नहीं। यदि सद्गुरु से मन के भवसागर से तरने की युक्ति नहीं मिली, तो योगाभ्यास करने से क्या लाभ होगा। पलटू साहेब कहते हैं कि जो युवती अपने प्रियतम पति को क्षण-क्षण अपने प्रेम का संकेत देती है, वह कुशल है। यदि देखने की विधि सही नहीं है, तो काजल लगाने से क्या लाभ!

**विशेष**—उक्त कुंडलिया में उस युवती की प्रशंसा की गयी है जो अपने पति को प्रेम भरी निगाह से देखती है। ध्यान रहे, यह ज्ञान-वैराग्य की पुस्तक है, शृंगार रस की नहीं। यहां उक्त कथन उपलक्षण मात्र है। यहां का अभिप्राय है कि साधक की उस मनोवृत्ति की प्रशंसा है जो गहरे मनोभाव से अपने प्रियतम पति आत्मा को निरंतर देखती है। जिस साधक की मनोवृत्ति निरंतर अंतर्मुख रहती है, आत्मलीनता में रहती है वह सफल है। इसके अलावा लाखों लोग उसको सफल नहीं कर सकते। साधक-संत का वेष बनाने से क्या हुआ, यदि मनोवृत्ति अंतर्मुख नहीं हुई तो?

## कुंडलिया-107

**जाकी जैसी भावना तासे तस ब्यौहार॥**
**तासे तस ब्यौहार परसपर दूनौं तारी।**
**जो जेहि लाइक होय सोई तस ज्ञान बिचारी॥**
**जो कोइ डारै फूल ताहि को फूल तयारी।**
**जो कोइ गारी देत ताहि को हाजिर गारी॥**
**जो कोइ अस्तुति करै आपनी अस्तुति पावै।**
**जो कोई निन्दा करै ताहि के आगे आवै॥**
**पलटू जस मैं पीव का वैसै पीव हमार।**
**जाकी जैसी भावना तासे तस ब्यौहार॥**

**शब्दार्थ**—तारी= ताली, दोनों हथेली साथ बजती है।

**भावार्थ**—जिसके मन की जैसी भावना होती है, उससे वैसा ही व्यवहार लोग करते हैं। जैसे दोनों हाथों से ताली बजती है। ज्ञान-विचार की यह बात है कि जो मनुष्य जिस योग्य होता है, प्रकृति से उसे वैसा ही मिलता है। जो

दूसरे पर फूल डालता है उसके ऊपर फूल बरसता है। जो दूसरों को गाली देता है उसके लिए गाली तैयार मिलती है। जो दूसरों के सद्गुणों का आदर करता है उसको सर्वत्र आदर मिलता है। जो दूसरों की निन्दा करता है वह निन्दा पाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि हम अपने प्रियतम आत्मा को प्यार करेंगे, तो वह मेरा हो जायेगा। अपनी ओर लौटने पर आत्मसाक्षात्कार होता है। जिसकी जैसी भावना होती है, प्रकृति से उसको वैसा ही फल मिलता है।

## कुंडलिया-108

**टेढ़ सोझ मुँह आपना ऐना टेढ़ा नाहिं॥**
**ऐना टेढ़ा नाहिं टेढ़ को टेढ़ै सूझै।**
**जो कोइ देखै सोझ ताहि को सोझै बूझै॥**
**जाको कुछ नहिं भेद भावना अपनी दरसै।**
**जाको जैसी प्रीति मुरति सो तैसी परसै॥**
**दुर्जन के दुर्बुद्धि पाप से अपने जरते।**
**सज्जन के है सुमति सुमति से अपने तरते॥**
**पलटू ऐना संत हैं सब देखै तेहि माहिं।**
**टेढ़ सोझ मुँह आपना ऐना टेढ़ा नाहिं॥**

**शब्दार्थ**—ऐना= दर्पण। सोझ= सीधा।

**भावार्थ**—मुंह टेढ़ा होना या सीधा होना अपने मुंह के दोष और गुण हैं दर्पण में वे ही दिखेंगे। इसमें दर्पण का दोष नहीं है। दर्पण तो सीधा है। अपना मुंह टेढ़ा है तो वह टेढ़ा ही दिखेगा। जिसका मन टेढ़ा है वह सर्वत्र टेढ़ापन ही देखता है और जिसका मन शुद्ध है उसको सर्व शुद्धता दिखती है। जिसके मन में कोई भेदभाव नहीं, वह समता में जीता है। वस्तुतः मनुष्य के मन की जैसी भावना होती है, उसके लिए वही बाहर प्रतिबिम्बित होती है। जिसकी जैसी भावना होती है सभी मूर्तमान पदार्थों में उसको वैसा ही अच्छा-बुरा दिखता है। दुष्ट लोग अपनी दुर्बुद्धि के कारण अपने मन के पाप में जलते हैं। सज्जनों में सुबुद्धि होती है, वे अपनी अच्छी मति के नाते दुखों से पार चले जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संत दर्पण के समान हैं। लोगों का जैसा-जैसा भाव होता है, उसी भाव से वे उनमें अपना मंतव्य बनाते हैं। अपने मुंह टेढ़े-सीधे होते हैं, दर्पण ज्यों का त्यों है।

## कुंडलिया-109

**फूली है यह केतकी भौंरा लीजै बास॥**
**भौंरा लीजै बास जन्म मानुष को पाया।**
**करी न गुरु की भक्ति जक्त में आइ भुलाया॥**
**भौंरा कीजै चेत कहा तू फिरै भुलाना।**
**हरि को नाम सुगन्ध छोड़ि पाड़र लिपटाना॥**
**ऋतु बसंत की जात कली को रस लै लीजै।**
**बहुरि न ऐसा दावँ चेत चित भौंरा कीजै॥**
**पलटू कबहूँ ना मरै होय न जिव का नास।**
**फूली है यह केतकी भौंरा लीजै बास॥**

**शब्दार्थ**—केतकी=एक सुगंधित फूल। पाड़र=गंधरहित फूल। जात= उत्पन्न।

**भावार्थ**—हे भंवरा! सुगंधित केतकी फूल खिले हैं, उनकी सुगंधी को ले। कल्याणदायी मानव-जीवन मिला है, हे मन! अपना उद्धार कर ले। तूने सद्गुरु की भक्ति नहीं की। संसार में आकर तू भूल गया। हे मन भंवरा! तू जगत की मोह-नींद से जग जा। तू इस विकट वन-संसार में कहां भूला घूमता है? आत्मज्ञान की सुगंधी छोड़कर गंधरहित-सारहीन जगत-विषयों में लिपट गया। वसंत ऋतु में उत्पन्न फूलों का रस ले—मानव जीवन के विवेक का सदुपयोग कर आत्मशांति ले ले। हे मन भंवरा! सावधान हो। आज जैसा सुनहला अवसर मिलना कठिन है। पलटू साहब कहते हैं कि चेतन जीव का नाश नहीं होता। वह कभी नहीं मरता है। उत्तम मानव जीवन रूप केतकी के फूल खिले हैं, उससे अपने कल्याण का काम कर ले।

## कुंडलिया-110

**गुरु की भक्ति और माया ज्यों छूरी तरबूज॥**
**ज्यों छूरी तरबूज कुसल दोऊ बिधि नाहीं।**
**गिरे गिराये घाव लगे तरबूजै माहीं॥**
**कनक कामिनी बड़ी दोऊ है तीछन धारा।**
**तब बचिहैं तरबूज रहै छूरी से न्यारा॥**
**छोट बड़ा कतलाम नहीं छूरी को दाया।**
**बचै विवेकी संत गये जिन अंग लगाया॥**

**पलटू उनसे बैर है पड़ै न मूरख बूझ।**
**गुरु की भक्ति और माया ज्यों छूरी तरबूज॥**

**शब्दार्थ**—तीछन= तीक्ष्ण, तेज। कतलाम= कत्लेआम, सर्वसंहार।

**भावार्थ**—गुरुभक्ति और माया क्रमशः तरबूज और छूरी की तरह है। चाहे छूरी तरबूज पर गिरे और चाहे तरबूज छूरी पर गिरे, गिरे-गिराये दोनों विधि से तरबूज ही कटेगा। दोनों प्रकार से तरबूज का कुशल नहीं है। कनक और कामिनी की बड़ी तेज धार है। तरबूज तब बचेगा जब वह छूरी से दूर रहे। इसी प्रकार भक्ति तब सुरक्षित रहेगी जब वह कनक-कामिनी से दूर रहेगी। छूरी को दया नहीं होती। वह छोटे-बड़े सबका कत्लेआम करती है, वैसे कनक-कामिनी में लिपटे मनुष्य पतित होते हैं। वे ही इस माया से बचते हैं जो विवेकी संतों की शरण में समर्पित हो जाते हैं और संत उन्हें अपनी शरण में लगा लेते हैं । पलटू साहेब कहते हैं कि मूर्ख मनुष्य उन्हीं उद्धारकर्ता संतों से वैर बांधे रहते हैं। उनको सत्य दिखता ही नहीं। परन्तु यह समझ लो कि गुरु की भक्ति तरबूज है और माया छूरी। अतएव भक्ति से माया को दूर रखो।

## कुंडलिया-111

**पलटू जो सिर ना नवै बिहतर कद्दू होय॥**
**बिहतर कद्दू होय संत से नइ कै चलिये।**
**जुरै सो आगे धरै गोड़ धै सेवा करिये॥**
**आपन जीवन जनम सुफल कै वह दिन जानै।**
**देखत नैन जुड़ाय सीतलता मन में आनै॥**
**अंतर नाहीं करै मन बच से लावै सेवा।**
**ब्रह्मा बिस्नु महेस संत हैं तीनों देवा॥**
**सीस नवावै संत को सीस बखानौ सोइ।**
**पलटू जो सिर ना नवै बिहतर कद्दू होय॥**

**शब्दार्थ**—बिहतर= बेहतर। कद्दू= कुम्हड़ा। नइ= झुककर, विनम्र होकर।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि जिसका सिर विनम्रता से नहीं झुकता है उसके सिर से अच्छा है कुम्हड़ा, जो स्वयं कटकर दूसरों को पोषण देता है। अतएव हे कल्याणार्थी ! संतों से विनम्रतापूर्वक व्यवहार कीजिए। जो

अपने घर जुरै-अटे उसे संतों को सामने रखकर समर्पित करे, उनके चरणों में पड़कर सेवा करे। अपना जीवन और जन्म उस दिन सफल माने जब संतों के दर्शन करके नैन और मन शीतल हो जाय। संतों से भेदभाव, कपट व्यवहार न करे अपितु मन, वचन तथा कर्म से उनकी सेवा करे। ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेव ये तीनों देव संत ही हैं। वह सिर प्रशंसनीय है जो संत के सामने झुकता है, अन्यथा उससे भला कद्दू है।

## कुंडलिया-112

**राम कृस्न परसराम ने मरना किया कबूल॥**
**मरना किया कबूल मरै से बचै न कोई।**
**दस चौदह औतार काल के बसि में होई॥**
**सुर नर मुनि सब देव मुए सब मौत अपानी।**
**देव पितर ससि भानु पवन नभ धरती पानी॥**
**राजा रंक फकीर सूर औ बीर करारी।**
**साधु सती औ अगिन मुए जिन सबको जारी॥**
**पलटू आगे मरि रहौ आखिर मरना मूल।**
**राम कृस्न परसराम ने मरना किया कबूल॥**

**शब्दार्थ**—दस चौदह औतार=चौबीस माने गये अवतार। करारी= पक्का, दृढ़।

**भावार्थ**—श्रीराम, श्री कृष्ण, श्री परशुराम आदि ने भी मृत्यु को स्वीकार किया। कोई देहधारी मरने से बच नहीं सकता। माने गये चौबीसों अवतार काल के अधीन हो गये। सुर-नर-मुनि तथा सभी माने गये देवता अपनी मृत्यु के समय पर मर गये। देव, पितर तो मरे ही; चंद्रमा, सूरज, वायु, धरती, पानी भी निरंतर परिवर्तनशीलता की धारा में बह रहे हैं। आकाश भी पदार्थों से घिरकर अपना अस्तित्व खो देता है। राजा, रंक, संत, पक्के शूरवीर, साधु, सती सब मरते हैं। जो आग सबको जलाती है, वह भी लुप्त हो जाती है। पलटू साहेब कहते हैं कि शरीर मौलिक रूप में नाशवान है। अंततः इसे सदा के लिए मरना ही है, अतएव पहले ही मर जाओ। शरीर का मोह छोड़ दो। राम, कृष्ण, परशुराम आदि ने भी मौत स्वीकारा है।

## कुंडलिया-113

**समुझावै सो भी मरै पलटू को पछिताय॥**
**पलटू को पछिताय दिना दस सबै मुसाफिर।**
**हिलि मिलि रहैं सराय भोर भये पंथ पड़ा सिर॥**
**इक आवै इक जाय रहै ना पैंड़ा खाली।**
**इक ओर काटी जाय दूसरा लावै माली॥**
**बूढ़ा बारा ज्वान नहीं है कोई इस्थिर।**
**सबै बटाऊ लोग काहे को पचिये मरि मरि॥**
**मरने वाला मरि गया रोवै सो मरि जाय।**
**समुझावै सो भी मरै पलटू को पछिताय॥**

**शब्दार्थ**—पैंड़ा= मार्ग, रास्ता। बटाऊ= राहगीर, पथिक।

**भावार्थ**—जो मनुष्य दूसरों को संसार की नश्वरता के विषय में समझाता है, वह भी एक दिन मर जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि किसी के मरने पर कौन और क्यों शोक करे। सब प्राणी दस दिन के यात्री हैं। धर्मशाले में इधर-उधर से लोग आ गये और परस्पर सुंदर व्यवहार करके रात काट लिये और सबेरा होते ही अपना-अपना रास्ता पकड़ लिये। यही दशा परिवार तथा स्वजनों की है। यहां तो एक आता है और एक जाता है। यह आवागमन का रास्ता खाली नहीं रहता। एक तरफ फसल काटी जाती है और दूसरी तरफ किसान फसल उगाता है। इसी प्रकार एक तरफ लोग मरते हैं और दूसरी तरफ जन्मते हैं। बूढ़ा, बालक तथा जवान कोई स्थिर नहीं है। किसी के शरीर के टिके रहने का विश्वास नहीं किया जा सकता। जब यहां सब-के-सब पथिक हैं, तब क्यों किसी के मोह-शोक में पच-पच कर मरा जाय। मरने वाला मर गया, उसके लिए रोनेवाला भी मर जाता है। जो रोने वाले को समझाता है, वह भी मर जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे मृत्युमय संसार के लिए क्यों पश्चाताप किया जाय?

## कुंडलिया-114

**तुझे पराई क्या परी अपनी ओर निबेर॥**
**अपनी ओर निबेर छोड़ि गुड़ विष को खावै।**
**कूवाँ में तू परै और को राह बतावै॥**

**औरन को उँजियार मसालची जाय अँधेरे।**
**त्यों ज्ञानी की बात मया से रहते घेरे॥**
**बेचत फिरै कपूर आप तो खारी खावै।**
**घर में लागी आग दौरि के घूर बुतावै॥**
**पलटू यह साची कहै अपने मन का फेर।**
**तुझे पराई क्या परी अपनी ओर निबेर॥**

**शब्दार्थ**—निबेर= छुटकारा करो। मसालची= मशालची, मशाल दिखाने वाला, प्रकाश दिखाने वाला। खारी= नमक या खली।

**भावार्थ**—तुझे दूसरे की व्यर्थ चिंता करने की क्या आवश्यकता है। तू अपने आप को बंधनों से छुड़ा। तू तो असावधान बना मीठा गुड़ त्यागकर जहर खाता है। तू स्वयं कुआं में गिरता है और दूसरों को अच्छा रास्ता बताता है। मशाल दिखाने वाला तो अन्य को प्रकाश दिखाता है और स्वयं अंधकार में चलता है। इसी प्रकार वाचिक ज्ञानी की बात है। वे दूसरे को समझाने के लिए ज्ञान-वैराग्य की बातें झाड़ते हैं और स्वयं मोह-माया से घिरे रहते हैं। वे दूसरों के लिए कपूर बेचते-फिरते हैं और स्वयं नमक या खली खाते हैं। घर में आग लगी है और दौड़कर घूर पर पानी डालते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं सच्ची बात कहता हूं कि यह अपने मन के भूल-भ्रम का चक्कर है। दूसरे की चिंता क्या करता है। अपने आप को बंधनों से छुड़ा!

## कुंडलिया-115

**बहता पानी जात है धोउ सिताबी हाथ॥**
**धोउ सिताबी हाथ करौ कछु नीकी करनी।**
**बीस-सात है नरक मिली अठएँ बैतरनी॥**
**तोहि से परिहि सो बयरा जम धिकवै भाथी।**
**स्वारथ के सब लोग औसर के कोऊ न साथी॥**
**आगे बूझि बिचारि करौ डेर वहि दिन केरी।**
**संत सभा में बैठु परै नहिं जम की बेरी॥**
**पलटू हरि जस गाइले ये ही तुम्हरे साथ।**
**बहता पानी जात है धोउ सिताबी हाथ॥**

**शब्दार्थ**—सिताबी= शिताबी, शीघ्रता। बीस सात= सत्ताइस। बयरा= वैर, बिगाड़। धिकवे= गरम करता है। भाथी= धौंकनी। बेरी= बेड़ी।

**भावार्थ**—पानी बहता जा रहा है, शीघ्रता से अपने हाथ धो ले—जीवन का समय बीता जा रहा है, अपनी कल्याण-साधना शीघ्र कर ले। कुछ अच्छे कर्म कर ले। पुराणों के अनुसार सत्ताइस नरक हैं और अट्ठाइसवां वैतरणी नदी है। यमराज तुमसे वैर बांधे है। वह तुम्हें जलाने के लिए धौंकनी धौंक रहा है। याद रखो, इस संसार में कहीं मोह में नहीं पड़ना। सब मनुष्य अपने-अपने स्वार्थ के लिए अपना अवसर साधते हैं। अंत में तेरा साथी कोई नहीं हो सकता। आगे समझ-बूझकर उस दिन के लिए भय करो। तू संतों की सभा में बैठकर उनके आध्यात्मिक अमृत वचन सुन और उसका आचरण कर, फिर तेरे पैरों में यमराज की बेड़ी नहीं पड़ेगी। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मज्ञान के महत्त्व को समझकर उसका आचरण कर ले। यही तेरे कल्याण का संबल होगा। पानी बहता जा रहा है, शीघ्र अपने हाथ धो ले।

**विशेष**—यमपुरी, नरक, वैतरणी, यमराज आदि प्रतीकात्मक कथन है। विषय-वासना यमपुरी है। मन की मलिनता नरक है। वैतरणी मन का प्रवाह है। यमराज वासना है। इन्हीं को जीतना है।

## कुंडलिया-116

**जिन जिन पाया बस्तु को तिन तिन चले छिपाय॥**
**तिन तिन चले छिपाय प्रगट में होय हरक्कत।**
**भीड़ भाड़ से डेरै भीड़ में नहीं बरक्कत॥**
**धनी भयो जब आप मिली हीरा की खानी।**
**ठग है सब संसार जुगत से चलै अपानी॥**
**जो ह्वै रहते गुप्त सदा वह मुक्ति में रहते।**
**उन पर आवै खेद प्रगट जो सब से कहते॥**
**पलटू कहिये उसी से जो तन मन दे ले जाय।**
**जिन जिन पाया बस्तु को तिन तिन चले छिपाय॥**

**शब्दार्थ**—हरक्कत=हरकत, चेष्टा, क्रिया; दुरुपयोग। बरक्कत=लाभ, फायदा। जुगत=युक्ति, बचाकर।

**भावार्थ**—जो लोग आत्म-धन का बोध पाये, वे उसको छिपाकर, सम्हालकर रहनी में रहे। क्योंकि उसको अनधिकारियों में बाटते फिरने से उसका दुरुपयोग होता है। स्वरूपज्ञानी को भीड़-भाड़ से डरना चाहिए। भीड़

में चलने से न अपना लाभ है और न दूसरों का। आत्मज्ञान ज्ञान-रत्नों की खान है। जब वह मिल गया तब मनुष्य सच्चे अर्थ में धनी हो जाता है। सारा संसार तो ठग है। हर जगह छले जाने का भय है। इसलिए कल्याणार्थी युक्तिपूर्वक सम्हालकर रहनी में चले। जो साधक छिपकर रहते हैं वे सदैव मुक्तिदशा में रहते हैं। उन पर दुख आता है तो प्रत्यक्ष रूप में सबको बताते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि उसी से ज्ञान की बात कहो जो तन-मन समर्पित कर उसे ले जा सके। जिन-जिन लोगों ने आत्मबोध की प्राप्ति की, वे अंतर्मुख होकर चले।

**विशेष**—पूज्य संत पलटू साहेब कहते हैं कि सत्पात्र के सामने आत्मज्ञान की बातें कहो, व्यर्थ में बांटते मत फिरो। अपने को सम्हालकर चलने में अपना और दूसरे सबका भला है।

## कुंडलिया-117

**बीज बासना को जरै तब छूटै संसार॥**<br>
**तब छूटै संसार जगत से प्रीति न कीजै।**<br>
**लोभ मोह को जारि सत्य पद मारग लीजै॥**<br>
**मारै भूख पियास जगत की करै न आसा।**<br>
**काम क्रोध को जारि तजै सब भोग बिलासा॥**<br>
**सदा रहै निर्वृत्त चित्त न अंतै जावै।**<br>
**मन को लेवै फेरि भजन में जाय लगावै॥**<br>
**पलटू हिरन के कारने जड़भर्त लिया अवतार।**<br>
**बीज बासना को जरै तब छूटै संसार॥**

**शब्दार्थ**—निर्वृत्त= निवृत्त, निष्काम। जड़ भर्त= जड़ भरत।

**भावार्थ**—संसार का मोह वासना-बीज है। जब यह सर्वथा जल जाता है, तब संसार छूट जाता है। उसे देह में पुनः नहीं आना पड़ता। इसलिए सांसारिकता में न पड़िये, कहीं मोह न लगाइए। लोभ और मोह को मारकर अपने सत्स्वरूप चेतन में स्थित होने का अभ्यास कीजिए। संसार के भोगों की तृष्णा का त्याग करे और जगत की किसी वस्तु की आशा न करे। काम-क्रोध को ज्ञान से भस्म कर दे और सारे भोग-विलास को छोड़ दे। सदैव संसार से निष्काम रहे, अपना मन आत्म-स्मरण में रहे, अलग न

जाय। मन को संसार से लौटाकर स्वरूपस्थिति में लगावे। पलटू साहेब कहते हैं कि जड़ भरत को पहले जन्म में एक हिरन के मोह में पड़ जाने से पुनः देह धरना पड़ा था। अतएव जगत की बीज-वासना नष्ट हो जाने पर संसार छूटता है।

## कुंडलिया-118

**तो कहँ कोऊ कछु कहै कीजै अपनो काम॥**
**कीजै अपनो काम जगत को भूकन दीजै।**
**जाति बरन कुल खोय संतन को मारग लीजै॥**
**लोक बेद दे छोड़ि करै कोउ कितनौ हाँसी।**
**पाप पुन्न दोउ तजौ यही दोउ गर की फाँसी॥**
**करम न करिहौ एक भरम कोउ लाख दिखावै।**
**टरै न तेरी टेक कोटि ब्रह्मा समुझावै॥**
**पलटू तनिक न छोड़िहौ जिउ के संगै नाम।**
**तो कहँ कोऊ कछु कहै कीजै अपनो काम॥**

**शब्दार्थ**—गर= गला। टेक= पक्ष।

**भावार्थ**—तुम्हें कोई कैसा भला-बुरा कहे, तुम अपने कल्याण का काम करो। तुम अपनी कल्याण-साधना में चलो, संसार के लोगों को बकने दो। जाति, वर्ण तथा कुल का अहंकार मिटाकर संतों का मार्ग पकड़ो। तुम्हारी चाहे कोई कितना हंसी-मजाक करे, तुम लोक-लाज और शास्त्र की मर्यादा को छोड़कर अपने सुपथ पर चलो। पाप-पुण्य दोनों छोड़ दो, क्योंकि यही दोनों तुम्हारे गले की फांसी हैं। कोई कितना भ्रम की बात कहे, तुम एक भी कर्मकांड में न पड़ो। चाहे करोड़ों ब्रह्मा मिलकर तुम्हारी मति फेरना चाहें, तुम अपने सत्पथ का पक्ष कभी न छोड़ो। पलटू साहेब कहते हैं कि अपने जीवन में सतनाम को साथ रखो, उसे कभी मत छोड़ो। सत्य है जिसका नाम वह अपना आत्म स्वरूप है। उसमें सदैव दृढ़ रहो। तुम्हें कोई कुछ भी कहे, तुम अपने कल्याण पथ में चलते रहो।

**विशेष**—लोक-वेद के बहुत ऐसे वचन हैं जो त्याज्य हैं। आज से हजार वर्ष पूर्व वैदिक पंडितों ने ही पचपन वैदिक मुद्दों को कलिवर्ज्य कहकर त्यागने की राय दी है।

## कुंडलिया–119

**इहाँ उहाँ कुछ है नहीं अपने मन का फेर॥**
**अपने मन का फेर सक्ति सिव दूसर नाहीं।**
**माया से है अंत तेहि से बीचे माहीं॥**
**जब मैं इहवाँ रहा सोच उहवाँ की भारी।**
**उहवाँ देखा जाय कुदरत कुल रही हमारी॥**
**जोग किये का होय भंगि जो आवै नाहीं।**
**केतिक कोटिन जोग रहत हैं भंगै माहीं॥**
**पलटू पावै सहज में सतगुरु की है देर।**
**इहाँ उहाँ कुछ है नहीं अपने मन का फेर॥**

**शब्दार्थ**—भंगि= युक्ति। भंगै=युक्ति।

**भावार्थ**—न कुछ यहां है और न वहां है। केवल अपने मन की दौड़ है। शक्ति और शिव दो नहीं हैं। चेतन शिव है और चेतना उसकी शक्ति है। अतएव दोनों अभिन्न हैं। माया-मोह सर्वथा छोड़ देने पर बंधनों का अंत है और माया-मोह में पड़े रहने से जीव बंधनों में ही पड़ा रहता है। जब मैं यहां रहा, तब वहां की चिंता थी, आकर्षण था, भारी खिंचाव था। जब मैं वहां जाकर देखा, तो कुछ नहीं पाया। वही विरसता हाथ लगी। अतएव मन की सारी उठापटक हमारे मन का प्रपंच है। योगाभ्यास करने से क्या लाभ, यदि युक्ति नहीं जानी। करोड़ों योग कितनी बार क्यों न करो, युक्ति से ही संसार से तर सकते हो। पलटू साहेब कहते हैं कि सच्चा सद्गुरु मिलने में देरी है, फिर सहज ही में उनसे युक्ति पाकर मनुष्य मन के मोह से तर जाता है। अतएव यहां-वहां कहीं कुछ नहीं है। सब मन की कल्पना है।

**विशेष**—मन की सारी कल्पनाओं को सब समय त्यागता रहे। संकल्पों का त्याग संसार से छूटने का रास्ता है।

## कुंडलिया–120

**मन की मौज से मौज है और मौज केहि काम॥**
**और मौज केहि काम मौज जो ऐसी आवै।**
**आठौ पहर अनन्द भजन में दिवस बितावै॥**
**ज्ञान समुद्र के बीच उठत है लहर तरंगा।**
**तिरबेनी के तीर सरसुती जमुना गंगा॥**

**संत सभा के मध्य सब्द की फड़ जब लागै।**
**पुलकि पुलकि गलतान प्रेम में मन को पागै॥**
**पलटू रहै बिबेक से छूटै नहि सतनाम।**
**मन की मौज से मौज है और मौज केहि काम॥**

**शब्दार्थ**—फड़=बाजार। गलतान=लवलीन, मस्त।

**भावार्थ**—वासनाहीन मन की मौज सच्ची मौज है। सांसारिक मौज निरर्थक है। ऐसी मौज आना चाहिए कि आठों पहर आत्मस्थिति के आनंद में रहे। इसी दिशा में दिन बीतें। आत्मज्ञान के सागर में आनंद की लहरें एवं तरंगें उठती हैं। गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम त्रिवेणी है। ज्ञान, भक्ति और वैराग्य भीतर की त्रिवेणी है। इसी के पास निरंतर रहे। संत समाज में जब निर्णय शब्दों का बाजार लगता है, तब उत्तम साधक प्रफुल्लित होकर उससे बोध लेता है और आत्मलीन हो उसी के प्रेम में उसका मन पगता है। पलटू साहेब कहते हैं कि साधक सदैव आत्म-अनात्म के विवेक में रहे और सतनाम का अर्थ स्वरूप आत्मबोध कभी न छूटे। आत्मलीन जनित मन का आनंद सर्वोच्च आनंद है, अन्य सांसारिक आनंद किस काम के जो परिणाम में दुखद हैं।

## कुंडलिया-121

**जो साहिब का लाल है सो पावैगा लाल॥**
**सो पावैगा लाल जाइ के गोता मारै।**
**मरजीवा ह्वै जाय लाल को तुरत निकारै॥**
**निसि दिन मारै मौज मिली अब बस्तु अपानी।**
**ऋद्धि सिद्धि औ मुक्ति भरत हैं उन घर पानी॥**
**वे साहन के साह उन्हें है आस न दूजा।**
**ब्रह्मा बिस्नु महेस करैं सब उनकी पूजा॥**
**पलटू गुरु भक्ती बिना भेष भया कंगाल।**
**जो साहिब का लाल है सो पावैगा लाल॥**

**शब्दार्थ**—साहेब का लाल=सद्गुरु का सच्चा शिष्य। लाल=रत्न, यथार्थ आत्मज्ञान। मरजीवा=गहरे जल में डूबकर रत्न खोजने वाला।

**भावार्थ**—जो सद्गुरु के चरणों में पूर्ण समर्पित है, वह विनम्र शिष्य आत्मज्ञान रूपी रत्न पायेगा। वह सत्संग-सरोवर में गोता लगायेगा। जो

जीवन की आशा छोड़कर गहरे में गोता लगायेगा, वह तुरंत आत्मज्ञान रूपी ज्ञान निकाल लेगा। जब उसे अपने आप का पूर्ण ज्ञान हो जायेगा, तब वह निरंतर अखंड आनंद में रहेगा। फिर ऋद्धि-सिद्धि और मुक्ति तो उसका पानी भरेंगी—उसके पीछे लगी रहेंगी। वे दूसरे सबकी आशा छोड़ देते हैं, इसलिए वे शाहंशाह एवं सम्राट हो जाते हैं। मानो ब्रह्मा, विष्णु और महादेव उनकी सेवा करते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि गुरुभक्ति के बिना साधु वेषधारी आत्मज्ञान तथा आत्मस्थिति विहीन दरिद्र बने भटकते हैं। अतएव जो सच्चा गुरु भक्त है, वही आत्मज्ञान रूपी रत्न पाकर और उसमें स्थित होकर कृतार्थ हो सकता है।

**विशेष**—जो साधुवेषधारी गुरु बने पुजवाने-खाने के चक्कर में भटक रहे हैं वे आत्मस्थिति रूपी रत्न नहीं पा सकते। उसे तो वह पाता है जो सद्‌गुरु का लाल है, गुरु का सच्चा सेवक है। सद्‌गुरु का लाल ही आत्मस्थिति रूपी लाल पायेगा, मन्मती नहीं।

## कुंडलिया-122

**जीव जाय तो जाय दे जन्म जाय बरु नष्ट॥**
**जन्म जाय बरु नष्ट लोक की तजो बड़ाई।**
**दुख नाना सहि रहो पड़ौ दरबार में जाई॥**
**मात पिता निज बन्धु तजौ भगनी सुत नारी।**
**तजि दो भोग बिलास सहत रहौ सब की गारी॥**
**नाचौ घूँघट खोलि ज्ञान का ढोल बजाओ।**
**देखै सब संसार कलाएँ उलटी खाओ॥**
**पलटू नाम न छोड़िहो सहि लो इतना कष्ट।**
**जीव जाय तो जाय दे जन्म जाय बरु नष्ट॥**

**शब्दार्थ**—बरु= बल्कि। कलाएं= युक्तियां, पैंतरेबाजी, दावं।

**भावार्थ**—चाहे जीव निकल जाय और जीवन समाप्त हो जाय परन्तु तुम कल्याण मार्ग में डटे रहो। लोक-लाज, मान-बड़ाई त्याग दो। नाना प्रकार का दुख सहकर सद्‌गुरु के दरबार में जाकर पड़े रहो। माता, पिता, सगा भाई, बहिन, पुत्र और पत्नी सब त्याग दो। सारे भोग-विलास को छोड़ दो और सबकी आलोचना और गाली निर्विकार भाव से सहते रहो। लज्जा का परदा हटाकर और आत्मज्ञान का ढोल बजाकर खुलकर

साधना करो। संसार के सभी लोग देखें कि तुम सांसारिकता से उलटकर अंतर्मुख होने का पैंतरा बदल रहे हो। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मज्ञान और अंतर्मुखता की रहनी की साधना कभी न छोड़ना। इस मार्ग में जितना कष्ट मिले उसे सह लेना। शरीर भले छूट जाय किन्तु अंतर्मुखता की साधना न छूटे।

## कुंडलिया-123

**खोजत हीरा को फिरै नहीं पोत को दाम॥**
**नहीं पोत को दाम जौहरि की गाँठ खुलावै।**
**बातन की बकवाद जौहरी को बिलमावै॥**
**लम्बी बोलत बात करै बातन की लदनी।**
**कौड़ी गाँठी नाहिं करत है बातैं इतनी॥**
**लिहा जौहरी ताड़ फिरा है गाहक खाली।**
**थैली लई समेटि दिहा गाहक को टाली॥**
**लोक लाज छूटै नहीं पलटू चाहै नाम।**
**खोजत हीरा को फिरै नहीं पोत को दाम॥**

**शब्दार्थ**—पोत= कांच। ताड़= अंदाज लिया, जान लिया।

**भावार्थ**—पास में कांच खरीदने के लिए पैसे नहीं हैं, किन्तु हीरे का मोल-तोल कर रहे हैं। जौहरी के पास जाकर कहते हैं कि जरा हीरे दिखायें, मुझे खरीदना है। व्यर्थ बकबक करते हैं और जौहरी का समय बरबाद करते हैं। लम्बी-लम्बी बातें करते हैं और बात पर बात लादते जाते हैं। बातें इतनी करते हैं कि मानो जौहरी की पूरी दुकान खरीद लेंगे, किन्तु उनकी जेब में कौड़ी भी नहीं है। जौहरी ने समझ लिया कि यह बकवादी है। अतएव झूठा ग्राहक खाली हाथ लौट गया। जौहरी ने ग्राहक को हटाकर अपनी दुकान समेट ली। पलटू साहेब कहते हैं कि लोक-लज्जा छोड़ नहीं पाते हैं और चाहते हैं आत्म कैवल्य। खोजते हैं हीरा, किन्तु कांच खरीदने के पैसे नहीं हैं।

**विशेष**—लोग ऐसे हैं कि सामान्य सदाचार का पालन नहीं कर पाते हैं किन्तु जीवन्मुक्ति तथा विदेहमुक्ति की बातें करते हैं और विवेकवान संतों के पास जाकर लंबी-चौड़ी बातें करते हैं।

### कुंडलिया-124

**मूरख को समुझाइये नाहक होइ अकाज॥**
**नाहक होइ अकाज कहे से बात न बूझै।**
**अंधा आठौ गाँठि इलाज न पन्थ न सूझै॥**
**ब्रह्मा उतरै आय कहे से ज्ञान न आवै।**
**अमृत दीजै ब्याल नहीं वाको विष जावै॥**
**लगै न भीतर ज्ञान ताहि से मन न मिलावै।**
**मारै भाल पषान धसै नहिं उलटा आवै॥**
**पलटू जो बूझै नहीं बोलै से रहु बाज।**
**मूरख को समुझाइये नाहक होइ अकाज॥**

**शब्दार्थ**—आठौ गाँठि=सब प्रकार। ब्याल=सर्प। भाल=बाण। बाज=बाज़, लौट आना, रुक जाना, न करना।

**भावार्थ**—मूर्ख को समझाने से अपना समय व्यर्थ में बरबाद होता है। कहने पर भी वह बात को समझता नहीं है। जो बाहर-भीतर अंधा है, उसको कोई औषधि नहीं लग सकती और उसको अच्छा रास्ता नहीं दिख सकता। स्वर्गलोक से उतरकर ब्रह्मा जी आ जायं और उसे समझावें तो भी उसको ज्ञान नहीं हो सकता। सर्प को अमृत पिलाया जाय तो भी उसका विष दूर नहीं हो सकता। जिसके भीतर में ज्ञान का प्रभाव नहीं पड़ता हो उससे अपने मन को मत मिलाओ। यदि पत्थर में बाण मारा जाय तो वह उसमें धंसेगा नहीं, प्रत्युत उलटकर बाण ही टूट जायेगा। पलटू साहब कहते हैं कि जो समझता नहीं है, उससे बोलना छोड़ दो। हठी आदमी को समझाने से अपना समय व्यर्थ में बरबाद होता है।

### कुंडलिया-125

**तीन लोक पेरा गया बिना बिचार बिबेक॥**
**बिना बिचार बिबेक भये सब एकै घानी।**
**पीना भा संसार जाठि ऊपर मर्रानी॥**
**इतना दुख सब सहैं तेहू पर नाहिं डेराते।**
**फिर फिर पेरे जायं कर्म में फिर लपटाते॥**
**देखी देखा पड़ै आपु से आपु पेरावै।**
**पेरे से जो बचै ताहि को हँसी लगावै॥**

**पलटू मैं रोवन लगा चलता कोल्हू देख।**
**तीन लोक पेरा गया बिना बिचार बिवेक॥**

**शब्दार्थ**—तीन लोक= संसार के सब प्राणी। घानी= मात्रा। पीना= मोटा, कठोर। जाठि= कोल्हू की मुख्य लकड़ी जो घानी को पेरती है। मर्रानी= मरमर आवाज करती है।

**भावार्थ**—संसार के सब प्राणी विचार और विवेकहीन होने से संसार-कोल्हू में पेरे जा रहे हैं। एक ही घानी में सब पिस रहे हैं। संसार के लोग मोह-मूढ़ता में पड़कर कठोर हो गये हैं, परंतु संसार-चक्र के कोल्हू का गांठ सबके ऊपर मरमरा कर चल रहा है और सबको पेर रहा है। संसारी लोग सांसारिकता में बहुत दुख सहते हैं, फिर भी वे इस दुख से डरते नहीं हैं। वे बारंबार संसार-चक्र में पेरे जाते हैं, परंतु वे पुनः उन्हीं मोह-माया के कर्मों में लिपटते हैं जिससे पुनः पेरे जायं। एक दूसरे की देखा-देखी स्वयं की वैसी ही बुद्धि बनती है और इस प्रकार प्राणी स्वयं अपने को संसार-चक्र में पेराते हैं। जो संसार-चक्र में पेरे जाने से बचकर आत्मशांति का रास्ता अपनाता है, उसका वे मजाक उड़ाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संसार-चक्र का कोल्हू देखकर मुझे रुलाई आ गयी। संसार के सब प्राणी विचार-विवेक को छोड़कर संचार-चक्र में पेरे जा रहे हैं।

**विशेष**—शरीर-संसार में मोह करने की कोई आवश्यकता नहीं है, किन्तु विवेकहीन मनुष्य उसमें पड़कर पिस रहे हैं। सेवा करना कर्तव्य है।

## कुंडलिया-126

**लोक लाज कुल छाड़ि कै करि लो अपना काम॥**
**करि लो अपना काम सोच मोहिं वा दिन केरी।**
**जेहि से कौल करार कौल से आपन हेरी॥**
**कीन्हों भक्ति करार जन्म तब मानुष पायो।**
**मोकहँ है सो चेत गर्भ के बिच करि आयो॥**
**औंधे बासन मँहै नीर जिन्ह लिया उबारी।**
**तेकहँ तजि कै रहौं कुसल का होय तुम्हारी॥**
**जगत हँसै तो हँसन दे पलटू हँसै न राम।**
**लोक लाज कुल छाड़ि कै करि लो अपना काम॥**

**शब्दार्थ**—कौल करार= प्रतिज्ञा।

**भावार्थ**—हे मनुष्यो! लोक की लज्जा और कुलजाति का मिथ्या अहंकार छोड़कर स्वरूपस्थिति कर लो जो तुम्हारा मुख्य काम है। मुझे तो उस दिन की चिंता है जिस दिन तुमने प्रतिज्ञा की थी कि मैं जन्म लेकर आत्मकल्याण करूंगा। तुमने गर्भवास में प्रतिज्ञा की कि मैं जन्म लेकर भक्ति की साधना करूंगा। इसी के फल में तुमने मनुष्य जन्म पाया। मुझे यह चिंता है कि तू जो गर्भवास के समय प्रतिज्ञा करके आया है, उसे पूरा नहीं कर रहा है। तुम औंधे मुख गर्भवास के बरतन में पड़े थे। तुम्हारा शरीर एक पानी का फेना था, लेकिन उसे जिसने पुष्ट कर, स्वस्थ कर पैदा किया, उसको भूलकर यदि तुम रहते हो, तो तुम्हारा कहां कल्याण है? हे साधक! संसार के लोग तुम्हारा मजाक उड़ाते हैं तो उन्हें ऐसा करने दो। पलटू साहेब कहते हैं कि राम तुम्हारा मजाक न उड़ाये तो काम बना बनाया है। अतएव लोकलाज और कुलजाति का घमंड छोड़कर अपने कल्याण का काम कर लो।

**विशेष**—यह लोगों की पुरानी धारणा है कि गर्भवास का जीव ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हे प्रभो! तुम मुझे इस गर्भवास के दुख से निकाल लो तो मैं तुम्हारी भक्ति करूंगा और आत्मकल्याण करूंगा। परंतु वह दुनिया में आकर भूल जाता है। इसी धारणा का वर्णन ऊपर आया है। परंतु यह सब केवल मनुष्य को चेताने के लिए कल्पित धारणा है। गर्भवास का जीव बेभान रहता है। उसका किसी ईश्वर से प्रार्थना और प्रतिज्ञा करने की बात असत है। यह सत है कि मनुष्य शरीर पाकर संसार की चमक-दमक में भूलना नहीं चाहिए, अपितु अपने आप का कल्याण करना चाहिए।

## कुंडलिया-127

**तन मन लज्जा खोइ कै भक्ति करौ निर्धार॥**
**भक्ति करौ निर्धार लोक की लाज न मानौ।**
**देव पितर मुख खाक डारि इक गुरु को जानौ॥**
**तजि दो कुल की रीति खोलि घूँघट को नाचौ।**
**बेद पुरान मत काच काछनी काछौ साचौ॥**
**सुभ असुभ दोउ काटु पाँव की अपने बेरी।**
**निसि दिन रहौ अनन्द कोऊ का करिहै तेरी॥**
**पलटू सतगुरु चरन पर डारि देहु सिर भार।**
**तन मन लज्जा खोइ कै भक्ति करौ निर्धार॥**

**शब्दार्थ**—निर्धार=स्थिर, दृढ़। काच=कच्चा, असत। काछनी=वेष, वस्त्र। काछौ=पहनो। बेरी=बेड़ी।

**भावार्थ**—हे कल्याणार्थी! शरीर और मन से लोकलाज मिटाकर स्थिर भक्ति करो। लोकधारणा की परवाह मत करो। जड़ देवता और मृत पितर की पूजा पर धूल डाल दो, उसे त्याग दो, केवल एक सद्गुरु को उपास्य मानो। कुल-जाति की प्रापंचिक रीति छोड़कर तथा निर्भय होकर भक्ति, ज्ञान और वैराग्य के पथ पर चलो। वेद-पुराण के मत कच्चे हैं। अतएव उनसे हटकर सच्चे ज्ञान और सच्ची साधना के लिए कमर कसो। पाप और पुण्य कर्म अपने पैरों की बेड़ी हैं, इन्हें काट दो। तुम रात-दिन अपने आत्मस्वरूप की स्थिति में आनंदित रहो, फिर तुम्हारा कोई क्या बिगाड़ सकेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि अपनी सारी अहंता-ममता का बोझा सद्गुरु के चरणों में समर्पित कर दो और तन-मन से लोकलाज छोड़कर स्थिर भक्ति करो।

**विशेष**—'बेद पुरान मत काच' कहकर ग्रंथकार उनको सिरे से अस्वीकारते नहीं हैं, अपितु उनमें जो भ्रमजनित और भेदभावजनित बातें हैं उन्हें त्यागने का निर्देश करते हैं। अच्छी बातें सबकी स्वीकारना चाहिए और झूठी बातें किसी की भी नहीं मानना चाहिए।

## कुंडलिया-128

**लोक लाज नहिं मानिहौ तन मन लज्जा खोय॥**
**तन मन लज्जा खोय छोड़ि कै मान बड़ाई।**
**जाति बरन कुल खोय पड़ौगे सरन में जाई॥**
**लाख कोऊ जो हँसै जगत की लाज न मानौ।**
**ज्यों हिन्दू त्यों तुरुक सकल घट साहिब जानौ॥**
**नाचौ घूँघट खोलि ज्ञान की ढोल बजाओ।**
**काटौ जम की फाँस भरम को दूर बहाओ॥**
**पलटू बरिहौ नाम को होनी होय सो होय।**
**लोक लाज नहिं मानिहौ तन मन लज्जा खोय॥**

**शब्दार्थ**—बरिहौं=स्वीकारूंगा। नाम=सतनाम, सतनाम का अर्थ है सत्स्वरूप आत्मा का ज्ञान।

**भावार्थ**—कल्याणमार्ग में चलने वाले ऐ साधको! लोकलाज न मानना और तन-मन से शर्माशर्मी की बात छोड़ देना। मान-बड़ाई को भी छोड़

देना। जाति, वर्ण और कुल की मान-मर्यादा मिटाकर सद्गुरु की शरण में पड़ जाओ। कोई लाख मजाक उड़ावे, संसार की लज्जा मत करो। जैसे हिन्दू हैं वैसे मुसलमान हैं। सबकी देह में एक ही समान आत्मा रूपी परमात्मा का निवास है। आत्मज्ञान का ढोल बजाकर और मोह-माया का परदा हटाकर खुलकर आत्मसंयम की साधना करो। मन की मोह-माया और नाना भ्रांतियों को त्यागकर वासना के बंधन को काटो। पलटू साहेब कहते हैं कि सतनाम के अर्थ स्वरूप आत्मज्ञान को ग्रहण करो। शरीर प्रारब्ध की जो होनी होना है वह होगी। उसकी चिंता न करो। अब लोकलाज तन-मन से खोकर आत्मकल्याण की साधना करो।

## कुंडलिया-129

**जेहि सुमिरे गनिका तरी ताको सुमिरु गँवार॥**
**ताको सुमिरु गँवार भला अपना जो चाहो।**
**झूठा है संसार रैन सुपने सा जानो॥**
**मात पिता सुत बन्धु झूठ इनको सब जानो।**
**सतसंगति हरि भजन सत्त दुइ इनको मानो॥**
**और देव सब बृथा आस इनकी ना कीजै।**
**सब देवन के देव हरी अन्तर भजि लीजै॥**
**पलटू हरि के भजन बिन कोउ न उतरै पार।**
**जेहि सुमिरे गनिका तरी ताको सुमिरु गँवार॥**

**शब्दार्थ**—गनिका= गणिका, वेश्या। गँवार= अनाड़ी, अज्ञानी, भोला।

**भावार्थ**—हे भोले! जिस आत्मस्वरूप परमात्मा का स्मरण कर पिंगला वेश्या मुक्त हो गयी, उसका स्मरण कर। यदि अपना कल्याण चाहते हो तो संसार की चमक-दमक से मुड़कर अंतर्मुख होओ। संसार का सारा सम्बन्ध झूठा है। जैसे रात की नींद में सपने देखे और उनमें बहुत कुछ मिला, परंतु नींद टूटते ही सब खो गया, वैसे जीवन की सारी उपलब्धियां झूठी हैं। माता, पिता, पुत्र, बंधु-बांधव इन सबका सम्बन्ध झूठा है। सत्संग और आत्मस्मरण यही सत्स्वरूप आत्मा में स्थित होने के साधन हैं। आत्मा के अलावा सारे देवी-देवता झूठे हैं। इनकी आशा कभी मत करना। सब देवताओं का देवता परमात्मा है जो आत्मस्वरूप हृदय में बैठा है। पलटू साहेब कहते हैं कि इस

आत्मा रूप परमात्मा में स्थित हुए बिना कोई मन के भवसागर से पार नहीं जा सकता। इसलिए हे भोले! जिस आत्मा में स्थित होकर पिंगला वेश्या मुक्त हो गयी, उसका स्मरण कर।

**विशेष**—देह में स्थित आत्मा ही परमात्मा है। इसके अलावा कोई परमात्मा नहीं है। अतएव सारा भ्रम छोड़कर आत्मलीन होओ।

## कुंडलिया-130

**ज्यों ज्यों भीजै कामरी त्यों त्यों गरुई होय॥**
**त्यों त्यों गरुई होय सुने संतन की बानी।**
**ठोपै ठोप अघाय ज्ञान के सागर पानी॥**
**रस रस बाढ़ै प्रीति दिनों दिन लागन लागी।**
**लगत लगत लगि जाय भरम आपुइ से भागी॥**
**रस रस चलै सो जाय गिरै जो आतुर धावै।**
**तिल तिल लागै रंग भंगि तब सहजै आवै॥**
**भक्ति पोढ़ पलटू करै धीरज धरै जो कोय।**
**ज्यों ज्यों भीजै कामरी त्यों त्यों गरुई होय॥**

**शब्दार्थ**—ठोपै ठोप=बूंद-बूंद। रस रस=धीरे-धीरे। लागन=लगन, प्रेम। आतुर=शीघ्र, जल्दी। भंगि =युक्ति। पोढ़=प्रौढ़, पक्की, स्थिर।

**भावार्थ**—कंबल जैसे-जैसे भीगता है, वैसे-वैसे वजनदार होता है। संतों की वाणी सुनते-सुनते आत्मबोध वैसे ही पक्का होता है जैसे एक-एक बूंद से समुद्र का जल बनता है। सत्संग में रहते-रहते मनुष्य ज्ञान का सागर होकर आत्मतृप्त हो जाता है। सेवा, सत्संग तथा साधना करते-करते धीरे-धीरे अंतर्मुखता में प्रेम बढ़ता है और दिन-प्रतिदिन लगन लगती जाती है। इस प्रकार सावधान होकर सत्संग-साधना से स्वरूपज्ञान में लगन लगते-लगते सारे प्रत्यक्ष और परोक्ष के भ्रम स्वयं समाप्त होकर अपरोक्ष आत्मा में स्थिति हो जाती है। जो धीरे-धीरे निरंतर चलता है, वह अपने गंतव्य को पहुंच जाता है। गिरता है वह जो जल्दीबाजी करके दौड़ता है। धीरे-धीरे अंतर्मुखता की शांति का भाव जमता है, तब सहज ही मन के जाल काटने की युक्ति मिल जाती है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो धैर्य धारणकर प्रौढ़ भक्ति करता है, वह उसी प्रकार धीरे-धीरे स्वरूपस्थिति में निमग्न हो जाता है जिस प्रकार भीगते-भीगते कंबल वजनदार होता है।

## कुंडलिया-131

**वे बोलैं मैं चुप रहौं आपुइ जाते हारि॥**
**आपुइ जाते हारि कथनियाँ बाद न आवैं।**
**घरे मसलहत करैं बटुरि कै सौ सौ धावैं॥**
**आवैं हमरे पास बैठि कै गाल बजावैं।**
**उलटा पुलटा कहैं बचन बिपरीत सुनावैं॥**
**बोली ठोली करैं छिमा करि चुप मैं मारौं।**
**भूँकि भूँकि फिरि जायँ जुगत से उनको टारौं॥**
**पलटू हम से लड़न को आवै सब संसार।**
**वे बोलैं मैं चुप रहौं आपुइ जाते हारि॥**

**शब्दार्थ**—कथनियाँ=बकवादी, विवादी। बाद=बाज़, पीछे, उलटे, चुप। मसलहत=परामर्श, राय, गुटबंदी। जुगत=युक्ति।

**भावार्थ**—विवादी विवाद करते हैं परंतु मैं चुप रहता हूं। इसलिए वे अपने आप हारकर चले जाते हैं। ये बकवादी लोग अपनी बक-बक की आदत छोड़ते नहीं हैं। ये अपने घर में परामर्श एवं गुटबंदी करके सौ-सौ लोग मुझसे विवाद करने आते हैं। वे मेरे पास आते हैं और बैठकर बक-बक करते हैं। वे उलटी-पलटी बातें करते हैं और कटु वचन कहते हैं। वे व्यंग्य बोलकर मेरा मजाक उड़ाते हैं। परंतु मैं निर्विकार भाव से रहकर उनको पूर्णतया क्षमा कर देता हूं और मौन रह जाता हूं। वे बक-बक करके लौट जाते हैं। मैं अपनी मीठी युक्ति से उनके विवाद को टाल देता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि हमसे लड़ने के लिए सब संसारी लोग आते हैं। वे बकते हैं, परन्तु मैं चुप रहता हूं, इसलिए वे अपने आप हारकर चले जाते हैं।

## कुंडलिया-132

**जौं लगि लागै हाथ ना करम न कीजै त्याग॥**
**करम न कीजै त्याग जक्त की बूझ बड़ाई।**
**ओहु ओर डारै तोरि एहर कुछ एक न पाई॥**
**उत कुल से वे गये नाहिं इत मिला ठिकाना।**
**केहु ओर में नाहिं बीच के बीच भुलाना॥**
**जेहुँ जेहुँ पावै बस्तु तेहुँ तेहुँ करम को छोड़ै।**
**खातिर जमा को लेइ जगत से मुहड़ा मोड़ै॥**

**पलटू पग धरु निरख करि तातें लगै न दाग।**
**जौं लगि लागै हाथ ना करम न कीजै त्याग॥**

**शब्दार्थ**—ओहु ओर= उस तरफ, कर्मकांड। एहर= इधर, आत्मज्ञान। खातिर जमा= ख़ातिरजमा= संतोष, विश्वास, तसल्ली। मुहड़ा= मुंह। दाग= दोष।

**भावार्थ**—जब तक आत्मज्ञान पूरा न हो, तब तक कर्मकाण्ड का त्याग न करे। संसार की विशेषता को समझे। सांसारिक कर्मकाण्ड परोक्ष उपासना तथा भक्ति छोड़ दी और इधर आत्मा का पक्का बोध नहीं हुआ। उधर वे कुल-परंपरा का कर्म-धर्म छोड़ दिये और इधर आत्मबोध में स्थिरता नहीं हुई। ऐसे लोग किसी भी तरफ के नहीं हुए। बीच में ही भटक गये। इसलिए जैसे-जैसे आत्मा का बोध हो, वैसे-वैसे कर्मकांड का त्याग करे। जब पूर्ण आत्मसंतोष मिल जाय, तब सांसारिक कर्मकाण्ड से पूर्ण विरक्त हो जाय। पलटू साहेब कहते हैं कि साधना-पथ में निरख-परख कर पैर रखे, जिससे जीवन में दोष न आवे। अतएव जब तक सच्चा आत्मज्ञान न हो, तब तक कर्मकांड का त्याग न करे।

## कुंडलिया-133

**दुइ पासाही फकर की इक दुनियाँ इक दीन॥**
**इक दुनियाँ इक दीन दोऊ को राखै राजी।**
**सब की मिलै मुराद गैब की नौबति बाजी॥**
**हाथ जोरि मुहताज सिकन्दर रहते ठाढ़े।**
**हुकुम बजावहि भूप जबाँ से जो कछु काढ़े॥**
**चलै फहम की फौज दरोग की कोट ढहाई।**
**बेदावा तहसील सबुर कै तलब लगाई॥**
**पलटू ऐसी साहिबी साहिब रहै तबीन।**
**दुई पासाही फकर की इक दुनियाँ इक दीन॥**

**शब्दार्थ**—पासाही= पास, लिहाज, ख़याल, शील-संकोच, मर्यादा का ध्यान। फकर= फ़कीर, त्यागी, संत। दुनिया= संसार। दीन= धर्म। मुराद= कामना, अभिलाषा। गैब= परोक्ष, अनुपस्थित, अदृश्य। नौबत= मंगलसूचक बाजा। मोहताज= मुहताज, दीन। सिकंदर= बादशाह। जबाँ= जबान, जीभ।

फहम= फ़हम, समझ, ज्ञान। दरोग= झूठ, असत्य। बेदावा= अधिकार-शून्य भाव। तहसील= वसूली, उगाही, लोगों से रुपये लेने की क्रिया। सबुर= सब्र, संतोष, धैर्य। तलब= खोज, इच्छा, पाने की इच्छा। साहिबी= साहबी, प्रभुता। साहिब= साहेब, श्रेष्ठ, परमात्मा। तबीन= ताबेदार, सेवक।

**भावार्थ**—संतों को संसार और धर्म, दोनों की मर्यादाओं का पालन करने का ध्यान रखना होता है। संत को चाहिए कि वह दुनियादारी को भी प्रसन्न रखे और धर्म-सम्प्रदाय के लोगों को भी। जब दीन और दुनिया—दोनों के लोगों की इच्छाएं पूरी होती हैं, तब ग़ैब की नौबत बजती है—अदृश्य की तरफ से, कारण-कार्य-व्यवस्था की तरफ से सफलता का सहयोग मिलता है। ऐसे सम्यक ज्ञानी के सामने बादशाह भी दीन बनकर हाथ जोड़े सेवा में खड़े रहते हैं। ऐसे संत जो कुछ आज्ञा देते हैं, सम्राट भी उसका अनुसरण करते हैं। ऐसे संत की ज्ञान की सेना चलती है। वे असत्य का किला तोड़ देते हैं। उनकी अधिकार-रहित वसूली होती है। वे संतोष पाने की इच्छा रखते हैं। यथाप्राप्त में संतुष्ट रहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जिस फकीर का ऐसा त्यागमय प्रभुत्व है, उसकी सेवा सत्य करता है। फकीर को दोनों तरफ अपना ध्यान रखकर उनके साथ शील का व्यवहार करना होता है—एक तरफ संसार का और दूसरी तरफ धर्म का।

**विशेष**—फकर को, फक़ीर को, संत को दो पासाही, दो पास, दो मर्यादा का, दो शील का पालन करना होता है—एक दीन का और एक दुनिया का। दुनिया के लोगों को नहीं खिझाना है और दीन के लोगों को भी नहीं खिझाना है। यथासंभव दोनों को संतुष्ट रखने का प्रयत्न करना चाहिए। जब संतों से सबको संतोष मिलता है तब गैब की नौबत बजती है, अदृश्य का डंका बजता है। प्रकृति की तरफ से उसे सहयोग मिलता है। जिस संत की फहम की फौज चलती है, ज्ञान की सेना चलती है; जो दरोग का, झूठ का किला ढहा देते हैं; जो अधिकार शून्य एवं निष्काम तथा निर्मान बनकर निर्वाह लेते हैं, जिनकी तहसील बेदावा है, वे सब तरफ संतोष में जीते हैं। जिनकी ऐसी साहिबी है, जिनका इस प्रकार संतोष का प्रभुत्व है, उनके पीछे तो साहिब तबीन रहता है, स्वामी ताबेदार रहता है, खुदा सेवकाई करता है। कामना शैतान है, निष्कामता भगवान है। सकामी से पीछे शैतान घूमता है, उसे परेशान करता है और निष्कामी के पीछे भगवान घूमता है और वह उसकी सेवा करता है। कबीर साहेब की साखी है—

*यह मन तो निर्मल भया, जैसे गंगा नीर।*
*पीछे पीछे हरि फिरें, कहैं कबीर कबीर॥*

## कुंडलिया-134

**चोर मूँसि घर पहुँचा मूरख पहरा देइ॥**
**मूरख पहरा देइ भोर भये आपुइ रोवै।**
**राँध परोसी चोर माल धरि गाफिल सोवै॥**
**सुनहु साहु धनवंत सबै सम्पत्ति के घाती।**
**नहिं कीजै बिस्वास जागत रहिये दिन राती॥**
**दिन दिन बढ़ती होइ आन को चित्त न दीजै।**
**सबसे रहिये दूर केहू को मित्र न कीजै॥**
**पलटू जो ऐसे रहै द्रव्य कोऊ नहिं लेइ।**
**चोर मूँसि घर पहुँचा मूरख पहरा देइ॥**

**शब्दार्थ**—मूंसि= मूसि, चुराकर। राँध परोसी= आसपास के लोग—मन-इन्द्रियां। घाती= दावं लगाने वाले, अपहरणकर्ता। आन= अन्य।

**भावार्थ**—चोर धन चुराकर अपने घर पहुंच गया और मूर्ख पहरा देता रह गया—मन के विकार भीतर-भीतर सद्गुण-धन को चुरा लेते हैं और भोले साधक समझते हैं कि हम सावधान साधक हैं। चोरी हो जाने पर घर का मालिक सुबह होने पर जब अपने घर की चोरी समझ पाता है तब स्वयं रोता है—साधक जब अपने मन के विकारों की वृद्धि देखता है तब स्वयं पश्चाताप करता है। आसपास के लोग चोर हैं, ऐसी स्थिति में माल रखकर असावधानी में सोयेगा तो चोरी होगी ही—मन-इन्द्रियां साथ में हैं जो ज्ञान-धन को चुराने वाले हैं। इनके सथ रहकर जो असावधान होगा, वह धोखा खायेगा ही। हे संपत्ति वाले धनी लोगो! सुनो, सब मनुष्य संपत्ति को लूटने के दावं में रहते हैं। इसलिए किसी पर विश्वास मत कीजिए, अपितु अपनी संपत्ति की सुरक्षा के लिए रात-दिन जागते रहिये। यदि तुम दूसरी तरफ मोह न करो, तो तुम्हारे आत्मज्ञान धन की रात-दिन बढ़ोत्तरी होगी—शांति बढ़ती जायेगी। सबसे अलग रहो। किसी को मित्र न बनाओ। पलटू साहेब कहते हैं कि जो इस प्रकार सबसे निर्मोह रहता है, उसका आत्मज्ञान कोई चुरा नहीं सकता। परंतु भोले मनुष्य समझते हैं कि हम साधना-भजन कर रहे हैं और भीतर-भीतर मन हृदय-घर से सद्गुण-धन चुरा ले जाता है।

## कुंडलिया–135

**पलटू ऐसे दास को भरम करै संसार॥**
**भरम करै संसार होइ आसन से पक्का।**
**भली बुरी कोउ कहै रहै सहि सबका धक्का॥**
**धीरज धै संतोष रहै दृढ़ ह्वै ठहराई।**
**जो कुछ आवै खाइ बचै सो देइ लुटाई॥**
**लगै न माया मोह जगत की छोड़ै आसा।**
**बल तजि निरबल होय सबुर से करै दिलासा॥**
**काम क्रोध को मारि कै मारै नींद अहार।**
**पलटू ऐसे दास को भरम करै संसार॥**

**शब्दार्थ**—दास= ज्ञानी, संत। भरम= आश्चर्य। सबुर= सब्र, संतोष। दिलासा= सांत्वना, ढाढ़स।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे ज्ञानी संत को देख-सुनकर संसार के लोग आश्चर्य करते हैं। जो आसन में पक्का है; सबकी भली-बुरी सुनकर और सबकी ठोकर सहकर निर्विकार भाव से रहता है; धैर्य रखता है, संतोष रखता है और दृढ़ होकर अपने में स्थिर रहता है। जो कुछ धन आता है, उसे स्वयं खाता एवं उपयोग में लाता है और शेष को दूसरों की सेवा में लगाता है। उसको किसी का माया-मोह नहीं लगता और वह संसार के भोगों की कामनाएं छोड़ देता है। वह सारी शक्ति का अहंकार त्यागकर निर्मान और निष्काम हो जाता है। वह संतोष रखकर अपने में स्थिरता रखता है। वह काम-क्रोध सर्वथा जीत लेता है और भोजन तथा नींद पर संतुलन कर लेता है। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे ज्ञानी संत को देख-सुनकर संसार के लोग आश्चर्य करते हैं।

**विशेष**—ऊपर उत्तम संत की रहनी बतायी गयी है। संसार के लोग काम-क्रोध में उलझे हैं। उनको उक्त प्रकार के लोगों को देखकर आश्चर्य होना स्वाभाविक है।

## कुंडलिया–136

**बूझि समुझि ले बालके पाछे तौ सिर खोलु॥**
**पाछे तौ सिर खोलु बचा तुम सुनौ फकीरी।**
**हेलुवा जूती एक नाहिं आवै दिलगीरी॥**

**रूखा सूखा खाउ मिलै जो गम का टुकड़ा।**
**फीका कड़ुवा नाहिं स्वाद सब छोड़ौ झगड़ा॥**
**हक हलाल वह जानु सबर से बैठे आवै।**
**खाना वही हराम किसी से माँगन जावै॥**
**पलटू वह घर राम का बच्चा तू जनि बोलु।**
**बूझि समुझि ले बालके पाछे तौ सिर खोलु॥**

**शब्दार्थ**—बालके= बालक, विरक्त होने की इच्छा वाला। बचा= बच्चा, पुत्र, बेटा। दिलगीरी= उदासी, दुख (दिलगीर= उदास, दुखी)। गम= ग़म, संतोष। हक= अधिकार। हलाल= ईमानदारी से पाया हुआ। सबर= सब्र, संतोष। हराम= त्याज्य।

**भावार्थ**—(गृह त्यागकर विरक्त होने की इच्छा वालों से पलटू साहेब कहते हैं) हे बालक! पहले वैराग्य की दशा को समझ-बूझ ले। इसके बाद सिर खोलकर विरक्त होने का काम कर। हे बच्चा! तुम फकीरी की बातें सुनो। चाहे कहीं हलुआ खाने को मिले चाहे कहीं जूते खाने पड़े, मन में उदासी न आये। जो संतोष की रूखी-सूखी रोटी मिल जाय, उससे निर्वाह कर ले। फीका और कड़वा की फिक्र छोड़ दे। स्वाद के सारे झगड़े को छोड़ दे। जो अपने आसन पर बैठे-बैठे संतोष से आ जाय, वह न्यायपूर्वक और अपने अधिकार का है। किसी से मांगकर खाना हराम का खाना है, इसलिए वह त्याज्य है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे वैराग्य लेने की इच्छा वाले बच्चे! विरक्ति की रहनी राम का घर है—अंतर्मुख स्थिति है। उसको पाना है तो सारा विवाद छोड़ दे। इसलिए हे बालके! समझ-बूझकर गृह त्याग करना।

## कुंडलिया-137

**पलटू नीच से ऊँच भा नीच कहै न कोय॥**
**नीच कहै ना कोय गये जब से सरनाई।**
**नारा बहि कै मिल्यो गंग में गंग कहाई॥**
**पारस के परसंग लोह से कनक कहावै।**
**आगि मँहै जो परै जरै आगै होइ जावै॥**
**राम का घर है बड़ा सकल ऐगुन छिपि जाई।**
**जैसे तिल को तेल फूल संग बास बसाई॥**

**भजन केरे परताप तें तन मन निरमल होय।**
**पलटू नीच से ऊँच भा नीच कहै न कोय॥**

**शब्दार्थ**—नारा= नाला, गंदा नाला।

**भावार्थ**—जीवन सुधर जाने पर पतित मनुष्य पावन हो जाता है, तब उसे कोई नीचा नहीं कहता। जब मनुष्य विवेकवान सद्गुरु की शरण में मन, वाणी तथा कर्म से समर्पित हो जाता है, तब ऊंचा उठ जाता है। गंदा नाला बहकर जब गंगा नदी में मिल जाता है, तब वह गंगा कहलाता है। लोहा पारस पत्थर से छू जाने पर सोना कहलाता है। जो वस्तु आग में पड़ती है वह उसमें जलकर आग हो जाती है। अंतर्मुखता का घर बड़ा है, अतएव जो मनुष्य अंतर्मुख हुआ उसके सारे दुर्गुण लुप्त हो जाते हैं। देखो, तिल का तेल सुगंधित फूल का साथ करने से कीमती हो जाता है। आत्मशोधन के प्रताप से तन-मन निर्मल हो जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जब मनुष्य नीच कर्म छोड़कर उच्च कर्म करने लगता है तब उसको कोई नीच नहीं कहता।

## कुंडलिया-138

**हस्ती बिनु मारे मरै करै सिंह को संग॥**
**करै सिंह को संग सिंह की रहनी रहना।**
**अपनो मारा खाय नहीं मुरदा को गहना॥**
**नहिं भोजन नहिं आस नहीं इन्द्री की तिष्टा।**
**आठ सिद्धि नौ निद्धि ताहि को देखत बिष्टा॥**
**दुष्ट मित्र सब एक लगै ना गरमी पाला।**
**अस्तुति निन्दा त्यागि चलत है अपनी चाला॥**
**पलटू झूठा ना टिकै जब लगि लगै न रंग।**
**हस्ती बिनु मारे मरै करै सिंह को संग॥**

**शब्दार्थ**—तिष्टा=तृष्णा, इच्छा, चाह। विष्टा= मल। रंग= वैराग्य की गहराई।

**भावार्थ**—यदि हाथी सिंह का साथ करता है तो उसे बिना मारे मरना है—उसे कोई अन्य मारने नहीं आयेगा, सिंह उसे स्वयं मारकर खा जायेगा।

अतएव तुम स्वयं सिंह बन जाओ, जिससे तुम्हें कोई बिगाड़ न सके। तात्पर्य है कि मोह-माया की कायरता रखकर अपना उद्धार नहीं कर सकते हो। सिंह स्वयं जानवर को मारकर खाता है, अन्य का मारा हुआ मुरदा नहीं खाता। तुम यदि कल्याण चाहते हो, तो मन-इन्द्रियों के भोगों की आशा-तृष्णा तो छोड़ ही दो, भोजन-वस्त्र के लिए भी अधीर न रहो। प्रारब्धानुसार मिलते रहेंगे। वैराग्यवान आठ सिद्धियों और नौ निद्धियों (खजानों) को मल के समान देखता है। मस्त फकीर के लिए वैरी और मित्र एक समान हैं। वह सबसे समता का बरताव करता है। वह ठंडी-गरमी को सहन कर समान भाव में जीता है। वह किसी की स्तुति-निन्दा नहीं करता है। यदि कोई उसकी स्तुति-निन्दा करता है, तो वह उन पर ध्यान नहीं देता। वह अपनी अंतर्मुखता की रहनी में चलता है। पलटू साहेब कहते हैं कि असत्य टिक नहीं सकता। परंतु जब तक ज्ञान-वैराग्य का भाव गहरा नहीं होता, तब तक असत्य ही सत्य जान पड़ता है। अतएव कायर हाथी न बनो, वीर सिंह बनो। मोह-माया की कायरता त्यागकर वैराग्य-वीर बनो।

## कुंडलिया-139

**स्वाँती का जल एक है अपनी अपनी खानि॥**
**अपनी अपनी खानि सीप से मोती कहियै।**
**हीरा होइ हिरंज सीस गजमुक्ता लहियै॥**
**केरा परै कपूर बेन तें लोचन ब्याला।**
**अहि मुख जहर समान उपल तें लोह कराला॥**
**गौ लोचन गौ सीस मिरग मद नाभि तें जानौ।**
**भिन्न भिन्न गुन होय नीर एकहि पहचानौ॥**
**पलटू खामिंद एक है निसचै प्रेम प्रधान।**
**उपजै बस्तु सुभाव तें अपनी अपनी खानि॥**

**शब्दार्थ**—स्वाँती=स्वाति नक्षत्र। खानि=खान, उत्पत्ति स्थान। हिरंज= कोयला। बेन=बांस। लोचन=बंसलोचन। ब्याला=ब्याल, सूर्य। उपल= पत्थर। खामिंद=खाविंद, पति, स्वामी, मालिक, आत्मा।

**भावार्थ**—स्वाति नक्षत्र का जल तो एक समान है, परन्तु उसकी बूंद भिन्न-भिन्न उत्पत्ति स्थान में भिन्न-भिन्न रूप में बन जाती है; जैसे सीप

में मोती, कोयला में हीरा, हाथी के मस्तक में गजमुक्ता, केला में कपूर, बांस में बंसलोचन, सांप में विष, पत्थर में कठोर लोहा, गौ में गौलोचन तथा मृग की नाभि में कस्तूरी बन जाती है। स्वाति की बूंद तो एक समान जल ही है। पलटू साहेब कहते हैं कि वैसे ही सबके शरीर में रहने वाले आत्मा रूपी स्वामी तो एक समान हैं, परन्तु भिन्न संगत पाकर भिन्न-भिन्न विषय वस्तुओं में प्रेम उत्पन्न होता है और मनुष्य वैसे ही भिन्न-भिन्न स्थितियों वाले हो जाते हैं। अपनी-अपनी उत्पत्ति के स्थान में वस्तु अपने स्वभाव से उत्पन्न होती है।

**विशेष**—स्वाति नक्षत्र की जल-बूंद से अनेक स्थानों में अनेक रूप में उत्पन्न होने की बात बतायी जाती है। यह कहावत है। इसमें कितना सच है और कितना केवल कहावत है, यह अनुसंधान का विषय है। हो सकता है पूरी कहावत हो। जिसके लिए कहावत है वह सच है कि मनुष्य भिन्न-भिन्न संगत पाकर वैसे ढल जाता है। अतएव सदैव अच्छी संगत करना चाहिए।

## कुंडलिया-140

**भक्ति बीज जब बोवै निसि दिन करै बिबेक॥**
**निसि दिन करै बिबेक लागि तब निकरन साखा।**
**डार पात बहु फूल जतन से जिन ने राखा॥**
**हरि चरचा से सींचि ज्ञान कै बाँधै बेड़ा।**
**पहुँचै सोर पताल खात संतन कै खेड़ा॥**
**सोभित बृच्छ बिसाल मीठ फल लटकन लागे।**
**बिस्वास सोई रखवार बैठि कै पहरा जागै॥**
**पलटू यहि बिधि जोगवै उपजै ज्ञान बिसेख।**
**भक्ति बीज जब बोवै निसि दिन करै बिबेक॥**

**शब्दार्थ**—बेड़ा= बाड़, रक्षक दीवार। सोर= जड़। खात= खाद। खेड़ा= गांव, समाज। जोगवै= रक्षा करे। बिसेख= विशेष।

**भावार्थ**-जब साधक भक्ति के बीज हृदय में बोवे, तब रात-दिन आत्मा-अनात्मा का विवेक जाग्रत रखे। फिर तो भक्ति का पौधा उगकर उसमें अनेक शाखाएं निकलने लगेंगी। जिन्होंने भक्ति को यत्नपूर्वक सुरक्षित रखा है, उनके भक्ति-वृक्ष में डाल, पत्ते, फूल, फल आदि फैलने लगते हैं।

आत्मज्ञान की चर्चा से भक्ति-वृक्ष को सींचे और ज्ञान से उसकी बाड़ बांधे। फिर तो संतों के समाज में बैठ-बैठकर और सेवा की खाद डालने से उसकी जड़ पाताल—बहुत गहरे में पहुंच जायेगी। जब भक्ति-वृक्ष शोभायमान होकर संपन्न रूप से खड़ा होता है, तब उसमें दया, क्षमा, शील, संतोष, शांति आदि मीठे फल लटकने लगते हैं। आत्मकल्याण में दृढ़ विश्वास ही उसका रखवाला है जो बैठकर सावधानी से पहरा देता रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि इस प्रकार भक्ति की रक्षा करे तो उच्चतम ज्ञान पैदा होता है। अतएव साधक जब भक्ति के बीज बोवे तब रात-दिन आत्मा-अनात्मा का विवेक करता रहे।

## कुंडलिया-141

**पलटू सरबस दीजिये मित्र न कीजै कोय॥**
**मित्र न कीजै कोय चित्त दै बैर बिसाहै।**
**निस दिन होय बिनास ओर वह नाहिं निबाहै॥**
**चिन्ता बाढ़ै रोग लगा छिन छिन तन छीजै।**
**कम्मर गरुआ होय ज्यों ज्यों पानी से भीजै॥**
**जोग जुगत की हानि जहाँ चित अंतै जावै।**
**भक्ति अपनी जाय एक मन कहूँ लगावै॥**
**राम मिताई ना चलै और मित्र जो होय।**
**पलटू सरबस दीजिये मित्र न कीजै कोय॥**

**शब्दार्थ**—बिसाहे= खरीदे, मोल ले। ओर= आरंभ, मित्रता की शुरुआत। कम्मर= कंबल। राम मिताई= आत्माराम में स्थिति।

**भावार्थ**-पलटू साहेब कहते हैं कि सर्वस्व भले दो, परंतु किसी से मोहमय मित्रता न करना। किसी से मोहमय मित्रता करना तो अपना मन उसके हाथ बेचकर पीछे वैर बढ़ाना है। मन अनात्म पदार्थ में लगाने से रात-दिन अपना पतन होता है। वह मित्र मित्रता की शुरुआत तो कर देगा, परंतु उसको आगे निभा नहीं पावेगा। किसी में मोह करने से अपने मन में चिंता का रोग लग जाता है और वह बढ़ता जाता है। इसके परिणाम में अपना शरीर क्षण-क्षण क्षीण होता है। कंबल जैसे-जैसे पानी से भीगता है वैसे-वैसे वजनदार होता है। इसी प्रकार संसार में जितनी मोह-माया बढ़ाओ, उतना अपना मन बंधन में पड़ता है। जहां अपना मन किसी अनात्म पदार्थ में लगा

कि वहां अपनी योग-युक्ति एवं अंतर्मुखता की साधना में हानि होगी। मन तो एक है। जब उसको कहीं अलग लगायेंगे, तब आत्मानुराग की भक्ति छूटेगी। अतएव यदि मेरा कोई अन्य मित्र है, तो राम-मिताई नहीं चलेगी। मन अनात्मा में लगाने से आत्माराम की स्थिति कैसे रहेगी? इसलिए पलटू साहेब कहते हैं कि बदले में सब कुछ देकर भी अनात्म वस्तु की मोह-मिताई न करें।

## कुंडलिया-142

**ख्वा टूटै ख्वा फाटै कहिये परदा खोल॥**
**कहिये परदा खोल रवा न बाकी कीजै।**
**बात कहै दुइ टूक मैल ना पानी पीजै॥**
**उन से रहिये दूरि बड़े वे लोग अधरमी।**
**तुरतहि देइँ जवाब बचै न सरमा सरमी॥**
**कहैं मित्र की बात करैं दुस्मन की करनी।**
**ना कीजै बिस्वास करैं कैसौ ब्योहरनी॥**
**पलटू छूरी कपट की बोलैं मीठे बोल।**
**ख्वा टूटै ख्वा फाटै कहिये परदा खोल॥**

**शब्दार्थ**—ख्वा= चाहे। रवा= छोटा हिस्सा, तनिक। मैल= विकार, गंदा। ब्योहरनी= बरताव।

**भावार्थ**—चाहे टूटे चाहे फाटे, स्पष्ट बात कहिये। कहने में कण मात्र भी बचाकर न रखिये। बात दो टूक कहना चाहिए। मैला पानी न पीजिए। घपलेबाजी में न रहिए। जो लोग सत्य-सदाचार छोड़कर रहते हैं, उनसे दूर रहिए। उनको तुरंत जवाब दे दो। शर्माशर्मी में पड़े रहने से शांति नहीं मिल सकती। जो लोग मित्रता जैसी बात करते हैं और शत्रुता का आचरण करते हैं, वे चाहे जैसा मीठा बरताव करें, उन पर विश्वास न कीजिए; क्योंकि वे अंत में धोखा देने वाले हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जो लोग मन में कपट की छूरी रखते हैं और ऊपर से मीठी बातें करते हैं, उनसे स्पष्ट बात कह दीजिए, परिणाम में चाहे टूटे या फाटे।

**विशेष**—साफ कहने के परिणाम में अगले आदमी से सम्बन्ध चाहे टूट जाय अथवा उसके मन का भ्रम फटकर वह सही हो जाय, यह भाव लगता है।

## 14. आत्मज्ञान

कुंडलिया-143

**परदा अंदर का टरै देखि परै तब रूप॥**
**देखि परै तब रूप मिटै सब मन का धोखा।**
**परै सबद टकसार बहुत चोखे से चोखा॥**
**जोग-जीत जब होय भूमिका ज्ञान की पावै।**
**लागै सहज समाधि सक्ति से सीव बनावै॥**
**महल करै उँजियार तेल बिनु दीपक बाती।**
**परमानन्द अनन्द भजन में दिन औ राती॥**
**पलटू सूझै है नहीं जहाँ अधोमुख कूप।**
**परदा अंदर का टरै देखि परै तब रूप॥**

**शब्दार्थ**—परदा= अविद्या, अज्ञान। रूप= स्वस्वरूप, चेतन आत्मा। टकसार= प्रामाणिक, सत्य। अधोमुख कूप= अविद्या, अज्ञान।

**भावार्थ**—जब मन की अविद्या मिट जाती है, तब अपने चेतन स्वरूप का बोध होता है। फिर मन का धोखा मिट जाता है जो बाहर से कुछ पाने की आशा है। टकसार के शब्द खरे से खरे होते हैं—निर्णय वचन स्पष्ट होते हैं। उनके द्वारा यथार्थ स्वरूपज्ञान होता है। जब योगाभ्यास से—मनोनिग्रह से साधक मन पर विजयी हो जाता है, तब आत्मज्ञान की भूमिका पाता है। फिर तो सहज समाधि लग जाती है—अपने शुद्ध स्वरूप चेतन में विश्राम मिल जाता है। वह अपनी साधना शक्ति से शिव हो जाता है—कल्याण स्वरूप हो जाता है। लौकिक तेल, दीपक और बत्ती के बिना हृदय-महल में आत्मज्ञान का उजियाला हो जाता है। ऐसा साधक रात-दिन आत्म-चिंतन एवं आत्मस्थिति के परमानंद में आनंदित रहता है। जिनके हृदय में अधोमुख कुआं है—अविद्या-अंधकार है, उन्हें अपने स्वरूप का ज्ञान नहीं होता। जब वह सत्संग-विवेक से अविद्या का परदा फाड़ देता है तब अपने आत्मस्वरूप का साक्षात्कार होता है।

कुंडलिया-144

**समुझाये से क्या भया जब ज्ञान आपु से होय॥**
**ज्ञान आपु से होय हंस को कौन सिखावै।**
**छीर करत है पान नीर को वह अलगावै॥**

**अललपच्छ इक रहै गगन में अंडा देवै।**
**बच्चा सुरति सम्हार उलटि कै फिर घर लेवै॥**
**केहरि के सिसु कँहै कौन उपदेश बतावै।**
**कुंजर देहि गिराइ बात में विलम्ब न लावै॥**
**पलटू सतगुरु रहनि को परखि लेय जो कोय।**
**समुझाये से क्या भया जब ज्ञान आपु से होय॥**

**शब्दार्थ**—अललपच्छ=अलल नाम का पक्षी। कँहै=को। कुंजर= हाथी।

**भावार्थ**—समझाने से ज्ञान हुआ तो क्या हुआ, जब अपने आप से ज्ञान हो, तब उसकी विशेषता है। हंस को नीर-क्षीर अलग करने की सीख कौन देता है, वह स्वभाव से पानी को छोड़कर केवल दूध पी लेता है। अलल पक्षी आकाश में उड़ते-उड़ते अंडा दे देता है और आकाश में अंडा फूटकर उसमें से पक्षी निकल आता है और अपनी माता के साथ उड़ने लगता है। सिंह के बच्चे को कौन सीख देता है, वह हाथी को बात ही बात में मारकर गिरा देता है, देर नहीं करता। पलटू साहेब कहते हैं कि पूर्ण सद्गुरु की रहनी को जो परख लेता है, वह स्वयं संसार दृश्य को छोड़कर अपने आप में शांत हो जाता है। समझाने से ज्ञान हुआ तो क्या हुआ, जब स्वयं में ज्ञान जग जाय तब विशेषता है।

**विशेष**—हंस का नीर-क्षीर विवेक और अललपक्षी का आकाश में अंडा देना, दोनों बात को समझाने की कहावतें हैं। सद्गुरु के उपदेश की हर साधक को आवश्यकता है, परन्तु उसकी अपनी पकड़ भी आवश्यक है।

## कुंडलिया-145

**ज्ञान समाधि जाको मिली सो क्या लावै ध्यान॥**
**सो क्या लावै ध्यान ध्यान दुतिया कहवावै।**
**आप भया पासाह कौन के मुजरे जावै॥**
**भजनी से भा भजत कौन अब आवै जावै।**
**लिहा निसाना मारि कौन अब तीर चलावै॥**
**मन के संकल्प भजन रूप अपनो दरसावै।**
**जो इहवाँ सो उहाँ संकल्प को दूरि बहावै॥**
**पलटू लगी सो लगि गई कौन होय हैरान।**
**ज्ञान समाधि जाको मिली सो क्या लावै ध्यान॥**

**शब्दार्थ**—दुतिया= द्वैत, अनात्म। पासाह= पाशा, बहुत बड़ा अफसर। मुजरे= सलाम-नमस्कार करना। भजनी= भजन करने वाला। भजत= जिसका भजन किया जाय।

**भावार्थ**—जो साधक सदैव ज्ञान समाधि में है, आत्मलीन है, वह ध्यान क्या लगावे? लोकधारणा के अनुसार तो ध्यान दूसरे का किया जाता है जो अनात्म होता है। जब स्वयं बड़ा अफसर हो गया तब वह किस अन्य का नमस्कार करने जाय? भजन करने वाला जब स्वयं भजन का विषय हो गया, तब वह क्यों आने-जाने की क्रिया में रहे? जब लक्ष्य बेध दिया, तब तीर चलाने की क्या आवश्यकता रह गयी? मन के संकल्प शांत हो जाने पर स्वरूप साक्षात्कार हो जाता है, यही सच्चा भजन है। हे साधक! जो यहां है वही वहां है—सारा संसार माटी-गोबर तथा कूड़ा-कचड़ा है, अनात्म है, अतएव तुम सारे संकल्पों को दूर फेंक दो, संकल्प शून्य कर दो। पलटू साहेब कहते हैं, जिनकी आत्मज्ञान की अखंड समाधि लग गयी, उनकी निरंतर समाधि है। अब वह क्यों नाक दबाकर ध्यान के लिए हैरान हो? जिसको निरंतर आत्मज्ञान की समाधि की निमग्नता है, वह क्या ध्यान लगावे?

**विशेष**—यहां ध्यान करने का खंडन नहीं है। साधकों को नित्य एक-अनेक बार ध्यान करना चाहिए। किसी महापुरुष का ध्यान, ज्योति, नाद, बिन्दु, अनाहतनाद के नाम से शरीर में उठती हुई ध्वनि का ध्यान, ये सब क्रिया योग हैं, मन रोकने के आरंभिक साधन हैं; किन्तु ये लक्ष्य नहीं हैं। लक्ष्य तो आत्मलीनता है। वह दृश्यों के अभाव से होती है। यह संकल्प-शून्यता की दशा है। जिस साधक की यह अंतिम दशा हो गयी, वह सब समय समाधि में है। तो भी व्यवहारकाल में संकल्पों का उपयोग होता है। समाधि में संकल्प बंद हो जाते हैं, अतएव निरंतर आत्मलीन साधक को भी समय-समय से पूर्ण संकल्प-शून्य दशा में जाना चाहिए।

## कुंडलिया-146

**समुझे को समुझावै हीरा आगे पोत॥**
**हीरा आगे पोत ज्ञानी को मूढ़ बुझावै।**
**जहवाँ आँधी चलै बेना कै बतास चलावै॥**
**अटकर सेती अंध डिठियारे राह बतावै।**
**जैसे पंडित चतुर संत से बाद न आवै॥**

**सुधा क पीवनहार ताहि को छाछ दिखावै।**
**जेकरे बाजै तूर तहाँ का डफ्फ बजावै॥**
**पलटू दीपक का करै जहँ सूरज की जोत।**
**समुझे को समुझावै हीरा आगे पोत॥**

**शब्दार्थ**—पोत=कांच का छोटा टुकड़ा। बतास=वायु, हवा। अटकर=अटकल, अंदाज। डिठियारे=आंख वाले। बाद=बाज, पीछे हटना, रुकना। सुधा=अमृत। तूर=उत्तम बाजा। डफ्फ=साधारण बाजा, डफला।

**भावार्थ**—पूर्ण ज्ञानी के सामने अपना ओछा ज्ञान बघारना हीरे के जौहरी के सामने कांच का टुकड़ा दिखाना है। कितने मूर्ख हैं जो अपने अहंकार में पड़कर पूर्ण ज्ञानी को समझाने में लग जाते हैं। जहां आंधी चल रही है, वहां पंखे से हवा झलने का काम व्यर्थ है। यह तो ऐसा ही है कि एक अंधा मनुष्य अपनी अटकल से आंख वाले को रास्ता दिखाने की व्यर्थ चेष्टा करे। ऐसे पंडित होते हैं जो संत के सामने विवाद करने से पीछे नहीं हटते। यह तो अमृत पीने वाले को छाछ पिलाने का व्यर्थ प्रयास है। जिसके दरवाजे पर उत्तम बाजे बज रहे हों, वह डफला बजाने का प्रयास क्यों करे? पलटू साहेब कहते हैं कि जहां सूर्य का प्रकाश फैला है, वहां दीपक का क्या काम है? ज्ञानी के सामने अपना ओछा ज्ञान झाड़ना हीरा के सामने कांच रखना है।

**विशेष**—परम श्रद्धेय संत पलटू साहेब की अद्भुत प्रतिभा एवं काव्यशक्ति थी। वे जो कुछ कहना चाहते हैं उसे सम्यक रूप से काव्य में गुंफित कर देते हैं।

## कुंडलिया-147

**अपनी अपनी करनी अपने अपने साथ॥**
**अपने अपने साथ करै सो आगे आवै।**
**बाप कै करनी बाप पूत कै पूतै पावै॥**
**जोरू कै जोरुहिं फलै खसम कै खसम कौ फलता।**
**अपनी करनी सेती जीव सब पार उतरता॥**
**नेकी बदी है संग और न संगी कोई।**
**देखौ बूझि बिचारि संग ये जैहैं दोई॥**
**पलटू करनी और की नहीं और के माथ।**
**अपनी अपनी करनी अपने अपने साथ॥**

**शब्दार्थ**—जोरू=पत्नी। खसम=पति। नेकी=शुभ कर्म। बदी=बुरे कर्म।

**भावार्थ**—सब जीवों के साथ उनके अपने कर्म हैं। आदमी जो कुछ करता है, उसी का फल उसके सामने आता है। पिता अपने कर्मों के फल पाता है और पुत्र अपने कर्मों के फल पाता है। इसी प्रकार पत्नी और पति अपने-अपने कर्मों के फल पाते हैं। अपने शुभकर्मों से ही मनुष्य मन के विकारों से छूटकर शांति पाता है। जीव के साथ उसके अच्छे-बुरे कर्म के संस्कार-बीज जाते हैं, अन्य कोई और कुछ उसके साथ नहीं जाता। समझ-बूझ कर देखो कि अपने बनाये शुभाशुभ कर्म ही साथ चलते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि एक की करनी दूसरे के साथ नहीं चलती। सब जीव की अपनी-अपनी करनी ही अपने साथ रहती है।

## कुंडलिया-148

**सरबंगी जो नाम कै रहनी सहित बिबेक॥**
**रहनी सहित बिबेक एक करि सब कौ मानै।**
**खान पियन में जुदा नहीं एकै में सानै॥**
**लिये रहै मर्जाद तजै ना नेम अचारा।**
**धर्म सनातन सहित अशुभ शुभ करै बिचारा॥**
**बोलै सब्द अघोर भजन अद्वैता अंगी।**
**कारज निर्मल करै सोई पूरा सरबंगी॥**
**पलटू बाहर कुल धरम भीतर राखै एक।**
**सरबंगी जो नाम कै रहनी सहित बिबेक॥**

**शब्दार्थ**—सरबंगी=सब में मिला हुआ, मानव एकता का पक्षधर, मस्तमौला संत। अघोर=सरल, जो घोर (कठिन) न हो, मीठा। अंगी=अंगों वाला। अद्वैता अंगी=अद्वैत भाव का आधार लेकर।

**भावार्थ**—जो सरबंगी नाम से जाने जाते हैं; सबको एक समान मानते हैं, वे भी विवेकपूर्वक अपनी रहनी रखते हैं। वे सब मनुष्यों को एक समान मानते हैं, परन्तु खान-पान में अलग रहते हैं। सर्वभक्षी और मलिन आचरण वालों में अपने को नहीं मिलाते हैं। वे पवित्र आचरण की मर्यादा का पालन करते हैं। वे शुद्ध खान-पान, रहन-सहन आदि के नियम और आचार निभाते हैं। वे अपने नियम-आचार को नहीं त्यागते। अपने पर संयम और दूसरों के

साथ शील का व्यवहार सनातन एवं शाश्वत धर्म है। वे इसको आधार बनाकर शुभ और अशुभ कर्मों का विचार करते हैं और अशुभ का त्यागकर शुभ का व्यवहार करते हैं। वे कोमल वचन बोलते हैं और अद्वैतभाव का आधार लेकर साधना करते हैं—द्वैत अनात्म को त्यागकर अपने केवल स्वरूप में स्थित होते हैं। जो अपने सभी कर्म निर्मल रखता है, वही पूर्ण सर्बंगी है। पलटू साहेब कहते हैं कि बाहरी व्यवहार में कुलधर्म की मर्यादा का पालन करे और मन में सबको एक समान समझकर सबके साथ समता का व्यवहार करे। जो सरबंगी नाम से जाने जाते हैं वे विवेकपूर्वक व्यवहार रखते हैं।

## 15. शरणाधीनता और दृढ़ता

कुंडलिया–149

**करम धरम सब छाड़ि कै पड़े सरन में आय॥**
**पड़े सरन में आय तजी बल बुधि चतुराई।**
**जप तप नेम अचार नहीं जानौं कछु भाई॥**
**पूजा ज्ञान न ध्यान तिलक नहिं देवै जानौं।**
**जोग जुगत कछु नहीं नहीं तीरथ ब्रत मानौं॥**
**एक भरोसा पाय दिया सिर भार लराई।**
**पंक्षी को पछ गया रहा इक नाम सहाई॥**
**पलटू मैं जियतै मुवा नाम भरोसा पाय।**
**करम धरम सब छाड़ि कै पड़े सरन में आय॥**

**शब्दार्थ**—लराई= गिरा दिया। पछ= पंख। नाम = सतनाम, आत्मज्ञान।

**भावार्थ**—दुनिया के सारे कर्म-धर्म छोड़कर सद्‌गुरु की शरण में जाकर समर्पित हो गया। मैंने अपनी शक्ति और बुद्धि की चतुरता छोड़ दी। हे भाई! जप, तप, नियम, आचार आदि मैं कुछ नहीं जानता हूं। न पूजा करना जानता हूं, न ज्ञान-ध्यान जानता हूं। यहां तक कि तिलक-चंदन लगाना भी नहीं जानता हूं। मैं कोई योग और युक्ति भी नहीं जानता हूं। तीर्थ-व्रत तो मानता ही नहीं हूं। एक सद्‌गुरु का भरोसा पाकर मन के अहंकार का बोझा सिर से गिरा दिया। मन-पक्षी के राग-द्वेष के पंख नष्ट हो गये। अब केवल सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मज्ञान का सहारा रहा। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मज्ञान

का आधार पाकर मैं जीते जी मर गया—अहंकार-शून्य हो गया। अब सब सांसारिक कर्म-धर्म छोड़कर सद्गुरु की शरण में पड़ गया।

## कुंडलिया-150

**जौन काछ कौ काछिये नाच नाचिये सोय॥**
**नाच नाचिये सोय तबै तौ सोभा पावै।**
**बिना काछ कै नाच भाँड़ कै स्वाँग बनावै॥**
**आदि अंत मधि माहिं जो हरि कौ बर्त निबाहै।**
**जीवन ताकौ सुफल निगम दिन राति सराहै॥**
**बात जीव के संग नाहिं जो हारि ललकरी।**
**हरि भक्तन की रीति टेक पकरी सो पकरी॥**
**पलटू काछ औ नाच से तनिक न तजविज होय।**
**जौन काछ कौ काछिये नाच नाचिये सोय॥**

**शब्दार्थ**—काछ= वेष, बाना। निगम= वेद। ललकरी= हौसला, उत्साह, सत्य प्रतिज्ञा। तजविज= तजावुज़, सीमा का उल्लंघन।

**भावार्थ**—जैसा वेष धारण करे, वैसा बरताव करे, तभी वेष की शोभा है। वेष उत्तम और आचरण खराब, यह तो भांड़ का स्वांग बनाने जैसा है। जो साधक आरंभ से मध्य और अंत तक ज्ञान की प्रतिज्ञा निभाता है, उसी का जीवन सफल होता है। वेद उसी की रात-दिन प्रशंसा करते हैं। जो साधक उत्साह नहीं छोड़ता, उसकी उसी के साथ सत्यप्रतिज्ञा रहती है। हरिभक्तों-ज्ञानियों की यही रीति है कि वे सत्यपक्ष पकड़ लेते हैं। उसे कभी नहीं छोड़ते। पलटू साहेब कहते हैं कि हे साधको ! वेष की मर्यादा से आचरण का थोड़ा भी सीमा का उल्लंघन नहीं होना चाहिए। जैसा वेष बनावे, वैसा आचरण करे।

## कुंडलिया-151

**साधु को ऐसा चाहिए ज्यों सिसु अड़नि अड़ै॥**
**ज्यों सिसु अड़नि अड़ै टेक अपनी नहिं टारै।**
**पुरजे पुरजे कटै कोऊ कितनौ जो मारै॥**
**धरन धरी सो धरी वही हरि के ब्रतधारी।**
**धोये तनिक न छुटै रंग जब चढ़ा करारी॥**

**धरन नीबाहै और साँच में दाग न लागै।**
**ज्यों पतिबर्ता नारि डिगै ना लाख डिगावै॥**
**पलटू लोह की मेख ज्यों पत्थर बीच गड़ै।**
**साधु को ऐसा चाहिये ज्यों सिसु अड़नि अड़ै॥**

**शब्दार्थ**—सिसु=शिशु, बालक। निगम=वेद। अड़नि=हठ, अपने निश्चय में दृढ़। धरन=धारणा, निश्चय। करारी=पक्का। मेख=भाला की नोक।

**भावार्थ**—जैसे छोटा बालक अपने निश्चय में हठ करके अडिग रहता है, वैसे ही साधु को चाहिए कि वह अपने त्याग में दृढ़ रहे। साधु अपनी पवित्र रहनी का पक्ष न छोड़े। कोई कितना मारे, यहां तक शरीर का एक-एक अंग कट जाय, तो भी साधु जो अपने त्याग-वैराग्य की धारणा कर ली है, उससे कभी न डिगे। वही ज्ञान व्रत का धारण करने वाला है। जब कपड़े पर पक्का रंग चढ़ जाता है, तब वह धोने पर थोड़ा भी नहीं छूटता। साधु इसी तरह अपने त्याग का निर्वाह करे। वह अपने त्याग की धारणा में दृढ़ रहे और अपने सच्चे त्याग में दाग न लगने दे। जैसे पतिव्रता स्त्री को कोई लाख लालच देकर डिगावे, वह नहीं डिगती, वैसे साधु अपने त्याग से न डिगे। पलटू साहेब कहते हैं कि जैसे लोह का भाला पत्थर में गड़ जाता है, वैसे साधु का त्याग सच्चाई में गड़ जाता है। अतएव साधु अपने त्याग में पक्का रहे।

## 16. विनय और विनम्रता

कुंडलिया-152

**पलटू पूछै हंस से बिनती कै कर जोर॥**
**बिनती कै कर जोर साच तुम बात बतावौ।**
**भई साहिबी तोर नर्क से जीव बचावौ॥**
**अंधा पंगुल लूल सबन कौ मिलै ठिकाना।**
**इक इक सबके हाथ नाम का द्यो परवाना॥**
**संत रूप अवतार लियौ परस्वारथ काजा।**
**चौरासी चौखान सबन के तुम हौ राजा॥**
**जीव तरै जब जक्त कौ तब तुम बंदीछोर।**
**पलटू पूछै हंस से बिनती कै कर जोर॥**

**शब्दार्थ**—हंस= विवेकी संत। साबी= स्वामित्व, प्रभुता। द्यो= दीजिए। परवाना= प्रमाण पत्र। बंदीछोर= बंधन छुड़ाने वाले।

**भावार्थ**—पलटू साहेब विवेकी संतों से हाथ जोड़कर विनती करते हुए पूछते हैं कि आप सच्ची बात बतावें। कल्याण क्षेत्र में आपकी प्रभुता है। इसलिए आप जीवों को इस जन्म-मरण के नरक-चक्कर से बचावें। अंधे, पंगुले, लूले आदि सबको आत्मशांति मिले। इसलिए इन सभी मनुष्यों के हाथ में आत्मज्ञान एवं मोक्ष का प्रमाण पत्र दीजिए। आपने जीवों का उद्धार करने के लिए संत रूप में जगत में अवतार लिया है। चारों खानि रूप चौरासी चक्र के बंधन छुड़ाने वाले आप सर्वेसर्वा अधिकारी सम्राट हैं। जब आपके द्वारा संसार के जीव बंधनों से मुक्त हों तब आप बंधन छुड़ानेवाले कहला सकते हैं। इस प्रकार पलटू साहेब विवेकी संतों से हाथ जोड़कर विनयावनत हो पूछते हैं।

**विशेष**—श्रद्धेय संत पलटू साहेब कवि-हृदय हैं। इसलिए वे भावुकता में भी बातें करते हैं। यहां भावुकता का ही प्रकाशन है। कोई संत अपने दुखों से छूटने के लिए साधना करता है और दूसरों को भी उसका रास्ता बताता है। जो उनकी बात मानकर साधना में चले उसका दुख दूर होगा। कोई संत ऐसा समर्थ नहीं है कि मनुष्य की पात्रता बिना उसका उद्धार कर दे।

## कुंडलिया-153

**मन महीन करि लीजिए जब पिउ लागै हाथ॥**
**जब पिउ लागै हाथ नीच ह्वै सबसे रहना।**
**पच्छा पच्छी त्यागि ऊँच बानी नहिं कहना॥**
**मान बड़ाई खोय खाक में जीते मिलना।**
**गारी कोउ दै जाय छिमा करि चुपके रहना॥**
**सबकी करै तारीफ आप को छोटा जानै।**
**पहिले हाथ उठाय सीस पर सबको आनै॥**
**पलटू सोई सुहागिनी हीरा झलकै माथ।**
**मन महीन करि लीजिये जब पिउ लागै हाथ॥**

**शब्दार्थ**—पिउ= पति, प्रियतम, आत्मा। ऊंच बानी= अहंकार पूर्ण वचन। सोहागिनी= पतिवाली, आत्मबोध सम्पन्न। हीरा= आत्मज्ञान। माथ= जीवन की ऊंची रहनी।

**भावार्थ**—हे मनोवृत्ति! जब आत्मा रूपी पति मिल जाय–आत्मज्ञान हो जाय, तब अपने मन को विनम्र कर सबसे नीचे होकर जीवन बिताना। किसी का पक्षपात एवं मोह न करना और कभी अहंकार भरी वाणी न कहना। सारी मान-बड़ाई खोकर जीते जी मिट्टी में मिल जाना—अहंकार-शून्य हो जाना। कोई आपको गाली दे तो उसको पूर्ण क्षमा कर मौन रह जाना। सबको अपने से बड़ा मानकर उनकी प्रशंसा करना और अपने को सबसे छोटा समझना। किसी से मिलने पर पहले अपने हाथों को जोड़कर अपना सिर उसके सामने झुका लेना। पलटू साहेब कहते हैं कि वही मनोवृत्ति आत्म-पति का बोध पाकर सुहागिन है—वही बोधवान है जिसके जीवन की ऊंची रहनी में आत्मज्ञान का हीरा ज्योतित है। अतएव जब साधक को आत्मज्ञान मिल जाय, तब वह अपना मन अत्यन्त विनम्र बना ले।

**विशेष**—आत्मज्ञान हो जाने पर शरीर का अहंकार मर जाना चाहिए। अपने को सबसे पीछे और नीचे किये बिना कोई परम शांति नहीं पा सकता।

कुंडलिया-154

**जोग जुगत ना ज्ञान कछु गुरु दासन को दास।**<br>
**गुरु दासन को दास सन्तन ने कीन्ही दाया।**<br>
**सहज बात कछु गहिनि छुड़ाइनि हरि की माया**<br>
**ताकिनि तनिक कटाच्छ भक्ति भूतल उर जागी।**<br>
**स्वस्ता मन में आई जगत की भ्रमना भागी॥**<br>
**भक्ति अभय पद दीन्ह सनातन मारग वाकी।**<br>
**अविरल ओकर नाम लगै ना कबहीं टाँकी॥**<br>
**पलटू ज्ञान न ध्यान तप महापुरुष कै आस।**<br>
**जोग जुगत ना ज्ञान कछु गुरु दासन को दास॥**

**शब्दार्थ**—कटाच्क्ष=कटाक्ष, तिरछी नजर, कृपादृष्टि। भूतल=पृथ्वी पर। स्वस्ता=शांति। अविरल=सघन। टांकी=जोड़, जोड़ने का साधन।

**भावार्थ**—मेरे पास न योग है और न युक्ति है। मैं तो सद्गुरु के दासों का दास हूं। संतों ने कृपा की और उन्होंने रास्ता दिखाया और उनकी सीधी-

सादी कुछ बातें पकड़ने में आयीं। संतों ने सांसारिक माया-मोह छुड़ा दिया। सद्गुरु-संतों ने कृपादृष्टि से देखा और उनके उपदेश से संसार में भक्तिभाव का प्रचार हुआ। मन में शांति मिली और संसार में भोगों के लिए जो भटकन थी, वह दूर हो गयी। सद्गुरु की भक्ति निर्भय आत्मस्थिति-पद को देने वाली है। उसका पथ सनातन है। आत्मस्थिति में निरंतर विश्राम मिल गया। अब मुझमें कभी विखंडन नहीं होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं न ज्ञान जानता हूं और न ध्यान जानता हूं। केवल महान संत पुरुष की भक्ति की आशा है। मेरे पास न योग है, न युक्ति है। मैं सद्गुरु के दासों का दास हूं।

## 17. मान-बड़ाई

### कुंडलिया-155

**मान बड़ाई कारने पचि मूआ संसार॥**<br>
**पचि मूआ संसार जती जोगी संन्यासी।**<br>
**उनहूँ को है चाह गुफा के भीतर बासी॥**<br>
**सिद्ध सिद्धई करै पर्भुता कारन जाई।**<br>
**गोड़ धरावन हेतु महंत उपदेस चलाई॥**<br>
**राजा रंक फकीर फिरै जो खाक लगाये।**<br>
**सबके मन में चाह है खुसी बड़ाई पाये॥**<br>
**पलटू हरि के भक्त से गई पर्भुता हार।**<br>
**मान बड़ाई कारने पचि मूआ संसार॥**

**शब्दार्थ**—पचि मूआ= अत्यंत पीड़ित, हैरान। जती= यती, त्यागी।

**भावार्थ**—संसार के लोग मान-बड़ाई पाने के लिए पच-पच कर मरते हैं। त्यागी, योगी, संन्यासी और गुफा के भीतर बैठे सिद्ध कहलाने वाले लोगों को भी प्रतिष्ठा की चाहना लगी है। सिद्ध कहलाने वाले लोग संपत्ति और स्वामित्व पाने के लिए अपनी झूठी सिद्धि दिखाते हैं। अनेक महंत अपने पैर पुजवाने के लिए धर्मोपदेश करने का धंधा करते हैं। राजा हो, दरिद्र हो और चाहे राख लगाये महात्मा वेषधारी हों, सबके मन में मान-बड़ाई की चाहना बनी है। सबको अपनी मान-बड़ाई पाने से प्रसन्नता होती है। पलटू साहेब कहते हैं कि हरि-गुरु की भक्ति से ही प्रभुता हारती है— सच्चे ज्ञान-भक्ति के

आचरण से मान-बड़ाई की कामना नष्ट होती है। अन्यथा संसार के लोग मान-बड़ाई पाने के चक्कर में पच-पचकर मरते ही हैं।

कुंडलिया-156

**खुदी खोय को खोवै सोई है दुरबेस॥**
**सोई है दुरबेस रूह की करै सफाई।**
**दिल अन्दर दीदार नबी का दरसन पाई॥**
**बिन बादल बरसात अबर बिन बरसत पानी।**
**गरमी आतस बिना जबाँ बिन बोलत बानी॥**
**लामकान बेचून लाहुत को दिल दौड़ावै।**
**फना को करै कबूल सोई वह काबा पावै॥**
**पलटू जारै फिकर को रहै जिकर में पेस।**
**खुदी खोय को खोवै सोई है दुरबेस॥**

**शब्दार्थ**—खुदी= अहंकार। खोय= आदत। दुरबेस= दरवेश, फकीर, त्यागी, संत। रूह= आत्मा। दीदार= दर्शन। नबी= ईश्वर का संदेशवाहक। अबर= अंबर, आकाश। आतस= आतिश, अग्नि। जबाँ= जबान, जिह्वा। लामकान= शून्य। बेचून= बेचूं= उपमारहित, अनुपम। लाहुत= लाहूत, संसार। फना= नाश, नाशवान। फिकर= फिक्र, चिंता। जिकर= जिक्र, चर्चा, सत्संग, आत्मस्मरण। पेस=पेश, आगे।

**भावार्थ**—जो अपने अहंकार की आदत को खो देता है वही सच्चा फकीर है। अहंकार को मिटाकर अपने आत्मा की शुद्धता करे, तब अपने दिल के अंदर ही आत्मदर्शन पायेगा और तब मानो वह अपने ही भीतर नबी का दर्शन कर लेगा। आत्मा की आवाज ही नबी है। वहां बिना बादल के वर्षा होती है और आकाश के बिना पानी बरसता है। वहां आग के बिना गरमी मिलती है और जबान के बिना वाणी का उच्चारण होता है—आत्म साक्षात्कार हो जाने पर सब प्रकार से आनन्द ही आनन्द हो जाता है। मनुष्य कल्पना में पड़कर शून्य में, किसी अनोखी वस्तु में और संसार में मन दौड़ाता है। वस्तुतः जो सारे उपलब्ध प्रपंच को हर क्षण नष्ट होते देखता है, वह अपने हृदय-काबा में खुदी-खुदा को पा जाता है—आत्मबोध में संतुष्ट हो जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो चिंता को भस्म कर सत्संग एवं आत्मचिंतन में तत्पर रहता है और अपने शारीरिक अभिमान को खो देता है, वह सच्चा फकीर है।

## कुंडलिया-157

**सब कोइ पीवै कूप जल खारी पड़ा समुन्द॥**
**खारी पड़ा समुन्द बड़े सो काम के नाहीं।**
**जैसे बड़ी खजूर पथिक को मिलै न छाँहीं॥**
**भक्त कहावैं बड़े भेष ना खाय को पावैं।**
**पूजैं नाहीं साध बड़े घर की कहवावैं॥**
**खान पियन को नाहिं बचन करकसे सुनावैं।**
**पर्बत बड़े कठोर नजर दूरहि से आवैं॥**
**पलटू सम्पति सूम की खरचै ना इक बुंद।**
**सब कोइ पीवै कूप जल खारी पड़ा समुन्द॥**

**शब्दार्थ**—साध=साधु। करकसे=कठोर, कटु।

**भावार्थ**—सब कोई छोटे कुएं का जल पीते हैं, बड़ा जलाशय समुद्र का जल तो खारा होता है। उसे कोई नहीं पीता। इसलिए केवल बड़ा कहलाने से कोई काम नहीं होता। जैसे खजूर का पेड़ बड़ा होता है, परन्तु पथिक को उसकी छाया नहीं मिलती। कोई बड़ा भक्त कहलाता है, परन्तु उसके घर पर साधुओं को भोजन नहीं मिलता। वे बड़े घरवाले तो कहलाते हैं, परन्तु उनके घर में संतों की सेवा नहीं होती। वे संतों एवं अतिथियों को भोजन-जल तो नहीं देते हैं, प्रत्युत कठोर वचन कहते हैं। पर्वत बहुत बड़े होते हैं। वे दूर से ही दिखाई देते हैं परन्तु वे बड़े कठोर होते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि कंजूस मनुष्य अपनी संपत्ति में से एक छोटा अंश भी नहीं खर्च करना चाहता। विनम्र लोग साधु-संत एवं अतिथियों की सेवा करते हैं, कंजूस नहीं; जैसे कूप का जल सब पीते हैं, खारे समुद्र का जल नहीं।

## कुंडलिया-158

**बढ़ते बढ़ते बढ़ि गये जैसे बढ़ी खजूर॥**
**जैसी बढ़ी खजूर पथिक छाया नहिं पावै।**
**ज्यों ज्यों कै जो फरै ताहि कैसे कोउ खावै॥**
**पात में काँटा रहै छुवत कै लोहू आवै।**
**पेड़ सोऊ बेकाम कुवा को धरन बनावै॥**
**सम्पति में बढ़ि जाय दया बिन भला भिखारी।**
**जातिहु में बढ़ि जाय भक्ति बिन भला चमारी॥**

**पलटू सोभा दोऊ की दया भक्ति से पूर।**
**बढ़ते बढ़ते बढ़ि गये जैसे बढ़ी खजूर॥**

**शब्दार्थ**—फरै= फल लगे। लोहू= रक्त।

**भावार्थ**—संपत्ति और प्रभुता बढ़ते-बढ़ते बहुत बढ़ गयी जैसे खजूर का पेड़, परंतु खजूर के पेड़ की छाया पथिक के काम नहीं आती है। उसमें फल भी लगे, तो उसको कोई कैसे खाने को पावे। उसके पत्ते भी धारदार होते हैं। छू जाने पर शरीर से रक्त निकल आता है। अतएव खजूर का पेड़ निरर्थक होता है। हां, उसे काटकर कुआं की धरन बना ली जाती है, जिस पर पैर रखकर लोग कुआं से पानी भरते हैं। संपत्ति बहुत बढ़ गयी, परन्तु दया न होने से उससे अच्छा भिक्षु है। कोई जाति-वर्ण में ऊंचा कहलाये, किन्तु भक्तिहीन है, तो उससे अच्छा भक्त चमार है। पलटू साहेब कहते हैं कि ऊंच-नीच कहलाने वाले सभी मनुष्यों की शोभा है, दया और भक्ति में पूर्ण रहना। खजूर की तरह बड़ा होने से क्या हुआ, जब मनुष्यता नहीं है।

## 18. रहस्य बोध

कुंडलिया-159

**उलटा कूवा गगन में तिस में जरै चिराग॥**
**तिस में जरै चिराग बिना रोगन बिन बाती।**
**छः रितु बारह मास रहत जरतै दिन राती॥**
**सतगुरु मिला जो होय ताहि की नजर में आवै।**
**बिना सतगुरु कोउ होय नहीं वाको दरसावै॥**
**निकसै एक अबाज चिराग की जोतिहिं माहीं।**
**ज्ञान समाधी सुनै और कोउ सुनता नाहीं॥**
**पलटू जो कोई सुनै ताके पूरे भाग।**
**उलटा कूवा गगन में तिस में जरै चिराग॥**

**शब्दार्थ**—रोगन= तेल।

**भावार्थ**—शरीर उलटा कुआं है। इसमें ज्ञान का दीपक जलता है जो बिना तेल और बिना बत्ती के है। यह छह ऋतुओं और बारहों महीने रात-दिन जलता है। जिसको आत्मबोध देने वाले सद्गुरु मिल जाते हैं, उसी को स्वरूपज्ञान होता है। बिना बोधवान सद्गुरु का उपदेश पाये कोई आत्मज्ञान नहीं पा सकता। इस ज्ञान-प्रकाश से एक आवाज निकलती है वह है आत्म-

अनुभव। जो आत्मज्ञान की समाधि में स्थित है, वही उसे सुनता है, अन्य बहिर्मुख व्यक्ति उसका अनुभव नहीं कर सकता। पलटू साहेब कहते हैं कि जो आत्म-अनुभव की आवाज सुनता है, वह पूर्ण भाग्यशाली है। इस उलटे कुएं शरीर में ज्ञान का दीपक जलता है।

**विशेष**—सिर में ज्योति और नाद भी अर्थ हो सकता है। परन्तु वह क्रियायोग तक ही सीमित है जो आरंभिक साधना मात्र है। अंतिम तथ्य है स्वरूपज्ञान और स्वरूपस्थितिजनित अनंत आत्मिक शांति। आत्मज्ञान ही दीपक है और समाधिजनित कैवल्य का अनुभव ही आवाज है।

## कुंडलिया-160

**चढ़ै चौमहले महल पर कुंजी आवै हाथ॥**
**कुंजी आवै हाथ सब्द का खोलै ताला।**
**सात महल के बाद मिलै अठएँ उँजियाला॥**
**बिनु कर बाजै तार नाद बिनु रसना गावै।**
**महा दीप इक बरै दीप में जाय समावै॥**
**दिन दिन लागै रंग सफाई दिल की अपने।**
**रस रस मतलब करै सिताबी करै न सपने॥**
**पलटू मालिक तुही है कोई न दूजा साथ।**
**चढ़ै चौमहले महल पर कुंजी आवै हाथ॥**

**शब्दार्थ**—रस रस= धीरे-धीरे। मतलब= उद्देश्य। करै= साधे। सिताबी= शिताबी, शीघ्रता, जल्दीबाजी।

**भावार्थ**—मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार से ऊपर अपने आत्मा के महल पर चढ़ जाय, तब शाश्वत शांति रूपी खजाने की चाबी हाथ लगेगी। फिर निर्णय शब्दों का ताला खोले। आंख, नाक, कान, जीभ, चाम, मन तथा बुद्धि इन सात तलों के ऊपर अपने आत्मज्ञान में पहुंचने पर यथार्थ ज्ञान का प्रकाश मिलता है। वहां बिना हाथ के तार बजता है, बिना जीभ के गायन होता है। वहां आत्मज्ञान का महा दीपक जलता है। साधक अपने उस महा ज्ञान स्वरूप में स्थित हो जाता है। स्वरूपस्थिति की निरंतर साधना होने से दिनोदिन आत्मशांति की गहराई बढ़ती है और अंतःकरण उत्तरोत्तर निर्मल होता जाता है। साधक को चाहिए कि वह इस साधना में धीरे-धीरे आगे बढ़े। स्वप्न में भी जल्दीबाजी न करे। पलटू साहेब कहते हैं कि हे साधक! तू ही

अपना स्वामी है। तेरे साथ अन्य कोई नहीं है। जब मनुष्य चतुष्ट्य अंत:करण से ऊपर उठकर आत्मलीन हो जाता है, तब शाश्वत शांति-खजाने की चाबी मिलती है।

**विशेष**—चौमहले तथा सात महल के ऊपर अठवें महल का अर्थ अन्य भी हो सकता है। संख्यावाचक कथन तथा रहस्यात्मक कथन के अर्थ भिन्न-भिन्न किये जाते हैं, किन्तु संदर्भ के अनुसार अर्थ होना चाहिए। इस कुंडलिया का सार तो इतने ही में है— "पलटू मालिक तुही है, कोई न दूजा साथ॥"

## कुंडलिया-161

**चाँद सुरज पानी पवन नहीं दिवस नहिं रात॥**<br>
**नहीं दिवस नहिं रात नहीं उतपति संसारा।**<br>
**ब्रह्मा बिस्नु महेश नाहिं तब किया पसारा॥**<br>
**आदि जोति बैकुंठ सुन्य नाहीं कैलासा।**<br>
**सेस कमठ दिग्पाल नाहिं धरती आकासा॥**<br>
**लोक बेद पलटू नहीं कहौं मैं तबकी बात।**<br>
**चाँद सुरज पानी पवन नहीं दिवस नहिं रात॥**

**शब्दार्थ**—सेस= शेषनाग। कमठ= कच्छप।

**भावार्थ**—जब चांद, सूरज, पानी, पवन, दिन, रात, संसार की उत्पत्ति, ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा उनका कार्य विस्तार आदि ज्योति, बैकुंठ, शून्य, कैलाश, शेष, कच्छप, दिग्पाल, धरती, आकाश, लोक, वेद कुछ नहीं था, पलटू साहेब कहते हैं कि मैं उस समय की बात कहता हूं।

**विशेष**—वस्तुत: दृश्य-प्रपंच जगत तो अनादि-अनंत सब समय है किन्तु वह द्रष्टा चेतन के स्वरूप में तीनों काल में नहीं है। संत उसी स्वस्वरूप की बात कहते हैं और स्वरूपभाव में निरंतर रहते हैं। दृश्य-अभाव की साधना ही मोक्षप्रद है।

## कुंडलिया-162

**बिनु कागद बिनु अच्छरे बिनु मसि से लिखि देय॥**<br>
**बिनु मसि से लिखि देय सोई पंडित कहवावै।**<br>
**बिनु रसना कहै बेद अकथ की कथा सुनावै॥**

**छुटी बात अस्थूल सूछम में मिला ठिकाना।**
**फिर पोथी क्या पढ़ै अच्छर में आप समाना॥**
**निःअच्छर अब मिला अच्छर को क्या ले करना।**
**हीरा लगा हाथ पोत की कौन सरहना॥**
**पलटू पंडित सोई है कलम हाथ नहिं लेय।**
**बिनु कागद बिनु अच्छरे बिनु मसि से लिखि देय॥**

**शब्दार्थ**—मसि= स्याही। अक्षर= अविनाशी आत्मा। निःअक्षर= वर्ण-मात्रा से परे आत्मा। अच्छर= वर्ण-मात्रात्मक शब्द। पोत= कांच का टुकड़ा। सरहना= सराहना, प्रशंसा।

**भावार्थ**—वही प्रशंसनीय पंडित है जो बिना कागज, कलम, स्याही और अक्षर के लिख दे। बिना जीभ के वेद पाठ करे और कथन में न आने वाले आत्मज्ञान की कथा सुनावै। उच्च संत की अस्थूल बातें छूट जाती हैं। वह सूक्ष्म आत्मस्वरूप में स्थित हो जाता है। जब अक्षरों के उपदेश के सार रूप में अविनाशी स्वस्वरूप में निरंतर स्थिति है, तब फिर पोथी को क्या पढ़े! जब वर्ण-मात्रा के ऊपर स्वरूप-अनुभव में डूबा है, तब अक्षर-मात्रा की गांठ-जोड़ को लेकर क्या करना! जब हीरा मिल गया तब कांच के टुकड़े की क्या प्रशंसा रही? पलटू साहेब कहते हैं कि सच्चा पंडित वही है जो हाथ में लेखनी न पकड़े और बिना कलम, कागज, स्याही और वर्ण-मात्रा के लिख दे।

**विशेष**—उपर्युक्त कथन का अर्थ यह नहीं है कि लिखने, पढ़ने और पुस्तक का यहां निषेध है। प्रायः सारा कथन सापेक्ष होता है। यहां का सार भाव यह है कि लिख-पढ़ कर जो अंतिम काम करना है, वह है दृश्य अभाव। चित्त एवं मन दृश्य है। जब इसका अभाव कर दिया तो सारे जड़ दृश्य का अभाव हो गया। तब वहां पोथी कहां है! परंतु इस उच्चतम स्थिति तक पहुंचने के लिए पोथी पढ़ने की आवश्यकता होती है और जीवनपर्यन्त उसका आधार लिये रहना साधक का कर्तव्य है। परन्तु साधक ध्यान रखे कि दृश्य-अभाव हुए बिना परम शांति एवं मोक्ष नहीं मिल सकता।

## कुंडलिया-163

**झंडा गड़ा है जाय के हद बेहद के पार॥**
**हद बेहद के पार तूर जहँ अनहद बाजै।**
**जगमग जोति जड़ाव सीस पर छत्र बिराजै॥**

**मन बुधि चित रहे हार नहीं कोउ वह घर पावै।**
**सुरत सब्द रहै पार बीच से सब फिरि आवै॥**
**बेद पुरान की गम्म सकै ना उहवाँ जाई।**
**तीन लोक के पार तहाँ रोसन रोसनाई॥**
**पलटू ज्ञान के परे है तकिया तहाँ हमार।**
**झंडा गड़ा है जाय के हद बेहद के पार॥**

**शब्दार्थ**—हद=सीमा, गृहस्थी मर्यादा। बेहद=सीमातीत, विरक्ति मर्यादा। पार=इन दोनों के पार गुणातीत दशा। तूर=बाजा। अनहद=आत्म-अनुभव। जड़ाव=जमाया हुआ। तकिया=विश्राम स्थल, आश्रय।

**भावार्थ**—मेरा झंडा हद और बेहद के पार गड़ा है। गृहस्थी-मर्यादा और विरक्ति वेष-मर्यादा के परे गुणातीत दशा में मैं स्थित हूं। वहां निरंतर आत्म-अनुभव का बाजा बजता है। वहां आत्मज्ञान का ज्योतित प्रकाश है और मेरे सिर पर निष्काम दशा रूप बादशाहत का राज-छत्र विराजता है। मन, बुद्धि, चित्त आदि थककर शांत हो जाते हैं। वे वहां नहीं पहुंचते। मनोवृत्ति और शब्द से स्वरूपस्थिति परे है। सारा मानस जगत बीच से ही लौट आता है। वहां वेद और पुराण की भी पहुंच नहीं होती। स्वरूपस्थिति संपूर्ण जगतप्रपंच से परे है। वहां केवल आत्मज्ञान का प्रकाश है जो स्वयं ज्योतित है। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा विश्राम स्थल ज्ञान से परे है जो हद-बेहद से पार है।

**विशेष**—जगत-ज्ञान जहां शांत हो जाता है, वहां हमारा तकिया है, विश्राम-स्थल है। दृश्य-अभाव का स्थान स्वरूपस्थिति है।

## कुंडलिया-164

**जागत में एक सूपना मोहिं पड़ा है देख॥**
**मोहिं पड़ा है देख नदी इक बड़ी है गहिरी।**
**तामें धारा तीन बीच में सहर बिलौरी॥**
**महल एक अँधियार बरै तहँ गैब की बाती।**
**पुरुष एक तहँ रहै देखि छबि वाकी माती॥**
**पुरुष अलापै तान सुना मैं एक ठो जाई।**
**वाहि तान के सुनत तान में गई समाई॥**
**पलटू पुरुष पुरान वह रंग रूप नहि रेख।**
**जागत में एक सूपना मोहिं पड़ा है देख॥**

**शब्दार्थ**—बिलौरी= बिल्लौर का; बिल्लौर= पारदर्शक पत्थर, स्फटिक पत्थर, स्वच्छ शीशा। गैब= अदृश्य।

**भावार्थ**—मैंने जागते-जागते एक स्वप्न देखा कि एक गहरी नदी बह रही है। उसकी तीन धाराएं हैं और उसके बीच एक शहर बसा है जो स्फटिक पत्थरों से बना है। वहां अंधकार में डूबा एक भवन है, जिसमें अदृश्य की ज्योति जल रही है। वहां एक चेतन पुरुष है, उसका सौंदर्य देखकर मेरी मनोवृत्ति मतवाली हो गयी। वह पुरुष संगीत का आलाप कर रहा था। मैंने एकाग्र होकर उसको सुना। उसको सुनते ही मेरी मनोवृत्ति उसी संगीत में डूब गयी। पलटू साहेब कहते हैं कि वह पुरुष पुराना है, शाश्वत है। उसके रंग-रूप नहीं हैं। वह अदृश्य चेतन है। इस प्रकार जागते-जागते मैंने एक सपना देखा।

**विशेष**—संसार एक गहरी नदी है। इसमें सत, रज तथा तम गुण की तीन धाराएं बह रही हैं। इस संसार-नदी के बीच में मेरा शरीर पारदर्शी पत्थरों का एक शहर है। इसमें एक हृदय-भवन है, जो अज्ञान-अंधकार में डूबा है। परंतु इसमें एक अदृश्य ज्योति जीवात्मा ज्योतित है। यही चेतन पुरुष है। उसका सौंदर्य कैवल्य एवं प्रपंचशून्यता है। मेरी मनोवृत्ति मस्त होकर उसमें डूब गयी। उस चेतन का तान-संगीत कैवल्य ही है। जिसमें मेरी मनोवृत्ति डूब गयी है। वह चेतन, मेरा आत्मस्वरूप और भौतिक रूप-रंग-रहित शुद्ध मात्र शाश्वत है।

### कुंडलिया-165

**खसम बिचारा मरि गया जोरू गावै तान॥**
**जोरू गावै तान फिरा अहिबात हमारा।**
**झूठ सकल संसार माँग भरि सेंदुर धारा॥**
**हम पतिबरता नारि खसम को जियतै मारी।**
**वाको मूड़ौं मूड़ सरबर जो करै हमारी॥**
**दुतिया गइ है भागि सुनौ अब राँध परोसिन।**
**पिया मरे आराम मिला सुख मोकहँ दिन दिन॥**
**पलटू ऐसे पद कँहै बूझै सोइ निरबान।**
**खसम बिचारा मरि गया जोरू गावै तान॥**

**शब्दार्थ**—खसम= स्वामी, पति ! बिचारा= बेचारा, दीन, गरीब, लाचार। अहिबात= सुहाग। सरबर= सरवर, बराबरी।

**भावार्थ**—नकली पति अहंकार था। वह बेचारा आत्मज्ञान होने पर मर गया। अब मनोवृत्ति रूपी पत्नी बड़े तान से आलाप कर आनंद का गीत गाती है और कहती है कि अब मेरा असली पति आत्मा मिल गया, इसलिए मेरा शाश्वत सुहाग लौट आया। सारा संसार झूठा है, दो दिन का मेला है। अब आत्म-पति मिल जाने पर मैंने सुहाग का शृंगार मांग भर सेंदुर लगाया। मैं आत्मा रूपी पति की अनन्य पतिव्रता पत्नी हूं। मैंने नकली पति अहंकार को, जो बड़ा जीवंत लगता था, उछलता-कूदता था, मार डाला। यदि कोई मेरा सामना करेगा, तो उसका मूड़ मूड़ाकर उसे भी अपना गुलाम बना लूंगी। ऐ आस-पास के लोगो ! सुनो, अब द्वैत भाग गया, माया लुप्त हो गयी। अब तो असंग आत्मा का राज्य हो गया। अहंकार रूपी नकली पति के मरने पर मुझे शांति मिल गयी। अब आगे दिन-दिन मेरा सुख बढ़ता जा रहा है। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरे ऐसे कहे हुए पद को जो समझकर उसका आचरण करेगा, वह परम शांति पायेगा। अहंकार के मर जाने पर मनोवृत्ति आनन्दमय हो गयी।

## कुंडलिया-166

**खसम मुवा तौ भल भया सिर की गई बलाय॥**
**सिर की गई बलाय बहुत सुख हम ने माना।**
**लागे मंगल होन बजन लागे सदियाना॥**
**दीपक बरै अकास महल पर सेज बिछाया।**
**सूतौं महीं अकेल खबर जब मुए की पाया॥**
**सूतौं पाँव पसारि भरम की डोरी टूटी।**
**मने कौन अब करै खसम बिनु दुबिधा छूटी॥**
**पलटू सोई सुहागिनी जियतै पिय को खाय।**
**खसम मुवा तौ भल भया सिर की गई बलाय॥**

**शब्दार्थ**—बलाय= बला, आफत, विपत्ति। सदियाना= प्रसन्नता का बाजा।

**भावार्थ**—(विवेकवती मनोवृत्ति कहती है कि) अहंकार-पति मर गया तो अच्छा हुआ, सिर की विपत्ति दूर हो गयी। मुझे बड़ा सुख मिला। अब तो जीवन में मंगल गीत होने लगा और प्रसन्नता का बाजा बजने लगा। अब मेरे चित्ताकाश में विवेक की ज्योति जल गयी और हृदय-महल में शांति की शय्या बिछ गयी। जब मैं समझ पायी कि अहंकार-पति मर गया तब शांति की शय्या पर मैं अकेली पांव पसार कर निश्चिंत सोती हूं क्योंकि अब बाहर

से कुछ पाने के भ्रम की डोरी कट गयी। अहंकार के मिट जाने पर परोक्ष की दुविधा छूट गयी, तो शांति से रहने में कौन अवरोध करेगा? पलटू साहेब कहते हैं कि वही मनोवृत्ति आत्म-पति को पाकर शाश्वत सुहागिन हो जाती है जो जीवित (बढ़े-चढ़े) अहंकार-पति को खा जाती है। अहंकार मर गया तो अच्छा हुआ, सिर की विपत्ति टल गयी।

## 19. मन-माया का रहस्य

कुंडलिया-167

**मन मारे मरता नहीं कीन्हे कोटि उपाय॥**
**कीन्हे कोटि उपाय नहीं कोइ मन की जानै।**
**मन के मन में और कोई जनि मन की मानै॥**
**हाड़ चाम नहिं मास नहीं कछु रूप न रेखा।**
**कैसे लागै हाथ नहीं कोउ मन को देखा॥**
**छिन में कथै बैराग छिनै में होवै राजा।**
**छिन में रोवै हँसै छिनै में आपु बिराजा॥**
**पलटू पलकै भरे में लाख कोस पर जाय।**
**मन मारे मरता नहीं कीन्हे कोटि उपाय॥**

**शब्दार्थ**—आपु बिराजा= स्वयं सर्वेसर्वा बन बैठता है।

**भावार्थ**—करोड़ों उपाय करके मारो, मन मारने से नहीं मरता। कोई मन का भेद समझ नहीं पाता है। मन के मन में तो कुछ अन्य ही बात है। इसलिए कोई साधक मन के भुलावा में न पड़े। मन के न हाड़ है, न चाम है, न मांस है और न उसकी रूपरेखा है। आज तक कोई मन को आंखों से देखा नहीं है, तो वह कैसे पकड़ में आवे? यह मन क्षण में वैराग्य की बात करता है और क्षण में राजा-महाराजा बनता है। यह क्षण में दुखी होकर रोता है, क्षण में प्रसन्न होकर हंसता है और क्षण में स्वयं सर्वेसर्वा होकर विराजता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मन क्षण में लाख कोस उड़ जाता है। यह करोड़ों उपाय करके मारने पर भी नहीं मरता है।

**विशेष**—मन से अपनी सत्ता समेट लेने पर वह मरता है। संकल्पों का त्याग मन को मारने का साधन है। मन कोई स्वतंत्र द्रव्य नहीं है। जब जीव अपनी सत्ता मन से खींच लेता है तब वह मर जाता है, क्योंकि मन मान्यता मात्र है।

## कुंडलिया-168

**माया ठगनी जग ठगा इकहै ठगा न कोय॥**
**इकहै ठगा न कोय लिये है तिर्गुन गाँसी।**
**सुर नर मुनि देय डिगाय करै यह सब की हाँसी॥**
**इंद्रहु को यह ठगा ठगा दुर्बासै जाई।**
**नारद मुनि को ठगा चली ना कछु चतुराई॥**
**सिवसंकर को ठगा बड़े जो नेजाधारी।**
**सिंगी ऋषी जवान बीछ कै बन में मारी॥**
**पलटू इह को सो ठगा जो साचा भक्त होय।**
**माया ठगनी जग ठगा इकहै ठगा न कोय॥**

**शब्दार्थ**—इकहै=इसको, माया को। नेजा=भाला, बरछा। बीछकै= छांटकर, चुनकर।

**भावार्थ**—माया ठगिनी ने जगत के लोगों को ठग लिया, परंतु इसको कोई नहीं ठग पाया। यह माया सत, रज, तम रूपी त्रिगुण का फंदा लेकर सबको फंसाती है। यह सुर, नर, मुनि आदि सबको विचलित कर देती है और सबकी हंसी करवा देती है। इसने इंद्र को ठगा, दुर्वासा को ठगा और नारद मुनि को ठगा। इन सबकी बुद्धिमानी माया के सामने नहीं चली। महादेव जी जो अस्त्र-शस्त्र के बड़े मालिक थे, उनको भी माया ने ठगा। ऋष्य शृंग एक युवक वनवासी साधक थे। माया ने उन्हें वन में जाकर और चुनकर मार गिराया। पलटू साहेब कहते हैं कि इस माया को उसने ठगा जो सद्‌गुरु का सच्चा भक्त हुआ। अन्यथा माया ठगिनी ने सबको वश में कर लिया, किन्तु माया को कोई वश में नहीं कर पाया।

**विशेष**—सद्‌गुरु का सच्चा विनम्र सेवक मन-माया को जीत पाता है। शेष अहंकारी तथाकथित भक्त, ज्ञानी माया के जाल में फंस जाते हैं।

## कुंडलिया-169

**माया बड़ी बहादुरी लूटि लिहा संसार॥**
**लूटि लिहा संसार केहू को मानै नाहीं।**
**तनिक उजुर जो करै ताहि को कच्चा खाही॥**
**कहूँ कनक कहुँ कामिनि सुन्दर भेष बनावै।**
**ताकै जेकरी ओर नजर से मारि गिरावै॥**

**जोगी जती औ तपी गुफा से पकरि मँगावै।**
**बचै न कोऊ भागि दुपहरै लूटा जावै॥**
**पलटू डरपै संत से वे मारैं पैजार।**
**माया बड़ी बहादुरी लूटि लिहा संसार॥**

**शब्दार्थ**—उजुर= उज्र, आपत्ति, विरोध। पैजार= पैज़ार, जूता।

**भावार्थ**—माया बड़ी वीर है। यह संसार के लोगों को लूटती है। यह किसी का डर नहीं मानती। जो मनुष्य इसके सामने थोड़ा भी विरोध करता है, उसको यह कच्चा खा जाती है। यह माया कहीं धन-संपत्ति का और कहीं कामिनी का सुंदर वेष बनाती है। यह जिसकी तरफ अपनी दृष्टि घुमाती है, उसी को मार गिराती है। कितने योगी, त्यागी और तपस्वी को जो गुफा में बैठे योग एवं तप कर रहे हैं, उन्हें वहां से पकड़कर खींच लाती है और मोह में पटक देती है। कोई भागकर बच नहीं पाता। सब इस मानव शरीर रूपी ज्ञान के उजाले में लूटे जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि माया संत से डरती है, क्योंकि वे इसे जूते मारते हैं। माया बड़ी बलवान है। इसने सबको लूट लिया।

**विशेष**—काव्य में माया का व्यक्तिकरण हो गया है। माया कोई जानदार प्राणी नहीं है जो स्वतंत्र होकर किसी को बंधन दे। वस्तुतः हमारे मन का मोह ही माया है, जो हमें बांधता है। मोह को त्याग देने वाला माया से मुक्त है।

## कुंडलिया-170

**माया की चक्की चलै पीसि गया संसार॥**
**पीसि गया संसार बचै ना लाख बचावै।**
**दोऊ पट के बीच कोऊ ना साबित जावै॥**
**काम क्रोध मद लोभ चक्की के पीसनहारे।**
**तिरगुन डारै झीक पकरि कै सबै निकारे॥**
**दुरमति बड़ी सयानि सानि कै रोटी पोवै।**
**करम तवा में धारि सेंकि कै साबित होवै॥**
**तृस्ना बड़ी छिनारि जाइ उन सब घर घाला।**
**काल बड़ा बरियार किया उन एक निवाला॥**

**पलटू हरि के भजन बिनु कोऊ न उतरै पार।**
**माया की चक्की चलै पीसि गया संसार॥**

**शब्दार्थ**—झीक= झींका, अन्न की वह मात्रा जो पीसने के लिए चक्की में एक बार डाली जाय। निवाला= ग्रास।

**भावार्थ**—माया की चक्की चलती है जिसमें संसार के सारे प्राणी पिसते हैं। लाख बचाने पर भी लोग नहीं बचते। माया की चक्की के दो पाट हैं प्रत्यक्ष और परोक्ष—स्थूल भोग और मन की कल्पनाएं। इन दोनों पाटों के बीच में सब पिसते हैं। इनसे कोई बाहर नहीं जा पाता है। काम, क्रोध, मद, लोभ आदि मनोविकार चक्की के पीसने वाले हैं। त्रिगुण झींका डालते हैं। वे सबको पकड़कर निकाल लेते हैं और चक्की में डालकर उन्हें पीस देते हैं। दुर्बुद्धि बड़ी बलवान है। वह सब पिसे हुए को सानकर उसकी रोटी बनाती है और राग-द्वेषात्मक कर्म-तवा पर सेंककर पूरा तैयार करती है। तृष्णा बड़ी भ्रष्ट है। इसने सबका पतन किया है। काल बड़ा बलवान है। वह सबको एक ग्रास में खा जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि हरि-भजन के बिना कोई जीव माया-सागर से पार नहीं जा सकता। इस माया की चलती चक्की में सब जीव पिसते हैं।

**विशेष**—हरिभजन है आत्म-स्मरण, आत्मविश्वास, आत्मसंयम। इसके बिना कोई माया से नहीं उबर सकता।

## कुंडलिया-171

**नागिनि पैदा करत है आपुइ नागिनि खाय॥**
**आपुइ नागिनि खाय नागिनि से कोउ न बाचे।**
**नेजाधारी सम्भु नागिनि के आगे नाचे॥**
**सिंगी ऋषि को जाय नागिनि ने बन में खाई।**
**नारद आगे पड़े लहर उनहूँ को आई॥**
**सुन नर मुनि गनदेव सभन को नागिनि लीलै।**
**जोगी जती औ तपी नहीं काहू को ढीलै॥**
**संत बिबेकी गरुड़ हैं पलटू देखि डेराय।**
**नागिनि पैदा करत है आपुइ नागिनि खाय॥**

**शब्दार्थ**—नेजाधारी= भालाधारी, अस्त्र-शस्त्रधारी। ढीलै= छोड़े।

**भावार्थ**—सर्पिणी अपने पैदा किये हुए बच्चों को स्वयं खा जाती है, वैसे यह माया अपने पैदा किये हुए प्राणियों को खाती है। इस सर्पिणी से कोई नहीं बचता। अस्त्र-शस्त्रधारी महादेव बड़े वीर बनते थे किन्तु वे माया-नागिनि के सामने नाचते रहे। इस माया-नागिनि ने वन में जाकर ऋष्य शृंग को खा लिया। नारद माया की लहर के सामने पड़ गये इसलिए वे भी उसमें बह गये। सुर, नर, मुनि तथा देवगण सबको माया-नागिनि खा जाती है। वह योगी, त्यागी और तपस्वी किसी को नहीं छोड़ती है। पलटू साहेब कहते हैं कि विवेकी संत गरुड हैं, उनको देखकर माया भयभीत हो जाती है। यह माया-सर्पिणी अपने पैदा किये हुए को खा जाती है।

## कुंडलिया-172

**कुसल कहाँ से पाइये नागिनि के परसंग॥**
**नागिनि के परसंग जीव कै भच्छक सोई।**
**पहरू कीजै चोर कुसल कहवाँ से होई॥**
**रुई के घर बीच तहाँ पावक लै राखै।**
**बालक आगे जहर राखि करिके वा चाखै॥**
**कनक धार जो होय ताहि ना अंग लगावै।**
**खाया चाहै खीर गाँव में सेर बसावै॥**
**पलटू माया से डेरै करै भजन में भंग।**
**कुसल कहाँ से पाइये नागिनि के परसंग॥**

**शब्दार्थ**—परसंग= संग, आसक्ति। कनक धार= अत्यंत मोहक।

**भावार्थ**—माया-नागिनि की आसक्ति और संगत करके जीव का कल्याण कहां होगा? वह तो जीव के कल्याण का नाशक है। यदि चोर को ही पहरेदार बनाया जाय तो कहां कुशल होगा? रुई के गोदाम में आग जलाने से रुई की सुरक्षा कैसे होगी? अबोध बालक के सामने विष रख दिया जाय तो वह उसे खायेगा ही। अतएव यह माया चाहे जितनी चमक-दमक से मिले इसको अपने अंग न छूने दे। गांव में खुला शेर रखकर मनुष्य कैसे सुख से रह सकता है? पलटू साहेब कहते हैं कि माया भजन-भंग करती है, इसलिए इससे डरकर दूर रहना चाहिए। नागिन से सम्बन्ध करके कहां कुशल है?

## कुंडलिया-173

**पूरब पच्छिम उत्तर दक्खिन देखा चारिउ खूँट॥**
**देखा चारिउ खूँट माया से बचै न कोई।**
**राजा रंक फकीर माया के बसि में होई॥**
**सब को बसि में करै जगत को माया जीती।**
**आपु न बसि में होय रहै वह सब से रीती॥**
**हरि को देइ भुलाय अमल वह अपना करती।**
**ऐसी है वह नारि खसम को नाहीं डेरती॥**
**पलटू सब संसार को माया लीन्हों लूट।**
**पूरब पच्छिम उत्तर दक्खिन देखा चारिउ खूँट॥**

**शब्दार्थ**—खूँट=कोना। रीती=खाली, पकड़ के बाहर। अमल= अधिकार, शासन। खसम=पति, आत्मा।

**भावार्थ**—पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण चारों कोनों में देख लिया। चाहे राजा हो और चाहे दरिद्र, माया से कोई बचता नहीं है। माया सबको अपने वश में कर लेती है और सबको जीत लेती है। माया स्वयं किसी के वश में नहीं रहती है। वह पकड़ के बाहर रहती है। माया अपना अधिकार जमाकर आत्मज्ञान का विस्मरण करा देती है। यह माया नारी ऐसी ढीठ है कि यह आत्मा-पति को नहीं डरती है। पलटू साहेब कहते हैं कि माया ने सारे संसार को लूट लिया। मैंने इसे सभी दिशाओं के कोनों में देख लिया है।

## कुंडलिया-174

**मन माया छोड़ै नहीं बझै आपु से जाय॥**
**बझै आपु से जाय गही ज्यों मरकट मूठी।**
**ज्यों नलनी का सुआ बात सब ऐसी झूठी॥**
**छोड़ै नाहीं आपु भरम में पड़ा गँवारा।**
**खैंचि लेय जो हाथ कोऊ ना पकड़नहारा॥**
**जिव लै बचै तो भागु भूलि गइ सब चतुराई।**
**रोवन लागै पूत काल ने पकरा आई॥**
**पलटू आसा बधिक है लालच बुरी बलाय।**
**मन माया छोड़ै नहीं बझै आपु से जाय॥**

**शब्दार्थ**—नलनी= ललनी, सुगा फंसाने की चरखी।

**भावार्थ**—मनुष्य का मन माया को छोड़ता नहीं है। वह स्वयं प्रलोभन-वश जाकर माया में फंस जाता है। जैसे बंदर चना के लोभ से सुराही में हाथ डालकर मुट्ठी में चना लेता है। बंद मुट्ठी सुराही से निकलती नहीं और चना के लोभ से वह मुट्ठी खोलता नहीं। फलतः वह कलंदर के हाथों पकड़ा जाता है। जैसे चरखी में लगे हुए मिरचे को खाने के लिए सुगा चरखी पर बैठता है और उसमें फंस जाता है, वैसे मनुष्य प्रलोभन में पड़कर माया में स्वयं फंसता है। मूर्ख मनुष्य समझता है कि माया ने मुझे पकड़ लिया है, किन्तु यह उसका भ्रम है। वस्तुतः मनुष्य ने स्वयं अपनी भूल से माया को पकड़ रखा है। यदि मनुष्य अपना हाथ माया-मोह से खींच ले तो इसको कोई पकड़ने वाला नहीं है। यदि तुम अपने जीव को माया-मोह से छुड़ाना चाहते हो, तो उससे भागो, अन्यथा तुम्हारी सारी बुद्धिमानी मिट्टी में मिल जायगी। जब मौत आ जायगी तब मनुष्य को केवल रोना रहेगा। पलटू साहब कहते हैं कि भोगों की आशा हत्यारिनी है और लालच भयंकर विपत्ति है। मनुष्य स्वयं अपनी भूल से माया में फंसता है।

## 20. अज्ञानदशा

### कुंडलिया-175

**घर में जिंदा छोड़ि कै मुरदा पूजन जायँ॥**
**मुरदा पूजन जायँ भीति को सिरदा नावैं।**
**पान फूल और खाँड़ जाइ कै तुरत चढ़ावैं॥**
**ताल कि माटी आनि ऊँच के बाँधिनि चौरी।**
**लीपि पोति के धरिनि पूरी औ बरा कचौरी॥**
**पीयर लूगा पहिरि जाय कै बैठिनि बूढ़ा।**
**भरमि भरमि अभुवाइँ माँगत हैं खसी कै मूँड़ा॥**
**पलटू सब घर बाँटि कै लै लै बैठे खायँ।**
**घर में जिंदा छोड़ि कै मुरदा पूजन जायँ॥**

**शब्दार्थ**—भीति= दीवार। सिरदा= सिजदा, प्रणाम, नमस्कार। चौरी= देवपिंड। लूगा= साड़ी। खसी= बकरा।

**भावार्थ**—अपने घर के लोग जीते-जागते देवता हैं। उनकी पूजा एवं सत्कार करना छोड़कर काष्ठ-पत्थर, धातु आदि से बने जड़ पिंडों

को देवता मानकर उनकी पूजा करने जाते हैं। मुसलमान मस्जिद में जाकर नमाज पढ़ते हैं और जहां वे नमस्कार करते हैं वह जड़ दीवार रहती है। हिन्दू जड़ पिंडों को देवता मानकर उनके सामने पत्ते, फूल और मिष्ठान्न चढ़ाते हैं। लोग तालाब से मिट्टी लाकर ऊंचा चौरा या चौरी बांधते हैं और उसको लीप-पोत कर देवी-देवता बनाते हैं फिर उसके सामने पूड़ी, कचौड़ी तथा बरा चढ़ाते हैं। पीली साड़ी पहनकर घर की बूढ़ा वहां जाकर बैठ गयीं और भ्रमित होकर अभुवाने लगीं-सिर हिला-हिलाकर झूमने लगीं और कहने लगीं कि मैं अमुक देवी या देवता हूं। मेरे नाम पर बकरा का सिर काट कर चढ़ाओ। इसके बाद परिवार के सभी लोग उस बकरे के मांस को प्रसाद मानकर पकाकर खाते हैं। ऐसे लोग भटके हुए हैं जो घर के जीवित देवता परिवार की सेवा छोड़कर मुरदा जड़ देवता पूजने जाते हैं।

### कुंडलिया-176

**जियतै देइ गिरास ना मुये परावै पिंड॥**
**मुये परावै पिंड कौन है खावनहारो।**
**राँध परोसिनि नेवति खवावै ससुरा सारो॥**
**पितरन के मुँह छार धोख दै लेइ बड़ाई।**
**मुए बैल को घास देहु कहु कैसे खाई॥**
**अपने परुसा लेइ पित्र को छोड़ै पानी।**
**करै पित्र से भूत बड़ो मूरख अज्ञानी॥**
**पलटू पुरषा मुक्ति में करत भंड औ भिंड।**
**जियतै देइ गिरास ना मुये परावै पिंड॥**

**शब्दार्थ**—गिरास=ग्रास, कौर। परुसा=परोसा, भोजन परोसा। भंड= भांड, अश्लील व्यवहार।

**भावार्थ**—लोग जीवित पिता-माता को तो आदर से भोजन नहीं देते हैं और उनके मर जाने पर उनके नाम पर पुरोहित से पिंड पड़वाते हैं। वहां भला आटा के पिंड को खाने वाला कौन है? वस्तुतः श्राद्ध के नाम पर पड़ोसी तथा ससुर-साले को बुलाकर खिलाते हैं। यह तो मरे पितरों के उपलक्ष्य में श्राद्ध के नाम पर उनके मुख में धूल ही झोंकना हुआ। यदि मरे हुए बैल के मुंह के सामने घास रखी जाय तो वह कैसे खायेगा? वस्तुतः श्राद्ध के नाम पर

भोजन-पकवान परोस कर स्वयं खाते हैं और मृत पितर के नाम पर केवल पानी उछालते हैं। ऐसे लोग बड़े मूर्ख और अज्ञानी हैं जो अपने पितर को भूत-प्रेत बनाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मृत पितर के नाम पर श्राद्ध करके केवल भांडपन एवं नाटक करना रहता है। इसलिए जीवित माता-पिता की सेवा करना चाहिए। मुये माता-पिता के श्राद्ध के नाम पर भांडपन नहीं करना चाहिए।

## कुंडलिया-177

**पानी काको देइ प्यास से मुवा मुसाफिर॥**
**मुवा मुसाफिर प्यास डोर औ लुटिया पासै।**
**बैठ कुवाँ की जगत जतन बिनु कौन निकासै॥**
**आगे भोजन धरा थारि में खाता नाहीं।**
**भूख भूख करै सोर कौन डारै मुख माहीं॥**
**दीया बाती तेल आगि है नाहिं जरावै।**
**खसम सोया है पास खसम को खोजन जावै॥**
**पलटू डगरा सूध अटकि कै परता गिर गिर।**
**पानी काको देइ प्यास से मुवा मुसाफिर॥**

**शब्दार्थ**—खसम= पति, स्वामी, आत्मा। डगरा= रास्ता, पथ। सूध= सीधा।

**भावार्थ**—तू किसके नाम से पानी उलीचता है? वहां कोई पीने वाला नहीं है। हे यात्री मनुष्य! तू स्वयं प्यास से मर रहा है। तू कुआं के पास बैठा है, परन्तु उद्योग किये बिना कुआं से पानी कौन निकालेगा? थाली में भोजन परोसा सामने रखा है, किन्तु उसको खाता नहीं है। भूखा हूं, भूखा हूं कहकर चिल्लाता है, परन्तु तेरे मुख में भोजन कौन डालेगा? दीपक, तेल, बत्ती तथा आग सब कुछ मौजूद है, परन्तु दीपक जलाता नहीं है। इसी प्रकार आत्मा रूपी परमात्मा तो अपने ही में विद्यमान है, परन्तु लोग भूलवश परमात्मा को अलग खोजने जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि कल्याण का रास्ता सीधा आत्मज्ञान और उसके आचरण में चलना है, परन्तु लोग अज्ञान-वश भ्रम-पथ पर चलकर गिर-गिर पड़ते हैं। यह भूला पथिक स्वयं प्यासा है और दूसरों को पानी देते फिरता है।

कुंडलिया-178

**लहँगा परिगा दाग फूहरि साबुन से धोवै॥**
**फूहरि धोवै दाग छुटै ना और बढ़ावै।**
**ज्यों ज्यों मलै बनाय सारे लहँगा फैलावै॥**
**गाफिल में गइ सोय खसम को दोष लगावै।**
**ऐसी फूहरि नारि आप को नाहिं बचावै॥**
**धोबी को नहिं देइ घरहिं में आपु छुड़ावै।**
**इक बेर दिहिसि निखारि लाज से नाहिं दिखावै॥**
**पलटू परदा खोलि आपनो घर घर रोवै।**
**लहँगा परिगा दाग फूहरि साबुन से धोवै॥**

**शब्दार्थ**—लहँगा= घाघरा, स्त्रियों का कमर से नीचे पैर तक का पहनावा।

**भावार्थ**—लहंगा में दाग लग गया है। बेशऊर स्त्री साबुन से धोती है। उसके जोर लगाकर धोने पर भी दाग नहीं छूटता है। वह जैसे-जैसे जोर से धोती है वैसे-वैसे दाग पूरे लहंगा में फैलता है। वह असावधानी से सोती है और पति को दोष लगाती है। ऐसी बेशऊर नारी है कि अपने आप को सुरक्षित नहीं रख पाती है। वह अपना लहंगा धोबी को धोने के लिए नहीं देती, अपितु अपने घर में ही धोकर उसका दाग छुड़ाना चाहती है। उसने एक बार अपनी समझ से धोकर साफ मान लिया। लज्जा से अपने लहंगा का दाग किसी धोबी को दिखाती नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि यह बेशऊर नारी अपनी मर्यादा खोलकर घर-घर रोती है। इस प्रकार अपने लहंगा के दाग को वह साबुन से धोती है।

**विशेष**—यहां संत श्री पलटू साहेब फूहर, बेशऊर स्त्री का रूपक देकर मनुष्य की भटकी हुई मनोवृत्ति का नक्शा खींचते हैं। मनुष्य की अहंकारी मनोवृत्ति सच्चे सद्गुरु का आधार न लेकर अपनी घमंडी बुद्धि से अपनी पवित्रता और कल्याण चाहती है। मनुष्य अपनी भटकी हुई मनोवृत्ति के कारण घर-घर अपना दुख रोता है, देवी-देवता मानता है, आत्मा रूपी परमात्मा का बोध न होने से ठोकरें खाता है।

कुंडलिया-179

**अंधरन केरि बजार में गया एक डिठियार॥**
**गया एक डिठियार सबै अंधा उठि धाये।**
**अहमक आये आजु सबै मिलि तारी लाये॥**

**डारौ आँखी फोरि रहौ तुम हमरी नाईं।**
**सब अंधरन मिलि अंध अंध वाको ठहराई॥**
**जँहवाँ लाखन अंध एक क्या करै बिचारा।**
**सुनै न वाकी कोऊ तहाँ डिठियारै हारा॥**
**पलटू दास यहि बात को कोऊ न करै बिचार।**
**अंधरन केरि बजार में गया एक डिठियार॥**

**शब्दार्थ**—डिठियार= डिठार, दृष्टिवाला, आंखवाला। अहमक= मूर्ख।

**भावार्थ**—अंधों के बीच में आंख वाला चला गया तो सारे अंधे उसके पास दौड़ आये। उन्होंने सोचा कि आज एक मूर्ख हम लोगों में आ गया है। सब अंधे ताली बजाकर उसका परिहास करने लगे। वे उससे कहने लगे कि तुम अपनी आंखें फोड़कर हम लोगों के समान अंधे बनकर रहो। सब अंधे मिलकर कहने लगे कि यह अंधा है। जहां लाखों अंधे हैं, वहां आंख वाला बेचारा क्या करे! वहां उसकी बात कोई सुनने वाला नहीं है। वहां तो आंख वाला ही हार जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि आंख वाले की बात पर उन अंधों में कोई विचार नहीं करता है। अंधों की भीड़ में आंख वाला अकेला क्या करे !

**विशेष**—विवेकहीनों के बीच में से विवेकवान मौन होकर चल देते हैं। घोर विवेकहीन विवेकवान को ही विवेकहीन बताते हैं। अतएव विवेकवान अपने विवेक में मस्त रहते हैं, अनधिकारी को चेताने नहीं चलते।

## कुंडलिया-180

**सब अँधरन के बीच एक है काना राजा॥**
**काना राजा रहै ताहि कै रैयत आँधा।**
**काना को अगुवाइ एक इक पकरिनि काँधा॥**
**बीच मिला दरियाव अंध को ठाढ़ कराई।**
**लेन गया वह थाह सूँसि लैगा घिसियाई॥**
**साँझ आइ नियरानि अंध सब करैं बिचारा।**
**लाग खान को करन बड़ा सरदार हमारा॥**
**आधी रात के बीच सबै मिलि गौगा लाई।**
**भेड़हा बोला आय चलो इक एक बुलाई॥**

**एक एक तुम चलो नाहिं है बासन दूजा।**
**गरदन धै लै जाय करै ताही की पूजा॥**
**पलटू सबको खाय मगन ह्वै भेड़हा गाजा।**
**सब अँधरन के बीच एक है काना राजा॥**

**शब्दार्थ**—रैयत=प्रजा, रियाया। सूंसि=सूंस, चार-पांच हाथ लंबा जानवर जो नदियों में रहता है, वह जानवरों को पकड़कर खा लेता है। लाग खान को करन=खाने लगा, भोजन करने लगा। गौगा=हल्ला, शोर-शराबा। भेड़हा=भेड़िया, एक शिकारी जानवर। बासन=बरतन। गाजा=गरजा, गर्जना किया।

**भावार्थ**—सब अंधों के बीच में एक काना गया और वह उनमें राजा बनकर बैठ गया। उस काना राजा की पूरी प्रजा अंधी थी। काना राजा को आगे करके सारी अंधी प्रजा एक-दूसरे का कंधा पकड़कर चलने लगी। बीच में नदी मिल गयी। काना राजा सभी अंधों को खड़ाकर नदी की थाह लेने गया, तो एक सूंस या घड़ियाल उसे घसीटकर गहरे पानी में ले गया और उसे खा लिया। देरी हुई, संध्या हो गयी। सब अंधे विचार करने लगे कि हमारा काना राजा, मालूम होता है, भोजन करने लगा। जब आधी रात हो गयी तब सब अंधे हल्ला मचाने लगे। इतने में एक भेड़िया आ गया और उसने कहा कि आप घबरायें नहीं। आपका सरदार भोजन कर रहा है। आप भी एक-एक करके भोजन करने चलें; क्योंकि एक ही थाली है। फलतः भेड़िया एक-एक अंधे को भोजन कराने के बहाने ले जाता और उन्हें खा लेता। पलटू साहेब कहते हैं कि भेड़िया एक-एक को खाकर प्रसन्न होकर गर्जना करने लगा। सब अंधों के बीच काना राजा तथा उसकी अंधी प्रजा की ऐसी दशा हुई।

**विशेष**—विवेकहीन गुरु तथा विवेकहीन चेलों की दशा का चित्रण करते हुए संत पलटू साहेब ने कैसा खाका खींचा है ! वे जो चाहते थे काव्य में बांध देते थे। उनकी अद्भुत शक्ति थी।

## 21. दुष्ट प्रकृति

कुंडलिया-181

**अपकारी जिव जाहिंगे, पलटू अपने आप॥**
**पलटू अपने आप संत का सरल सुभाऊ।**
**सबको मानहिं भला नाहिं कछु करहिं दुराऊ॥**

**लाख दुष्ट जो होइ भला तेहू का मानैं।**
**आपन ऐसा जीव संत जन सब का जानैं॥**
**अपनी करनी जाय होय जो निंदक कोई।**
**आन को गड़हा खनै परैगा आपुहि सोई॥**
**जब देखै वह संत को तब चढ़ि आवै ताप।**
**अपकारी जिव जाहिंगे पलटू अपने आप॥**

**शब्दार्थ**—अपकारी= बुरे कर्म करने वाले। दुराऊ= भेदभाव, कपट। गड़हा= गड्ढा, खाई। ताप= बुखार, क्रोध।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि बुरे कर्म करने वाले स्वयं नीची गति में जायेंगे। सज्जन-संत का स्वभाव सरल होता है। वे सबको अच्छा मानते हैं। किसी से छल-कपट एवं भेदभाव नहीं करते हैं। किसी में लाखों दुष्टता हो, उसमें भी संत केवल उसमें रही हुई अच्छाई पर ही नजर रखते हैं। संतजन अपने आत्मा के समान सबको मानते हैं। यदि कोई सबकी बुराई देखने और कहने वाला होता है, तो वह अपने पापकर्म के परिणाम में स्वयं नीची गति को जाता है। जो दूसरे के लिए रास्ते में खाई खोदता है, वह स्वयं खाई में गिरता है। दुष्ट लोग सज्जन-संत को देखकर क्रोध में जल उठते हैं; किन्तु ऐसे लोग अपनी करनी का फल स्वयं पाते हैं।

## कुंडलिया-182

**बनियाँ बानि न छोड़ै पसँघा मारे जाय॥**
**पसँघा मारे जाय पूर को मरम न जानी।**
**निसु दिन तौलै घाटि खोय यह परी पुरानी॥**
**केतिक कहा पुकारि कहा नहिं करै अनारी।**
**लालच से भा पतित सहै नाना दुख भारी॥**
**यह मन भा निरलज्ज लाज नहिं करै अपानी।**
**जिन हरि पैदा किया ताहि का मरम न जानी॥**
**चौरासी फिरि आइ कै पलटू जूती खाय।**
**बनियाँ बानि न छोड़ै पसँघा मारे जाय॥**

**शब्दार्थ**—बानि= आदत। पसँघा= पासंग, तराजू की डांड़ी का ऊपर-नीचे होना। खोय= आदत।

**भावार्थ**—बनिया अपनी गलत आदत नहीं छोड़ता है। वह माल बेचते-खरीदते समय तराजू की डांड़ी को ऊपर-नीचे करके अपना माल कम देता है और दूसरे का माल अधिक लेता है। वह यह भेद नहीं जानता कि सही लेन-देन ही सुखदायी है। वह रात-दिन बेचते समय अपना माल कम तौलता है और खरीदते समय दूसरे का माल अधिक तौल लेता है। यह उसकी पुरानी आदत है। कितना जोर देकर कहा गया किन्तु मूर्ख मनुष्य इस पर ध्यान नहीं देता। मनुष्य लोभ-लालच से नीचे गिरता है और अनेक प्रकार के भारी दुख सहता है। पतित मनुष्य का मन निर्लज्ज हो जाता है। वह अपने कर्म की लाज नहीं करता। जिस कर्म-विधान से देह धारण हुआ है उसका रहस्य नहीं समझता। अपने कर्मवासनात्मक चक्र में पड़कर ही जीव चौरासी योनियों में भटकता है और अपने शुभाशुभ कर्मों के फलों को भोगता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जीव अपने कर्मों के परिणाम में जूते खा रहा है, परन्तु यह बनिया-मन अपनी आदत नहीं छोड़ता है।

**विशेष**—अपने कर्म ही हरि हैं। उन्हीं के फल हमें मिलते हैं। अतएव हम सदैव सत्कर्म में रत रहें।

कुंडलिया-183

**संत रतन की कोठरी कुंजी दुष्टन हाथ॥**
**कुंजी दुष्टन हाथ अटकि के खोलहिं जाई।**
**संत भये परसिद्ध परभुता नाम दिखाई॥**
**चकमक भये हैं दुष्ट संत जन जैसे पथरी।**
**हरि की प्रभुता आगि प्रगट ह्वै वासे निकरी॥**
**आगि देखि सब डेरे जगत में भय तब ब्यापी।**
**दुष्टन के परताप बस्तु परगट भई ढाँपी॥**
**पलटू परदा खुलि गया सबै नवावै माथ।**
**संत रतन की कोठरी कुंजी दुष्टन हाथ॥**

**शब्दार्थ**—अटकि के=उलझकर। चकमक=एक प्रकार का पत्थर जिस पर चोट करने पर आग निकलती है। हरि की प्रभुता=आत्मज्ञान और सद्गुणों का ऐश्वर्य। डेरे=डरे, भयभीत हुए। ढांपी=ढंकी हुई, छिपी हुई।

**भावार्थ**—संत आत्मज्ञान और सद्गुणों की कोठरी हैं। उसको खोलने की चाबी दुष्टों के हाथों में है। वे संतों से उलझकर उनकी चारों तरफ निन्दा

करते हैं, तो इससे संत प्रसिद्ध हो जाते हैं और उनके नाम की प्रभुता फैल जाती है और उनके सतनामबोधक आत्मज्ञान का प्रचार होता है। संतजन तो मानो साधारण पत्थर हैं, दुष्ट ही चक़मक़ पत्थर हैं। सद्गुण तथा आत्मज्ञान की प्रभुत्व रूपी आग दुष्टों द्वारा विरोध करने पर संतों से निकलती है। उस आग को देखकर लोग संतों से डरने लगते हैं और उनके मन में यह भय व्याप्त हो जाता है कि यदि संतों को दुख देंगे तो हमारा कुशल नहीं है। इस प्रकार जो संतों के जीवन में उनका आत्मज्ञान तथा सद्गुण रूपी उनकी वस्तु ढकी-लुकी थी, वह दुष्टों के विरुद्ध प्रचार से प्रकट हो गयी। इस प्रकार दुष्टों के विरोधी प्रचार से संतों की सच्चाई प्रकट हो गयी और सज्जन लोग उनके सामने विनयावनत होने लगे। पलटू साहेब कहते हैं कि संतजन आत्मज्ञान और सद्गुणों की कोठरी हैं। दुष्टों ने ईर्ष्यावश उनका विरोध करके मानो उनका उद्घाटन कर दिया।

**विशेष**—ऊपर दुष्टों पर व्यंग्य है। वे संतों का विरोध करके मानो उनका उद्घाटन करते हैं।

## 22. कर्म-भ्रम-देवी-देवादि

कुंडलिया-184

**अंजन देय न ज्ञान का अंधा भया बनाय॥**
**अंधा भया बनाय बैद की बात न मानै।**
**बिषय बयाला खाय करे संजम ना जानै॥**
**लालच रोगिया करै बैद को दोष लगावै।**
**तनिक नहीं बिस्वास आँखि कहवाँ से पावै॥**
**एक होय तो कहौं गाँव का गाँवै बिगरा।**
**दिवसै दीपक बारि पाप का सेते डगरा॥**
**पलटू सब संसार के माड़ा गया है छाय।**
**अंजन देय न ज्ञान का अंधा भया बनाय॥**

**शब्दार्थ**—अंजन= काजल, सुरमा, आंख की दवा। बनाय= अच्छी तरह, बिलकुल। बयाला= छेद, हवा। डगरा= रास्ता, मार्ग। माड़ा= परदा।

**भावार्थ**—लोग आत्मज्ञान का अंजन नहीं लगाते हैं, पूरे के पूरे अंधे बने बैठे हैं। वे सद्गुरु-वैद्य की बात नहीं मानते। लोग विषयों की हवा खा रहे हैं, आत्मसंयम करना नहीं जानते। रोगी लपंटता से असंयम करता है और वैद्य

के मत्थे दोष मढ़ता है। जब उसे सद्‌गुरु-वैद्य के उपदेशों पर थोड़ा भी विश्वास नहीं है, तब उसे आत्मज्ञान की आंख कैसे मिले? यदि एक व्यक्ति बिगड़ा हो तो उसको समझाने का परिश्रम किया जाय, गांव का गांव बिगड़ा है। दिन में दीपक जलाकर पाप पथ का सेवन करते हैं—जान-बूझकर गड्ढे में गिरते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संसार के सारे लोगों की आंखों पर परदा पड़ा है। ये ज्ञान का अंजन नहीं लगाते, अपितु निरे अंधे बने भटक रहे हैं।

**विशेष**—लोग वही सोच, बात तथा कर्म करते हैं जिनसे दुख तथा अशांति बढ़े। गुरुजनों के समझाने पर भी नहीं सुधरते, तो उनके कल्याण का क्या रास्ता है!

कुंडलिया-185

**जौं लगि परदा पड़ा है धोखा रहा समाय॥**
**धोखा रहा समाय जानै दूजा है कोई।**
**भीतर बाहर एक तसल्ली देखे होई॥**
**जो देखा सो गया रहा जो देखा नाहीं।**
**चोकर लड्डू खाँड़ खाय दोऊ पछिताहीं॥**
**जोई पहुँचा जाय सोई उस घर का मालिक।**
**रहे नाम में डूबि ठिकाने पहुँचे सालिक॥**
**पलटू परदा टारि दे दिल का धोखा जाय।**
**जौं लगि परदा पड़ा है धोखा रहा समाय॥**

**शब्दार्थ**—परदा=अविद्या। तसल्ली=ढाढ़स, शांति, धैर्य। सालिक= पथिक; नैतिक आचरण में चलने वाला।

**भावार्थ**—जब तक आत्मज्ञान पर अविद्या का परदा पड़ा है, तब तक मन में यही धोखा समाया रहता है कि स्वर्ग, परमतत्त्व तथा मोक्ष मुझसे अलग दूसरे अस्तित्व वाला है। शांति तब मिलती है जब यह बोध हो कि वह मेरे भीतर आत्म तत्त्व है और वैसे ही अन्य लोगों के भीतर वही सत्य तत्त्व विद्यमान है। संसार की तो जो चीज देखी गयी वह बीत गयी और जो अभी नहीं देखी गयी है उसकी कामना बनी है। चाहे चोकर का लड्डू हो चाहे खाड़ का, दोनों खाकर पीछे पश्चाताप करना पड़ता है, क्योंकि संसार की सारी प्रिय अप्रिय वस्तुएं सारहीन हैं। जो साधक प्रिय-अप्रिय से ऊपर उठकर आत्मलीनता में पहुंच गया, वह अपने स्वरूपस्थिति आनंद-भवन का स्वामी हो गया। अपनी स्थिति में वही पहुंचता है जो नैतिक आचरण एवं साधना में

चलता है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे शांति-इच्छुक! दिल का द्वैत-परदा हटा दे। आत्मा के अलावा कुछ नहीं पाना है। जब तक अपने से भिन्न कुछ पाने का भ्रम है तब तक धोखे में भटकना है।

## कुंडलिया-186

**बस्तु धरी है पाछे आगे लिहिन तकाय॥**
**आगे लिहिन तकाय पाछे की मरम न जानी।**
**ज्यों ज्यों आगे जाय दिनों दिन अधिक दुरानी॥**
**फिरि के ताकै नाहिं बस्तु कहवाँ से पावै।**
**ज्यों मिरगा कै बास भरम कै जन्म गँवावै॥**
**अरुझा बेद पुरान ज्ञान बिनु को सुरझावै।**
**सतसंगत से बिमुख बस्तु कहवाँ से पावै॥**
**पलटू छूटै कर्म ना कैसे सकै उठाय।**
**बस्तु धरी है पाछे आगे लिहिनि तकाय॥**

**शब्दार्थ**—तकाय= चल दिये।

**भावार्थ**—वस्तु पीछे छूट गयी और आगे चल दिये। पीछे छुटी हुई वस्तु का भेद नहीं पाये। जैसे-जैसे आगे चलते हैं, वैसे-वैसे अपनी वस्तु दूर होती जाती है। जब लौटकर अपनी ओर नहीं देखता है, तब आत्मा रूपी वस्तु का बोध कैसे हो? जैसे मृग अपनी नाभि की कस्तूरी की सुगंधी का आश्रय अलग समझकर उसे बाहर खोजता है, वैसे अपने आत्मा की शांति-पिपासा को बाहर से बुझाने का भ्रम पालकर मनुष्य जीवन खोता है। लोग वेद-पुराणों की नाना विरोधी बातों में उलझकर भटकते हैं। सच्चे ज्ञान के बिना उन्हें कौन सुलझा सकता है? विवेकवानों की संगत से उलटा चलकर आत्मबोध रूपी वस्तु कहां से मिलेगी? पलटू साहेब कहते हैं कि जब तक बाहर से पाने का कर्म नहीं छूटता, तब तक आत्मबोध नहीं मिलेगा। लोग स्वरूपबोध को पीछे ठेलकर बाहर से सत्य पाने के लिए नाना भ्रांतियों में आगे बढ़ते जाते हैं।

## कुंडलिया-187

**झूठ में सब जग चला छिल छिल जाता अंग॥**
**छिल छिल जाता अंग धसन भेड़ी की देखा।**
**करम बड़ा परधान गड़ी पत्थर पर मेखा॥**

**साच बात को मेटि झूठ कौ जाल पसारा।**
**जल पषान के बीच बहै सब सूधी धारा॥**
**परघट है भगवान सकल घट सूझत नाहीं।**
**जीव से करते द्रोह भरमना पूजन जाहीं॥**
**पलटू मैं कासे कहौं कुवाँ पड़ी है भंग।**
**झूठै में सब जग चला छिल छिल जाता अंग॥**

**शब्दार्थ**—मेखा= मेख़, खूंटी, कील।

**भावार्थ**—संसार के लोग असत्य के प्रचार के प्रभाव में ऐसी भीड़ में बहते हैं जहां अंग छिल-छिल जाते हैं। जैसे आगे की भेड़ी चली वैसे पीछे की भेड़ चलती जाती है। संसार भेड़ियाधसान है। पत्थर पर मजबूत रुकी हुई कील के समान लोग कर्मकाण्ड से सत्य पाना चाहते हैं। सत्य निर्णय को छोड़कर लोग असत्य का जाल फैलाते हैं। कल्याण की धारा आत्मबोध तथा आत्मशोधन है जो सीधी सरल है, किन्तु लोग जल-पत्थर में उसे खोज रहे हैं। सब घट में चेतन आत्मा बैठा है, वही परमात्मा है, परन्तु लोगों को इसका बोध नहीं है। लोग जीव रूपी भगवान से द्रोह करते हैं और भ्रम-वश निर्जीव पिंडियों को पूजने जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं किससे कहूं, कुआं में भांग पड़ी है और उसका जल पीकर सब विक्षिप्त हैं और असत्य की भेड़ियाधसान में डूब रहे हैं।

## कुंडलिया-188

**लड़िका चूल्हे में लुका ढूँढ़त फिरै पहार॥**
**ढूँढ़त फिरै पहार नहीं घट की सुधि जानै।**
**जप तप तीरथ बरत जाय के तिल तिल छानै॥**
**गई आप को भूलि और की बात न मानै।**
**चूल्है लड़िका रहै चतुरई अपनी ठानै॥**
**भरमी फिरै भुलान जाइ कै देस देसान्तर।**
**लड़िका से नहिं भेट मिलत है पानी पाथर॥**
**पलटू सतसंगति करै भूल में वाही सार।**
**लड़िका चूल्हे में लुका ढूँढ़त फिरै पहार॥**

**शब्दार्थ**—सार= सत्य, लाभ।

**भावार्थ**—बालक चूल्हे में छिपा बैठा है, परन्तु माता उसे पहाड़ में खोज रही है, वैसे परमात्मा हृदय में बैठा है, परन्तु मनुष्य देश-देशांतर में खोज रहा

है। लोग अपने हृदय में स्थित आत्मा का बोध नहीं रखते अपितु जप, तप, तीर्थ, व्रत आदि करते हुए परमात्मा को जहां-तहां खोजते रहते हैं। जीव स्वयं को भूला है, विवेकियों की बात मानता नहीं है। 'लड़िका कांधे गांव गोहार' में अपनी बुद्धिमानी समझते हैं। दुनिया के लोग अपने आत्म-अस्तित्व को भूलकर भ्रमवश देश-देशांतर में परमात्मा ढूंढ़ते हैं। वहां परमात्मा नहीं मिलता है—अपितु केवल पानी-पत्थर मिलते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि विवेकवान संतों का सत्संग करना चाहिए। भूल मिटाने के लिए यही सही रास्ता है। 'लड़िका कांधे गांव गोहार' चरितार्थ न करे।

## कुंडलिया-189

**सूधी मारग मैं चलौं हँसै सकल संसार॥**
**हँसै सकल संसार करम की राह बताई।**
**लोक बेद की राह चला हम से नहिं जाई॥**
**सूधी लिहा तकाय राह संतन की पाई।**
**मन में भया अनन्द छूटि गइ सब दुचिताई॥**
**उन कै इहवै हेतु राह यह हमरी आवै।**
**इहै बूझि कै हँसै हाथ से निबुका जावै॥**
**पलटू सबका एक मत को अब करै बिचार।**
**सूधी मारग मैं चलौं हँसै सकल संसार॥**

**शब्दार्थ**—तकाय= चल दिया। दुचिताई= दुविधा। इहवै हेतु= यही उद्देश्य। निबुका जावै= निकाला जा रहा है।

**भावार्थ**—मैं आत्मज्ञान के सीधे रास्ते पर चलता हूं, परन्तु संसार के लोग हमारी रहनी पर हंसते हैं। वे कर्मकांड का रास्ता बताते हैं; किन्तु मुझसे तो लोक-वेद के रास्ते पर चला नहीं जाता है। मैं संतों का दिया हुआ आत्मज्ञान का सीधा रास्ता पकड़कर चल दिया हूं। मेरे मन की दुविधा मिट गयी है कि परमात्मा बाहर मिलता है। मैं आत्मज्ञान में डूबकर आनन्दमग्न हो गया हूं। भ्रांत लोगों का केवल यही एक उद्देश्य है कि यह हमारी राह पर आ जाय। वे यही समझकर हंसते हैं कि यह हमारे हाथ से छूटकर अलग जा रहा है। पलटू साहेब कहते हैं कि इन भूले हुए सब लोगों का एक विचार है कि परमात्मा हमसे अलग है, फिर उनमें अब कौन सत्य-असत्य का विचार करेगा? वे मेरे सीधे आत्मज्ञान के पथ की हंसी उड़ाते हैं।

## कुंडलिया-190

**भरमि भरमि सब जग मुवा झूठा देवा सेव॥**
**झूठा देवा सेव नाम को दिया भुलाई।**
**बाँधे जमपुर जाहि काल चोटी घिसियाई॥**
**पानी से जिन पिंड गरभ के बीच सँवारा।**
**ऐसा साहिब छोड़ि जन्म औरै से हारा॥**
**ऐसे मूरख लोग खबर ना करैं अपानी।**
**सिरजनहारा छोड़ि पूजते भूत भवानी॥**
**पलटू इक गुरुदेव बिनु दूजा कोय न देव।**
**भरमि भरमि सब जग मुवा झूठा देवा सेव॥**

**शब्दार्थ**—घिसियाई= घसीटता है। साहेब= स्वामी।

**भावार्थ**—काल्पनिक और जड़ पिंड रूप झूठे देवी-देवता को पूजकर संसार के सारे लोग भ्रमित हो भटक-भटककर मरते हैं। ये सत नाम के अर्थ स्वरूप स्वस्वरूप आत्मा को भुला दिये हैं। अतएव ये जड़ वासना में बंधकर काल-कवलित संसार में भटकेंगे और काल इनकी चोटी पकड़कर घसीटेगा। आत्मा रूपी स्वामी के कर्मों के जोर से माता के गर्भ में रज-वीर्य से यह शरीर बना है। ऐसे आत्मस्वरूप का विस्मरण कर अपने जीवन को अनात्म वस्तुओं में लगाया और जीवन भटकाव में खो दिया। ऐसे मूर्ख लोग अपने आत्मा का स्मरण नहीं करते हैं। सारे ज्ञान-विज्ञान के सृजेता अपने आत्मा का तिरस्कार कर भूत-भवानी पूजने में लग गये। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मज्ञान का बोध देने वाला सद्गुरु ही एक देवता है जो पूजने योग्य है। इसके अलावा कोई देव नहीं है, लेकिन संसार के लोग झूठे देवी-देवता को पूजकर भटकते-मरते हैं।

## कुंडलिया-191

**संत चरन को छोड़ि कै पूजत भूत बैताल॥**
**पूजत भूत बैताल मुए पर भूतै होई।**
**जेकर जहवाँ जीव अन्त को होवै सोई॥**
**देव पितर सब झूठ सकल यह मन की भ्रमना।**
**यही भरम में पड़ा लगा है जीवन मरना॥**
**देई देवा सेइ परम पद केहि ने पावा।**
**भैरो दुर्गा सीव बाँधि कै नरक पठावा॥**

**पलटू अंत घसीटिहैं चोटी धरि धरि काल।**
**संत चरन को छोड़ि कै पूजत भूत बैताल॥**

**शब्दार्थ**—बैताल= एक कल्पित प्रेत-योनि। काल= वासना।

**भावार्थ**—संसार के लोग विवेकी संतों का सेवा-सत्संग त्यागकर भूत-बैताल पूजते हैं। तो ऐसे लोग मरकर भूत-बैताल ही होंगे, क्योंकि जिनका मन जहां लगा रहता है, अंत में वह वही होता है। याद रखो कल्पित देव-पितर सब झूठे हैं। ये मन के कल्पित मात्र होने से मन के भटकाव के फल हैं। ऐसी ही अनात्म वस्तुओं और कल्पनाओं में पड़कर जीवन का जन्मना-मरना लगा है। कल्पित देवी-देवता पूजकर स्वरूपस्थिति रूपी परम पद किसने पाया है? भैरव, दुर्गा, शिव आदि की मानसिक कल्पनाएं जीव को वासना में बांधकर भवचक्र रूपी नरक में घसीटती हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि याद रखो, अनात्म वस्तुओं की वासना रूपी काल अंत में जीव की चोटी पकड़कर संसार में घसीटेगी। मूढ़ लोग विवेकी संतों की चरण-सेवा छोड़कर भूत-बैताल पूजते हैं।

**विशेष**—भूत-प्रेत होते ही नहीं, तो उनके पूजने वाले भूत-बैताल क्या होंगे, संसार में भटकेंगे। भूत पूजने की मूढ़ता पर ग्रंथकार ने उन्हें भूत-प्रेत होने की बात परिहास में कही है।

## कुंडलिया-192

**लिये कुल्हाड़ी हाथ में मारत अपने पाँय॥**
**मारत अपने पाँय पूजत है देई देवा।**
**सतगुरु संत बिसारि करै भूतन की सेवा॥**
**चाहै कुसल गँवार अमी दै माहुर खावै।**
**मने किये से लड़ै नरक में दौड़ा जावै॥**
**पौंड़े जल के बीच हाथ में बाँधे रसरी।**
**परै भरम में जाइ ताहि को कैसे पकरी॥**
**पलटू नर तन पाइ कै भजन मँहै अलसाय।**
**लिये कुल्हाड़ी हाथ में मारत अपने पाँय॥**

**शब्दार्थ**—अमी= अमृत। माहुर= विष। पौंड़ें= लेटे, तैरें।

**भावार्थ**—लोग अपने हाथों से अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारते हैं। ये सब कल्पित देवी-देवता को पूजने में लगे हैं। ये सद्गुरु-संतों से विमुख

होकर कल्पित भूत-प्रेतों की आराधना करते हैं। ये मूढ़ लोग अमृत को त्यागकर विष खाते हैं और इसी में अपना कल्याण समझते हैं। यदि इनको इस भ्रम-पथ पर चलने से रोका जाय तो विवाद करते हैं, प्रत्युत उत्तरोत्तर भ्रम-पथ में ही दौड़े जा रहे हैं। ये हाथ में रस्सी बांधकर जलाशय तैरना चाहते हैं। जो इस प्रकार हठपूर्वक भ्रम-पथ में चलता है उसको जबर्दस्ती पकड़कर कैसे सही रास्ते पर लाया जाय! पलटू साहेब कहते हैं कि लोग कल्याणदायी मानव शरीर पाकर अपना कल्याण-कार्य नहीं करते। ये आत्म-शोधन कार्य में आलस्य करते हैं। ये अपने हाथों अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारते हैं।

## कुंडलिया-193

**सात पुरी हम देखिया देखे चारों धाम॥**
**देखे चारों धाम सबन माँ पाथर पानी।**
**करमन के बसि पड़े मुक्ति की राह भु लानी॥**
**चलत चलत पग थके छीन भइ अपनी काया।**
**काम क्रोध नहिं मिटे बैठ कर बहुत नहाया॥**
**ऊपर डाला धोय मैल दिल बीच समाना।**
**पाथर में गयो भूल संत का मरम न जाना॥**
**पलटू नाहक पचि मुए सन्तन में है नाम।**
**सात पुरी हम देखिया देखे चारों धाम॥**

**शब्दार्थ**—नाम= सत्यनाम, सत्य आत्मा का परिचय, निर्णय वचन।

**भावार्थ**—हमने सातों पुरियों और चारों धामों को देखा तो सब में देवी-देवता तथा ईश्वर के नाम पर केवल पानी-पत्थर पाया। लोग इनमें भटककर स्थूल कर्मकांड में पड़े हैं। ये द्रष्टा-दृश्य-विवेक रूप मोक्ष का रास्ता भूल गये हैं। तीर्थों में चलते-चलते पैर थक गये और इनकी अपनी काया क्षीण हो गयी। तीर्थों के जल में बैठकर ये बहुत स्नान किये, किन्तु इनके मन के काम-क्रोधादि मनोविकार नहीं नष्ट हुए। ऊपरी देह तो तीर्थों में धो डाला, किन्तु मन में कामादि मल जमे हैं। ये लोग पत्थर की पिंडियों की पूजा में अपने आप को भूल गये। ये विवेकवान संतों का रहस्य नहीं समझे कि उनसे आत्मज्ञान की सीख लें। पलटू साहेब कहते हैं कि ये लोग व्यर्थ में पानी-पत्थर में भटक-भटक एवं पच-पच कर मरते हैं। वस्तुतः आत्मज्ञान परिचायक निर्णय वचन विवेकी संतों में मिलेंगे, जिनसे आत्मबोध होगा।

## कुंडलिया-194

**घर में मेवा छोड़ि कै टेंटी बीनन जाय॥**
**टेंटी बीनन जाय जानै येही है मेवा।**
**तीरथ मँहै नहाय करै मूरति की सेवा॥**
**छोड़ि बोलता ब्रह्म करै पथरे की पूजा।**
**खसम न आवै पास नारि जब खोजै दूजा॥**
**सूखा हाड़ चबाय स्वान मुख आवै लोहू।**
**रहै हाड़ के भोर भेद ना जानै वोहू॥**
**पलटू आगे धरा है आप से नाहीं खाय।**
**घर में मेवा छोड़ि के टेंटी बीनन जाय॥**

**शब्दार्थ**—टेंटी= करील के नीरस फल। खसम= पति, स्वामी। लोहू= रक्त, खून। भोर= भूल।

**भावार्थ**—लोग घर में रखे मेवे को छोड़कर बाहर वन में करील के नीरस फल बीनने जाते हैं। वे समझते हैं कि ये ही मेवे हैं। लोग तीर्थों के जल में स्नान कर और जड़-मूर्तियों की पूजा कर कल्याण-प्राप्ति का भ्रम करते हैं। लोग बोलते हुए आत्मा रूपी ब्रह्म को छोड़कर पत्थर की पूजा करते हैं। जब स्त्री दूसरे पुरुष की खोज में है, तब उसे अपना पति नहीं मिल सकता—जब मनुष्य परोक्ष में अपना लक्ष्य खोजता है तब उसे अपने अपरोक्ष आत्मस्वरूप का बोध कैसे हो? कुत्ते सूखी हड्डी चाभते हैं तो उनके अपने ही मुख से खून निकलता है और उसी का स्वाद लेकर वे समझते हैं कि हड्डी से रक्त आ रहा है। मूढ़ कुत्ते इस भूल में रहते हैं कि हड्डी से रक्त आ रहा है। वे यह भेद नहीं जानते कि रक्त उनके जबड़े से ही आ रहा है। इसी प्रकार शांति अपने चित्त की स्थिरता में है। अनात्म वस्तुएं तो सूखी हड्डी के समान हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि आगे व्यंजन परोसा है किंतु उसे लोग स्वयं नहीं खाते। घर के मेवे छोड़कर वन में करील के नीरस दाने बीनने जाते हैं।

## कुंडलिया-195

**लम्बा घूँघट काढ़ि कै लगवारन से प्रीति॥**
**लगवारन से प्रीति जीव से द्रोह बढ़ावै।**
**पूजत फिरै पषान नहीं जो बोलै खावै॥**

**सम्मै पूरन ब्रह्म ताहि को तनिक न मानै।**
**कर नटी को काम लोक पतिबर्ता जानै॥**
**उदर पालना करै नाम ठाकुर को लेई।**
**सब जीव भगवान ताहि को तनिक न सेई॥**
**पलटू सबै सराहिये जरै जगत की रीति।**
**लम्बा घूँघट काढ़ि कै लगवारन से प्रीति॥**

**शब्दार्थ** —लगवारन= पर-पुरुष। नटी= वेश्या। ठाकुर= भगवान।

**भावार्थ**—जैसे एक कुलटा स्त्री लम्बा घूंघट मुंह पर डालकर पर-पुरुषों से प्रेम करे—पातिव्रत्य का दिखावा कर पर-पुरुष में रत रहे, वैसे वे धार्मिक कहलाने वाले हैं जो धर्म का वेष बनाकर कल्पित ईश्वर की पूजा करते हैं और जीवों से वैर करते हैं। ऐसे लोग ऐसे पत्थर के देवता पूजते फिरते हैं जो न बोलते हैं और न खाते हैं। सब प्राणियों में बैठे चेतन जीव साक्षात ब्रह्म हैं। परन्तु ये लोग उन्हें तनिक भी नहीं मानते हैं। ये वेश्या का काम करते हैं और ढोंग ऐसा दिखाते हैं कि लोग इन्हें पतिव्रता समझें। ये लोग भगवान का नाम लेकर केवल अपना पेट-पालन करते हैं। सभी जीव साक्षात भगवान हैं, परन्तु ये लोग उनकी सेवा तनिक भी नहीं करते। पलटू साहेब कहते हैं कि उसकी सब प्रकार से प्रशंसा करना चाहिए जो संसार की भ्रामक मान्यताओं एवं रीति-रिवाजों को आत्मज्ञान की आग में जला दे। पातिव्रत्य के दिखावा में व्यभिचार वृत्ति न हो।

## कुंडलिया-196

**बहुत पुरुष के भोग से बिस्वा होइ गई बाँझ॥**
**बिस्वा होइ गई बाँझ जाहि के पुरुष घनेरे।**
**नाहिं एक की आस फिरै घर घर बहुतेरे॥**
**एक केरि होइ रहै दूसर से होइ गलानी।**
**तुरत गरभ रहि जाइ सिवाती चात्रिक पानी॥**
**राम पुरुष को छोड़ि करै देवतन की पूजा।**
**बिस्या की यह रीति खसम तजि खोजै दूजा॥**
**पलटू बिना बिचार से मूरख डूबै माँझ।**
**बहुत पुरुष के भोग से बिस्वा होइ गई बाँझ॥**

**शब्दार्थ**—गलानी= घृणा, उदासीनता। सिवाती= स्वाति। खसम= पति, स्वामी। मांझ= बीच धारा।

**भावार्थ**—वेश्या बहुत पुरुषों द्वारा भोगी जाती है, इसलिए वह वंध्या रह जाती है। जिसको एक पुरुष से प्रेम नहीं है, अपितु बहुत पुरुषों से लगाव है, और घर-घर अपनी देह देने के लिए घूमती है, उसकी यही दशा होती है। यदि स्त्री मात्र एक पुरुष का सम्बन्ध करके रहती है और अन्य पुरुषों से उदास रहती है तो उसको अपने पति से तुरन्त गर्भ टिक जायेगा। कहानी के अनुसार जैसे चातक केवल स्वाति नक्षत्र का जल चाहता है, वैसे पतिव्रता स्त्री केवल अपने पति का संग चाहती है। इस मनोवृत्ति रूपी स्त्री का केवल एक पुरुष है आत्माराम, किन्तु उसकी उपासना छोड़कर मनुष्य कल्पित देवताओं की सेवा करता है। यही वेश्या का व्यवहार है कि अपना पति छोड़कर दूसरे के पति का साथ करना। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मस्वरूप का विवेक न होने से मनुष्य भव सागर की बीच धारा में डूबता है। बहुत पुरुषों से भोगी जाकर जैसे वेश्या वंध्या रह जाती है, वैसे बहुत देवी-देवताओं की उलझन में पड़ने से साधक आत्मास्थिति से दूर रह जाता है।

## कुंडलिया-197

**पलटू तन करु देवहरा मन करु सालिगराम॥**
**मन करु सालिगराम पूजते हाथ पिराने।**
**धावत तीरथ बरत रैनि दिन गोड़ खियाने॥**
**माला फेरि न जाय परे अँगुरिन में घट्ठा।**
**राम बोलि न जाय जीभ में लागै लट्ठा॥**
**निति उठि चन्दन देत माथ कै लोहू सोखा।**
**बालभोग के खात मिट्यो ना मन का धोखा॥**
**जल पषान के पूजते सरा न एकौ काम।**
**पलटू तन करु देवहरा मन करु सालिगराम॥**

**शब्दार्थ**—देवहरा= देवालय, देव मंदिर। सालिगराम= शालग्राम, गंडकी नदी के किनारे बसा एक ग्राम, वैष्णवों का तीर्थ, जल प्रवाह से घिसी गोल-चिकनी श्याम वर्ण पत्थर की बटिया जिस पर चक्र का चिह्न रहता है जिसे उपवीत कहते हैं और जो विष्णु के रूप में पूजी जाती है। लट्ठा= लासा बंध जाना। लोहू= रक्त। बालभोग= देवताओं को चढ़ाया गया प्रसाद।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि अपने शरीर को देवमंदिर समझो और पवित्र मन को शालग्राम भगवान। सब समय मन को

पवित्र रखने का काम करो। शालग्राम तथा मूर्तियों को पूजते-पूजते तो हाथ सूख गये। रात-दिन तीर्थ-व्रत में दौड़ते-दौड़ते पैर घिस गये। माला फेरते-फेरते अंगुलियों में घट्ठे पड़ गये, इसलिए मुझसे माला नहीं फेरी जाती। अब राम-राम मुझसे बोला नहीं जाता, क्योंकि राम-राम बोलते जीभ में लासा बंध गया। नित्य माथा पर चंदन लगाते-लगाते मस्तक के चाम का रक्त सूख गया। भगवान का प्रसाद खाते-खाते मन का धोखा नहीं मिटा। जल और पत्थर को पूजने से कल्याण का काम नहीं बना, शांति नहीं मिली। अतएव पलटू साहेब कहते हैं कि शरीर-मंदिर में मन-देवता को पवित्र करने का काम करो।

## कुंडलिया-198

**सूधी मेरी चाल है सब को लागै टेढ़॥**
**सबको लागै टेढ़ बूझ बिनु कौन बतावै।**
**आपु चलै सब टेढ़ टेढ़ हमको गोहरावै॥**
**हम रहते निहकरम नाहिं करमन की आसा।**
**तुम्हरे केवल राम आन को नाहीं जानो।**
**तुम्हरे देवता पित्र भूत की पूजा मानो॥**
**पलटू उलटा लोग सब नाहक करते खेढ़।**
**सूधी मेरी चाल है सब को लागै टेढ़॥**

**शब्दार्थ**—निहकरम= कर्मकाण्ड से अलग, निष्काम। खेढ़= झगड़ा।

**भावार्थ**—मेरे बरताव सीधे हैं, किन्तु वे सबको टेढ़े लगते हैं। यदि वे नहीं समझ रखते तो उनको कौन समझा पावेगा? लोग स्वयं टेढ़े रास्ते पर चलते हैं और मुझे कहते हैं कि ये टेढ़े रास्ते पर हैं। मैं तो कर्मकाण्ड से रहित तथा लोक-परलोक की कामनाओं से रहित रहता हूं। हे रामोपासको ! तुम्हारे तो केवल श्रीराम परम उपास्य हैं, अन्य को तुम समझते ही नहीं हो। इसके साथ नाना देवता, मृत पितर तथा भूत-प्रेत की भी तुम पूजा करना मानते हो। पलटू साहेब कहते हैं कि अन्य लोग ही उलटे रास्ते पर चलते हैं। मुझसे व्यर्थ ही झगड़ा करते हैं। मेरा आत्मलीनता का सीधा रास्ता है, किन्तु लोगों को यह टेढ़ा लगता है।

**विशेष**—इस कुंडलिया में चौथी पंक्ति के बाद वाली पंक्ति नहीं है।

### कुंडलिया-199

**मैं अपने रँग बावरी जरि जरि मरते लोग॥**
**जरि जरि मरते लोग सोच नाहक को करते।**
**पर संपति को देखि मूढ़ बिनु मारे मरते॥**
**न काहू की जाति पाँति हम बैठन जाई।**
**लोग करै चौवाव एक को एक बुलाई॥**
**चलिहौं सूधी चाल राम के मारग माहीं।**
**देव पितर तजि करम मानौं काहू को नाहीं॥**
**पलटू हम को देखि कै लोगन के भा रोग।**
**मैं अपने रँग बावरी जरि जरि मरते लोग॥**

**शब्दार्थ**—चौवाव= बकबक, निन्दा।

**भावार्थ**—मैं अपनी आत्मस्थिति में मस्त हूं, किन्तु अज्ञानी लोग मुझे देख-देख जल मरते हैं। वे मेरे विषय में व्यर्थ सोचते हैं। दूसरे की संपत्ति को देखकर मूर्ख लोग बिना किसी के मारे मरते हैं। मैं किसी की जाति-पांति में बैठने नहीं जाता हूं, परन्तु लोग एक दूसरे को बुलाकर मेरे विषय में निन्दा करते हैं। मैं तो आत्माराम की स्थिति रूपी सीधी चाल में चलता हूं और उसी में जीवनपर्यन्त चलूंगा। मैं देवता, मृत पितर आदि के नाम पर पूजादि कर्म करना नहीं मानता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरी रहनी को देखकर लोगों के मन में द्वेष का रोग पैदा हो गया है। किन्तु मैं अपनी आत्मस्थिति में मस्त हूं, लोग भले मुझे देखकर ईर्ष्या में जलें-भुनें।

## 23. जीव हिंसा पाप है

### कुंडलिया-200

**लहम कुल्लहुम जिसिम का नबी किया फर्मूद॥**
**नबी किया फर्मूद हदीस की आयत माहीं।**
**सब में एकै जान और कोउ दूजा नाहीं॥**
**खून गोस्त है एक मौलवी जिबह न छाजै।**
**सब में रोसन हुआ नबी का नूर बिराजै॥**
**क्यों खैंचै तू रूह गुनहगारी में पड़ता।**
**बुजरुग के फर्मूद बमोजिब नाहीं डेरता॥**

**पलटू जो बेदरदी सो काफिर मरदूद।**
**लहम कुल्लहुम जिसिम का नबी किया फर्मूद॥**

**शब्दार्थ**—लहम= मांस। कुल्लहुम= कुल, बिलकुल, पूरा। जिसिम= जिस्म, शरीर। नबी= रसूल, पैगंबर, ईश्वर-दूत, मुहम्मद साहब। फर्मूद= फरमान, आज्ञा। हदीस= मुहम्मद साहेब के वचन और कार्य। आयत= वचन, कुरान का वचन। जिबह= जिब्ह, जिसका वध किया गया हो, वध। नूर= प्रकाश। रूह= आत्मा, जीव। बुजरूग= बुजुर्ग, वृद्ध तथा सम्मानित व्यक्ति। बमोजिब= बमूजिब= अनुसार, मुताबिक। डेरता= डरता, भय करता। काफिर= नास्तिक। मरदूद= रद्द किया हुआ, त्यागा हुआ, एक प्रकार की गाली।

**भावार्थ**—रसूल हजरत मुहम्मद ने हदीस में वचन कहा तथा आज्ञा दी है कि पूरा मांस किसी प्राणी के शरीर का होता है। सभी चलते-फिरते प्राणी में एक ही प्रकार की जान होती है, अतएव सब जीव अपने आत्मा के समान हैं, कोई दूसरा नहीं है। रक्त और मांस एक ही है। खून करके ही मांस मिलता है, अतएव हे मौलबी साहब! किसी प्राणी को मारना शोभा नहीं देता। जो सब प्राणियों में ज्ञान-प्रकाश है वह नबी का ही बताया नूर है, प्रकाश है। तू क्यों किसी प्राणी को मारकर उसकी खाल खींचता है और पाप कर्म में पड़ता है? बुजुर्गों की आज्ञा के अनुसार तू नहीं चलता है और पाप से भय नहीं करता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो दया छोड़कर कर्म के नाम पर जीव-हत्या करते हैं, वे नास्तिक हैं, उनका जीना बेकार है। नबी ने यह आज्ञा दी है कि सब मांस प्राणियों के शरीर से ही आता है, अतएव प्राणि-हत्या और मांसाहार बहुत गलत है।

कुंडलिया-201

**गरदन मारै खसम की लगवारन के हेत॥**
**लगवारन के हेत पसू औ मेंढ़ा मारै।**
**पूजै दुरगा देव देवखरी सिर दै मारै॥**
**माटी देवखरि बाँधि मुए की पूजा लावै।**
**जीवत जिउ को मारि आनि कै ताहि चढ़ावै॥**
**सब में है भगवान और ना दूजा कोई।**
**तेकर यह गति करै भला कहवाँ से होई॥**

**पलटू जिउ को मारि कै बलि देवतन को देत।**
**गरदन मारे खसम की लगवारन के हेत॥**

**शब्दार्थ**—खसम= स्वामी, जीव, परमात्मा। लगवारन= उपपतियों,नकली इष्टों, देवी-देवताओं। देवखरी= देवस्थान, जड़-पिंड।

**भावार्थ**—असली परमात्मा और देवता चलते-फिरते प्राणी हैं, और कल्पित जड़-पिंडियों के देवता व्यर्थ हैं, किन्तु मनुष्य भूलवश असली देवता—प्राणियों को मारता है और झूठे देवता—जड़ पिंडियों की पूजा करता है; जीव-हत्या करके निर्जीव देवताओं को खुश करने का ढोंग करता है। लोग भेड़ आदि अनेक पशुओं को मारकर दुर्गा-देवी पूजते हैं और जड़ देवस्थान पर सिर पटकते हैं। मिट्टी पाटकर देवस्थान बनाते हैं और जड़-पिंडी को पूजते हैं। जीवित प्राणी को मारकर उन जड़ पिंडियों पर चढ़ाते हैं। याद रखो, चलते-फिरते सारे प्राणियों में भगवान बैठा है। उनमें कोई दूसरा नहीं है। सब में बैठे आत्मा रूपी परमात्मा की हत्या करने वाले का भला कैसे होगा? पलटू साहेब कहते हैं कि ये भूले लोग जीव को मारकर निर्जीव देवताओं की पूजा करते हैं। यह तो परमात्मा को मारकर झूठे की सेवा करना है।

## 24. सदाचारी श्रेष्ठ है, वर्ण नहीं

कुंडलिया-202

**हरि को भजै सो बड़ा है जाति न पूछै कोय॥**
**जाति न पूछै कोय हरि को भक्ति पियारी।**
**जो कोइ करै सो बड़ा जाति हरि नाहिं निहारी॥**
**बधिक अजामिल रहे रहे फिर सदन कसाई॥**
**गनिका जाति रैदास आपु में लिया मिलाई।**
**लिया गिद्ध को गोदि दिया बैकुंठ पठाई॥**
**पलटू पारस के छुए लोहा कंचन होय।**
**हरि को भजै सो बड़ा है जाति न पूछै कोय॥**

**शब्दार्थ**—जाति= मानी हुई जाति, वर्ण।

**भावार्थ**—हरिभजन करने वाला, आत्मशोधन करके पवित्र रहनी में चलने वाला श्रेष्ठ है। कोई विवेकवान लौकिक जाति नहीं पूछता। हरि को भक्ति प्रिय है। जो कोई भक्ति-पथ पर चले वही बड़ा है। हरि ने किसी की

जाति नहीं देखी। अजामिल तथा सदन कसाई बधिक रहे, गणिका वेश्या रही। रविदास जी नीच कही जाने वाली जाति के थे। जटायु गिद्ध थे जिन्हें श्रीराम ने अपनी गोद में बैठा लिया। इन सबको भगवान ने बैकुंठ भेज दिया, क्योंकि ये भक्ति-पथ के पथिक थे। पलटू साहेब कहते हैं कि लोहा पारस पत्थर में छू जाने से सोना हो जाता है। इसलिए हरि को भजने वाला श्रेष्ठ है। विवेकवान जाति नहीं पूछते।

### कुंडलिया-203

**साहिब के दरबार में केवल भक्ति पियार॥**<br>
**केवल भक्ति पियार साहिब भक्ती में राजी।**<br>
**तजा सकल पकवान लिया दासी सुत भाजी॥**<br>
**जप तप नेम अचार करै बहुतेरा कोई।**<br>
**खाये सेवरी के बेर मुए सब ऋषि मुनि रोई।**<br>
**किया युधिष्ठिर यज्ञ बटोरा सकल समाजा।**<br>
**मरदा सबका मान सुपच बिनु घंट न बाजा॥**<br>
**पलटू ऊँची जाति को जनि कोइ करै हंकार।**<br>
**साहिब के दरबार में केवल भक्ति पियार॥**

**शब्दार्थ**—भाजी= शाक, सब्जी। जनि= मत।

**भावार्थ**—साहेब के दरबार में केवल भक्ति प्रिय है। साहेब भक्ति में ही प्रसन्न रहते हैं। श्रीकृष्ण महाराज ने दुर्योधन के सारे पकवान छोड़कर दासी-पुत्र विदुर के घर की सब्जी खायी। ऋषि-मुनि जप, तप, नियम, आचार से बहुत चलते थे, किन्तु श्रीराम ने शबरी के बेर-फल खाये और ऋषि-मुनि टगर-टगर ताकते रह गये, किन्तु वहां वे नहीं गये। युधिष्ठिर ने यज्ञ किया और ब्राह्मण तथा ऋषि-मुनि समाज को बटोरा परन्तु सबके अहंकार का मर्दन हो गया। क्योंकि श्वपच भक्त के भोजन किये बिना घंटा नहीं बजा। पलटू साहेब कहते हैं कि मानी हुई ऊंची जाति का कोई अहंकार न करे। साहेब के दरबार में भक्ति ही प्रिय है।

### कुंडलिया-204

**गनिका गिद्ध अजामिल सदना औ रैदास॥**<br>
**सदना औ रैदास भली इनकी बनि आई।**<br>
**निसु दिन रहैं हजूर भक्ति कीन्ही अधिकाई॥**

**जाति न उत्तम येह इन्हैं सम और न कोई।**
**ब्रह्मा कोटि कुलीन नीच अब कहिये सोई॥**
**उनसे बड़ा न कोय और सब उन के नीचे।**
**उन्हें बराबर नहिं कोऊ तिर्लोक के बीचे॥**
**अबिनासी की गोद में पलटू करै बिलास।**
**गनिका गिद्ध अजामिल सदना औ रैदास॥**

**शब्दार्थ**—हजूर= हुजूर, सामने, समीप, निकट।

**भावार्थ**—गणिका, गिद्ध जटायु, बधिक अजामिल, सदन कसाई, रविदास इन सबकी भक्ति के कारण उच्च गति हुई। जिन्होंने उत्तम भक्ति की, वे रात-दिन उपास्य के सामने रहे। उपर्युक्त भक्तों की मानी हुई जाति उत्तम नहीं थी, परन्तु इनके समान बड़ा कोई नहीं है। ब्रह्मा महान कुलीन थे, किन्तु उनका प्रपौत्र रावण महा नीच कहा जाता है। अतएव भक्तिमान एवं पवित्रात्मा से बड़ा कोई नहीं है, अपितु अन्य सब उनके नीचे हैं। तीनों लोकों में भक्तिमान के बराबर कोई नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं अविनाशी आत्मा की स्थिति में आनन्दमग्न हूं। इसी प्रकार गणिका, गिद्ध, अजामिल, सदन और रविदास महान हैं।

**विशेष**—महाकाव्यों और पुराणों के अनुसार यहां ग्रंथकार ने भक्तिमानों की प्रशंसा की है जिसमें विमान पर बैठकर बैकुण्ठ में जाना, श्वपच भक्त के भोजन करने पर घंटा बजना आदि चमत्कारी बातें हैं। ये सब भक्ति का महत्त्व बताने के लिए अतिशयोक्तियां हैं। सार है मनुष्य में भक्ति तथा सदाचार का महत्त्व है, जाति-वर्ण का नहीं।

## 25. निन्दक उपकारी हैं

कुंडलिया-205

**निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय॥**
**काम हमारा होय बिना कौड़ी को चाकर।**
**कमर बाँधि के फिरै करै तिहुँ लोक उजागर॥**
**उसे हमारी सोच पलक भर नाहिं बिसारी।**
**लगी रहै दिन रात प्रेम से देता गारी॥**
**संत कँहै दृढ़ करै जगत का भरम छुड़ावै।**
**निन्दक गुरु हमार नाम से वही मिलावै॥**

**सुनि के निन्दक मरि गया पलटू दिया है रोय।**
**निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय॥**

**शब्दार्थ**—संत कँहै= संत को।

**भावार्थ**—मेरा निंदक युगानुयुग जीता रहे। उससे मेरा कल्याण होता है। मैं उसको एक कौड़ी भी नहीं देता हूं परन्तु वह मेरी सब समय सेवा करता है। वह मेरी निन्दा करने के लिए कमर बांधकर घूमता है और मेरी निन्दा करके मेरा प्रचार करता है। उसे मेरी चिन्ता है। वह मुझे एक पलक भी नहीं भूलता है। वह मेरी निन्दा करने में रात-दिन लगा रहता है। वह मानो मुझे प्रेम से गाली देता है। निन्दक संतों की निन्दा करके उन्हें सहनशीलता में पक्का करता है। संसार के लोग मुझे अच्छा मानते हैं। मेरा निन्दक मेरी निन्दा करके भ्रम दूर करता है, तो इससे मेरा भला होता है। मेरा निन्दक मेरा गुरु है। उसके द्वारा निन्दा करने से मेरा मन संसार से अधिक निर्मोह होता है और सतनाम में तथा उसके अर्थ स्वरूप आत्मस्थिति में मेरी अधिक लगन लगती है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब मैं सुना कि मेरा निन्दक मर गया, तो मुझे रुलाई आ गयी। मेरा निन्दक युगानुयुग जीये। उसके निन्दा-कर्म से मेरा कल्याण होता है।

## कुंडलिया-206

**निन्दक रहै जो कुसल से हम को जोखों नाहिं॥**
**हम को जोखों नाहिं गाँठि कौ साबुन लावै।**
**खरचै अपनो दाम हमारी मैल छुड़ावै॥**
**तन मन धन सब देहि संत की निन्दा कारन।**
**लेहिं संत तेहि तार बड़े वे अधम-उधारन॥**
**संत भरोसा बड़ा सदा निन्दक का करते।**
**निन्दक की अति प्रीति भाव दूसर नहिं धरते॥**
**पलटू वे परस्वारथी निन्दक नर्क न जाहिं।**
**निन्दक रहै जो कुसल से हम को जोखों नाहिं॥**

**शब्दार्थ**—जोखों= जोखिम, खतरा।

**भावार्थ**—यदि मेरा निन्दक कुशल-मंगल से बहुत दिन जीवित रहे तो मुझे कोई खतरा नहीं होगा। वह मानो अपनी जेब से पैसा देकर साबुन लाता है। वह अपना पैसा खर्च करके मेरा मैल धोता है। वह अपने तन, मन और

धन को समर्पित करके संत की निन्दा करता है। संत अपने निन्दक का भी उद्धार कर लेते हैं, क्योंकि वे अधमों के बड़े उद्धारक होते हैं। संत अपने निन्दक का बड़ा भरोसा रखते हैं। संत यही भाव रखते हैं कि मेरे निन्दक का मुझसे बड़ा प्रेम है, तभी वह मेरी निन्दा करके मेरे मल को धोता है। संत अपने निन्दक के प्रति अन्यथा भाव नहीं रखते। पलटू साहेब कहते हैं कि संत अपने मन में यह भाव रखते हैं कि मेरा निन्दक मेरा बड़ा उपकारी है। उसको नरक में न जाना पड़े। उसकी शुभ गति हो। निन्दक सकुशल जीवित रहे तो उससे मुझे कोई खतरा नहीं है।

## कुंडलिया–207

**निन्दक है परस्वारथी करै भक्त का काम॥**
**करै भक्त का काम जगत में निन्दा करते।**
**जो वे होते नाहिं भक्त कहवाँ से तरते॥**
**आप नरक में जाहिं भक्त का करैं निबेरा।**
**फिर भक्तन के हेतु करैं चौरासी फेरा॥**
**करैं भक्त की सोच उन्हें कुछ और न भावै।**
**देखो उनकी प्रीति लगन जब ऐसी लावै।**
**पलटू धोबी अस मिल्यौ धोवत है बिनु दाम।**
**निन्दक है परस्वारथी करै भक्त का काम॥**

**शब्दार्थ**—परस्वारथी= दूसरे का हित करने वाला।

**भावार्थ**—निन्दक बड़े परोपकारी हैं। वे भक्त–संत की संसार में निन्दा करके उनका बड़ा कल्याण करते हैं। यदि निन्दक संसार में न होते तो संत–भक्तों का कैसे उद्धार होता? निन्दक स्वयं तो नरक में जाते हैं, किन्तु संतों–भक्तों के मन में भवबंधन खोलने के लिए विवेक–शक्ति पैदा करते हैं। आगे और भी निन्दक चौरासी के चक्कर में घूम–घूम करके जब–जब मनुष्य–शरीर पाते हैं तब–तब वे संत–भक्त की निन्दा करके उनकी साधना में बल देते हैं। निन्दक को सदैव संत–भक्त की चिंता रहती है कि उनकी कितनी निन्दा की जाय। उन्हें अन्य बात अच्छी नहीं लगती। जब उनकी लगन संत–निन्दा में इतनी है तो उनका संत–भक्तों के उद्धार में प्रेम देखने योग्य होता है। निन्दक परोपकारी हैं, वे संतों–भक्तों की निन्दा करके उन्हें साधना पथ में बलवान करते हैं।

**विशेष**—ऊपर तीनों कुंडलियों में श्री पलटू साहेब ने निन्दकों को व्यंग्यात्मक ढंग से लिया है और अपनी तथा संत-भक्तों की प्रतिक्रियाविहीन शांति-रहनी का चित्रण किया है। यह सच है कि जो मन का मोह बहुत काल की साधना से नहीं मिटता है, वह प्रतिकूलता आने पर क्षण में मिट जाता है। साधक, भक्त तथा संत या कोई भी विवेकी नर-नारी अपने निन्दक से घबराता नहीं है और न उसकी अहित कामना करता है।

## 26. विविध विषय

कुंडलिया-208

**बनिया पूरा सोई है जो तौले सत नाम॥**
**जो तोलै सत नाम छिमा का टाट बिछावै।**
**प्रेम तराजू करै बाट बिस्वास बनावै॥**
**बिबेक की करै दुकान ज्ञान का लेना देना।**
**गादी है संतोष नाम का मारै टेना॥**
**लादै उलदै भजन बचन फिर मीठे बोलै।**
**कुंजी लावै सुरत सबद का ताला खोलै॥**
**पलटू जिसकी बन परी उसी से मेरा काम।**
**बनिया पूरा सोई है जो तौलै सत नाम॥**

**शब्दार्थ**—टेना= पासंग।

**भावार्थ**—सच्चा व्यापारी वही है जो सदैव सतनाम को तौलता है—सतनाम का अर्थस्वरूप आत्मशोधन करता है। वह क्षमा का टाट बिछाता है, प्रेम का तराजू और विश्वास का बाट रखकर विवेक की दुकान लगाता है और आत्मज्ञान का लेन-देन करता है। उसकी दुकान की गद्दी संतोष है। सतनाम का पासंग मारता है—सदा सत्य का निर्णय करता है। आत्मशोधन रूपी भजन करना ही उसका माल का लादना और उतारना है। वह सदैव ही मीठे वचन बोलता है। वह मनोवृत्ति रूपी चाबी से निर्णय शब्दों का ताला खोलता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जिन्होंने अपना कल्यण कर लिया है मैं उनकी शरण में हूं। अतएव पूर्ण व्यापारी वही है जो सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मानुसंधान तथा आत्मस्थिति में रत है।

## कुंडलिया-209

**भीतर औंटे तत्त्व को उठै सबद की खानि॥**
**उठै सबद की खानि रहै अंतर लौ लागी।**
**सुरति देइ उदगारि जोगिनी आपुइ जागी॥**
**सहज घाट हरि ध्यान ज्ञान से मन परमोधै।**
**नहिं संग्रह नहिं त्याग अपनी काया सोधै॥**
**प्रेम भभूत लगाइ धरै धीरज मृगछाला।**
**तिलक उनमुनी भाल जपत है अजपा माला॥**
**पलटू ऐसा होय जो सो जोगी परमान।**
**भीतर औंटे तत्त्व को उठै सबद की खानि॥**

**शब्दार्थ**—औंटे= पकावै। तत्त्व= सत्य, आत्मज्ञान। सुरति= मनोवृत्ति। उदगारि= जाग्रत कर दे। जोगिनी= परिपक्व मनोवृत्ति। परमोधै= बोध दे।

**भावार्थ**—जब साधक निरन्तर अंतर्मुख साधना से आत्मज्ञान की स्थिति परिपक्व कर लेता है, तब अनुभव की खान फूट पड़ती है। उससे निर्णय शब्दों का निर्झर बह निकलता है। वह साधक आत्मलीनता में ही लगनशील हो जाता है। वह मोह-नींद भंगकर मनोवृत्ति को विवेक में जागृत कर देता है। फिर परिपक्व मनोवृत्ति स्वयं जागृत रहती है। वह सहज समाधि के घाट पर पहुंचकर आत्मलीनता रूपी ध्यान में निमग्न हो जाता है। जब व्यवहार में आता है तब वह आत्मज्ञान द्वारा साक्षी भाव में रहकर मन को उसी का बोध देता है। उसके जीवन में न संग्रह का आग्रह रहता है और न त्याग का। वह निरन्तर अपने शरीर के विकारों को शोधता है। वह प्रेम का भभूत लगाता है, धैर्य का मृगछाला धारण करता है, जगत से उदास रहने का मस्तक में तिलक लगाता और अजपा माला का जप करता है—संकल्पशून्य हो शांत रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो उपर्युक्त रहनी में रहता है, वह प्रामाणिक योगी है। वह अंतर्मुख होकर आत्मस्वरूप का अनुसंधान करता है और आत्म-अनुभव का सागर हो जाता है।

## कुंडलिया-210

**बार बार विनती करै पलटू दास न लेइ॥**
**पलटू दास न लेइ रहै कर जोरे ठाढ़ी।**
**सरनागत मैं रहौं सरन बिनु लागै गाढ़ी॥**

**गोड़ दाबि मैं देउँ चरन धै सेवा करिहौं।**
**चौका देइहौं लीपि बहुरि मैं पानी भरिहौं॥**
**पैंड़ा देउँ बुहारि सबन कै जूठ उठावौं।**
**जनि दुरियावहु मोहिं रहै मैं इहवाँ पावौं॥**
**मुक्ति रहै द्वारै खड़ी लट से झाड़ू देइ।**
**बार बार बिनती करै पलटू दास न लेइ॥**

**शब्दार्थ**—गाढ़ी= गाढ़, दुख। पैंड़ा= रास्ता। जनि दुरियावहु= दूर न करो। लट= बाल।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि मुक्ति मेरे सामने आकर बारंबार विनती करती है और हाथ जोड़कर खड़ी रहती है। वह कहती है कि मैं आपकी शरण में हूं। आपकी शरण के बिना मुझे दुख लगता है। मैं आपके पैर दबाऊंगी। आपके चरण धोकर सेवा करूंगी, चौका लीपूंगी, पानी भरूंगी, आपका रास्ता बुहारूंगी, सबका जूठ उठाऊंगी। मैं आपकी शरण में रहने पाऊं तो मैं सारी सेवा करूंगी। अतएव आप मुझे अपने द्वार से मत खदेड़ें। पलटू साहेब कहते हैं कि मुक्ति हाथ जोड़कर मेरे द्वार पर खड़ी है। वह अपने सिर के बालों से झाड़ू लगाती है और बार-बार विनती करती है कि मुझे अपनी शरण में रख लो, परन्तु मैं उसे अपनी शरण में नहीं लेता हूं।

**विशेष**—संत पलटू साहेब जो कहना चाहते हैं उसे अपने काव्य में बांध देते हैं। यह उनकी अद्‌भुत प्रतिभा और काव्य शक्ति है। मुक्ति कोई प्राणी नहीं है जो किसी से प्रार्थना करे। मुक्ति है वासनाहीन प्रशांत दशा और वह श्री पलटू साहेब के जीवन में है, तब वे और किस मुक्ति की आशा करें। वे अपनी मुक्ति की मस्तानगी में ही उपर्युक्त बातें कहते हैं जो काव्यात्मक है।

## कुंडलिया-211

**सुरति सुहागिनि उलटि कै मिली सबद में जाय॥**
**मिली सबद में जाय कन्त को बसि में कीन्हा।**
**चलै न सिव कै जोर जाय जब सत्ती लीन्हा॥**
**फिर सत्ती ना रही मिली जब सिव में जाई।**
**सिव भी फिर न रहे सक्ति से सीव कहाई॥**
**अपने मन कै फेर और ना दूजा कोई।**
**सत्ती सिव है एक नाम कहने को दोई॥**
**पलटू सत्ती सीव का भेद गया अलगाय।**
**सुरति सुहागिनि उलटि कै मिली सबद में जाय॥**

**शब्दार्थ**—सुहागिनि= सुहागिन, सधवा, सौभाग्यवती।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति रूपी सौभाग्यवती संसार से लौटकर सद्गुरु के निर्णय वचनों के अनुसार आत्म-पति से जा मिली और उसने आत्मलीन होकर मानो अपने आत्म-पति को अपने वश में कर लिया। शक्ति ने जाकर जब शिव को वश में कर लिया तब शिव का बल नहीं चलता। परन्तु जब शक्ति शिव में मिल गयी तब शक्ति का अलग अस्तित्व नहीं रह गया। फिर शिव भी नहीं रह गया। शक्ति से ही शिव कहलाता है। यह सब अपने मन का चक्कर है। आत्मा के अलावा न कहीं शक्ति है और न शिव है। शक्ति और शिव एक ही बात है, केवल नाम भिन्न हैं जो कहावत मात्र है। पलटू साहेब कहते हैं कि पूर्ण ज्ञान की स्थिति में शक्ति और शिव का भेद व्यर्थ हो गया, जब सौभाग्यवती मनोवृत्ति निर्णय शब्दों के अनुसार आत्मा में मिल गयी।

**विशेष**—उपर्युक्त कथन में भी अलंकारों का घटाटोप है। सीधी बात है, जब मनोवृत्ति आत्मलीन हो गयी, तब सब काम बन गया। चेतन आत्मा ही शिव है और उसका ज्ञान उसकी शक्ति है। जब ज्ञान तथा आत्मा का अभिन्न बोध हो गया, तब सब काम बन गया।

## कुंडलिया-212

**कहँ खोजन को जाइये घरहीं लागा रंग॥**
**घरहीं लागा रंग छुटे तीरथ ब्रत दाना।**
**जल पषान सब छुटे आपु में उट्ठि समाना॥**
**काम क्रोध को छोड़ि परम सुख मिला अनन्दा।**
**लोभ मोह को जारि करम का काटा फंदा॥**
**लगै न भूख पियास जगत की आसा त्यागा।**
**सबद मँहै गलतान सुरति का पोहै धागा॥**
**पहलू दिढ़ ह्वै लगि रहै छुटै नहीं सतसंग।**
**कहँ खोजन को जाइये घरहीं लागा रंग॥**

**शब्दार्थ**—घरहीं= हृदय में ही। रंग= आनन्द, उच्च दशा। उट्ठि= उठकर, अंतर्मुख होकर। पौहै= पिरोता है, डालता है।

**भावार्थ**—परमात्मा को खोजने कहां जाया जाय? हृदय में ही वह उच्च तत्त्व मिल गया, वह उत्तम आनन्द दशा आ गयी। अब तीर्थाटन, उपवास,

दान आदि छूट गये। अब पत्थर-पानी का पूजना छूटकर और भौतिक धरातल से उठकर अपने आप में लीन हो गया। अब काम-क्रोधादि मनोविकारों को छोड़कर परम सुख और अखंड आनन्द मिल गया। लोभ-मोह को ज्ञानाग्नि में जलाकर कर्मबंधन की फांसी काट दी। अब सांसारिक भोगों की कामना नहीं रही और जगत ऐश्वर्य की आशा छूट गयी। अब आत्मज्ञानपरक शब्दों एवं आत्मा-अनात्मा के निर्णय में ही मन लीन रहता है। अब शब्दों की मणिकाओं में मनोवृत्ति का सूत पिरोता हूं। द्रष्टा-दृश्य-विवेक के वचनों में मन रमाता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि दृढ़तापूर्वक साधना में लगा रहे और कभी सत्संग का आधार न छूटे। परमात्मा या मुक्ति खोजने के लिए कहां जाया जाय। हृदय में ही उसका साक्षात्कार हो गया।

**विशेष**—संतजन शब्द-सुरति योग के अर्थ में अपने मन को खोपड़ी में उठते हुए शब्द एवं ध्वनि में लगाते हैं। यह एक आरंभिक क्रियायोग है जो मन को संयत करने का एक साधन है। अंततः शब्द भी जड़ है। शब्द को मैं जानता हूं, किन्तु शब्द मुझे नहीं जानता। अतएव जड़-शब्द से ऊपर उठकर आत्मलीनता ही उच्चतम दशा है।

## कुंडलिया-213

**मन माया में मिलि गया मारा गया बिबेक॥**
**मारा गया बिबेक चोर का पहरू भेदी।**
**दोऊ की मति एक सहर में करैं अहेदी॥**
**आँधर नगर के बीच भया धमधूसर राजा॥**
**करै नीच सब काम चलै दस दिसि दरवाजा॥**
**अधरम आठों गाँठि न्याव बिनु धीगम सूदा।**
**टकमि दमारि गुलाम आप को भयो असूदा॥**
**जानि बूझि कूआँ परै पलटू चलै न देख।**
**मन माया में मिलि गया मारा गया बिबेक॥**

**शब्दार्थ**—अहेदी= आहदी, बादशाही जमाने के वे बलवान सिपाही जो घर बैठे वेतन पाते थे और जब बादशाह को खास काम पड़ता था तब वे उसमें लगते थे। इनकी जुल्म-जबर्दस्ती प्रसिद्ध थी। धमधूसर= मोटा-तगड़ा, विवेकहीन। आठों गाँठि= सब प्रकार। धीगम सूदा= धींगाधींगी, मनमानी। टकमि दमारि= टका, दमड़ी। असूदा= हानिकर, भलाई रहित।

**भावार्थ**—जब मन दुनिया की माया में डूब जाता है तब विवेक नष्ट हो जाता है। तब तो पहरेदार मानो चोर को धन का रहस्य बताने वाला हो गया। चोर और भेदिया का एक मत हो गया। जैसे शहर में आहदी जोर-जबर्दस्ती करके जुल्म करता है, वैसे माया में डूबा मन अंतःकरण में उपद्रव करता है। यह तो नगर की अंधी जनता का विवेकहीन राजा की तरह हुआ। माया में डूबा मन विवेकहीन होकर सारा नीच काम करता है और दसों इन्द्रियों के दरवाजे से अव्यवस्थित काम होता है। ऐसे जीवन में सब प्रकार से अधर्म होता है और मनमाना व्यवहार चलता है। ऐसे लोग टका-दमड़ी के गुलाम होते हैं और अपने आप अपनी हानि करते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे लोग देखकर नहीं चलते, अपितु जान-बूझकर कुएं में गिरते हैं। जब मन में माया का मोह समाया, तब विवेक मर गया।

## कुंडलिया-214

**देखो जिउ की खोय को फिर फिर गोता खाय॥**
**फिर फिर गोता खाय तनिक ना लज्जा आवै।**
**पड़िगा वही सुभाव छुटै न लाख छुटावै॥**
**निमिख भरे की खुसी जन्म कोटिन दुख पावै।**
**चौरासी घर जाय आपु में आपु बँधावै॥**
**स्वान लाख जो खाय दिया चाटै पै चाटै।**
**छुटै न जिउ की खोय पकरि के पुरजे काटै॥**
**पलटू भजै न नाम को मूरख नर तन पाय।**
**देखो जिउ की खोय को फिर फिर गोता खाय॥**

**शब्दार्थ**—खोय=ख़ू, आदत, स्वभाव। निमिख=निमिष, पलक गिरना, पलक गिरने भर का समय, क्षण। दिया=दीपक।

**भावार्थ**—मनुष्य की गंदी आदत को तो देखो। वह उसमें बारंबार डूबता है। वह थोड़ी भी लज्जा नहीं करता। उसको विषय-वासना का गंदा स्वभाव पड़ गया है। लाखों बार भी छुड़ाने पर वह नहीं छूटता। काम-भोग में माना हुआ सुख क्षण मात्र मिलता है और उसके परिणाम में जीव वासना में बंधकर करोड़ों जन्म दुख पाता है। वह चौरासी के चक्कर में फंसकर स्वयं नाना योनियों में बंधकर दुख पाता है। कुत्ते को चाहे जितना उत्तम व्यंजन खिला दो, किन्तु यदि दीपक मिल जाय तो वह उसे अवश्य चाटने लगेगा। मनुष्य को पकड़कर चाहे उसे काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दो, परन्तु उसकी आदत

नहीं छूटती। पलटू साहेब कहते हैं कि मनुष्य-शरीर पाकर भी मूर्ख सतनाम नहीं भजता। देखो, मनुष्य की गंदी आदत को यह बारंबार विषय-वासनाओं में डूबता है।

**विशेष**—मनुष्य का विवेक जग जाय, तो वह अपनी गलत आदत छोड़कर सुखी हो जाता है। यहां ग्रंथकार ने उनका चित्रण किया है जो जगना नहीं चाहते हैं।

कुंडलिया-215

**मुये पार की बात है फिरै न कोऊ एक॥**
**फिरै न कोऊ एक मुक्ति धौं कैसी होती।**
**स्याह जरद या सुरख रंग हीरा या मोती॥**
**मुक्ति के हाथ न पाँव मुक्ति को सब कोउ मानै।**
**है परदे की बात ताहि से सब कोउ जानै॥**
**सब कोउ होय खराब मुक्ति के पाछे जाई।**
**जानी केहि बिधि जाय मुक्ति कहु किन ने पाई॥**
**पलटू बातैं मुक्ति की खसर फसर करि देख।**
**मुये पार की बात है फिरै न कोऊ एक॥**

**शब्दार्थ**—जरद= जर्द, पीला, पीत। सुर्ख= सुर्ख़, लाल। खसर-फसर= उतावली, जल्दीबाजी, भावुकता।

**भावार्थ**—बात है मरने के बाद की। मरने के बाद कोई एक व्यक्ति नहीं लौटकर आता है कि वह बतावे कि मरने पर मिली हुई मुक्ति भला कैसी होती है! वह काली है कि पीली या लाल रंग की है। वह हीरा की तरह चमकीली है या मोती की तरह। मुक्ति के हाथ-पांव नहीं होते, परन्तु सब मतवादी उसका अधिकारपूर्वक ज्ञान रखने का दंभ भरते हैं। मरने के बाद मिलने वाली मुक्ति परदे के भीतर है, इसलिए उसके सब ज्ञाता बने बैठे हैं। मुक्ति के पीछे पड़कर सब भावुक अपने को भ्रष्ट करते हैं। मरने के बाद किसने मुक्ति पायी है, यह कैसे जाना जाय? पलटू साहेब कहते हैं कि मुक्ति की वास्तविकता लोग उतावली और भावुकता में देखते हैं। मरने के बाद वाली मुक्ति की बात कौन बतावे, क्योंकि मरकर कोई लौटकर आता नहीं।

**विशेष**—यहां ग्रंथकार मुक्ति का खंडन नहीं करते हैं, अपितु लोकांतर में जाकर स्वर्ग, जन्नत, मुक्तिधाम आदि में बसने की बात करनेवाले परोक्षवादियों पर व्यंग्य करते हैं। जो अपने सम्प्रदायों की भ्रमपूर्ण मान्यताओं

में डालकर लोगों को हिंसात्मक कर्मकांडों में फंसाकर उन्हें भटकाते हैं। लोगों ने कल्पित लोकों में जाकर विषय-भोग को मुक्ति मान रखा है।

पलटू साहेब की वाणी-वाणी में मुक्ति का स्वरूप प्रकट है। उनका निष्काम आत्मलीन व्यक्तित्व ही मुक्त स्वरूप है। जो आज मुक्त है, वही शरीरांत में सदा के लिए मुक्त है। जो आज भटका है, वह मर जाने पर कौन-सी मुक्ति पायेगा?

### कुंडलिया-216

**चिन्ता रूपी अगिन में जरै सकल संसार॥**
**जरै सकल संसार जरत निरपति को देखा।**
**बादसाह उमराव जरत हैं सैयद सेखा॥**
**सुर नर मुनि सब जरैं जोगी औ जती संन्यासी।**
**पंडित ज्ञानी चतुर जरै कनफटा उदासी॥**
**जंगम सेवरा जरै जरै नागा बैरागी।**
**तपसी दूना जरै बचै नहिं कोऊ भागी॥**
**पलूट बचते संत जन जेकरे नाम अधार।**
**चिन्ता रूपी अगिन में जरै सकल संसार॥**

**शब्दार्थ**—उमराव=उमरा, धनिक, सामंत। सैयद=नेता, सरदार, फातिमा से उत्पन्न वंश। सेखा=सेख, शैख, वृद्ध, गुरुजन, विद्वान, खानकाह (आश्रम) का खलीफा, महंत, मुसलमानों में चार जातियों में पहला शैख, सैयद, मुगल, पठान में शैख। जंगम=शिवाचारी। सेवड़ा=जैन-बौद्ध।

**भावार्थ**—चिंता की आग में संसार के सारे मनुष्य जल रहे हैं। राजा को जलते देखा, बादशाह, धनी सरदार, सैयद, शैख, सुर-नर-मुनि, योगी, यती, संन्यासी, पंडित, ज्ञानी, बुद्धिमान, कनफटा, उदासी, जंगम, सेवड़ा, नागा, वैरागी जलते हैं। तपस्वी दूना जलते हैं। कोई भागकर बचता नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि वे संतजन चिंता की अग्नि से बचते हैं जिनको सत्यनाम के अर्थस्वरूप आत्मज्ञान का आधार है; अन्यथा चिंता की अग्नि में सारा संसार जल रहा है।

### कुंडलिया-217

**जाको निरगुन मिला है भूला सरगुन चाल॥**
**भूला सरगुन चाल बचन ना मुख से आवै।**
**तसबी और किताब नहीं काजी को भावै॥**

**पंडित पढ़ै न बेद तीरथ बैरागी त्यागा।**
**कायथ कलम न लेय राज तजि राजा भागा॥**
**बेस्वा तजा सिंगार सिद्ध की गयी सिद्धाई।**
**रागी भूला राग जननि सुत देइ बहाई॥**
**पलटू भूली गीथिनी कहूँ भात कहुँ दाल।**
**जाको निरगुन मिला है भूला सरगुन चाल॥**

**शब्दार्थ**—निरगुन= निर्गुण, भौतिक तीनों गुणों—सत, रज तम से परे अपरोक्ष आत्मबोध। सरगुण= सगुण, देवी-देवता, अवतार, स्थूल पूजा। तसबी= तस्बीह, सौ दाने की माला जिससे मुसलमान जप करते हैं। गीथिनी= समझदार स्त्री।

**भावार्थ**—जिस मनुष्य को यथार्थ सद्गुरु से अपने स्वरूप अपरोक्ष आत्मा का बोध मिल गया है, उसको स्थूल देवी-देवता तथा परोक्ष ईश्वर पाने का टंट-घंट भूल गया। वह विवाद करना छोड़ देता है। काजी तस्बीह और किताब से उदास हो जाता है। पंडित वेद पढ़ना भूल जाता है, वैरागी तीर्थ-व्रत से उदासीन हो जाता है। कायस्थ कलम छोड़ देता है। राजा भी राज्य छोड़कर भाग खड़ा होता है। वेश्या शृंगार छोड़कर अंतर्मुख हो जाती है। सिद्ध नामधारी अपना दिखावा छोड़कर सरल हो जाता है। गाने-बजाने वाले गाना-बजाना छोड़ देते हैं। माता पुत्र का मोह त्याग देती है। पलटू साहेब कहते हैं कि समझदार गृहस्थ स्त्री अपनी गृहस्थी भूल जाती है। उससे कहीं भात छूट गया और कहीं दाल छूट गयी। जिसको आत्मबोध हो गया वह जगत से उदास हो जाता है।

**विशेष**—पलटू साहेब के कथन में काव्यरस अधिक रहता है। ऊपर का सरल भाव है कि जिसे निजस्वरूप का बोध हो जाता है वह बहिर्मुखता से हटकर अंतर्मुख हो जाता है। वह समझ जाता है कि सुख, आनन्द, परमात्मा, मोक्ष, निर्वाण बाहर नहीं है, किन्तु मन की पूर्ण शांति है।

## कुंडलिया-218

**अमृत को सागर भर्यो देखे प्यास न जाय॥**
**देखे प्यास न जाय पिये बिनु कौन बतावै।**
**कल्प बृच्छ को देखि खाये बिनु भूख न जावै॥**
**और की दौलत देखि दरिद्दर नाहिं नसाई।**
**अंधा पावै आँखि साच वाकी बैदाई॥**

**लोहा कंचन होय पारस की करै सरहना।**
**क्या मलया की सिफत काठ को काठै रहना॥**
**सतगुरु तुम्हरे बचन को पलटू ना पतियाय।**
**अमृत को सागर भर्‍यो देखे प्यास न जाय॥**

**शब्दार्थ**—सिफत= सिफ़त, विशेषता, गुण, लक्षण।

**भावार्थ**—अमृत का सागर भरा हो, परंतु उसको देखने मात्र से प्यास नहीं मिटेगी। बिना उसको पीये, उसका अनुभव कौन बतायेगा? कल्पवृक्ष को केवल देखकर फल खाये बिना भूख नहीं जायेगी। दूसरे के धन को देखकर अपनी दरिद्रता नहीं मिटती। वैद्य की विशेषता है जब अंधे की आंखों में रोशनी आ जाय। जब पारस पत्थर लोहा को सोना बना दे तब उसकी प्रशंसा है। मलय चंदन की विशेषता क्या हुई जब उसके पास रहने वाले पेड़-पौधे सुगंधरहित काठ-के-काठ ही रह गये। पलटू साहेब कहते हैं कि हे सद्गुरु! आपकी बात पर मैं तब तक विश्वास नहीं कर सकता जब तक मुझे पूर्ण शांति नहीं मिल जाती। अमृत का सागर भले ही भरा हो, परन्तु उसको देखने मात्र से प्यास नहीं जाती है।

**विशेष**—सद्गुरु से आत्मज्ञान का उपदेश पाकर जब साधक विषयों से विरक्त हो अंतर्मुख होता है, तब उसे निर्भय शांति मिलती है।

## कुंडलिया-219

**जैसे नद्दी एक है बहुतेरे हैं घाट॥**
**बहुतेरे हैं घाट भेद भक्तन में नाना।**
**जो जेहि संगत परा ताहि के हाथ बिकाना॥**
**चाहै जैसी करै भक्ति सब नामहिं केरी।**
**जाकी जैसी बूझ मारग सो तैसी हेरी॥**
**फेर खाय इक गये एक ठौ गये सिताबी।**
**आखिर पहुँचे राह दिना दस भई खराबी॥**
**पलटू एकै टेक ना जेतिक भेष तै बाट।**
**जैसी नद्दी एक है बहुतेरे हैं घाट॥**

**शब्दार्थ**—नद्दी= नदी। फेर= चक्कर, भटकाव। सिताबी= शिताबी, शीघ्रता। टेक= अवलंब, आश्रय, पक्ष। जेतिक= जितने। बाट= सम्प्रदाय, मजहब, पंथ।

**भावार्थ**—जैसे नदी एक है किन्तु उसके घाट बहुत हैं, वैसे लक्ष्य सबका दुखों से छूटना है, परन्तु उसके लिए बहुत सम्प्रदाय, मजहब एवं पंथ के भक्त हैं जिनमें अगणित भेद हैं। जो भक्त जिस सम्प्रदाय की संगत में पड़ गया, वह उसी के हाथों बिक गया। चाहे जैसी भक्ति लोग करें, सब विविध नामों की उपासना करते हैं। जिसकी जैसी समझ है, वह उसी प्रकार का रास्ता अपनाता है। एक साधक भ्रम में पड़कर चक्कर काट रहा है और दूसरा सही रास्ता पा गया और शीघ्र आत्मशांति पा गया। जो भ्रम में पड़ा वह पता नहीं कब सही रास्ता पावे और अपने बोध में पहुंचे। उसके समय की बरबादी हुई। पलटू साहेब कहते हैं कि नाना मत के उपासकों का एक ही उपासना आश्रय नहीं है, अपितु जितने मत हैं उतने पथ हैं। कल्याण तो सब चाहते हैं, रास्ते भिन्न-भिन्न हैं।

**विशेष**—प्रत्यक्ष, परोक्ष तथा अपरोक्ष तीन विषय हैं। प्रत्यक्ष जगत विषय है, परोक्ष ईश्वर-देवादि कल्पना है और अपरोक्ष आत्मबोध है। अपरोक्ष बोध से ही पूर्ण कल्याण होगा।

### कुंडलिया-220

**साध बचन साचा सदा जो दिल साचा होय॥**
**जो दिल साचा होय रहै ना दुबिधा भागै।**
**जो चाहै सो मिलै बात में बिलँब ना लागै॥**
**मन बचन कर्म लगाय संत की सेवा लावै।**
**उकठा काठ बियास साच जो दिल में आवै॥**
**जिनको है बिस्वास तेही को बचन फुरानी।**
**ह्वैगा उनका काम संत की महिमा जानी॥**
**पलटू गाँठि में बाँधिये खाली पड़ै न कोय।**
**साध बचन साचा सदा जो दिल साचा होय॥**

**शब्दार्थ**—साध वचन= सच्चा वचन, अपरोक्ष आत्मबोध। उकठा= सूखा। बियास= विकसित होता है। फुरानी= सत्य हुई।

**भावार्थ**—साधु का दिया हुआ आत्मबोध सदैव सत्य है। यदि स्वयं उसे सच्चे दिल से ग्रहण करे, तो उसके मन में यह दुविधा नहीं रहेगी कि सुख-शांति एवं परमात्मा बाहर हैं। वह बाहरी कल्पना छोड़कर आत्मनिष्ठ हो जायेगा। मन जो चाहता है निर्भय सुख-शांति, वह आत्मबोध और आत्मशोध से मिल जायेगा। उसमें विलंब नहीं होगा। अतएव साधक को चाहिए कि बस

मन, वचन और शरीर को समर्पित कर विवेकवान संतों की सेवा करे। यदि दिल में सच्ची लगन है तो सूखते वृक्ष को पानी मिल जाने पर जैसे वह हरा हो जाता है, वैसे निराश साधक सच्चे बोधवान की संगत मिल जाने पर अपना कल्याण कर लेता है। जिसको आत्मविश्वास है कि मैं मन–इन्द्रियों को जीतकर अपना कल्याण कर लूंगा, उसी के दिल में संतों के उपदेश सफल होते हैं। उनका कल्याण हो जाता है क्योंकि उन्होंने सच्चे संत और उनके उपदेश को समझ लिया है। पलटू साहेब कहते हैं कि जिन्होंने संतों के उपदेश अपने मन में दृढ़ कर लिया है उनका परिश्रम व्यर्थ नहीं जाता। विवेकवान संतों का आत्मबोध उपदेश सच्चा होता है, यदि साधक उसे सच्चाई से ग्रहण करे तो उसका कल्याण निश्चित है।

## कुंडलिया–221

**महीं भुलाना फिरत हौं कि जगतै गया भुलाय॥**
**जगतै गया भुलाय देखि सब हँसते हैं हम कँह।**
**उनकी करनी देखि हँसत हैं हमहूँ उन कँह॥**
**बाय जोगी को जगत जगत को जोगी बाई।**
**दोऊ को झौंसे आनि कहाँ अब तीसर पाई॥**
**एक साहु सौ चोर चोर को साहु बनावै।**
**जगत भगत से बैर आपनी दूनौ गावै॥**
**पलटू तीसर है नहीं साखी भरै जो आय।**
**महीं भुलाना फिरत हौं कि जगतै गया भुलाय॥**

**शब्दार्थ**—महीं= मैं ही। बाय–बाई= वायु, वातव्याधि, अग्निज्वाला। झौंसे= झुलसावे, जलावे।

**भावार्थ**—मैं ही भूला फिरता हूं कि जगत के लोग भूले हैं? संसार के लोग मुझे देखकर हंसते हैं। संसार के लोगों की करनी देखकर मैं भी उन पर हंसता हूं। योगी के लिए जगत के लोग ज्वाला हैं और जगत के लिए योगी ज्वाला है। दोनों दोनों को भला–बुरा कहते हैं। तीसरा साक्षी कहां से मिले? एक सत्यपरायण है और सौ चोर हैं। वे सौ चोर सत्यपरायण को चोर सिद्ध करते हैं। इस प्रकार जगत और भगत से वैर मचा है। दोनों अपनी–अपनी बात कहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि तीसरा कोई नहीं है जो साक्षी बनकर इनके बीच सही–गलत का निर्णय कर सके। मैं ही भूला फिरता हूं कि जगत के लोग भूले हैं?

## कुंडलिया-222

**जगत भगत से बैर है चारों जुग परमान॥**
**चारों जुग परमान बैर ज्यों मूस बिलाई।**
**नेवर भुवंगम बैर कँवल हिम कर अधिकाई॥**
**हस्ती केहरि बैर बैर है दूध खटाई।**
**भैंस घोड़ से बैर चोर पहरू से भाई॥**
**पाप पुन्य से बैर अगिन औ बैरी पानी।**
**संतन यही बिचार जगत की बात न मानी॥**
**पलटू नाहक भूँकता जोगी देखे स्वान।**
**जगत भगत से बैर है चारों जुग परमान॥**

**शब्दार्थ**—नेवर=नेवला। कँवल=कमल। हिम=पाला, बर्फ। केहरि= सिंह।

**भावार्थ**—यह प्रमाण है कि जगत और भगत से चारों युगों से वैर चला आ रहा है। जैसे चूहे से बिल्ली का, सर्प से नेवले का, कमल से पाला का, हस्ती से सिंह का, दूध से खटाई का, घोड़े से भैंसे का, पहरेदार से चोर का, पाप से पुण्य का और अग्नि से पानी का वैर है। वैसे संत से असंत का वैर है। संतों का यह विचार है कि वे संसारियों की मायावी बातें नहीं मानते। पलटू साहेब कहते हैं कि संत को देखकर श्वान व्यर्थ ही भूंकता है। जगत और भगत से चारों युगों से प्रामाणिक वैर चला आया है।

**विशेष**—यहां वैर का तात्पर्य शत्रुता नहीं है, किन्तु विचारों का विरोध है। संयमी और असंयमी भी एक दूसरे को भटका हुआ कहते हैं। एक अंतर्मुख होने में लाभ मानता है और दूसरा भोगों में उलझना लाभ मानता है।

## कुंडलिया-223

**लेहु परोसिनि झोपड़ा नित उठि बाढ़त रार॥**
**नित उठि बाढ़त रार काहिको सरबरि कीजै।**
**तजिये ऐसा संग देस चलि दूसर लीजै॥**
**जीवन है दिन चारि काहे को कीजै रोसा।**
**तजिये सब जंजाल नाम कै करौ भरोसा॥**
**भीख माँगि बरु खाय खटपटी नीक न लागै।**
**भरी गोन गुड़ तजै तहाँ से साँझै भागै॥**

**पलटू ऐसन बूझि कै डारि दिहा सिर भार।**
**लेहु परोसिन झोपड़ा नित उठि बाढ़त रार॥**

**शब्दार्थ**—रार=झगड़ा। सरबरि=बराबरी, झगड़ा, वाग्युद्ध। रोसा=क्रोध। खटपटी=विवादी, झगड़ालू। गोन=टाट का बड़ा थैला। डारि दिहा=गिरा दिया, त्याग दिया।

**भावार्थ**—हे पड़ोसी ! अपना मकान लो। तुम्हारे साथ रहकर नित्य सबेरे से ही झगड़ा बढ़ता है। मैं किससे विवाद करूं? कुसंग त्यागकर दूसरे देश में चला जाना अच्छा है। इस चार दिन के जीवन में क्यों किसी पर गुस्सा करें। संसार-जाल त्यागकर सत्स्वरूप आत्मज्ञान में संतुष्ट रहना है। मुझे भीख मांगकर खाने का अवसर पड़े तो अच्छा है, किन्तु विवाद में रहना अच्छा नहीं लगता। जहां विवाद है वहां के गुड़ भरे बोरे को छोड़कर शाम को ही भाग जाना अच्छा है—विवादयुक्त ऐश्वर्य की जगह से शांति-इच्छुक दूर रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि इस प्रकार समझकर मैंने अपने सिर का बोझा उतार दिया है। हे पड़ोसी ! तुम अपना घर लो, मैं यहां से जाता हूं। कौन यहां रहकर नित्य झगड़े में पड़े।

**विशेष**—कुसंग से अलग रहना चाहिए। कलह-प्रिय मनुष्य का सम्बन्ध न करे। यदि हो गया हो तो समझ लेने पर छोड़ दे।

## कुंडलिया-224

**सिध चौरासी नाथ नौ बीचै सभै भुलान॥**
**बीचै सभै भुलान भक्ति की मारग छूटी।**
**हीरा दिहिन है डारि लिहिन इक कौड़ी फूटी।**
**राँड़ माँड़ में खुसी जक्त इतनै में राजी।**
**लोक बड़ाई तुच्छ नरक में अटकी बाजी॥**
**झूठ समाधि लगाय फिरै मन अंतै भटका।**
**उहाँ न पहुँचा कोय बीच में सब कोइ अटका॥**
**पलटू अठएँ लोक में पड़ा दुपट्टा तान।**
**सिध चौरासी नाथ नौ बीचै सभै भुलान॥**

**शब्दार्थ**—सिध चौरासी=चौरासी सिद्ध। नाथ नौ=नौ नाथ। रांड़=विधवा, वेश्या। भांड़=चमक-दमक। बाजी=दावं। अठएं लोक=आंख, नाक, कान, जीभ, चाम—पांच ज्ञानेन्द्रियां तथा मन और बुद्धि, इन सातों से पार आठवां आत्मलोक स्वरूपस्थिति।

**भावार्थ**—चौरासी सिद्ध तथा नौ नाथ आदि सब बीच में ही भूलकर अटक गये हैं। इनका भक्ति-पथ छूट गया है। ये आत्मस्थिति रूपी हीरा त्याग दिये और हठयोग रूपी फूटी कौड़ी बटोर लिये। संसार के लोग तो स्त्री-मोह और सांसारिक चमक-दमक में ही प्रसन्न हैं। परन्तु विषय-वासना तथा लोक-बड़ाई तुच्छ है। इनमें उलझ जाना अपने कल्याण के दावं को भौतिक क्षणिक उपलब्धियां रूपी नरक में गवां देना है। दिखावा के लिए समाधि लगाने पर मन संसार में ही भटकता है। ऐसे लोगों में कोई स्वरूपस्थिति में नहीं पहुंचता है, अपितु बीच में ही उलझ जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं तो इन्द्रिय-मन से परे स्वरूपस्थिति रूपी आत्मलोक में सहज समाधि रूपी दुपट्टा तानकर सो रहा हूं। ये चौरासी सिद्ध तथा नौ नाथ आदि बीच में ही उलझ गये।

### कुंडलिया-225

**हंस चुगैं ना घोंघी सिंह चरैं न घास॥**
**सिंह चरैं न घास मारि कुंजर को खाते।**
**जो मुरदा ह्वै जाय ताहि के निकट न जाते॥**
**वे ना खाहि असुद्ध रीत कुल की चलि आई।**
**खाये बिनु मरि जाहिं दाग न सकहि लगाई॥**
**संत भजन सिरताज धरन धारी सो धारी।**
**नई बात जो करैं मिलत है उनको गारी॥**
**भीख न माँगैं संत जन कहि गये पलटू दास।**
**हंस चुगैं ना घोंघी सिंह चरैं ना घास॥**

**शब्दार्थ**—धरन=धारण, निश्चय ।

**भावार्थ**—कहावत के अनुसार हंस घोंघी नहीं चुगते अपितु मोती चुगते हैं और सिंह घास नहीं चरते हैं, वे हाथी को मारकर खाते हैं। सिंह मुरदा के निकट नहीं जाते, अपितु स्वयं मारकर खाते हैं। उनके कुल की रीति यही है। वे अशुद्ध नहीं खाते। दूसरे का मारा उनके लिए अशुद्ध है। वे खाये बिना भूखे भले ही मर जायं, परंतु वे अपनी नीति में कलंक का दाग नहीं लगाते। संत आत्मशोधन में सर्वोच्च होते हैं। उन्होंने जो धारणा बना ली, वह बना ली। यदि वे अपनी सही धारणा के विपरीत काम करेंगे तो उनको गाली मिलेगी। पलटू साहेब कहते हैं कि संत भिक्षा नहीं मांगते। हंस घोंघी नहीं चुगते और सिंह घास नहीं चरते हैं।

## कुंडलिया-226

**कृस्न कन्हैया लाल है वह गोकुल के घाट॥**
**वह गोकुल के घाट जाइ के गोता मारै।**
**जीवन आसा त्यागि बूड़ि के ढूँढ़ निकारै॥**
**मान बड़ाई छोड़ि चित्त हरि चरनन लावै।**
**कुंज गली के बीच जाय तब पिय को पावै॥**
**देखै पिय को रूप सुन्दर बहु स्याम सलोना।**
**बरै तेल की टेम आगि में बरता सोना॥**
**कहि पलटू परसाद यह पावै प्रेम की बाट।**
**कृस्न कन्हैया लाल है वह गोकुल के घाट॥**

**शब्दार्थ**—सलोना= सुन्दर। टेम= ज्योति।

**भावार्थ**—अंतर्मुखता गोकुल का घाट या कुंजगली है और आत्मा कन्हैया लाल कृष्ण है। जब साधक अंतर्मुखता में गोता लगाता है तब जीने की आशा त्यागकर तथा अंतर्मुखता में डूबकर आत्म-अनुभव-रत्न निकाल लेता है। वह मान-बड़ाई छोड़कर अपना मन आत्मज्ञान में लगाता है। अन्तर्मुखता की कुंजगली में आत्मा रूपी परमात्मा का साक्षात्कार करता है। उस दशा में साधना में डूबी मनोवृत्ति आत्मा-पति का श्याम-सलोना सुन्दर रूप देखती है। जैसे तेल की बत्ती जलती है, वैसे वह ज्योतित आत्मज्ञान की स्थिति है। जैसे आग में पड़कर सोना शुद्ध हो जाता है वैसे अंतर्मुख होकर मनोवृत्ति शुद्ध हो जाती है। पलटू साहेब कहते हैं कि यह स्थिति आत्मानुराग के घाट पर मिलती है। आत्मा कृष्ण कन्हैया लाल है और उसका अंतर्मुखता रूपी गोकुल के घाट पर सक्षात्कार होता है।

**विशेष**—किसी सगुण के रूपक में निर्गुण की कही हुई बात ऐसी ही होती है। श्री कृष्ण श्याम सुन्दर सलोने हैं। आत्मा का श्याम सुन्दर सलोना होना उसका शुद्ध ज्ञान स्वरूप है जो रूपरहित है। निर्गुण आत्मा रूपी हरि के चरण नहीं होते। वस्तुतः आत्मलीनता ही हरिचरण में निवास है।

## कुंडलिया-227

**कौड़ी गाँठि न राखई हमा-नियामत खाय॥**
**हमा-नियामत खाय नहीं कुछ जग की आसा।**
**छत्तिस व्यंजन रहै सबर से हाजिर खासा॥**

**जेकरे है सत नाम नाम की चेरी माया।**
**जोरू कहवाँ जाय खसम जब कैद में आया॥**
**माया आवै चली रैनि दिन मैं दुरियावों।**
**सतगुरु दास कहाय नहीं मैं माँगन जावों॥**
**राजा औ उमराव हाथ सब बाँधे आवैं।**
**द्वारे से फिरि जायँ नहीं फिर मुजरा पावैं॥**
**जंगल में मंगल करै पलटू बेपरवाय।**
**कौड़ी गाँठि न राखई हमा-नियामत खाय॥**

**शब्दार्थ**—हमा=पूरा, सब। नियामत=दुर्लभ पदार्थ, उत्तम पदार्थ। सबर=सब्र, संतोष। खासा=शुद्ध। खसम=पति, आत्मा। उमराव=धनी। मुजरा=आदर।

**भावार्थ**—संत अपने पास कौड़ी भी नहीं रखते, किन्तु वे नित्य पूरे उत्तम पदार्थों का व्यंजन खाते हैं, वह है चित्त की प्रसन्नता। वे संसार के भोगों की आशा नहीं करते। वे संतोष से रहते हैं तो मानो उनके पास छत्तीसों प्रकार के व्यंजन रहते हैं। जिसको सत्स्वरूप आत्मा का ज्ञान है, माया उसकी गुलाम होकर रहती है। जो अपने आत्मा को वश में कर लिया, माया अलग कहां जायेगी। वह तो उसकी चेरी बनकर रहेगी। संत कहते हैं कि रात-दिन माया को दूर करता हूं, परन्तु वह मेरे पास चली आती है। मैं सद्गुरु का भक्त कहलाता हूं, अतएव मैं किसी से कुछ मांगने नहीं जाता हूं। राजा और धनी लोग हाथ जोड़े मेरे पास आते हैं। जब वे मुझसे आदर नहीं पाते हैं तो मेरे द्वार से निराश लौट जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं सांसारिकता से निष्फिक्र हूं। इसलिए जंगल में मंगल—त्याग में आनन्द है। मैं अपने पास कौड़ी भी नहीं रखता हूं, किन्तु पूरा दुर्लभ पदार्थ खाता हूं, वह है प्रसन्नता।

## कुंडलिया-228

**जब देखौ तब सादी नौबत आठौ पहर॥**
**नौबत आठौ पहर गैब की निसु दिन झरती।**
**पचरँग जोड़ा खुसी दुरबेस की सादी चढ़ती॥**
**आफताब भा सूर रोसनी दिल में आई।**
**फिरै गैब का छत्र जिकर का मुस्क लगाई॥**
**अन्दर झूलै फील खाब में खतरा नाहीं।**
**सबर है पीठी पलँग सेहरा नाम इलाही॥**

**पलटू जलवा नूर का ज्यों दरियाव में लहर।**
**जब देखौ तब सादी नौबत आठा पहर॥**

**शब्दार्थ**—सादी=शादी, खुशी, आनन्दोत्सव, विवाह; यहां अर्थ है आनन्दोत्सव। नौबत=मंगलसूचक बाजा। गैब=परोक्ष, अदृश्य। पचरँग जोड़ा=पंच ज्ञान इन्द्रियां तथा पांच कर्म इन्द्रियां। दुरवेस=दरवेश, फकीर, संत। आफताब=आफ़ताब, सूर्य। सूर=अंधा। जिकर=जिक्र, चर्चा, सत्संग। मुस्क=मुश्क, कस्तूरी। फील=हाथी। खाब=ख़्वाब, नींद लेना, सोना, स्वप्न। सबर=सब्र, संतोष। पीठी=पीठिका, पीठ टेकने का आधार। सेहरा=फूलों की माला। इलाही=इलाह, ईश्वर। जलवा=जल्वा, शोभा। नूर=ज्योति, प्रकाश। दरियाव=दरिया, नदी, समुद्र।

**भावार्थ**—जीवन में हर क्षण आनन्द का उत्सव है और चौबीसों घंटे मांगलिक बाजा अदृश्य से झर रहा है। पांच ज्ञानेन्द्रियां और पांच कर्मेन्द्रियां जगत-वासना छोड़कर प्रसन्नता का कारण हो गयी हैं और फकीर के जीवन में हर समय शाश्वत आनन्द का ज्वार चढ़ता है। जब हृदय में आत्मज्ञान की अखंड ज्योति प्रज्वलित हुई तब सूर्य अंधकार जैसा लगने लगा—सूर्य की ज्योति से आत्मज्ञान की ज्योति उच्च है। मेरे ऊपर अदृश्य आत्मज्ञान का छत्र लगा है और सत्संग की कस्तूरी लगी है जो निरंतर सुगंधी दे रही है। हृदय भीतर मस्तानगी का हाथी झूम रहा है। अब निश्चिंतता की नींद में खतरा नहीं है। संतोष की पलंग और पीठासन पर विराजमान हूं और अंतरात्मा रूपी परमात्मा के स्मरण की माला शोभायमान है। पलटू साहेब कहते हैं कि ज्योतित आत्मस्मरण की शोभा वैसी ही है जैसे समुद्र में उसकी तरंगें। अब तो निरंतर आनन्द-उत्सव है और सब समय मंगल वादन है।

**विशेष**—संत पलटू साहेब के काव्यात्मक कथन में सार यही है कि जगत की मिथ्या चमक-दमक से लौटकर जब अंतर्मुख हुआ तो परम शांति का अपार ऐश्वर्य मिल गया, क्योंकि हमारा परम सुख एवं परमात्मा आत्मा ही है। जब उसमें निरंतर स्थिति हो गयी, तब निर्भय और शाश्वत शांति मिल गयी।

## कुंडलिया-229

**रन का चढ़ना सहज है मुसकिल करना जोग॥**
**मुसकिल करना जोग चित्त को उलटि लगावै।**
**बिषय बासना तजै प्रान ब्रह्मांड चढ़ावै॥**

**साधै वायू प्रान कुण्डली करै उथपना।**
**अष्ट कँवल दल उलटि कँवल दल द्वादस लखना॥**
**इँगला पिंगला सोधि बंक के नाल चढ़ावै।**
**चार कला को तोड़ि चक्र षट जाय बिधावै॥**
**पलटू जो संजम करै करै रूप से भोग।**
**रन का चढ़ना सहज है मुसकिल करना जोग॥**

**शब्दार्थ**—रन= रण, युद्ध। जोग= योग। उथपना= उर्ध्वमुख। इंगला= नाक की बाईं नाड़ी। पिंगला= नाक की दाईं नाड़ी। बंक के नाल=बंकनाल, आग फूंकने की पाइप जिससे सोनार आग फूंकता है। चक्र षट्= छह चक्र—मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहद, विशुद्धि तथा आज्ञा चक्र। रूप= स्वस्वरूप।

**भावार्थ**—युद्ध में चढ़ जाना सरल है, परन्तु योग करना कठिन है। योग-साधना में अपने मन को विषयों से मोड़कर अंतर्मुख करना होता है। इसके लिए विषय-वासना का त्यागकर प्राण को ब्रह्माण्ड में चढ़ाना होता है। इसमें प्राणवायु को प्राणायाम-क्रिया द्वारा शोधकर कुंडलिनी को उर्ध्वमुख करना होता है। आठ चक्रों के कमलदल को बेधकर द्वादस कमल दल में पहुंचना होता है। नाक की बाईं-दाईं सांस को प्राणायाम से शोधकर सुषुम्णा रूपी बंकनाल से ब्रह्माण्ड में चढ़ाना होता है। मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार की कला को मोड़कर छह चक्रों को बेधना होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो अपने चित्त में संयम करके अंतर्मुख होता है, वह स्वस्वरूप आत्मानुभव का भोग करता है। युद्ध में चढ़ना सहज है, किन्तु योग करना कठिन है।

**विशेष**—ऊपर के कथन में हठयोग के अंग—कुंडलिनी, अष्ट कंवल, इंगला, पिंगला, बंकनाल, षटचक्र आदि की बातें आयी हैं। आत्मज्ञान की साधना में इन उलझी हुई तथा काल्पनिक बातों की आवश्यकता नहीं है, किन्तु विषय-वासना त्यागकर अंतर्मुख होना है। साक्षीभाव में रहकर संकल्पों का त्याग करते रहना और अपने आप शांत रहना ही सच्चा योग है।

### कुंडलिया-230

**आगि लागि मसि जरि गई कागद जरै न कोय॥**
**कागद जरै न कोय कागद है बहुत पुराना।**
**अक्खर आवै जाय अखर को नाहिं ठिकाना॥**

**वो भी जरै बनाय अखर का लिखनेहारा।**
**बाँचै सो जरि जाय जरै जो करै बिचारा॥**
**कोटिन अक्खर बाद अन्त कागद भी जरता।**
**कागद जरे के बाद रहै कागद का करता॥**
**पलटू जब कागद जरै वा दिन मेरा होय।**
**आगि लागि मसि जरि गई कागद जरै न कोय॥**

**शब्दार्थ**—मसि= स्याही, अक्षर, अनेक संस्कार। कागद= कागज, मन, अंत:करण। अक्खर= अक्षर, वर्ण, संस्कार।

**भावार्थ**—मन कागज है। संस्कार अक्षर हैं। काल की आग से संस्कार लुप्त हो जाते हैं, किन्तु मन बचा रहता है। यह मन-कागज अनादिकालीन है। संस्कार रूपी अक्षर आते-जाते रहते हैं। इनका कोई स्थायित्व नहीं है। संस्कार रूपी अक्षरों का निर्माता अहंकार भी परिवर्तित हो जाता है। संस्कार रूपी अक्षरों को बांचनेवाला चित्त भी बदल जाता है और जो उस पर विचार करने वाली बुद्धि है, वह भी बदल जाती है। करोड़ों संस्कारों के आने-जाने के बाद जब जीव को आत्मज्ञान होता है तब मन रूपी कागज भी ज्ञानाग्नि में जल जाता है। तब मन का कर्ता जीव शेष रह जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब मन रूपी कागज ज्ञानाग्नि में जल जाता है वही मेरा उत्तम दिन है। जब मन मर गया तब मोक्ष हो गया। काल-चक्र की आग में संस्कार तो बदल जाते हैं, किन्तु मन नहीं मरता। जब ज्ञानाग्नि में मन जल गया तब जीव का मोक्ष हो गया।

## कुंडलिया-231

**तबक चारदह अन्दर है अस्थल बे दरियाव॥**
**अस्थल बे दरियाव अर्श कुर्सी खुद दीदन।**
**तूबा दरखत अज हद शीरीं मेवा खुर्दन॥**
**नूर तजल्ली रूह लाहूत रसीदा नादिर।**
**रौशन-जमीर बेचूँ सीना-साफ काजी कादिर॥**
**हूहू गुफ्तन फ़ना रूह को सोई बातिन।**
**पाक अल्लाह मकान तहाँ को भी वो साकिन॥**
**पलटू आरिफ़ से कहै तू भी चाहो जाव।**
**तबक़ चारदह अन्दर है अस्थल बे दरियाव॥**

**शब्दार्थ**—तबक=तबक़, लोक, तल। चार दह=चार दस, चौदह। अस्थल=स्थान, पृथ्वी। बे दरियाव=बिना पानी का। अर्स=अर्श, आठवां या सबसे ऊंचा स्वर्ग जहां खुदा रहता है। कुर्सी=आसन। खुद दीदन=अपने देखने योग्य, स्वानुभव की वस्तु। तूबा=स्वर्ग का एक वृक्ष जिसके फल बहुत मीठे माने जाते हैं। दरखत=दरख़्त, पेड़, वृक्ष। अज=से। हद=सीमा। शीरीं=मीठा। खुर्दन=छोटा-छोटा। नूर=प्रकाश, ज्योति। तज्जली=प्रकाश, रोशनी। रूह=जीव, आत्मा। लाहूत=संसार। रसीदा=पहुंचा हुआ, पूर्ण। नादिर=अनोखा, विलक्षण। रौशन=ज्योतित, प्रकाशमान। जमीर=ज़मीर, मन, अंतःकरण, विवेक। बेचूँ=उपमारहित, अद्वितीय। सीना साफ=शुद्ध मन। काजी=क़ाज़ी, न्याय करने वाला। कादिर=क़ादिर, सर्वशक्तिमान। हूहू=हू, ईश्वर का संक्षिप्त नाम। गुफ्तन=गुफ्त, कथन। फना=फ़ना, नाश, मृत्यु। बातिन=भीतर का, अंतःकरण। पाक=स्वच्छ, निर्मल। अल्लाह=आदरणीय और पूज्य—अल=आदरणीय, इलाह=पूज्य। साकिन=एक स्थान पर स्थिर रहनेवाला, निवासी। आरिफ = आरिफ़, जानने वाला, ज्ञानी; संतोष करने वाला; साधु, संत।

**भावार्थ**—आकाश में माना गया चौदहवां तबक वस्तुतः हमारे भीतर है। चौदहवें स्वर्ग स्थान में बिना पानी के धरती है। शुद्ध हृदय ही स्वर्ग है, जहां आत्मा रूपी परमात्मा का आसन है जो स्वानुभूति का विषय है। वहीं विवेक रूपी वृक्ष है जिसके फल मीठे होते हैं। वहां शांति रूपी मेवे मिलते हैं। भीतरी संसार-आत्मलोक में आत्मज्ञान का ज्योतित प्रकाश है। पहुंचा हुआ साधक उसका अनोखा मीठा फल खाता है। ज्योतित विवेक उपमारहित है। जिसका हृदय पवित्र है, वही काज़ी और आत्मसमर्थ है जो नाशवान पदार्थों का मोह छोड़कर आत्मा रूपी परमात्मा की चर्चा तथा धारणा करता है। वह अपने भीतर रूह का, आत्मा का अनुभव करता है। आत्मस्थिति ही अल्लाह का पवित्र स्थान है जहां ज्ञानी स्थिरभाव से रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं ज्ञानी महात्मा से भी कहता हूं कि आपका भी विचार हो तो उस भीतरी स्वर्ग में जाओ, जहां आत्मा रूपी परमात्मा विराजता है। ध्यान रहे, चौदहवां स्वर्ग स्थान हमारे भीतर ही है जो पानी के बिना धरती है।

**विशेष**—बिना पानी की धरती का अर्थ है बिना भौतिक पदार्थ के आत्मस्थिति। चेतन आत्मा प्रपंचशून्य शुद्ध असंग तत्त्व है।

## कुंडलिया-232

**बस्ती माहिं चमार की बाम्हन करत बेगार॥**
**बाम्हन करत बेगार लोग सब गैर-बिचारी।**
**मूरख है परधान देहि ज्ञानी को गारी॥**
**अद्वैता को मेटि द्वैत कै करते थापन।**
**दौलत के सम्बन्ध अमल वे करते आपन॥**
**ज्ञानि महरसी सन्त ताहि की निन्दा करते॥**
**अज्ञानी के मध्य सिफत वे अपनी धरते॥**
**पलटू पीतर कनक को कोउ न करै बिचार।**
**बस्ती माहिं चमर की बाम्हन करत बेगार॥**

**शब्दार्थ**—अद्वैत= असंग आत्मज्ञान। अमल= अधिकार। महरसी= महर्षि। सिफत= सिफ़त, विशेषता।

**भावार्थ**—चमारों की बस्ती में ब्राह्मण बेगारी करता है। लोग बिना विचार के हो गये हैं। गांव का प्रधान मूर्ख है, वह ज्ञानी को गाली देता है। असंग एवं निराधार आत्मज्ञान का तिरस्कार करके नाना ईश्वर तथा देवताओं की स्थापना कर रहे हैं। जहां भी धन-संपत्ति देखते हैं उस पर अपना अधिकार जमाते हैं। ज्ञानी, महर्षि तथा संत की निन्दा करते हैं और अज्ञानियों के बीच में अपनी विशेषता की डींग हांकते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि सबके अपने भीतर आत्मा रूपी सोना है, परन्तु उस पर कोई विचार नहीं करता।

**विशेष**—सबकी देह चाम से बनी है। इसलिए सबकी देह चमार है और सबके भीतर बैठा आत्मा ब्रह्म है, इसलिए सबका आत्मा ब्राह्मण है। अतएव देहासक्त चमार है और देहासक्ति से पार होकर आत्मलीन व्यक्ति ब्राह्मण है।

## कुंडलिया-233

**कुत्ता हाँड़ी फँसि मुवा दोस परोसि क देय॥**
**दोस परोसि क देय आपनौ हठ नहिं मानै।**
**न्योत रही लगवार खसम से परदा तानै॥**
**कपड़ा की सुधि नाहिं नंगी ह्वै पड़ी उतानी।**
**कोऊ मने जो करै बोलती करकस बानी॥**

**माया कै लग भूत खसम कौ नाहिं डेराती।**
**घर की सम्पति छाड़ि और की जोगवै थाती॥**
**पलटू कूसंगति पड़ी पिउ कै नाम न लेय।**
**कुत्ता हाँड़ी फँसि मुवा दोस परोसि क देय॥**

**शब्दार्थ**—लगवार=पर-पुरुष। खसम=पति।

**भावार्थ**—जैसे कुत्ता खाद्य खाने के लोभ से किसी की हंडी में मुंह डालकर फंसकर मर जाय, वैसे लोग विषयासक्तिवश स्वयं उलझकर मरते हैं, और दोष पड़ोसी को देते हैं। लोग अपने अहंकारजनित हठ को नहीं छोड़ते। कोई स्त्री अपने पति से भेद रखकर पर-पुरुषों को निमंत्रित कर रही है। उसे अपने शरीर की सुधि नहीं है, उतानी नंगी पड़ी है। यदि कोई उसे गलत रास्ते से रोकता है तो उससे कटु भाषण करती है। उसे माया का भूत लगा है। वह अपने पति की मर्यादा नहीं रखती। जैसे कोई अपने घर की संपत्ति की रक्षा त्यागकर दूसरे की रखी हुई थाती की रक्षा में लगा हो; पलटू साहेब कहते हैं कि इसी प्रकार मनुष्य कुसंगत में पड़कर आत्मा रूपी परमात्मा की न चर्चा करता है और न उसमें स्थित होता है। इस प्रकार मनुष्य भटककर मरता है। यह कुत्ते का हंडी में फंसकर मरने न्याय अपना स्वयं पतन करना है और दोष दूसरे को देना कि ईश्वर ने हमें भटका रखा है।

## कुंडलिया-234

**होनी रही सो ह्वै गई रोइ मरै संसार॥**
**रोइ मरै संसार काज कुछ उन से नाहीं।**
**गये हाथ से निबुकि तेही से सब पछिताहीं॥**
**भये काग से हंस काग सब निन्दा करते।**
**लोहा से भये कनक सोच सब लोहा मरते॥**
**ज्ञानी अब हम भये रोवैं सब मूरख संगी।**
**तिल से भये फुलेल तेल सब मार तिलंगी॥**
**पलटू उतरे पार हम भाड़ झोकि सब भार।**
**होनी रही सो ह्वै गई रोइ मरै संसार॥**

**शब्दार्थ**—निबुकि=निकल। फुलेल=सुगंधित तेल। तिलंगी=तेलंगाना देश का निवासी, यहां अर्थ है तेलवाले, भाव है अज्ञानी लोग।

**भावार्थ**—जो होनहार था वह हो गया, भले संसार के लोग इस बात को लेकर रो-रोककर मरते हों। मुझे उनसे कोई प्रयोजन नहीं है। वे सब इसलिए पश्चाताप करते हैं कि यह तो हमारे हाथ से छूटकर निकल गया। मैं काग से हंस हो गया हूं। इसी से सारे काग मेरी निन्दा करते हैं। मैं लोहा से सोना हो गया, तो सब लोहा चिंता करते हैं। मैं अब आत्मज्ञानी हो गया हूं तो मेरे मूर्ख साथी सब रो रहे हैं। मैं साधारण तेल से सुगंधित तेल हो गया, तो अज्ञानी लोग मुझे मारने दौड़ते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं सारे माया-मोह के बोझा को ज्ञानाग्नि के भाड़ में झोंककर भवसागर से पार हो गया हूं। जो होनी थी वह हो गयी, संसारी इसको लेकर रो-रोकर मरते हैं, तो यह उनकी बेसमझी है।

## कुंडलिया-235

**सिव सत्ती के मिलन में मोकौ भयौ अनन्द॥**
**मोकौ भयौ अनन्द मिल्यौ पानी में पानी।**
**दोऊ से भा सूत नहीं मिलि कै अलगानी॥**
**मुलुक भयौ सलतन्त मिल्यौ हाकिम कौ राजा॥**
**रैयत करै अराम खोलि कै दस दरवाजा॥**
**छूटी सकल बियाधि मिटी इन्द्रिन की दुतिया।**
**को अब करै उपाधि चोर से मिलि गई कुतिया॥**
**पलटू सतगुरु साहिब काटौ मेरौ बन्द।**
**सिव सत्ती के मिलन में मोकौ भयौअनन्द॥**

**शब्दार्थ**—सिव=शिव, चेतन। सत्ती=शक्ति, चेतना। सलतन्त= स्वतंत्र, शांति। रैयत=प्रजा।

**भावार्थ**—चेतन और चेतना एकमेक हो गये, इसलिए मैं आनन्दमग्न हो गया। जैसे पानी में पानी मिल जाय तो उसको अलग नहीं किया जा सकता, वैसे जब मनोवृत्ति आत्मलीन हो जाती है, तब सूत्रबद्ध की तरह वह उससे अलग नहीं होती, क्योंकि उससे बड़ी अथवा उसके समान अन्य उपलब्धि नहीं है। अब आत्मदेश में शांति हो गयी क्योंकि मन-हाकिम आत्मा-राजा से मिल गया। अब प्रजा दसों दरवाजा खोलकर विश्राम करती है—जीव इस दस द्वारे के खुले भवन-देह में विश्राम करता है। सब मनोव्याधि छूट गयी। अब इन्द्रिय-विषयरूपी द्वैत छूटकर आत्मलीनता हो गयी। अब विषय-भोग के प्रपंच में कौन पड़े। जैसे चोरों से पहरेदार कुतिया

के मिल जाने पर चोरों को चोरी करना सरल हो जाता है, वैसे विषयी मन से बुद्धि के मिल जाने पर विषयों में बह जाने में सरल हो जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे सद्गुरु साहेब! मेरी बुद्धि को जागरूक कीजिए और मेरे विषयासक्ति रूपी भवबंधन को काटिये। शिव-शक्ति—चेतन-चेतना के मिलन में आनन्द हो जाता है।

कुंडलिया-236

**ऐसा ब्राह्मन मिलै जो ताके परछौं पाँय॥**
**ताके परछौं पाँय ब्रह्म अपने को पावै।**
**भर्म जनेऊ तोरि प्रेम तिरसूत बनावै॥**
**सब कर्मन को करै कर्म से रहता न्यारा।**
**दुतिया देइ बहाय ब्रह्म का करै बिचारा॥**
**ज्ञान दिवस में सयन मोह रजनी में जागै।**
**पारब्रह्म भगवान ताहि घर भिच्छा माँगै॥**
**चेतन देइ जगाय ब्रह्म की गाँठि को खोलै।**
**करै गायत्री गुप्त सब्द ब्रह्मांड में बोलै॥**
**पलटू तजै अठारह सहस बरन ह्वै जाय।**
**ऐसा ब्राह्मन मिलै जो ताके परछौं पाँय॥**

**शब्दार्थ**—परछौं= धोऊं, आरती करूं, वंदना करूं।

**भावार्थ**—यदि मुझे ऐसा ब्राह्मण मिल जाय तो मैं उसके चरणों की वंदना-आरती करूं। वह अपने आप को ब्रह्म समझे, भ्रम का जनेऊ तोड़कर प्रेम के तीन अक्षर के सूत का जनेऊ पहने—सबसे प्रेम करे। टट्टी साफ करने, खेत जोतने से लेकर जीवन के सभी आवश्यक कर्म करते हुए उनके अहंकार तथा कर्मफल की कामना से रहित रहे; अन्य देवी-देवताओं, भगवान-भवानी को फेंककर केवल आत्मस्वरूपी ब्रह्म का विचार करे; आत्मज्ञान रूपी दिन में विश्राम करे; मोह-रात्रि में जागता रहे—मोह रहित रहे; परब्रह्म भगवान आत्मा ही है, अतएव वहीं से भिक्षा मांगे—आत्मा में ही संतुष्ट हो; अपने चेतन आत्मा को पूर्ण जाग्रत करे—असंगभाव में मग्न रहे; अपने आत्मा रूपी ब्रह्म के विषय में जो संशय-ग्रंथि है उसे खोल दे—निःसंशय आत्मबोध में दृढ़ रहे—आत्मा को ब्रह्म समझे; आत्मचिंतन रूपी गुप्त गायत्री का जप करे, अपने मन-मस्तिष्क रूपी ब्रह्माण्ड में ब्रह्म शब्द का

ही उच्चारण करे, पलटू साहेब कहते हैं कि तथाकथित ब्राह्मण के अठारह भेद को त्यागकर स्वयं सहस्रवर्ण का हो जाय—सब मनुष्यों के समान अपने को माने, मैं ऐसे ब्राह्मण का पैर पूजूंगा।

## कुंडलिया-237

**सब बैरागी बटुरि कै पलटुहि किया अजात॥**
**पलटुहि किया अजात प्रभुता देखि न जाई।**
**बनिया काल्हिक भक्त प्रगट भा सब दुतियाई॥**
**हम सब बड़े महन्त ताहि को कोऊ न जानै।**
**बनिया करै पखंड ताहि को सब कोऊ मानै।**
**ऐसी इर्षा जानि कोऊ न आवै खाई।**
**बनिया ढोल बजाय रसोई दिया लुटाई॥**
**मालपुवा चारिउ बरन बाँधि लेत कछु खात।**
**सब बैरागी बटुरि कै पलटुहि कियाअजात॥**

**शब्दार्थ**—बटुरि कै=इकट्ठा-एकजुट होकर। काल्हिक=कल का। दुतियाई=अलग कर दिया।

**भावार्थ**—सब वैष्णव वैरागी एकजुट होकर पलटू को अजात—टाट बाहर कर दिया। उनसे पलटू दास का महत्त्व सहन नहीं हुआ। वे कहने लगे कि यह बनिया कल का भक्त बहुत प्रसिद्ध हो गया। इसे टाट बाहर करो। हम सब बड़े-बड़े वैष्णव महंत हैं किंतु हमें कोई नहीं जानता। यह पलटू बनिया सबका खंडन करने का पाखंड करता है और इसी को सब बड़ा मानते हैं। इस प्रकार मानकर सब वैरागी ईर्ष्या में पड़ गये और उनमें से कोई मेरे भंडारा-भोज में खाने नहीं आया। तो पलटू बनिया ने मुनादी कराकर सारा भोजन जनता में बांट दिया। फलतः चारों वर्ण के लोग मेरे रसोईघर से मालपुआ आदि भोजन बांध-बांधकर ले जाते और कोई तो वहीं बैठकर खा लेते। इस प्रकार सब वैरागी इकट्ठे होकर पलटू को अजात घोषित कर दिये।

**विशेष**—पलटू साहेब मेल-मिलाप की भी बात करते थे, किन्तु मानवतापरक तथा आत्मज्ञानपरक उनके मुख्य विचार थे। इसलिए वैरागी असंतुष्ट थे। साथ-साथ ईर्ष्या-द्वेष तो सनातन रोग है।

## कुंडलिया-238

**हींग लगाइस भात में भूल गई है नार॥**
**भूल गई है नार आन कै आनै कीन्हा।**
**कातिस मोटा सूत कातन को चाही झीना॥**
**लहँगा पाछे जरै चूल्ह में पानी नावा।**
**हँसिया को ब्याह गीत खुरपा कै गावा॥**
**देय महावर आँख गोड़ में काजर लावै।**
**ऐसी भोली नारि ताहि कौ को समुझावै॥**
**पलटू वाहि अबूझ है अंत खायगी मार।**
**हींग लगाइस भात में भूल गई है नार॥**

**शब्दार्थ**—नार=नारी, स्त्री। महावर=पैर में लगाने का रंग। काजर=काजल।

**भावार्थ**—नारी भूल गयी। उसने दाल में छौंकने की हींग भात में छौंक दिया। वह करना चाहिए कुछ, तो करती है कुछ दूसरा ही। उसे महीन सूत कातना चाहिए, तो उसने मोटा कात दिया। उसका पहनावा लहंगा पीछे जल रहा है, और उसे बुझाने के लिए चूल्हे में पानी डालती है। वह हंसिया के ब्याह गीत को खुरपा के ब्याह में गाती है। वह पैरों में लगाने का महावर आंखों में लगाती है और आंखों में लगाने वाला काजल पैरों में लगाती है। ऐसी भोली स्त्री को कौन समझावे? इसी प्रकार जो मनुष्य अपने कल्याणदायी जीवन को दुनिया के राग-रंग और खुराफात में लगाता है, पलटू साहेब कहते हैं कि उसे अंतकाल में मानसिक पीड़ा होगी, मन द्वारा वह रगड़ा जायेगा।

## कुंडलिया-239

**घरिया औटै तत्त्व की परै नाम टकसार॥**
**परै नाम टकसार द्वादस सन बहुत करकरा।**
**ज्ञान चोख से चोख रैनि दिन पड़ै धरधरा॥**
**चौकस करै बिबेक सरन जो जौ भरि आवै।**
**ऐसा सिक्का होय कोई न बट्टा लावै॥**
**देवै ठासा बेहद परै सनवाती सीका।**
**चारि खूँट में चलै जियत इक होय रती का॥**

**पलटू बानी परा कँह लेहैं संत बिचार।**
**घरिया औटै तत्व की परै नाम टकसार॥**

**शब्दार्थ**—घरिया= घड़िया, सोनार का कुल्हिया या फारिया जिसमें सोना-चांदी गलाते हैं। औटना= पकाना। तत्व= तत्त्व, सत्य, सार, आत्मतत्त्व। टकसार= टकसाल, सिक्के ढलने की जगह, प्रामाणिक। द्वादस सन= विगत बारहवीं शताब्दी के चांदी-सोने के प्रसिद्ध खरे सिक्के। करकरा= खरा, सच्चा। धरधरा= धड़ाधड़, प्रवाहपूर्ण। चौकस= सच्चा, शुद्ध, सही। जौ भरि= जौ के दाने के बराबर। बट्टा= वह रकम जो रुपये, नोट, हुंडी आदि भुनाने, बदलने या बेचने पर उसके मूल्य में से काट ली जाय, दस्तूरी, दलाली, कमी, घाटा, नुकसान। ठासा= ठोस, पक्का। सनवाती= सनअत, कारीगरी, शिल्प, कौशल। सीका= सिक्का। रती= रत्ती, ढाई जौ या आठ चावल का मान, घुंघुची, गुंजा; सौंदर्य, शोभा। परा= मूलाधार में रहने वाली नाद रूपी वाणी, सरल भाव अंतरात्मा की आवाज।

**भावार्थ**—ज्ञानी संत आत्मज्ञान को विचार की घरिया में डालकर औटते हैं और उसे सतनाम के टकसाल में ढालते हैं। उनके ज्ञान के सिक्के विगत बारहवीं शताब्दी के सोने-चांदी के खरे सिक्के जैसे खरे रहते हैं। उनका ज्ञान चोखा से चोखा एवं सच्चा होता है। वह रात-दिन प्रवाहपूर्ण चलता है। यदि साधक थोड़ा सिर झुकाकर सद्‌गुरु की शरण में आ जाय तो उसका विवेक ज्वलंत हो जायेगा। ऐसे आत्मज्ञानी के सिक्के में कभी थोड़ा भी घाटा नहीं होता—मन दुखी नहीं होता। कुशल ज्ञानी का वह ज्ञान-सिक्का बेहद ठोस होता है। वह चारों दिशाओं में चलता है। वह जीवनकाल में शांति का सौंदर्य लाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि अंतरात्मा की आवाज को संत पहचानते हैं और उस पर विचार करते हैं।

## कुंडलिया-240

**सतगुरु के परताप से पकरा पाँचों चोर॥**
**पकरा पाँचों चोर नगर में अदल चलाया।**
**तिर्गुन दिया निकारि आनि कै भक्ति बसाया॥**
**लोभ मोह को पकरि ताहि की गरदन मारी।**
**तृस्ना औ हंकार पेट दियो इनको फारी।**
**दुर्मति दई निकारि सुमति का चाबुक दीन्हा।**
**चढ़े सिपाही संत अमल कायागढ़ कीन्हा॥**

**पलटू संजम मैं किया परा मुलुक में सोर।**
**सतगुरु के परताप से पकरा पाँचों चोर॥**

**शब्दार्थ**—पांचों चोर=काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय; पांच ज्ञानेन्द्रियां—आंख, नाक, कान, जीभ तथा त्वचा। नगर=हृदय, शरीर। अदल=न्याय। तिरगुन=त्रिगुण, सत, रज, तम। अमल=अधिकार। संजम=संयम, आत्म-नियंत्रण।

**भावार्थ**—सद्‌गुरु के ज्ञान प्रताप से पांचों चोरों को पकड़ लिया और शरीर-नगर में गुरुज्ञान का न्याय चलाया। तीनों गुणों को शोध कर उनका दमन कर लिया और जीवन में भक्ति को बसा लिया। लोभ-मोह को पकड़कर मार डाला और तृष्णा तथा अहंकार को जड़ मूल से नष्ट कर दिया। सुबुद्धि के चाबुक से मारकर दुर्बुद्धि को निकाल दिया। इस प्रकार संत-सिपाही ने कायागढ़ की लड़ाई में चढ़कर उस पर अपना अधिकार जमा लिया। पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने आत्म-नियंत्रण किया तो इसका देश में हल्ला हो गया। इस प्रकार सद्‌गुरु की कृपा से पांचों चोरों को पकड़कर शरीर-नगर पर अधिकार कर लिया।

## कुंडलिया-241

**दूसर जनमत मारिये की बरु रहिये बाँझ॥**
**की बरु रहिये बाँझ कोख में दाग लगावै।**
**जामै पेड़ मदार ताहि में क्या फल आवै॥**
**जो जनमै हरि भक्त जगत में सोभा पावै।**
**कुल में फूलै कमल पुत्रवंती कहवावै॥**
**कौसिल्या देवकी बड़ी अब कहिये सोई।**
**हरिजन में हरि रहै भार जिन लीन्हा दोई॥**
**पलटू सोई पुत्रवती भक्त रहै जेहि माँझ।**
**दूसर जनमत मारिये की बरु रहिये बाँझ॥**

**शब्दार्थ**—जनमत=जन्म लेते ही। बांझ=वंध्या। कोख=पेट, जन्म देने की शक्ति। जामै=उगे। मांझ=पेट में।

**भावार्थ**—संतान भक्त हो तो अच्छा है, दुष्ट संतान को जन्म लेते ही मार देना चाहिए, अथवा वंध्या रहना अच्छा है। कोख में दाग लगानेवाली दुष्ट

संतान तो मदार का पेड़ उगने के समान है, जिसमें क्या फल मिलेगा? यदि संतान हरिभक्त होकर जन्म ले तो वह संसार में शोभा पायेगा। वह वंश परम्परा में कमल की तरह खिलेगा। ऐसी ही माता पुत्रवती कहलाने योग्य है। देखो, कौसल्या, देवकी आदि को बड़ी भाग्यशालिनी कहना चाहिए। जिन्होंने श्रीराम तथा श्रीकृष्ण जैसे उत्तम पुत्र पैदा किये। लोक-परलोक सुधारने का बोझा लेने वाला भगवान भक्त ही रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि वह नारी पुत्रवती कहलाने योग्य है जिसके पेट में भक्त आया हो। अभक्त तो जन्मते ही मार देने योग्य है अथवा माता का वंध्या रहना अच्छा है।

**विशेष**—पलटू साहेब दयालु संत थे। वे किसी बच्चे को मारने की आज्ञा नहीं दे सकते। यह पता भी नहीं चल सकता कि जन्मा हुआ बच्चा आगे संत होगा या असंत। वस्तुतः यह काव्य है, इसलिए काव्यात्मक बात का अक्षरशः पालन नहीं होता है। उक्त बात का सार इतना ही है कि साधु-हृदय की संतान ही संतान है, दुष्ट संतान संतान ही नहीं है।

## कुंडलिया-242

**आगि लगो वहि देस में जहँवाँ राजा चोर॥**
**जहँवाँ राजा चोर प्रजा कैसे सुख पावै।**
**पाँच पचीस लगाइ रैनि दिन सदा मुसावै॥**
**आठौ पहर उपाधि रहै नाना बिधि लागी॥**
**काम क्रोध हंकार सकै न रैयत भागी॥**
**लोभ मोह की दिनै गले बिच नावै फाँसी।**
**लोकलाज मरजाद चलावै तिरगुन गाँसी॥**
**पलटू रैयत क्या करै चलै न एकौ जोर।**
**आगि लगो वहि देस में जहँवाँ राजा चोर॥**

**शब्दार्थ**—मुसावै= चोरी करावे। रैयत= प्रजा। गांसी= बाण।

**भावार्थ**—उस देश में आग लग जाय, जहां राजा ही चोर है। वहां प्रजा कैसे सुख पायेगी? मन राजा बना बैठा है और वही भोगों का चोर है। मन राजा पांच-पचीस नाना दुर्गुणों को लगाकर रात-दिन मनुष्य के हृदय में चोरी करवाता है। ऐसे जीवन में चौबीसों घंटे नाना प्रकार के उपद्रव लगे रहते हैं। काम, क्रोध, अहंकार आदि ऐसे डाकू हैं कि इनसे भागकर मनुष्य बच नहीं पाता है। यह मन मानव तन रूपी दिन में लोभ-मोहादि की फांसी मनुष्य के

गले में लगाता है। यह मन लोक-लाज और जाति-पांति की मर्यादा तथा त्रिगुणात्मक कर्मकांड के तीर चलाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मनुष्य प्रजा बेचारी क्या करे। इन चोरों के सामने उसका एक भी बल नहीं चलता है। अतएव ऐसे देश में आग लग जाय जहां राजा ही चोर है।

**विशेष**—यहां मन की प्रबलता पर कथन है। वस्तुतः मन जीव की असावधानी से ही प्रबल बना है। मन कोई स्वतंत्र द्रव्य या जानवर नहीं है, अपितु जीव की बनायी मान्यता मात्र है। जीव जब अपने बल को सत्संग से समझ लेगा तब वह मन को मारकर—उसे अच्छा बनाकर निरंतर परमानन्द में विराजेगा।

### कुंडलिया-243

**यह अचरज हम देखिया कानी काजर देइ॥**
**कानी काजर देइ खसम के मन ना मानै।**
**निसि दिन करै सिंगार भेद या बिरला जानै॥**
**नख सिख खोटी मोटि पहिरि कै बैठी गहना।**
**मूरख देखन जाय देखि कै करै सरहना॥**
**बोलै मीठी बोल सबन को बेगि रिझावै।**
**नाहिं खसम से भेंट बैठि कै बात बनावै॥**
**पलटू या संसार में झूठ कहै सो लेय।**
**यह अचरज हम देखिया कानी काजर देय॥**

**शब्दार्थ**—कानी=एक आंखवाली स्त्री, तात्पर्य में अविवेकी भक्त। खसम=पति, परमात्मा।

**भावार्थ**—मैंने एक ऐसी आश्चर्यपूर्ण घटना देखी कि कानी स्त्री काजल लगा रही है, परन्तु वह अपने पति से प्रसन्न नहीं रहती है। वह पर-पुरुष को रिझाने के लिए रात-दिन शृंगार करती है, किन्तु उसकी यह व्यभिचार-वृत्ति का भेद कोई बिरला जानता है। वह एड़ी से चोटी तक मोटी खोटी—बहुत बदचलन स्त्री है परन्तु नाना आभूषण पहनकर दिखाऊ शृंगार करके बैठी है। मूरख उसको देखने जाते हैं और देखकर उसकी प्रशंसा करते हैं। वह मीठी बोली बोलकर लोगों को तुरन्त प्रसन्न कर लेती है। उसे पति से मुलाकात नहीं है, किन्तु उसके विषय में वह बैठी-बैठी बड़ी लम्बी-चौड़ी बातें बनाती है।

पलटू साहेब कहते हैं कि इस संसार में जो झूठी बातें करता है, उसी की बातें मूर्ख लोग मानते हैं। मैंने एक आश्चर्य देखा कि कानी स्त्री काजल लगा रही है।

**विशेष**—अलग से ईश्वर को पाने की आशा रखने वाले और साथ-साथ उसका दिखावा करने वाले बनावटी भक्त कानी स्त्री हैं, क्योंकि वे आत्मज्ञान-विहीन हैं। वे काजल लगाते हैं, ज्ञान का दिखावा करते हैं। वे अपने आत्मारूपी परमात्मा को जानते-मानते नहीं हैं। वे ईश्वर-भक्ति का बड़ा श्रृंगार करते हैं, बड़ा दिखाऊ वेष बनाते हैं। वे एड़ी से चोटी तक धोखेबाज होते हैं, परन्तु ईश्वर-भक्ति का बड़ा श्रृंगार करते हैं, सिद्ध बनते हैं, अपने को परमात्मा-प्राप्त बताते हैं, अवतार तक बनते हैं। मूर्ख लोग उनके दर्शन करने जाते हैं और उनकी बड़ी प्रशंसा करते हैं। वे परोक्ष ईश्वर की मीठी-मीठी बातें करके लोगों को भावुक बना लेते हैं और उन्हें अपने वश में कर लेते हैं। उन्हें ईश्वर से कभी मुलाकात नहीं है, किन्तु बैठकर बात बनाते हैं कि मैं ईश्वर तक पहुंचा हूं, तुम्हें ईश्वर से मुलाकात करवा सकता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि इस संसार में ईश्वर के विषय में झूठी बातें बनाने वालों पर मूर्ख विश्वास करते हैं। आश्चर्य है कि कानी काजल लगा रही है, अविवेकी ईश्वर का दिखावा कर रहे हैं।

## कुंडलिया-244

**मुसलमान रब्बी मेरी हिन्दू भया खरीफ॥<br>हिन्दू भया खरीफ दोऊ है फसिल हमारी।<br>इनको चाहै लेइ काटि कै बारी बारी॥<br>साल भरे में मिली यही हमको जागीरी।<br>चाकर भये हजूरी कौन अब करै तगीरी॥<br>दूनों को समुझाइ ज्ञान का दफतर खोलै।<br>सब कायल होइ जाय अमल दै कोऊ न बोलै॥<br>दोऊ दीन के बीच में पलटू दास हरीफ।<br>मुसलमान रब्बी मेरी हिन्दू भया खरीफ॥**

**शब्दार्थ**—रब्बी = रबी, वसंत ऋतु; वह फसल जो वसंत ऋतु में काटी जाती है। खरीफ = खरीफ़, कार्तिक मास की फसल। फसिल = फ़सल, फ़स्ल, ऋतु, मौसम; काल, समय; खेत की उपज, पैदावार; सस्य, धान्य; किसी पौधे का फल, अन्न। हजूरी = हुजूरी, सामीप्य, निकटता; बादशाही दरबार।

तगीरी=तगीर, स्थिति, परिवर्तन। कायल=मान लेने वाला। अमल= अधिकार। हरीफ=हरीफ़, समान व्यवसाय करने वाला, सम व्यवसायी, हमपेशा।

**भावार्थ**—मुसलमान मेरी रबी की फसल है और हिन्दू खरीफ की फसल है। ये दोनों मेरी फसल हैं, धान्य हैं। मैं इन दोनों फसलों को मनचाहा बारी-बारी काटता हूं। मेरी यही साल भर की जागीर है—सरकार से मिला धन है। हिन्दू-मुसलमान दोनों मेरे समीपी हो गये हैं। अब इनमें कौन परिवर्तन करे, क्यों करे? मैं ज्ञान का दफ्तर खोलकर इन दोनों को समझाता हूं। हिन्दू-मुसलमान दोनों मेरी बातों को मान लेते हैं। कोई अधिकारपूर्वक मेरे विरोध में नहीं बोलता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं हिन्दू-मुसलमानों के बीच में समान व्यवसायी हूं। मुसलमान मेरे रबी—बासंती सस्य हैं और हिन्दू खरीफ—शारदी सस्य हैं।

**विशेष**—उदार पलटू साहेब के रास्ते पर ही भारत के सभी लोगों को चलना चाहिए। विश्व के लिए यही सुखद है। भिन्न सम्प्रदाय एवं मजहब को लेकर प्रेम में अंतर नहीं होना चाहिए। मानव मात्र मेरे प्यारे हैं और जीव मात्र करुणा पात्र हैं।

## कुंडलिया-245

**नाचन को ढँग नाहिं है कहती आँगन टेढ़॥**
**कहती आँगन टेढ़ जक्त की लाज लजाई।**
**लम्बा घूँघट काढ़ि डेरै फिर नाचन आई॥**
**जाति बरन मरजाद छुटी ना लोक बड़ाई।**
**करै खसम को चाह खसम का सहजै पाई॥**
**अपनी बात उड़ाइ आपु से जैसे भूसा।**
**झौंसे पेड़ बनाया पाछे से फड़िहै फरसा॥**
**पलटू पावै खसम को रहै संत की खेढ़।**
**नाचन को ढँग नाहिं है कहती आँगन टेढ़॥**

**शब्दार्थ**—डेरै=डरता है, भय करता है। खसम=पति, परमात्मा। का=क्या? भूसा=सारहीन, हलका। भौंसे=जला डाले। फरसा=कुल्हाड़ी, कुल्हाड़ा। खेड़=जमात, समाज।

**भावार्थ**—नाचने का ढंग नहीं है और कहती है कि आंगन टेढ़ा है इसलिए नाचते नहीं बनता है। साधना करने की समझ नहीं है और कहते हैं कि देश-काल ठीक नहीं है। मन से भयभीत हैं, लम्बा घूंघट काढ़कर नाचने आते हैं। जाति, वर्ण और लोक की मर्यादा-बड़ाई छोड़ नहीं पाते हैं। परमात्मा पाने की चाह करते हैं। क्या वह सहज ही मिल जाता है? ध्यान रहे, जो परमात्मा चाहे, वह अपनी मान-बड़ाई स्वयं भूसे की तरह उड़ा दे और लोकमर्यादा तथा जाति-पांति के पौधे को ज्ञान की आग में फूंक दे, अन्यथा आगे उसे कुल्हाड़ी से काटना पड़ेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि परमात्मा को तब पावेगा जब वह संतों के समाज में रहे। नाचने का ढंग नहीं है और कहते हैं कि आंगन टेढ़ा है।

**विशेष**—परमात्मा आत्मा है। विवेकवान संतों के सत्संग में उसका बोध होता है। जो सब प्रकार लोक-लाज और अहंकार को छोड़कर सत्संग-साधना में लगता है वह अपने भीतर आत्मा रूपी परमात्मा का साक्षात्कार कर लेता है।

## कुंडलिया-246

**पलटू खोजै पूरबे घर में है जगन्नाथ॥**
**घर में है जगन्नाथ सकल घट ब्यापक सोई।**
**पसु पंछी चर अचर और न दूजा कोई॥**
**पूरन प्रगटे ब्रह्म देह धरि सब में आये।**
**दिया कर्म को आड़ भेद यह बिरलन पाये॥**
**उपजै बिनसै देह जीव सो मरता नाहीं।**
**कहन सुनन को जुदा रहत है सब घट माहीं॥**
**चलते चलते पग थका एकौ लगा न हाथ।**
**पलट खोजै पूरबे घर में ह जगन्नाथ॥**

**शब्दार्थ**—घर में= देह में । जगन्नाथ= ईश्वर। आड़= परदा, भेद।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि जगन्नाथ को पाने के लिए लोग यहां से पूर्व तरफ समुद्र तट के पास जाते हैं। वस्तुतः अपनी देह में ही वह विद्यमान है। वही तो सबकी देहों में बैठा है। पशु-पक्षी, चलने वाले या एक जगह पड़े सभी प्राणियों में वही तो परमात्मा है, दूसरा कोई नहीं है। पूर्ण ब्रह्म ही देह धरकर सब प्राणियों में विद्यमान है। सबके कर्म भिन्न होने से बाह्य व्यक्तित्व में विषमता है। इस तथ्य को बिरला समझता है। देह बनती है और

मिट जाती है, किन्तु जीव नहीं नष्ट होता। वह अमर है। कहने-सुनने के लिए अलग-अलग नाम हैं—पशु, पक्षी, कृमि, मनुष्य आदि किन्तु सब देहों में वही चेतन ब्रह्म विराजता है। पलटू साहेब कहते हैं कि बाहर परमात्मा को खोजने के लिए चलते-चलते पैर थक गये, परन्तु परमात्मा की प्राप्ति नहीं हुई। लोग जगन्नाथ को पूर्व समुद्र तट पर खोजने जाते हैं, किन्तु वह तो हृदय में है।

**विशेष**—ब्रह्म का अर्थ है श्रेष्ठ। व्यापक महिमापरक शब्द है। कोई एक अखंड तत्त्व सब जगह फैला नहीं है। यदि ऐसा होता तो स्फूर्ण, चलन, गति संसार ही न होता। अतएव व्यापक का मतलब बहुतायत, शक्तिशाली आदि ही होना चाहिए। सरल भाव है कि परमात्मा भटकने से नहीं मिलता है। सब घट में बैठा जीव ही ब्रह्म है। अपने मन को बाहर से फेरकर अपने आप में स्थित होना ही ब्रह्म की प्राप्ति है।

कुंडलिया-247

**आन को सेंदुर देखि कै तू का फोरै लिलार॥**
**तू का फोरै लिलार नारि तू बड़ी अनारी।**
**तू ना देवै जाय देखि क्या जरै हमारी॥**
**तेरे करम में नाहिं देखि क्या सरबर करती।**
**चलि जा अपनी राह सोच में नाहक परती॥**
**जेकँहै चाहै पीव ताहि को करै सोहागिनि।**
**समुझ अपनी चूक नारि तू बड़ी अभागिनि॥**
**पलटू सेवै साधु को तब रीझै करतार।**
**आन को सेंदुर देखि कै तू का फोरै लिलार॥**

**शब्दार्थ**—आन=अन्य, दूसरा। लिलार=मस्तक, माथा। सरबर= सरबरि=बराबरी, होड़। जेकँहै=जिसको। सोहागिन=सुहागिन, सधवा, पतिवाली।

**भावार्थ**—दूसरे के माथे पर सेंदुर देखकर तू अपना मस्तक क्यों फोड़ती है? हे नारी! तू बड़ी मूढ़ है। तू स्वयं चलकर अपने पति को प्रेम नहीं देती है। हमारे सौभाग्य को देखकर क्यों जलती है। तेरे अपने कर्म में जो नहीं है, उसकी इच्छा करके दूसरी सुहागिन स्त्री को देखकर उसकी बराबरी क्यों करती है? तू अपने मार्ग में चली जा। तू व्यर्थ चिंता में पड़ती है। पति जिसको चाहेगा उस नारि को सुहागिन करेगा। हे नारी! अपनी भूल को

समझ। तू बड़ी अभागन है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब संतों की सेवा करे तब कर्ता प्रसन्न होगा। दूसरे के मस्तक पर सेंदुर देखकर तू अपने माथा को क्यों फोड़ती है?

**विशेष**—मनोवृत्ति नारी है, आत्मा पति है। शांतात्माओं को देखकर मनुष्य की मनोवृत्ति चाहती है कि मैं भी शांति का सुख भोगूं। परन्तु जब वह आत्मा में समर्पित नहीं होती है अथवा आत्मा स्वयं मनोवृत्ति को नहीं आत्मसात करता है, तो शांति दशा कैसे आयेगी? जब विवेकवान संतों की सेवा करे तब उनके उपदेश तथा प्रभाव में आकर आत्मा मनोवृत्ति को आत्मसात करके कल्याण दशा आती है। मनोवृत्ति का कर्ता आत्मा ही है। उसकी दृष्टि अंतर्मुख होने से ही परमपद मिलेगा।

## कुंडलिया-248

**पलटू पारस नाम का मनै रसायन होय॥**
**मनै रसायन होय करै या तन की सीसी।**
**संपुट दै गुरु ज्ञान बिस्वास दवाई पीसी॥**
**दसौ दिसा से मूँदि जोग की भाठी बारै।**
**तेहि पर देहि चढ़ाय ब्रह्म की अग्नि से जरै॥**
**ईंधन लावै ध्यान प्रेम रस करै तयारी।**
**सबद सुरति के बीच तहाँ मन राखै मारी॥**
**जड़ि बूटी के खोजते गई सिध्याई खोय।**
**पलटू पारस नाम का मनै रसायन होय॥**

**शब्दार्थ**—पारस= एक कल्पित पत्थर जिसमें लोहा छू जाने पर सोना हो जाता है। रसायन= पदार्थों का तत्त्वगत ज्ञान; जरा-व्याधिनाशक औषधि। संपुट= औषधि पकाने के लिए गीली मिट्टी से लपेटकर बनाया गया पात्र।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि पारस पत्थर तो नाम मात्र है। वह संसार में कहीं नहीं है। यह स्ववश किया हुआ मन ही जरा-व्याधि नाशक औषध है। उसको रखने के लिए यह शरीर ही शीशी है। इस दवाई को बनाने के लिए गुरुज्ञान का संपुट दिया और आत्मविश्वास की दवाई पीसी गयी। शरीर के दसों इन्द्रियों का दमन रूपी मुंह बंद करके उसे मनोनिग्रह रूपी योग की भट्ठी पर चढ़ाकर ब्रह्मज्ञान की अग्नि जलायी। उसमें ध्यान का ईंधन लगाया। औषध का तैयार रस प्रेम है। प्रेम साधना का फल है। मन मारकर

सुरति शब्द में लीन करके रखे। उपर्युक्त साधनात्मक औषधि न बनाकर बाहरी जड़ी-बूटी खोजकर वैद्यकी का काम करनेवाले साधु की आत्म-स्थिति खो जाती है। पलटू साहब कहते हैं कि पारस तो नाम मात्र है। शमित मन ही रसायन औषध है जिससे भवव्याधि नष्ट होती है।

**विशेष**—"सबद सुरति के बीच में तहाँ मन राखै मारी।" शब्द में सुरति लगाकर केवल शब्द सुने। इसी में मन को शांत कर दे। शरीर में नस-नाड़ियां दौड़ी हैं। उनमें रक्त वहन करता है। यह पूरा शरीर महान यंत्र है। इसके भीतर की गति से ध्वनि उठती है जिसे कान बन्द कर सुना जाता है। इससे मन एकाग्र होता है। यही शब्द सुरति योग में मन मारना है। यह एक आरम्भिक साधना है। शब्द को जीव सुनता है। जीव शब्द को जानता है, शब्द जीव को नहीं जानता है। शब्द जड़ है, जीव चेतन है। अतएव अंतिम साधना है मन का साक्षी बनकर संकल्प-रहित हो जाना। यही आत्मस्थिति की प्राप्ति है।

## कुंडलिया-249

**कहत फिरत हम जोगी पक्का दुइ सेर खाय॥**
**पक्का दुइ सेर खाय कहै मैं बड़का जोगी।**
**सोवै टाँग पसारि देखत कै बड़ा बिरोगी॥**
**हृष्ट पुष्ट होइ रहै लड़न को नाहीं माँदा।**
**काम क्रोध और मोह करत हैं बाद बिबादा॥**
**पलटू ऐसा देखि कै मुँह ना राखी लाय।**
**कहत फिरत हम जोगी पक्का दुइ सेर खाय॥**

**शब्दार्थ**—मांदा= आलस्य।

**भावार्थ**—लोग कहते फिरते हैं कि हम योगी हैं, किन्तु पक्का दो सेर भोजन करते हैं। कहते हैं कि हम बड़े योगी हैं। अधिक खाकर पैर पसारकर अधिक सोना पड़ेगा ही। उनके ऊपर का दिखावा विरह-वियोग का है। शरीर से मोटे-तगड़े होकर रहते हैं। दूसरों से लड़ाई-झगड़ा करने में आलस्य नहीं करते। उनके जीवन में काम, क्रोध, मोह आदि हैं और जगह-जगह वाद-विवाद करते रहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसी रहनी देखकर मैं ऐसे लोगों से बातचीत भी नहीं करता हूं। ये कहते-फिरते हैं कि हम योगी हैं और पक्का दो सेर खाते हैं।

## कुंडलिया-250

**जल पषान को छोड़ि कै पूजौ आतम देव॥**
**पूजौ आतम देव खाय औ बोलै भाई।**
**छाती दैकै पाँव पथर की मुरत बनाई॥**
**ताहि धोय अन्हवाय बिंजन लै भोग लगाई।**
**साच्छात भगवान द्वार से भूखा जाई॥**
**काह लिये बैराग झूँठ कै बाँधे बाना।**
**भाव भक्ति की मरम है कोइ बिरले जाना॥**
**पलटू दोउ कर जोरि कै गुरु संतन को सेव।**
**जल पषान को छोड़ि कै पूजौ आतम देव॥**

**शब्दार्थ**—अन्हवाय= नहलाकर। बिंजन= व्यंजन, भोजन।

**भावार्थ**—हे लोगो ! जल-पाषाण की पूजा छोड़कर प्राणी रूपी आत्मदेव की पूजा करो, क्योंकि हे भाई ! वे खाते और बोलते हैं। पत्थर की मूर्ति की छाती पर पैर रखकर कारीगर गढ़-गढ़कर उसे बनाता है। उसी मूर्ति को धोकर तथा स्नान कराकर थाली में व्यंजन लेकर उसको भोग लगाते हैं। प्रत्यक्ष चलते-फिरते भगवान अतिथि तथा संत द्वार से भूखे जा रहे हैं। वैराग्य का वेष लेने से क्या फल हुआ? चेतन-पूजा छोड़कर जड़-पूजा में लगे रहे, तो वे झूठे ही भक्त-साधु का बाना बांधे हैं। भाव-भक्ति का रहस्य कोई बिरला जानता है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे कल्याणार्थियो ! दोनों हाथ जोड़कर तथा विनम्र होकर गुरु-संतों की सेवा करो। इस प्रकार जल-पाषाण को छोड़कर बोलता देवता आत्मदेव की पूजा करो।

सद्गुरवे नमः

# पलटू साहेब की बानी

## खंड–दो

## रेखता

### 1. बोधदाता सद्गुरु और माया

रेखता–1

**भवसिंधु के पार जो चाहिए जान को,**
**केवट भेदी तलास कीजै।**
**घाट औ बाट के भेद का महरमी,**
**उसी की नाव पर पाँव दीजै॥**
**सबद की नाव पर चढ़ै जो ध्याय कै,**
**जाय वही पार नहिं पाँव भीजै।**
**दास पलटू कहै कौन मल्लाह है,**
**पार भव सिन्धु तब उतरि लीजै॥ 1॥**

**शब्दार्थ**—महरमी= ज्ञाता, जानकार।

**भावार्थ**—यदि आप संसार–सागर से पार जाना चाहते हैं तो उसके रहस्य को जानने वाले मल्लाह की खोज करें। घाट और पथ दोनों के जानकार की नाव पर चढ़िये। जो सद्गुरु के निर्णय शब्दों की नाव पर उत्साह से चढ़ता है, वह संसार–सागर से पार हो जाता है। उसके पांव नहीं भीगते—वह भटकता नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि संसार–सागर से पार लगाने वाला कौन है, इस तथ्य को समझ लीजिए। तब संसार–सागर से पार पायेंगे।

### रेखता-2

**गुरु पूरा मिलै ज्ञान साधन करै,**
**पकरि कै पाँच पच्चीस मारै।**
**आतमा देव है पिंड का द्यौहरा,**
**काम औ क्रोध बिनु आग जारै॥**
**चंद औ सूर तहँ कोटि तारा उगै,**
**प्रान वायु सेती तत्त मारै।**
**गगन के बीच में तेल बाती बिना,**
**दास पलटू महा दीप बारै॥ 2॥**

**शब्दार्थ**—पाँच= पांच ज्ञानेन्द्रियां—आंख, नाक, कान, जीभ, चाम। पचीस = पचीस प्रकृतियां। पिंड= शरीर। द्यौहरा= देवालय, मंदिर।

**भावार्थ**—जब बोध और रहनी सम्पन्न पूरा सद्गुरु मिल जाय और उससे स्वरूपबोध प्राप्त कर ले, तब उसके अनुसार साधना करे। पांच ज्ञानेन्द्रियों और पचीस प्रकृतियों को अपने वश में कर ले। शरीर देवालय है और इसमें रहने वाला 'मैं' के रूप में आत्मा परमात्मा देव है। उसी की उपासना करे—जड़ दृश्य को छोड़-छोड़कर आत्मा में स्थित होने का अभ्यास करे। वह साधक काम-क्रोधादि को भौतिक आग से रहित विवेक की आग में जला देता है। फिर तो उसके जीवन में आत्मानुभव के चांद, सूर्य तथा करोड़ों तारे उगते हैं—वह ज्ञान-ज्योतित हो जाता है। वह प्राणायाम क्रिया द्वारा तत्त्व-प्रकृति के विकारों को भी मारकर स्वस्थ रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि वह हृदयाकाश में भौतिक तेल-बत्ती से रहित आत्मज्ञान का अखंड महा दीपक जलाता है।

### रेखता-3

**गुरू तो कीजिए बूझि बिचारि कै,**
**करम अरु भरम से रहत न्यारा।**
**करम को बंद जम काल को फंद है,**
**पचि मरे गुरु सिष्य दोउ सीस धारा॥**
**धनी को भेद लै बस्तु खोवै नहीं,**
**रैन बिनु दीप के महल सारा।**

**पाँच पच्चीस को पकरि सठ कैद में,**
**लाय गुन तीन निःतत्त मारा॥**
**बिबेक जानै नहीं कान फूँकत फिरै,**
**बिना सत सबद किन कालटारा।**
**दास पलटू कहै सदा वह पाक है,**
**गुरू तो वही जिन तत्तगारा॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—धनी=पूर्ण सद्गुरु। निःतत्त्व=सारहीन, निस्सार। पाक= पवित्र। गारा=निचोड़ लिया।

**भावार्थ**—साधक सावधान! समझ-बूझकर गुरु का चुनाव करो। जो कर्मकांड तथा परोक्ष उपासना के भ्रम से रहित हो, वह सच्चा सद्गुरु है। कर्मकांड तथा देवी-देवताओं की मान्यताएं यमजाल और कल्पना का फंदा हैं। यदि इन बातों को कोई अपने सिर पर चढ़ाये है तो वे गुरु तथा शिष्य अनात्म उपासना में ही पच-पचकर मरते हैं। पूर्ण सद्गुरु से स्वस्वरूप का रहस्य समझ ले और परोक्ष उपासना में उलझकर आत्मबोध न खोवे, अपितु स्वरूपस्थिति करे। हृदय-महल में आत्मज्ञान का दीपक सदैव जलता रहे जिससे अविद्या की रात रहने न पावे। पांच ज्ञानेन्द्रियों तथा पचीस प्रकृतियों[1] के जो मूढ़तापूर्ण कर्म हैं, उन्हें मारकर वश में करे और रज, सत तथा तम गुण के जो सारहीन कर्म हैं उनका त्याग कर दे। कितने गुरु हैं जिन्हें आत्मा-अनात्मा का विवेक नहीं है। वे केवल शिष्यों के कानों में कोई मंत्र फूंक मारते हैं। सत्यासत्य निर्णय के बिना प्रत्यक्ष-परोक्ष के सारे मोह और भ्रम रूपी काल को कौन दूर कर सकता है? पलटू साहेब कहते हैं कि वह सदैव पवित्र है और वही सच्चा सद्गुरु है जिसने विवेक से मंथन कर सार आत्मतत्त्व को निकाल लिया है।

---

1. पचीस प्रकृतियां—पृथ्वी तत्त्व की प्रकृतियां—हाड़, चाम, मांस, नस तथा रोम; जल की लार, मूत्र, वीर्य, रक्त और पसीना; अग्नि की भूख, प्यास, आलस्य, नींद तथा जमुहाई; वायु की बलकरन, संकोचन, पसारन, बोलन तथा धावन; आकाश की काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा भय। आकाश शून्य है, उसकी कोई प्रकृति नहीं। उसकी कामादि प्रकृति है, यह मान्यता मात्र है। वस्तुतः कामादि मनोविकार हैं, वे साधना से नष्ट हो जाते हैं, प्रकृति नहीं नष्ट होती।

रेखता–4

**माया कर जोरि कै भई आगे खड़ी,**
**हुकुम जो होय मैं रहौं स्वामी।**
**हुकुम जो होय सो करौं तैयार मैं,**
**हुकुम में तनिक ना करौ खामी॥**
**मुक्ति मोरि कीजिये राखिये सरन में,**
**तनिक जबान से भरौ हामी।**
**दास पलटू कहै फरक तू खड़ी हो,**
**बकसु भैने कँहै लगै मामी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—खामी=कमी, असावधानी। हामी=स्वीकार। फरक=फर्क, दूर। बकसु=क्षमा कर, दूर हो। भैने=भगना, भानजा। मामी=मामा की पत्नी, मातुलानी।

**भावार्थ**—माया हाथ जोड़कर आगे खड़ी हो गयी है। उसने कहा कि हे स्वामी ! जो आपकी आज्ञा हो, वह मैं सब करूंगी। आपकी जो आज्ञा हो, मैं उसे आपके सामने प्रस्तुत करूंगी। मैं आपकी आज्ञा की थोड़ी भी अवहेलना नहीं करूंगी। आप मुझे अपनी शरण में रखिये और मुझे मुक्ति दीजिए। मैं आपकी आज्ञा सुनते ही उसे स्वीकार करूंगी। पलटू साहेब ने कहा—री माया ! तू दूर खड़ी हो ! मुझे क्षमा कर। मैं तेरा भानजा हूं और तू, मेरी मामी लगती है।

**विशेष**—प्रगल्भ संत पलटू साहेब के ज्ञान-वैराग्य पूर्ण कथन के बीच-बीच में दिल को छूने वाली मनोरंजक उक्तियां आती हैं। माया कोई व्यक्ति नहीं जो बात करे और जिससे बात की जाय। ग्रंथकार का कुल जोर माया-त्याग में है।

## 2. नाम महत्त्व

रेखता–5

**पीवता नाम सो जुगन जुग जीवता,**
**नाहिं वो मरै जो नाम पीवै।**
**काल ब्यापै नहीं अमर वह होयगा,**
**आदि औ अंत वह सदा जीवै॥**

**संत जन अमर हैं उसी हरि नाम से,**
**उसी हरि नाम पर चित्त देवै।**
**दास पलटू कहै सुधा रस छोड़ि कै,**
**भया अज्ञान तू छाछ लेवै॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—छाछ= मट्ठा।

**भावार्थ**—जो हरिनाम एवं सतनाम का रस पीता है वह युग-युग जीता है। वह अमर हो जाता है। उसके ऊपर काल का प्रभाव नहीं पड़ता। वह अमर होकर अनन्त काल तक जीता है। उसी हरिनाम से संत जन जीवित रहते हैं; अतएव उसी में मन लगाओ। पलटू साहेब कहते हैं कि अमृत-रस छोड़कर तू मट्ठा पीता है, यह तेरा अज्ञान है।

**विशेष**—हरिनाम, सतनाम, ॐ, अल्लाह आदि सारे नाम मनुष्य के कल्पित हैं। इनके जप से मन का कुछ विचार दूर हो तो ठीक है। नाम जप महिमापरक कथन है। वस्तुतः जीवन में शांति तथा अमर स्थिति मिलती है आत्मबोध और आत्मशोध कर आत्मस्थिति में।

रेखता-6

**राखु परवाह तू एक निज नाम की,**
**खलक मैदान में बाँध टाटी।**
**मीर उमराव दिन चारि के पाहुना,**
**छोड़ि घर माहिं दौलत हाथी॥**
**पकरि ले सबद जिन तोहि पैदा किया,**
**और सब होइँगे खाक माटी।**
**दास पलटू कहै देखु संसार गति,**
**बिना निज नाम नहिं कोई साथी॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—खलक= संसार। मीर= अमीर, सरदार, नेता। उमराव= धनपति।

**भावार्थ**—हे कल्याणार्थी! तू केवल अपने नाम की चिंता कर—तू अपने आत्मा पर ध्यान दे। संसार के मैदान से अपने को अलग करने के लिए तू ज्ञान-वैराग्य का परदा लगा। नेता, पूंजीपति आदि सब संसार में चार दिन के पहुना हैं। ये सब अपनी धन-दौलत, हाथी-घोड़े, घर-द्वार यहीं छोड़कर

चले जायेंगे। तू अपने कर्म-संस्कारों को शोध, जिसके कारण तूने देह धारण किया है। तेरा अपना माना हुआ सारा ऐश्वर्य धूल-माटी हो जायेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि संसार की गति को देख। निज आत्मस्वरूप के बोध से ही संसार-बंधन छूटेगा। इसके अलावा तेरा दुख-मोचन कर्ता कोई नहीं है।

रेखता-7

**बोलु हरि नाम तू छोड़ि दे काम सब,**
**सहज में मुक्ति होइ जाय तेरी।**
**दाम लागै नहीं काम यह बड़ा है,**
**सदा सतसंग में लाउ फेरी॥**
**बिलम ना लाइ कै डारि सिर भार को,**
**छोड़ि दे आस संसार के री।**
**दास पलटू कहै यही संग जायगा,**
**बोलु मुख राम यह अरज मेरी॥ 7॥**

**शब्दार्थ**—काम सब=सारी कामनाएं। विलम=विलम्ब, देरी।

**भावार्थ**—हरिनाम बोल और दुनिया की सारी कामनाएं छोड़ दे, तो तेरा सहज में संसार-बंधनों से छुटकारा हो जायेगा। इसमें कोई धन-ऐश्वर्य की आवश्यकता नहीं पड़ती, परन्तु यह काम सर्वोच्च है। तू सदैव संत-संगति में जा-जाकर आत्मज्ञान पर विचार कर। देरी मत कर, मोह का सारा बोझा सिर से उतार दे और सांसारिक भोगों की सारी आशाएं छोड़ दे। पलटू साहेब कहते हैं कि जीव के साथ यह आत्मसंयम की पूंजी ही जाकर शांति देगी। मेरी यह प्रार्थना है कि तू मुख से राम कह!

## 3. जीव शिव है

रेखता-8

**कोटि हैं बिस्नु जहँ कोटि सिव खड़े हैं,**
**कोटि ब्रह्मा तहाँ कथैं बानी।**
**कोटि देवी जहाँ खड़ी हैं चेरियाँ,**
**कोटि फन सहस ना मरम जानी॥**

**कोटि आकास पाताल फिरि कोटि हैं,**
**कोटि ब्रह्मांड सौ कोटि ज्ञानी।**
**दास पलटू कहैं बड़े दरबार में,**
**इंद्र हैं कोटि तहँ भरैं पानी॥ 8॥**

**शब्दार्थ**—फन= फण।

**भावार्थ**—निष्काम आत्मस्थिति दशा सर्वोच्च है। उसके सामने सब फीके हैं। करोड़ों विष्णु और शिव उसके सामने मानो हाथ जोड़े खड़े हैं। करोड़ों ब्रह्मा उसकी स्तुति करते हैं। करोड़ों देवियां वहां सेविकाएं होकर खड़ी हैं। सहस्त्र फणधारी करोड़ों शेषनाग उसकी दशा को नहीं पा सकते। करोड़ों आकाश, पाताल, ब्रह्माण्ड और ज्ञानी उसके सामने नतमस्तक हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि उस बड़े दरबार में करोड़ों इंद्र पानी भरते हैं।

**विशेष**—यह महिमापरक काव्यात्मक प्रयोग केवल यह बताने के लिए है कि निष्काम स्वरूपस्थिति उच्चतम है। उसके सामने सब फीका है।

## रेखता-9

**भक्त के नाथ को जक्त की लाज है,**
**रहै सब माहिं कोउ नाहिं जानै।**
**मरै सिर पीटि के आपनी भटक से,**
**संत के बचन को नाहिं मानै॥**
**मोह औ माया के बीच पड़ि गया है,**
**कर्म के बंध से भर्म आनै।**
**दास पलटू कहै जीव सब वही है,**
**बेद बेदान्त में खोजि छानै॥ 9॥**

**शब्दार्थ**—बीच= अंतर, भेद।

**भावार्थ**—भक्तों के स्वामी को जगत की लाज है। वे सबका कल्याण चाहते हैं। वे सबके दिल में बैठे हैं, किन्तु अज्ञानवश कोई समझता नहीं है। लोग अपने अज्ञान से परमात्मा को पाने के लिए सिर पीट-पीट कर मरते हैं और बाहर खोजते हैं। ये भटकने वाले लोग विवेकी संतों की बात नहीं मानते हैं। अनात्म वस्तुओं के मोह तथा माया के लोभ के कारण परदा पड़ा है।

लोग कर्मबंधनों में पड़े भ्रमित होकर बाहर भटकते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि सब जीव परमात्मा हैं। वेद-वेदांत में खोज-छान कर देख लो, वे भी यही कहते हैं।

### रेखता-10

**पूरब में राम है पच्छिम खुदाय है,**
**उत्तर औ दक्खिन कहो कौन रहता।**
**साहिब वह कहाँ है कहाँ फिर नहीं है,**
**हिन्दू और तुरुक तोफान करता॥**
**हिन्दू औ तुरुक मिलि परे हैं खैंचि में,**
**आपनी बर्ग दोऊ दीन बहता।**
**दास पलटू कहै साहिब सब में रहै,**
**जुदा ना तनिक मैं साच कहता॥ 10॥**

**शब्दार्थ**—तोफान= तूफान, झगड़ा, अहंकारी बातें। खैंचि= खींचा-तानी। बर्ग=सम्प्रदाय।

**भावार्थ**—पूर्व दिशा में राम हैं और पश्चिम में खुदा हैं, तो बताओ, उत्तर और दक्षिण दिशाओं में कौन रहता है? परमात्मा कहां है और कहां नहीं है? हिन्दू और मुसलमान व्यर्थ ही झगड़ा करते हैं। हिन्दू और मुसलमान दोनों खींचतान में पड़े हैं दोनों वर्ग अपनी-अपनी मान्यताओं की धारा में बह रहे हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि परमात्मा तो सब प्राणियों के दिल में बैठा है। मैं सच कहता हूं परमात्मा प्राणियों से अलग नहीं है।

**विशेष**—यहां बात हिन्दू-मुसलमान की है क्योंकि ये दोनों पलटू साहेब के सामने थे। यही बात इसाई आदि सभी सम्प्रदायों के लिए है। धर्म के क्षेत्र में अवतारवाद, पैगम्बरवाद, अलौकिकता आदि दादागीरी के लिए है। इससे असली धर्म ढक जाता है।

### रेखता-11

**घट औ मठ ब्रह्मांड सब एक है,**
**भटकि कै मरत संसार सारा।**
**मृगा की बासना वही छुटै नहीं,**
**आप को भूलि बहु बार हारा॥**

**आपु को खोज तू भर्म को छोड़ि दे,**
**कोटि बैकुंठ ससि भानु तारा।**
**दास पलटू कहै बहुत तहकीक करि,**
**बोलता ब्रह्म है राम प्यारा॥ 11॥**

**शब्दार्थ**—घट=घड़ा। मठ=मकान। ब्रह्मांड=संसार। तहकीक=तहक़ीक़, जांच-पड़ताल, खोज।

**भावार्थ**—घड़ा, मकान, पूरा ब्रह्माण्ड सब जड़ प्रकृति का खेल है। सारा संसार भौतिक पदार्थों की मोह-माया में उलझकर मर रहा है। मृगा की नाभि में कस्तूरी है, परन्तु वह उसे बाहर खोजता है। उसकी यह भ्रम-वासना नहीं छूटती। इसी प्रकार जीव अपने आप को भूलकर बारंबार धोखा खाता रहा है। अतएव तू बाहर से परमात्मा पाने का भ्रम छोड़कर अपने आप का अनुसंधान कर। करोड़ों बैकुंठ, चंद्रमा, सूर्य और तारे तेरी आत्मिक शांति के ऐश्वर्य के सामने फीके हैं, क्योंकि वे जड़ हैं। पलटू साहेब बहुत जांच-पड़ताल के बाद कहते हैं कि यह देह में रहकर बोलने वाला जीव ही ब्रह्म है और प्रियतम राम है।

## रेखता-12

**मरै सिर पटकि कै धोख धंधा करै,**
**जाय तू कहाँ कुछ होस नाहीं।**
**बैठु सतसंग में बात को बूझि ले,**
**बिना सतसंग ना भर्म जाही॥**
**सबै है राम का राम का वही है,**
**दौरि कै राम जब धरै बाहीं।**
**दास पलटू कहै जिन्हैं तू खोजता,**
**सोई तो राम है तुसी पाहीं॥ 12॥**

**शब्दार्थ**—तुसी पाहीं=तेरे पास, तात्पर्य में तेरा अस्तित्व, तेरा होना।

**भावार्थ**—लोग परमात्मा को खोजने के नाम पर धोखा का धंधा करते हैं और जगह-जगह पानी-पत्थर में सिर पटककर मरते हैं। हे मनुष्य! कहां जा रहा है? तू तो अनात्म जड़ वस्तुओं में भटक रहा है। तेरे को अपने आप

की कुछ भी सुधि–बुधि नहीं है। तू विवेकियों के सत्संग में बैठकर बात को समझ ले। बिना सत्संग भ्रम नहीं जा सकता। सब जीव राम के स्वरूप हैं। वस्तुतः राम का वही है जिसका दौड़कर राम ने हाथ पकड़ लिया। पलटू साहेब कहते हैं कि जिन्हें तू खोजता है, वही राम तो तेरे पास स्वचेतन के रूप में विद्यमान है।

**विशेष**—कोई बाहर राम नहीं है कि वह दौड़कर किसी का हाथ पकड़ ले। वस्तुतः जो अपने आत्म तत्त्व को समझा कि यही राम, ब्रह्म तथा खुदा है और उत्साहपूर्वक अपने आप में लीन हो गया वही अपने रामरूप को पाया। विषयों से मुड़कर अंतर्मुख हो जाना ही राम को पाना है।

रेखता–13

**पवन पानी कँहै अगिन से जोरि कै,**
**नाइ माटी केरी महल छाया।**
**पाँच है तत्त सोइ पाँच भूतात्मा,**
**इन्द्री दस ज्ञान औ कर्म लाया॥**
**मन परकिर्ति हंकार फिर जीव है,**
**महातत्त सोई है ब्रह्म आया।**
**दास पलटू कहै दूसरा कौन है,**
**भर्म को छोड़ि दे द्वैत माया॥ 13॥**

**शब्दार्थ**—महतत्त= महतत्त्व, बुद्धि।

**भावार्थ**—वायु, जल, अग्नि, मिट्टी तथा आकाश ये पांच तत्त्व पांच भूतों के स्वरूप हैं। पांच कर्मेन्द्रियां तथा पांच ज्ञानेन्द्रियां, मन, प्रकृति, अहंकार, और बुद्धि इसके साथ पांच विषय—शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गंध, ये चौबीस जड़ तत्त्व हैं। इन्हीं से शरीर रूपी भवन बना है। इसमें रहने वाला पचीसवां चेतन जीव है। वही ब्रह्म है। पलटू साहेब कहते हैं कि जीव के अलावा ब्रह्म कहां और कौन है? हे मनुष्य! भ्रम को छोड़ दे। आत्मा के अलावा तो जड़ कार्य मायामय है जो द्वैत है।

रेखता–14

**एक अनेक अनेक फिर एक है,**
**एक ही एक ना और कोई।**

**संत को एक अनेक संसार को,**
**रहा भरिपूर सब माहिं सोई॥**
**संत के अमर है मरै असंत के,**
**नरक औ सरग यहि भाँति होई।**
**नरक औ सरग सब होत अनेक को,**
**दास पलटू हम देखि रोई॥ 14॥**

**शब्दार्थ**—रोई=दुखी हुआ।

**भावार्थ**—सब जीवों का गुण एक चेतन है, किन्तु व्यक्तित्व सबका अलग-अलग है। अतएव मूलतः सब जीव एक समान हैं। संत यह समझते हैं कि सब जीव एक समान हैं, किन्तु असंत उनमें ऊंच-नीच का भेद करते हैं। वस्तुतः सब घटों में एक समान चेतन का निवास है। संत सचाई देखते हैं, इसलिए वे अमरत्व स्थिति पाते हैं, किन्तु असंत भेदभाव रखकर मरणशीलता में बहते हैं। इसी प्रकार नरक-स्वर्ग की बात है। भेदभाव रखने वाले को स्वर्ग-नरक हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि इन अज्ञानियों की दशा को देखकर मुझे दुख होता है।

## 4. संत और सत्संग सर्वोच्च है

रेखता-15

**धन्य हैं संत निज धाम सुख छोड़ि कै,**
**आन के काज को देह धारा।**
**ज्ञान समसेर लै पैठि संसार में,**
**सकल संसार का मोह टारा॥**
**प्रीति सब से करैं मित्र औ दुष्ट से,**
**भली अरु बुरी दोउ सीस धारा।**
**दास पलटू कहै राम नहिं जानहूँ,**
**जानहूँ संत जिन जक्त तारा॥ 15॥**

**शब्दार्थ**—समसेर= शमशीर, शमशेर, तलवार।

**भावार्थ**—संत धन्य हैं जो स्वरूपस्थिति रूपी निजधाम का सुख छोड़कर समाज के कल्याण के लिए साधु रूपी देह धारणकर जीवों को

जगाते हैं। वे आत्मज्ञान रूपी तलवार लेकर संसार में प्रवेश करते हैं और मोह-दल को मारकर स्वयं निर्मोह रहते हैं, और संसार के लोगों को चेताते हैं कि मोह का त्याग करो। वे मित्र और शत्रु सबसे प्रेम करते हैं। उन्हें कोई भला या बुरा कहे, तो उसे सिर झुकाकर स्वीकार लेते हैं। वे विवाद में नहीं पड़ते। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं ईश्वर को नहीं जानता हूं, अपितु संत को जानता हूं जो संसार के लोगों को सत्योपदेश देकर उनका उद्धार करते हैं।

### रेखता-16

**संत संसार में आय परगट भये,**
**नाम दृढ़ाय कै जक्त तारा।**
**भजन भगवान को कोऊ ना जानता,**
**संत यहि हेतु औतार धारा॥**
**राम के नाम पर अदल चलाय कै,**
**काल के सीस पर धौल मारा।**
**दास पलटू कहै रहे सब डूबते,**
**संत ने पकरि कै किहा पारा॥ 16॥**

**शब्दार्थ**—अदल= न्याय, इंसाफ। धौल= भारी आघात, चोट, प्रहार।

**भावार्थ**—संत संसार में प्रकट होकर विचरण करते हैं और वे परमार्थ के नामों तथा संज्ञाओं के अर्थस्वरूप आत्मज्ञान का उपदेश करते हैं और जगत का उद्धार करते हैं। भगवान का भजन कोई नहीं जानता यदि संत उपदेश न करते। निज और पर के कल्याण के लिए ही संत का अवतरण है। वे संसार में आत्मज्ञान का न्याय चलाकर मनःकल्पनाओं के सिर पर भारी चोट मारते हैं और उसे ध्वस्त कर देते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संसार के लोग माया-मोह में डूबते हैं। बोध-वैराग्य सम्पन्न संत ही उनका उद्धार करते हैं।

### रेखता-17

**संत औ राम को एक कै जानिये,**
**दूसरा भेद ना तनिक आनै।**
**लाली ज्यों छिपी है मिंहदी के पात में,**
**दूध में घीव यह ज्ञान ठानै॥**

**फूल में बास ज्यों काठ में आग है,**
**संत में राम यहि भाँति जानै।**
**दास पलटू कहै संत में राम है,**
**राम में संत यह सत्य मानै॥ 17॥**

**शब्दार्थ**—मिंहदी=मेंहदी, जिसके पत्ते घिसने पर उसमें लाल रंग निकलता है।

**भावार्थ**—संत और ईश्वर एक समझो। इसमें थोड़ा भी अंतर मत मानो। जैसे मेंहदी के हरे पत्ते में लाली छिपी है, दूध में घी छिपा है, फूल में सुगंध तथा काष्ठ में अग्नि छिपी है, वैसे संत में ईश्वर छिपा है, ऐसा समझो। पलटू साहेब कहते हैं कि संत में ईश्वर है और ईश्वर में संत है। इस सत्यता को स्वीकारना चाहिए।

**विशेष**—राम-रहीम, ईश्वर-अल्लाह, तो केवल शब्द हैं। मनुष्य ही उन शब्दों का निर्माता है। अतएव परम ईश्वर मनुष्य है, और जो उनमें पवित्रात्मा हैं वे आत्मसंतुष्ट होते हैं और दूसरों को उस रास्ते पर लगाते हैं; अतएव पवित्रात्मा ही संत हैं, और वे ही कल्याणार्थियों के लिए परम इष्ट और पूज्य हैं।

### रेखता-18

**संत दरबार तहसील संतोष की,**
**कचहरी ज्ञान हरि नाम डंका।**
**रिद्धि औ सिद्धि दोउ हाथ बाँधे खड़ी,**
**बिबेक ने मारि कै दिहा धक्का॥**
**मुक्ति सिर खोलि कै करै फिरियाद को,**
**दिहा दुदकार यह अदल बंका।**
**मारि माया कँहै अमल ऐसा किहा,**
**दास पलटू अहै हरीफ पक्का॥ 18॥**

**शब्दार्थ**—तहसील=लोगों से रुपये वसूल करने की क्रिया, वसूली, उगाही। फरियाद=विनती, प्रार्थना। बंका=बांका, अच्छा। अमल=अधिकार। हरीफ=हरीफ़, समान व्यवसायी, प्रतिद्वंद्वी, लड़ने वाला, योद्धा।

**भावार्थ**—संत का दरबार संतोष की वसूली करता है। उनका न्यायालय आत्मज्ञान की चर्चा है और हरिनाम का डंका बजता है। संत-दरबार में ऋद्धि

और सिद्धि दोनों हाथ जोड़कर खड़ी रहती हैं और पूछती हैं कि हम क्या सेवा करें। किन्तु विवेकी उनको मारकर और धक्का देकर बाहर निकाल देता है। मुक्ति अपना सिर खोलकर—अत्यंत दीन होकर प्रार्थना करती है कि मुझे अपनी शरण में रख लो, किन्तु संत उसे दुत्कार कर दूर कर देते हैं। यह उनका उत्तम न्याय है। पलटू साहेब कहते हैं कि संत माया को मारकर अपने आप पर ऐसा अधिकार कर लेते हैं कि अचल हो जाते हैं। संत पक्के योद्धा हैं।

**विशेष**—पलटू साहेब की वाणी में यह बात बारंबार आती है कि मुक्ति को दूर हटा दिया। यह उनकी मस्तानगी का काव्यात्मक कथन है। वस्तुतः उनका पूरा जीवन ही मुक्त रूप है। जो सबसे निष्काम है वही तो मुक्त है। मुक्ति कोई व्यक्ति नहीं जो किसी को विनती करने आये। सबसे निष्काम हो जाना मुक्ति है और पलटू साहेब सबसे निष्काम होने से निरंतर मुक्त स्वरूप ही हैं।

रेखता–19

**सबद बिबेकी मिलै जो आइकै,**
**उसहु की सुनै कछु आप कहना।**
**उसी टकसार का होय तो बोलिये,**
**बिना टकसार सुनि मौन रहना॥**
**सत्त की गाय को सुरति से दूहि कै,**
**दही जमाय के तत्त महना।**
**दास पलटू कहै आपनी मौज में,**
**यार फक्कीर तुम खुसी रहना॥ 19॥**

**शब्दार्थ**—टकसार=टकसाल, सिक्के ढलने का स्थान, प्रामाणिकता, निर्दोष वस्तु; चोखा, खरा; आचरण। बोली=बानी। तत्त=तत्त्व, सार।

**भावार्थ**—यदि शब्दों के विवेकी मिलें, तो उनकी बातें सुने और कुछ अपनी बातें भी कहे। यदि वे विवेक पथ के हों तो बातचीत करना चाहिए। यदि केवल भावना प्रधान हों तो उनकी बात सुनकर मौन रहना चाहिए। सत्यरूपी गाय को सुरति से दुहकर दही जमावे और उसे मथकर सार आत्मबोध निकाल ले। पलटू साहेब कहते हैं कि हे मित्र फकीर! अपनी आत्मस्थिति के आनंद में सदैव आनंदित रहना।

रेखता-20

**कांच कंचन सेती भेद ना राखही,**
**दुष्ट औ मित्र को एक जानै।**
**निन्दा अस्तुति सेती पीठ दे बैठही,**
**भली औ बुरी कछु नाहिं मानै॥**
**छोड़ जग आस को भरम को बोरि दे,**
**पाप औ पुन्न इक घाट आनै।**
**दास पलटू कहै सोई अनन्य है,**
**कर्म संसार को पकरि भानै॥ 20॥**

**शब्दार्थ**—अनन्य=एकनिष्ठ। भाने=तोड़ दे।

**भावार्थ**—कांच और कंचन समान समझे। मित्र और शत्रु में समता रखे। मिली हुई निन्दा और स्तुति अनदेखी कर दे। किसी की भलाई-बुराई में मन न लगावे। सांसारिक आशाओं को त्याग दे। सारी मानसिक भ्रांतियों को नष्ट कर दे और पाप और पुण्य से ऊपर उठ जाय। पलटू साहेब कहते हैं कि वही एकनिष्ठ आत्म-उपासक है जो कर्म-संस्कारों को परखकर नष्ट कर दे।

रेखता-21

**बिना सतसंग ना कथा हरि नाम की,**
**बिना हरि नाम ना मोह भागै।**
**मोह भागे बिना मुक्ति ना मिलैगी,**
**मुक्ति बिनु नाहिं अनुराग लागै॥**
**बिना अनुराग से भक्ति ना मिलेगी,**
**भक्ति बिनु प्रेम उर नाहिं जागै।**
**प्रेम बिनु नाम ना नाम बिनु संत ना,**
**पलटू सतसंग वरदान माँगै॥ 21॥**

**शब्दार्थ**—अनुराग=प्रगाढ़ लगन।

**भावार्थ**—सत्संग के बिना आत्मज्ञान की चर्चा नहीं हो सकती और आत्मज्ञान हुए बिना मोह-भंग नहीं होगा। मोह के पूरा नष्ट हुए बिना समस्त वासनाओं से मुक्ति नहीं मिलेगी और वासनाओं से छुटकारा हुए बिना

अध्यात्म में प्रगाढ़ लगन नहीं लगेगी। इसके बिना भक्ति नहीं जगेगी और बिना भक्ति के हृदय में आध्यात्मिक प्रेम नहीं जगेगा। प्रेम के बिना ज्ञान का महत्त्व नहीं है और ज्ञान के बिना संत नहीं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं सद्गुरु से यही वरदान मांगता हूं कि मुझे सत्संग मिलता रहे।

**विशेष**—ग्रंथकार ने सत्संग-हरिनाम (आत्मज्ञान)-मोहभंग-मुक्ति-अनुराग-भक्ति-प्रेम-नाम (ज्ञान)-संत का क्रम रखा है। सरलभाव है, सत्संग से आत्मज्ञान, आत्मज्ञान से मोहभंग, मोहभंग से मोक्ष होता है। जीवनपर्यन्त मोक्ष-स्थिति बनाये रखने वाला गुरुजनों की भक्ति का अनुरागी होता है।

## रेखता-22

**कौन तू सकस है चेत करु आपु को,**
**कहाँ तू आइ कै मन्न लाया।**
**केतिक बेर तू गया ठगाय है,**
**आपना भेद तू नाहिं पाया॥**
**भटक यह मिटैगी काम तब होयगा,**
**केतिक बेर तू भटकि आया।**
**दास पलटू कहै होय संस्कार जब,**
**बिना सतसंग ना छुटै माया॥ 22॥**

**शब्दार्थ**—सकस= शख़्स, व्यक्ति, जन। मन्न= मन। बेर= बार, दफा।

**भावार्थ**—तू कौन है? अपने आप की सुधि कर। तू कहां आकर अपना मन लगा दिया है ? तू मनुष्य देह में आकर कितनी ही बार अपने को ठगाकर चला गया है, किन्तु तूने अपने आप की पहचान नहीं की। जब अपने स्वरूप की भूल मिटेगी तब अविचल शांति मिलेगी। यही अपना काम बनाना है। तू अपने आत्म-अस्तित्व को भूलकर बहुत बार भटकता रहा। पलटू साहेब कहते हैं कि जब पूर्वजन्मों के अच्छे संस्कार उदय हों और विवेकवान संतों का सत्संग मिले, तब उनसे प्रेरणा लेकर व्यक्ति अपने मन की मोह-माया मिटाकर अपना कल्याण कर सकता है।

## रेखता-23

**गगन मैदान में ध्यान धूनी धरै,**
**मन में लखि गुरु का ज्ञान छाला।**

**चंद्र सिर तिलक है तत्त सुमिरन करै,**
**जपै हरि नाम अवधूत बाला॥**
**प्रेम भभूति बिबेक की फावड़ी,**
**गूदरी खुसी अरु आड़ माला।**
**दास पलटू कहै संत की सरन में,**
**लिखा नसीब को मेटि डाला॥ 23॥**

**शब्दार्थ**—छाला= मृगछाला, मृगचर्म। बाला= कान में पहनने का छल्ला। फावड़ी= छोटा फावड़ा। आड़= आड़बंद, लंगोटी। नसीब= प्रारब्ध, भाग्य।

**भावार्थ**—आकाश के मैदान में ध्यान की धूनी रमावे। गुरु द्वारा दिया हुआ आत्मज्ञान का मन में चिंतन करे और इसी को मृगचर्म समझे। चंद्रमा ही मानो सिर का तिलक है। आत्म तत्त्व का स्मरण करे और हरिनाम का जप अवधूत अपने कान का बाला समझे। प्रेम का भभूत लगावे, विवेक की फावड़ी रखे और मन की निरंतर प्रसन्नता की लंगोटी और माला धारण करे। पलटू साहेब कहते हैं कि संतों की शरण में लगकर मनुष्य अपने कर्म–बंधनों को काटकर मुक्त हो जाता है।

## रेखता–24

**मन मूरति करै तनै देवल बना,**
**निकट में छोड़ि कहँ दूरि धावै।**
**जल पाषान कछु खाय बोलै नहीं,**
**बिना सतसंग सब भटकि आवै॥**
**यही तहकीक करु बोलता कौन है,**
**यही है राम जो नित्त खावै।**
**दास पलटू कहै बोलता पूजिये,**
**करै सतसंग तब भेद पावै॥ 24॥**

**शब्दार्थ**—तहकीक= तहक़ीक़, सत्य की खोज, जांच, शोध।

**भावार्थ**—शरीर को देव–मंदिर समझे, मन को देवता बनावे और निरंतर मन की पवित्रता करना रूपी उसकी पूजा करे। यह निकट देव तथा देव–मन्दिर छोड़कर दूर कहां दौड़े? पानी–पत्थर की पूजा करने से वे न खाते हैं न

बोलते हैं। बिना सत्संग के लोग तीर्थ-मूर्ति में भटककर लौट आते हैं और कुछ नहीं पाते हैं। यह शोधन करो कि जो देह में रहकर बोलता है वह कौन है? वस्तुतः यही राम है जो नित्य खाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि बोलने-डोलने वाले आत्मा की पूजा करो। जब मनुष्य विवेकवान संतों का सत्संग करता है, तब वह आत्मा के यथार्थ स्वरूप को समझता है।

## 5. चेतावनी

रेखता-25

**देह और गेह परिवार को देखि कै,**
**माया के जोर में फिरै फूला।**
**जानता सदा दिन ऐसे ही जायेंगे,**
**सुन्दरी संग सुखपाल झूला॥**
**चारि जून खात है बैठि कै खुसी से,**
**बहुत मुटाई कै भया थूला।**
**सेज बँद बाँधि कै पान को चाभते,**
**रैन दिन करत है दूध कूला॥**
**जानता अमर हूँ मरूँगा अब नहीं,**
**बाघ की रौस जा काल हूला।**
**दास पलटू कहै नाम को याद करू,**
**ख्वाब की लहरि में काह भूला॥ 25॥**

**शब्दार्थ**—सुखपाल=एक तरह की पालकी। थूला=स्थूल, मोटा। सेजबंद=शय्या को खाट में बांधने की डोरी। कूला=कुल्ला। रौस=चाल, गति। हूला=भोंक दिया।

**भावार्थ**—मनुष्य अपनी मानी हुए देह, मकान तथा परिवार को देखकर माया की चमक-दमक के प्रवाह में अहंकारवश फूला-फूला घूमता है। वह भोला समझता है कि ऐसी ही चमक-दमक में सारे दिन बीतेंगे। वह सुंदरी युवती पत्नी के साथ पालकी पर झूलते हुए चलता है, बैठकर मगन हो चार समय खाता है और बहुत मोटा होकर स्थूल हो गया है। खाट में सेजबंद बांधकर पौढ़ता और बारंबार पान चाभता है। मानो वह रात-दिन दूध का कुल्ला ही करता है। उसे भ्रम है कि मैं अमर हूं, कभी मरूंगा नहीं, किन्तु

जैसे सिंह दौड़कर अपने शिकार को धर दबोचता है, वैसे काल दौड़कर उसके पेट में अपनी तलवार भोंक देता है। पलटू साहेब कहते हैं कि राम नाम या सतनाम का स्मरण कर और उसके अर्थस्वरूप अपने आत्मा की याद कर। तू स्वप्न के सैलाब में क्यों भूला फिरता है?

रेखता-26

**राम के नाम से भूलना नाहिं है,**
**खायगा यार तू फेरि गोता।**
**काम औ क्रोध में लगा दिन राति तू,**
**लोभ औ मोह का खेत जोता॥**
**भई जागीर तागीर हजूर से,**
**काल ने आय के लिहा पोता।**
**दास पलटू कहै पड़ा किस ख्याल में,**
**घरी पल पहर में कूच होता॥ 26॥**

**शब्दार्थ**—जागीर= राजा एवं सरकार से मिला तालुका, भूमि या प्रदेश, रियासत। तागीर= तगादा, तकाजा, पावना मांगना। पोता= लगान, मालगुजारी।

**भावार्थ**—हे मित्र ! राम का नाम मत भूल, अन्यथा तू पुनः संसार-सागर में डूबेगा। तू रात-दिन काम और क्रोध के विकारों में लगा है। तू लोभ और मोह का खेत जोत रहा है। माना कि तुम्हारे पास जागीर है, माल-मुलुक है, किन्तु जब काल आ जायेगा तब हुजूर से मालगुजारी वसूल लेगा—सब कुछ छीन लेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि हे अभिमानी ! तू किस ख्याल में पड़ा है? ध्यान रख, पल-घड़ी और पहर में संसार से प्रस्थान हो जायेगा।

## 6. अध्यात्म-प्रेम

रेखता-27

**जाहि तन लगी है सोई तन जानि है,**
**जानि है वही सतसंग बासी।**
**कोटि औषधि करै बिरह ना जायेगा,**
**जाहि के लगी है बिरह गाँसी॥**

**नैन झरना बन्यौ भूख ना नींद है,**
**परी है गले बिच प्रेम फाँसी।**
**दास पलटू कहै लगी ना छूटि है,**
**सकल संसार मिलि करै हाँसी॥ 27॥**

**शब्दार्थ**—बिरह=वियोग जनित पीड़ानुभव। गांसी=तीर आदि का फल, चुभने वाली बात।

**भावार्थ**—आत्मानुराग जिसके मन में लगता है, वही जानता है और वह वही होता है जो सत्संग में बसने वाला होता है। कोई करोड़ों उपाय करे उसे उसके निश्चय से हटा नहीं सकता है। जिसको आत्म-विस्मरणजनित पीड़ा है उसकी आंखों से झरने झरते हैं। उसे भूख और नींद नहीं लगती। उसके गले में तो आत्मस्थिति-प्रेम की फांसी लगी है। पलटू साहेब कहते हैं कि उसका आत्मानुराग छूट नहीं सकता है, भले संसार के सभी लोग मिलकर उसकी हंसी उड़ायें।

**विशेष**—अपना आत्म-अस्तित्व जड़ दृश्य से सर्वथा भिन्न है। मेरे आत्मा में जगत है ही नहीं। मैं अनादिकाल से शरीर को ही अपना स्वरूप मानता रहा। आज इसका ज्ञान हुआ। मैं अपने आप का विस्मरण कर दुख-कांतार में भटकता रहा, ऐसा ज्ञान हो जाने पर साधक संसार से उचाट हो जाता है। उसको आत्म-विस्मरण कांटे के समान चुभता है। वह सदैव स्वरूप में निमग्न रहना चाहता है। सारा जड़ दृश्य छूट जाने वाला है, परन्तु मेरा अपना आपा आत्मा मेरे से कभी छूटने वाला नहीं है। अतएव साधक सदैव आत्मानुराग में रहता है।

### रेखता-28

**गगन में मगन है मगन में लगन है,**
**लगन के बीच में प्रेम पागै।**
**प्रेम में ज्ञान है ज्ञान में ध्यान है,**
**ध्यान के धरे से तत्त जागै॥**
**तत्त के जगे से लगै हरि नाम में,**
**पगै हरि नाम सतसंग लागै।**
**दास पलटू कहै भक्ति अबिरल मिलै,**
**रहै निसंक जब भर्म भागै॥ 28॥**

**शब्दार्थ**—अबिरल= सघन, निरंतर।

**भावार्थ**—साधक आकाश के समान मन को शून्य करके अपने आप में मग्न हो जाता है और इसी मग्नता में उसकी लगन लगी रहती है। इसी लगन में उसका प्रेम पकता है। इस प्रेम में आत्मज्ञान होता है। फिर उसमें ध्यान जम जाता है। जब ध्यान दृढ़ हो जाता है तब आत्मतत्त्व का साक्षात्कार होता है। जब आत्मसाक्षात्कार होता है तब साधक हरिनाम में लगता है। आत्मा ही हरि है और वह उसका गुणगान करने लगता है। जो आत्मचिंतन और आत्मचर्चा में पगता है वह सत्संग में अधिक दृढ़ता से लग जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि उसके आत्मानुराग की भक्ति अखंड हो जाती है। वह शंकाहीन होकर आत्ममग्न होता है। मनुष्य निश्शंक तभी होता है जब उसके मन से द्वैत का–परोक्ष का भ्रम मिट जाता है।

रेखता–29

**कफन को बाँधि कै करै तब आसिकी,**
**आसिक जब होय तब नाहिं सोवै।**
**चिंता बिनु आगि के जरै दिन राति जब,**
**जीवत ही जान से सता होवै॥**
**भूख पियास जग आस की छोड़ करि**
**आपनी आपु से आप खोवै।**
**दास पलटू कहै इसक मैदान पर,**
**देइ जब सीस तब नाहिं रोवै॥ 29॥**

**शब्दार्थ**—आसिकी= आशिक़ी= प्रेम, आशिक होना। आसिक= आशिक़, प्रेमी। इसक= इश्क़, प्रेम।

**भावार्थ**—सिर पर कफन बांधकर तब आत्मस्थिति के लिए अनुराग करे। जब आत्मलीनता के लिए प्रेमी हुआ, तब कहीं भी मोह–नींद न ले। सांसारिक चिंता की आग से सर्वथा रहित होकर ज्ञान की आग में रात–दिन मन के विकारों को जलावे। जीवतजान से मृत हो जाय—जीते जी अहंकार शून्य हो जाय। सांसारिक आशाओं तथा जगत–भोग की भूख–प्यास को त्यागकर अपने विवेक–बल से अपने दैहिक अहंकार को खो दे। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मस्थिति के अनुराग–संग्राम में जब अपना सिर दे दिया, तब कभी पीछे न हटे।

### रेखता–30

**प्रेम की घटा से बुंद परै पटापट,**
**गरज आकास बरसात होती।**
**गगन के बीच में कूप है अधोमुख,**
**कूप के बीच इक बहै सोती॥**
**उठत गुंजार है कुन्ज की गली में,**
**फोरि आकास तब चली जोती।**
**मानसरोवर में सहस दल कँवल है,**
**दास पलटू हंस चुगै मोती॥ 30॥**

**शब्दार्थ**—घटा= बादल। गुंजार= ध्वनि। कुंज= लता, वनस्पति से ढका।

**भावार्थ**—प्रेम के बादल से टपाटप बूंदे गिरती हैं। आकाश में प्रेम के बादल गरजते हैं और अखण्ड वर्षा होती है। आकाश के बीच में एक नीचे मुख का कुंआ है। वहां पर स्रोत बहता है। लताओं से ढकी हुई गली में ध्वनि उठती है, फिर आकाश को फोड़कर एक ज्योति प्रकट होती है। मानसरोवर में एक हजार दलों का कमल है। पलटू साहेब कहते हैं कि वहां हंस मोती चुगते हैं।

**विशेष**—हठयोग में माना जाता है कि सिर के अंदर का पोल आकाश है। वहां नीचे मुख का कुंआ है, जहां से झरना बहता है। वहां से अनाहतनाद उठता है। वहां ज्योति प्रकट होती है। वहां हजार दलों का कमल है जहां हंस मोती चुनता है। वस्तुतः यह सब वैसे ही काल्पनिक है जैसे गुदा से लेकर सिर तक मूलाधार आदि अष्ट कमलों का वर्णन है। पोस्टमार्टम में देखा जा सकता है कि शरीर में यह सब कुछ नहीं है। यह सब हठयोगियों की कल्पना है। उसी में से कुछ छींट को लेकर मनमौजी संत पलटू साहेब ने अपनी बानी में कह डाला है।

सचाई यह है कि जब मन संसार से पूर्ण निष्काम हो जाता है तब अनन्त निर्भय सुख का अनुभव होता है। इसके लिए देह की गलियों की कल्पनाओं में नहीं घूमना है, अपितु समस्त जड़ दृश्य से निष्काम होकर अपने आप में शांत हो जाना है।

### रेखता–31

**होय रजपूत सो चढ़ै मैदान पर,**
**खेत पर पाँच पच्चीस मारै।**

**काम औ क्रोध दुइ दुष्ट ये बड़े हैं,**
**ज्ञान के धनुष से इन्हैं टारै॥**
**कूद परि जाइ कै कोट काया मँहै,**
**आगि लगाय के मोह जारै।**
**दास पलटू कहै सोई रजपूत है,**
**लेहि मन जीति तब आपु हारै॥ 31॥**

**शब्दार्थ**—रजपूत=राजपूत, क्षत्रिय। मैदान=युद्ध का मैदान, साधना का क्षेत्र।

**भावार्थ**—वह असली क्षत्रिय है, जो साधना के रणक्षेत्र में चढ़े और पांचों ज्ञानेन्द्रियों तथा शरीर की पचीसों प्रकृतियों को अपने वश में कर ले। काम और क्रोध में ये दोनों बड़े दुष्ट हैं। इन्हें आत्मज्ञान के धन्वा-बाण से मार गिराये। इसके बाद काया-किला पर कूदकर चढ़ जाय और उसमें वैराग्य की आग लगाकर मोह को पूर्ण जला दे। पलटू साहेब कहते हैं कि वही सच्चा क्षत्रिय है जो अपने मन को जीत लेता है, वह स्वयं सबसे हार जाता है—सबसे नम्र होकर पूर्ण विवाद रहित हो जाता है।

### रेखता-32

**महा दल मोह पर संत जन चढ़े हैं,**
**फौज बिबेक तैयार कीन्हा।**
**ज्ञान निस्सान को चढ़े बजाय कै,**
**हरावल छमा घर घाट चीन्हा॥**
**भक्ति देवान आचाह पैदर बना,**
**बिराग असवार से घेर लीन्हा।**
**दास पलटू कहै मोह दल साफ भा,**
**तोप संतोष छोड़ाइ दीन्हा॥ 32॥**

**शब्दार्थ**—निसान=निशान, पताका, डंका। हरावल=फौज के आगे चलने वाले पहरेदार, वह थोड़ी सेना जो फौज के आगे चलती है। देवान=दीवान, बड़ा सैनिक। पैदर=पैदल, योद्धा सिपाही, सैनिक। असवार=सवार, घोड़े-हाथी आदि पर चढ़े हुए सैनिक।

**भावार्थ**—मोह की महा सेना अंतःकरण में विद्यमान है। उससे युद्ध करने के लिए संत जन उस पर चढ़ाई कर देते हैं। इसके लिए वे विवेक की

सेना तैयार करते हैं। वे आत्मज्ञान का डंका बजा कर मोह दल को नष्ट करने के लिए उस पर टूट पड़ते हैं। उनकी विवेक-सेना के आगे क्षमा चलती है जो विवेक-सेना का रक्षक है। वह मोह के घर-घाट को—रंग-ढंग को जानती है। वहां भक्ति मुख्य सैनिक है, निष्कामता पैदल सैनिक है। वैराग्य अपने तेज सवारी पर चढ़ कर मोह को घेर कर उसका नाश करने लगता है। पलटू साहेब कहते हैं कि इस प्रकार विवेक की सेना ने मोह-दल को मारकर मैदान साफ कर दिया। जब विवेक ने संतोष का तोप चलाया तब सर्वत्र शत्रुओं पर विजय हो गयी।

**विशेष**—मोह-दल को जीतने के लिए विवेक, आत्मज्ञान, क्षमा, भक्ति, निष्कामता, वैराग्य, संतोष आदि ही सहायक हैं।

## रेखता-33

**खैंचि समसेर तब पैठु रनछेत्र में,**
**करै ना देर सोइ साधु बंका।**
**काम दल जारि कै क्रोध को मारि कै,**
**रहै निर्संक ना करै संका॥**
**मनराव को पकरि कै ज्ञान से जकरि कै,**
**छिमा दै ढाल गढ़ लेत लंका।**
**पलटू सोई दास कहँ सुन्न में बास तब,**
**गैब घर बैठि के देत डंका॥ 33॥**

**शब्दार्थ**—समसेर=शमशीर, शमशेर, तलवार। बंका=बांका, उत्तम। मनराव=मन राजा। जकरिकै=बांधकर। गैब=अदृश्य, आत्मशांति। डंका=विजय का बाजा।

**भावार्थ**—वही उत्तम साधु है जो आत्मज्ञान की तलवार खींचकर शीघ्र ही मोह को मार डाले। काम की सेना को ज्ञानाग्नि में जलाकर और क्रोध को मारकर निर्भय हो जाय। फिर भय न रह जाय। मन-राजा को पकड़ ले, और उसे आत्मज्ञान के बंधन में बांध ले और क्षमा के ढाल पर शत्रु के सारे आघात को रोककर काया रूपी गढ़ लंका पर विजय कर ले। पलटू साहेब कहते हैं कि वही सद्गुरु का शिष्य मनोविकारों से शून्य स्थिति में निवास कर तथा इन्द्रियातीत स्वरूपस्थिति में बैठकर आत्म-विजय का डंका बजाता है।

## रेखता-34

**ज्ञान दल छोहनी भालु वानर लिहे,**
**चढ़ा है छिमागढ़ जाय लंका।**
**प्रेम हनुमंत जब चला है गरजि कै,**
**दिहा गढ़ लाय बजाय डंका॥**
**मोह समुद्र को बाँधि बिबेक से,**
**उतरि गइ फौज ना तनिक संका।**
**हंकार सुनि रावना भागु ना बचैगा,**
**दास पलटू संग बीर बंका॥ 34॥**

**शब्दार्थ**—छोहनी= छोहिनी, अक्षौहिणी, चतुरंगिनी सेना का एक परिमाण या विभाग, इसमें 1,09,350 पैदल, 65,310 घोड़े, 21,870 रथ और इतने ही हाथी होते हैं। बंका= बांका, उत्तम।

**भावार्थ**—ज्ञानी संत रूपी राम ने आत्मज्ञान की विशाल वानर-भालू सेना जो अक्षौहिणियों में है, लेकर तथा क्षमागढ़ से कूचकर अहंकार रूपी रावण के लंका पर धावा बोल दिया। जब प्रेम रूपी हनुमान गर्जना करके चला तो उसने मोह गढ़ लंका को डंका बजाकर भस्म कर दिया। मोह-समुद्र को विवेक से बांधकर राम-सेना निर्भय होकर उतर गयी। विवेक रूपी रामादल की गर्जना सुनकर मोहरूपी रावण भागकर बच नहीं सकता। पलटू साहेब कहते हैं कि विवेक-सेना के बड़े उत्तम सैनिक हैं।

**विशेष**—विवेक, वैराग्य, क्षमा आदि के सामने मोह, अहंकार आदि टिक नहीं सकते।

## रेखता-35

**राज तन में करै भक्ति जागीर लै,**
**ज्ञान से लरै रजपूत सोई।**
**छमा तरवार से जगत को बसि करै,**
**प्रेम की जुज्झ मैदान होई॥**
**लोभ औ मोह हंकार दल मारि कै,**
**काम औ क्रोध ना बचै कोई।**
**दास पलटू कहै तिलकधारी सोई,**
**उदित तिहुलोक रजपूत सोई॥ 35॥**

**शब्दार्थ**—जागीर= वैभव। जुज्झ= युद्ध। तिलकधारी= चक्रवर्ती सम्राट।

**भावार्थ**—जो भक्ति रूपी वैभव लेकर शरीर में राज्य करता है और आत्मज्ञान की तलवार लेकर मोह से लड़ता है वही क्षत्रिय है। क्षमा रूपी तलवार चलाकर संसार के लोगों को अपने वश में कर ले और संसार के मैदान में प्रेम का युद्ध करे—सबसे प्रेम करे। लोभ, मोह, अहंकार, काम, क्रोधादि की सेना को ऐसा मार दे कि उनमें से कोई बचने न पावे। पलटू साहेब कहते हैं कि वही राजतिलकधारी सम्राट है और वही तीनों लोकों में प्रकट क्षत्रिय है।

**विशेष**—कामादि को मारकर जो त्याग, क्षमाभाव तथा प्रेम व्यवहार से जीवन व्यतीत करता है, वही क्षत्रिय है।

रेखता–36

**गुरु के भेद को पाइ कै सिकिल करु,**
**उसी के सबद में गरक रहना।**
**ज्ञान का ढोल बजाय चौगान में,**
**कफन को बाँधि मैदान चढ़ना॥**
**आपने ख्याल में मगन दिन राति रहु,**
**जगत के भरम को दूरि करना।**
**दास पलटू कहै मुक्ति होइ जायेगी,**
**गुरु के इसिम पर ठौर मरना॥ 36॥**

**शब्दार्थ**—सिकिल= सिकली, हथियार मांजकर साफ करना। गरक= ग़रक़, डूबा हुआ, लीन, तन्मय। चौगान= मैदान। इसिम= इस्म, नाम, संज्ञा।

**भावार्थ**—हे साधक! सद्गुरु के सत्संग से जड़–चेतन का भेद जानकर विवेक द्वारा उसे निरंतर मांजो और सद्गुरु के निर्णय वचनों को प्राप्त कर स्वरूपज्ञान में ही निरंतर लीन रहो। स्वरूपज्ञान का ढोल मैदान में बजाकर खुला निर्णय करके तथा सिर पर कफन बांधकर मोह–राजा से युद्ध करो। सांसारिक मोह जो भ्रम मात्र है, उसे दूर कर रात–दिन आत्माराम के चिंतन में डूबे रहो। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि सद्गुरु के नाम पर—उनसे आत्मबोध प्राप्त कर अपनी जगह पर मर जाओ, तो तुम्हारी मुक्ति हो जायगी।

**विशेष**—गुरु के नाम पर मर जाओ अर्थात गुरु से आत्मबोध प्राप्त कर, देहाभिमान छोड़ दो। बस, मुक्ति ही है। मन मर गया, मुक्ति हो गयी।

### रेखता-37

**सत्त को जीन संतोष लगाम है,**
**गुरु ज्ञान को पाखर जाय डारा।**
**बिस्वास रकाब में जुगति की एड़ दै,**
**पाँच पच्चीस मवास मारा॥**
**पवन का घोड़ा सुरति असवार है,**
**प्रेम की ढाल है मर्म भाला।**
**बिबेक देवान इन्साफ पर बैठि कै,**
**मुक्ति को कैद जंजीर डाला॥ 37॥**

**शब्दार्थ**—जीन= घोड़े की पीठ पर रखने की गद्दी, चारजामा काठी। पाखर= लड़ाई के हाथी-घोड़े की रक्षा के लिए उन्हें पहनायी जाने वाली लोहे की झूल। रकाब= घोड़ों की काठी का पावदान जिसमें पैर डालकर बैठने में सहारा लेते हैं। मवास= गढ़, दुर्ग।

**भावार्थ**—सत्य का जीन है, संतोष की लगाम है, गुरु का दिया हुआ आत्मज्ञान पाखर है, विश्वास का रकाब है, युक्ति का एड़ दिया और पांच-पचीस इन्द्रिय-प्रकृति के गढ़ पर विजय किया। पवन का घोड़ा है, मनोवृत्ति सवार है, प्रेम की ढाल और आत्मज्ञान के रहस्य का भाला है, विवेक न्याय करने वाला दीवान है। उसने जड़-चेतन-निर्णय रूप न्याय की गद्दी पर बैठकर मुक्ति को ऐसा अपना बना लिया जैसे किसी के पैर में जंजीर डाल कैद कर अपने पास रख लिया हो।

**विशेष**—जिसके जीवन में सत्य, संतोष, आत्मज्ञान, आत्मविश्वास, युक्ति, विवेक और न्याय है, वह सदा मुक्त है।

### रेखता-38

**ज्ञान समाज में जाय बैठे जबै,**
**कामदेव जाय तरवार झारी।**
**माया मोह का घोड़ा दौड़ावता,**
**संग लिये फौज मृग-नैनि नारी॥**
**वो तो भागि के दसवें द्वार लुका,**
**रिसियाय के हमने तान मारी।**

**पलटू जब ज्ञान समसेर खैंची,**
**तब कामदेव की फौज हारी॥ 38॥**

**शब्दार्थ**—समसेर= शमशीर, शमशेर, तलवार।

**भावार्थ**—जब साधक ज्ञान के समाज में–साधना में बैठता है, तब काम–वासना वहां अपनी तलवार चमकाती है। वह उस समय माया–मोह का घोड़ा दौड़ाती है और मृगनयनी नारी का स्मरण करवाती है फिर भागकर दसवें द्वार में छिप बैठती है। मैंने उस पर क्रोध से तानकर तलवार चला दी। पलटू साहेब कहते हैं कि जब मैंने आत्मज्ञान की तलवार चलाई तो कामदेव की सेना मारी गयी।

**विशेष**—साधना की कच्ची अवस्था में साधक के मन में विषय–वासनाएं आती हैं, परन्तु जब वह निरंतर साधना द्वारा परिपक्व हो जाता है, तब वासनाएं समाप्त हो जाती हैं और साधक प्रशांत दशा में हो जाता है।

दसवां द्वार सिर का तालुमूल माना है। वासना वहां जाकर छिपती है, यह कथन की एक विधा है। वस्तुतः वासनाएं मन में ही रहती हैं। वे कभी प्रकट होती हैं और कभी अप्रकट। जब अखंड वैराग्य की स्थिति आती है, तब वासनाएं नष्ट हो जाती हैं।

## 8. संतोष परम सुख है

रेखता–39

**गुरु जो दिया है सोई तू लिये रहु,**
**उसी में बहुत बिस्वास करना।**
**होयगा बहुत फिरि सबद जो लगेगा,**
**चित्त को चेति कै ध्यान धरना॥**
**चतुर जो होयगा करैगा कसब को,**
**बुंद ही बुंद सामुद्र भरना।**
**दास पलटू कहै सिफत हैं सुरति की,**
**और कोइ ख्याल में नाहिं परना॥ 39॥**

**शब्दार्थ**—कसब= कस्ब, धनोपार्जन, तात्पर्य में अभ्यास। सिफत= सिफ़त, विशेषता, गुण। सुरति=मनोवृत्ति।

**भावार्थ**—हे साधक ! सद्‌गुरु ने जो तुम्हें स्वरूपबोध दिया है, उसी को ठीक से सम्हालकर रखे रहो। उसी में पूर्ण विश्वास करो। यदि सद्‌गुरु के निर्णय वचन तुम्हारे दिल में चोट कर गये, तो तुम्हारा ज्ञान पूरा हो जायेगा। तुम गुरु के ज्ञान को लेकर अपने मन में सावधान हो जाओ और स्वस्वरूप का ही अनुसंधान करो। जो समझदार होगा, वह गुरु से आत्मबोध पा जाने पर उस पर अभ्यास करेगा, अंतर्मुखता की कमाई करेगा। जैसे बूंद-बूंद से समुद्र भर जाता है, वैसे निरंतर अभ्यास करते-करते साधक पूर्ण अंतर्मुख होकर तथा मनोमय जगत से परे होकर प्रपंचशून्य आत्मा में लीन हो जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मनोवृत्ति की विशेषता है कि वह जब अंतर्मुख हो जाती है तब पूरा काम बन जाता है। अतएव ऐ साधक ! स्वरूपस्थिति के अतिरिक्त विचार में नहीं रहना।

## रेखता-40

**संतोष के धरे से खाय गज पेट भरि**
**स्वान इक टूक को केतिक धावै।**
**संत की वृत्ति अजदहा की चाहिए,**
**चले बिनु फिरे आहार पावै॥**
**सिंह आहार को करत है सहज में,**
**स्यार दस बीस घर मूड़ नावै।**
**दास पलटू कहै और कछु ना करै,**
**भक्ति के मूल संतोष लावै॥ 40॥**

**शब्दार्थ**—गज= हाथी। अजदहा= अजगर, सर्प।

**भावार्थ**—हाथी संतोष करके एक जगह खड़ा रहता है और वह पेट भर खाने को पाता है, परन्तु कुत्ता रोटी के एक टुकड़े के लिए कितने ही द्वारों पर दौड़ता है। संत की वृत्ति अजगर की चाहिए। अजगर एक जगह पड़ा रहता है, परन्तु उसे वहीं अपनी खुराक मिल जाती है। संत साधना करे, भोजन की चिंता न करे। वह सहज ही मिल जायेगा। सिंह अपना भोजन सहज ही प्राप्त करता है, किन्तु सियार दस-बीस जगह मूड़ मारता है। पलटू साहेब कहते हैं कि साधक जीवन-निर्वाह की चिंता न करे। वह अपनी श्रेणी के अनुसार अपना कर्तव्य करता रहे और यह समझे कि भक्ति एवं आध्यात्मिक साधना में संतोष परम आवश्यक है।

रेखता–41

**दृष्टि कच्छप केरी ध्यान जो लाइये,**
**अंडा सुरति से सेइ आवै।**
**तार मकरी गहे उतरि कै आवती,**
**उलटि के तार गहि फेरि जावै॥**
**चेटुका गिरा ज्यों अलल के पच्छ का,**
**जमी पर बीच में उलटि धावै।**
**दास पलटू कहै भृंगी ज्यों कीट को,**
**देत जियाइ त्यों चित्त लावै॥ 41॥**

**शब्दार्थ**—कच्छप= कछुआ। चेटुका= बच्चा।

**भावार्थ**—जैसे मादा कछुआ अपने अंडे पानी से अलग जगह पर देकर अपनी सुरति से उनका ख्याल रखती है तथा सेवन करती है। मकड़ी अपने बनाये तार पर एकाग्रता से चढ़ती-उतरती रहती है। अलल पक्षी अपने अंडे उड़ते-उड़ते देती है और उसके बच्चे जमीन पर न गिरकर उलटकर आकाश में उड़ जाते हैं। भंवरा जैसे मरे हुए कीड़े को अपने शब्द सुनाकर जिला देता है, पलटू साहेब कहते हैं कि वैसे साधक अपनी मनोवृत्ति अंतर्मुख कर एकाग्रता से आत्मलीनता की साधना करे।

**विशेष**—भृंगी कीट का उदाहरण चलता है। वैसे मृत कीड़े को भंवरा जिला नहीं सकता। अलल पक्षी के अंडे का भी उदाहरण चलता है। वह कितना सच है, कहा नहीं जा सकता। खास बात है कि साधक तन्मयता से अंतर्मुख होने का काम करे।

## 9. कल्याणकारी उपदेश

रेखता–42

**आतम सोई उपाधि का मूल है,**
**काम औ क्रोध फल फूल लागा।**
**लोभ औ मोह बहु भाँति साखा चली,**
**डार औ पात उठि कर्म जागा॥**
**संजम कुल्हारी से पेड़ को काटि कै,**
**डार औ पात सब सूखि जागा।**

**दास पलटू कहै मूल ना सीचिये,**
**बिना जल दिहे सब रोग भागा॥ 42॥**

**शब्दार्थ**—आतम=आत्मा, तात्पर्य में अपने आप की भूल, स्वरूप की भूल। उपाधि= धोखा, दुख। संजम= संयम।

**भावार्थ**—अपने स्वरूप की भूल सभी दुखों की जड़ है। उसी में काम-क्रोधादि के फूल-फल लगते हैं। फिर लोभ-मोहादि अनेक शाखाएं फूटती हैं और उनमें कर्म के पत्ते जगते हैं। संयम की कुल्हाड़ी से स्वरूप-भूल का पेड़ काट देने से उसके डार-पात सब सूख जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि भव-वृक्ष का मूल है स्वरूप-भूल एवं आत्मविस्मरण। उसको साधक अपनी मनोवृत्ति से न सींचे तो जैसे जल से सींचे बिना पौधे सूख जाते हैं, वैसे अपने मन के रागात्मक स्मरण पाये बिना भव-वृक्ष सूख जायेगा।

## रेखता-43

**एक ही फाँस में बझे तिहुँ लोक सब,**
**बझे तिहुँ लोक इक संत छूटे।**
**एक ही रास्ता कर्म का बड़ा है,**
**गये उस राह को सभै लूटे॥**
**राह झाड़ी मँहै प्रेम के औघटे,**
**गये बचि संत नहिं रोम टूटे।**
**दास पलटू कहै संत की राह तजि,**
**कर्म की राह गे कर्म फूटे॥ 43॥**

**शब्दार्थ**—फांस= फांसी, बंधन। प्रेम=मोह। औघटे= दुर्गम मार्ग, कठिन रास्ता।

**भावार्थ**—संसार के सारे मनुष्य एक ही रागात्मक कर्म की फांसी में फंसे हैं। इससे कोई निर्मोही संत छूटता है। एक ही रागात्मक कर्म का बड़ा रास्ता है। जो भी इस राह में चले, उन सबका आध्यात्मिक धन लुट गया। संसार का मोह कंटीला झाड़ी-झंखार और दुर्गम मार्ग है। संत इनसे अपने को बचा लेते हैं। उनका एक रोम भी नहीं टूटता—वे थोड़ा भी दुखी नहीं होते। पलटू साहेब कहते हैं कि जो मनुष्य संत का निर्मोह रास्ता छोड़ देता है और रागात्मक कर्म के रास्ते पर चलता है, उसके कर्म फूटे हैं।

### रेखता–44

**छोड़ि बेकाम को काम करु आपना,**
**गफलत माँहै दिन जात बीता।**
**धोख धन्धा करै मरै सिर पटकि कै,**
**राम के नाम से रहा रीता॥**
**ब्याज बट्टा मँहै लगा दिन रात तूँ,**
**चला तन हारि ब्योहार जीता।**
**दास पलटू कहै याद करु याद करु,**
**बोल बे बालके राम सीता॥ 44॥**

**शब्दार्थ**—रीता= खाली।

**भावार्थ**—हे मनुष्य ! मोह–माया बढ़ाने का निरर्थक काम छोड़कर अपने आत्मकल्याण का काम करो। तेरे सारे दिन असावधानी में बीते जाते हैं। मोह–माया बढ़ाना रूप धोखे का धंधा करता है और चिंता–शोक में पड़कर सिर पटक–पटक मरता है। राम–नाम भी नहीं लेता। तू रात–दिन ब्याज–बट्टा का धंधा करके धन बढ़ाने में लगा है। सांसारिक व्यवहार में अपने को विजयी मानकर मानव–जीवन के कर्तव्य कल्याण–साधना को हार गया। पलटू साहेब कहते हैं कि हे मनुष्य ! तू अपने कल्याण–साधना की याद कर। ऐ बालक ! राम–सीता कह !

### रेखता–45

**पुन्न जो करै सो पुन्न को पाइहै,**
**पुन्न भे छिन्न मृत लोक आवै।**
**करम को जीव सो सदा करमै मँहै,**
**जनम औ मरन फिरि करम पावै॥**
**पड़ा वह रहै चौरासी के फेर में,**
**चौरासी को छोड़ि वह कहाँ जावै।**
**दास पलटू कहै द्वार दसएँ केरी,**
**राह में जाय सो मुक्ति पावै॥ 45॥**

**शब्दार्थ**—छिन्न= क्षीण होने पर।

**भावार्थ**—जीव पुण्य कर्म करता है तो उसका फल उसे सुख मिलता है, परन्तु कर्मभोग समाप्त होने पर जीव मृत्युलोक में भटकता ही है। कर्म करने वाला जीव सदैव उसके शुभाशुभ फलों के भोगों में जन्मता-मरता है और बारम्बार कर्म करता है। कर्मी जीव चौरासी योनियों के चक्कर में ही पड़ा रहता है। वह उसे छोड़कर कहां जा सकता है? पलटू साहेब कहते हैं कि जब जीव दसवें द्वार में पहुंचता है तब वह जन्म-मरण के बधंन से मुक्त होता है।

**विशेष**—कुछ पुराने साधकों की मान्यता है कि सिर के तालुमूल में एक बारीक छिद्र है। वहां सदैव ध्वनि होती है। जो साधक उसके सुनने एवं साधना में लीन होता है, वह शरीर छोड़ते समय उसी द्वार से निकलता है, वही मुक्त होता है। परन्तु यह धारणा भावुकता ही है। मुक्ति है जगत-वासना छोड़कर आत्मलीनता। मन के क्षेत्र से उठकर स्वरूपलीनता मोक्षदशा है।

## रेखता-46

**दास कहाइ कै आस ना कीजिये,**
**आस जो करै सो दास नाहीं।**
**प्रेम तो एक जो लगा संसार में,**
**भक्ति गइ दूरि अब जक्त माहीं॥**
**चाहिए भक्ति को जक्त से तोरिये,**
**जोरिये जक्त से भक्ति जाही।**
**दास पलटू कहै एक को छोड़ि दे,**
**तरवार दुइ म्यान इक नाहिं चाही॥ 46॥**

**शब्दार्थ**—दास कहाइ= सद्गुरु का शिष्य होकर।

**भावार्थ**—सद्गुरु का शिष्य कहलाकर सांसारिक भोगों की आशा न करो। जो सांसारिक भोगों की आशा करता है, वह सद्गुरु का शिष्य नहीं है। मन तो एक है। जब उसका प्रेम संसार में लगेगा तब भक्ति का प्रेम दूर हो जायेगा। वह जगत-वासना में ही डूब जायेगा। यदि भक्ति करना चाहते हैं तो मन को जगत से हटा लीजिए। यदि मन जगत के राग-रंग में जोड़ते हैं तो भक्ति नहीं चल सकती। पलटू साहेब कहते हैं कि भोग या भक्ति, दोनों में से एक को छोड़ना पड़ेगा। एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं।

**विशेष**—यहां भक्ति का अर्थ है—स्वस्वरूपानुसंधानम् भक्तिरित्यभि-धीयते। स्वस्वरूप का अनुसंधान भक्ति कहलाती है। 'भक्ति न जाने भक्त कहावै, तजि अमृत विष कैलिन सारा।'

### रेखता-47

**गाय बजाय के काल को काटना,**
**और की सुनै कछु आपु कहना।**
**हँसना खेलना बात मीठी कहै,**
**सकल संसार को बस्सि करना॥**
**खाइये पीजिये मिलै सो पहिरिये,**
**संग्रह त्याग में नाहिं परना।**
**बोलु हरि भजन को मगन ह्वै प्रेम से,**
**चुप्प जब रहौ तब ध्यान धरना॥**
**भेष भगवन्त के चरन को ध्याइ कै,**
**ज्ञान की बात से नाहिं टरना।**
**मिलै लुटाइये तुरत कछु खाइये,**
**माया औ मोह को ठौर मरना॥**
**दुक्ख और सुक्ख फिरि दुष्ट औ मित्र को,**
**एक सम दृष्टि इक भाव भरना।**
**दास पलटू कहै राम कहु बालके,**
**राम कहु राम कहु सहज तरना॥ 47॥**

**शब्दार्थ**—ध्याइ कै= ध्यान करके।

**भावार्थ**—जब संत मिलें तब ज्ञान का गीत गाकर-बजाकर, दूसरे की सुनकर और अपना कहकर समय व्यतीत करो। हंसो, खेलो, मीठी बातें करो और अपने प्रेम-बरताव से साथियों तथा मिलने वालों को प्रसन्न रखो। जो कुछ मिले खाओ, पीयो, पहनो किन्तु संग्रह के मोह और त्याग के अहंकार में मत पड़ो। प्रेम से मगन होकर हरिभजन गाओ और जब मौन होओ, तब ध्यान धारण करो। भेष-भगवान—साधुओं के चरणों का ध्यान करके रहना और आत्मज्ञान की बातों से कभी विचलित नहीं होना। जो कुछ मिले खाइये और

तुरन्त अन्य की सेवा में लगाइए। माया-मोह मन में आवे तो उसे उसी समय विवेक से मार दीजिए। दुख-सुख, शत्रु-मित्र में समता रखकर समान भाव से जीवन व्यतीत करो। पलटू साहेब कहते हैं, हे बालक ! राम कहो, राम कहो, राम कहो और संसार-सागर से सहज रहनी रखकर तर जाओ।

### रेखता-48

**तन मन धन सब आनि आगे धरै,**
**तेहू को नाहिं इतबार कीजै।**
**ज्ञानी औ चतुर को सबद ना दीजिये,**
**माया के जीव से सबद छीजै॥**
**जहाँ गौं मिला फिरि उलटि फिरि जायगा,**
**प्रीति कितनो करै परखि लीजै।**
**दास पलटू कहै प्रेमी जो सबद का,**
**तेहू को परखि कै सबद दीजै॥ 48॥**

**शब्दार्थ**—गौं= दावं, अवसर।

**भावार्थ**—जो लोग शास्त्रों के ज्ञानी और बुद्धि के निपुण हैं, ऐसे लोगों को आत्मज्ञान के उपदेश देने के चक्कर में मत पड़ो। ऐसे लोग अपने तन, मन, धन सर्वस्व तुम्हारे चरणों में अर्पित करें, तो भी उन पर विश्वास न करो। जो मायावी जीव हैं, उनको उपदेश करने से उपदेश निष्फल जाता है। चतुर-चालाक लोग जहां अपना दावं देखेंगे, वे तुम्हारे उलटे हो जायेंगे, तुम्हारी निन्दा करने लगेंगे। ऐसे लोग तुमसे चाहे जितना प्रेम करें उनको परखने का प्रयत्न करो। पलटू साहेब कहते हैं कि जो निर्णय के प्रेमी हों, उनको भी परखकर उनकी स्थिर समझ जानकर उन्हें ज्ञानोपदेश करो।

### रेखता-49

**होहु सिष बालके काम करु बूझि कै,**
**कुबुधि को देखि कै दूरि भागौ।**
**बात है काम की बुरा ना मानिये,**
**कनक औ कामिनी दूरि त्यागौ॥**
**प्रीति ना कीजिये मोह में परहुगे,**
**छोड़ि कुसंग सतसंग लागौ।**

**दास पलटू कहै कर्म को मेटि कै,**
**सीस पर सबद कै दाग दागौ॥ 49॥**

**शब्दार्थ**—सिष= शिष्य।

**भावार्थ**—हे प्यारे बच्चो! सद्गुरु के शिष्य बनो, परंतु ठीक से समझ-बूझकर साधना करो। जो मनुष्य दुर्बुद्धि वाले हों, उनको समझकर उनसे दूर हट जाओ। मैं बड़े काम की बात कहने जा रहा हूं, बुरा मत मानना, कनक-कामिनी से भागकर उनसे दूर हट जाओ। ध्यान रखो, किसी से अधिक प्रेम न करो, अन्यथा मोह के जाल में पड़ जाओगे। अतएव कुसंग त्यागकर सत्संग में लगो। पलटू साहेब कहते हैं कि सारे रागात्मक कर्म त्यागकर अपने मन में निर्णय शब्दों को दृढ़ कर लो।

रेखता-50

**कूद बे बालके कहर दरियाव में,**
**जीव की लालचै छोड़ु भाई।**
**ताकना नाहिं अब स्यार से सिंह ह्वै,**
**गुरु के चरन में चित्त लाई॥**
**आखिर धौं मरेगा कूद झड़ाक से,**
**कूदने सेती ना गम्य खाई।**
**तुझे क्या लाज है लाज है उसी को,**
**उसी के सीस दे भार नाई॥**
**बार ना बाँकिहै छोड़ु डगमगी को,**
**तनिक बिस्वास करु एक राई।**
**दास पलटू कहै कहर की लहर से,**
**बचैगा सोई जो कूदि जाई॥ 50॥**

**शब्दार्थ**—कहर= क़हर, विपत्ति, आफत, मृत्यु। दरियाव= दरिया, नदी, समुद्र। धौं= भला। गम्य= ग़म, दुख, चिंता, परवाह।

**भावार्थ**—अबे बालक! मृत्यु के समुद्र में कूद पड़। हे भाई! जीने का लोभ छोड़ दे। अब तू सियार से सिंह हुआ है—सामान्य मनुष्य से साधक हुआ है। दुविधा में मत पड़। सद्गुरु की चरण-भक्ति में मन लगा। सोच भला, अंत में तो तू मरेगा ही, इसलिए आज ही मृत्यु के सागर में भड़ाक से

कूद जा। कूदने में परवाह मत कर। तुम्हें क्या लज्जा पड़ी है? तेरी लाज तो तेरे सद्गुरु को है। वह तुझे सम्हालेगा। अपना शीश उसी के चरणों में अर्पित करके अपना सारा भार उसी को दे दे। तू मन की डगमगाहट छोड़ दे। तेरा बाल भी बांका नहीं होगा। जरा, तू थोड़ा-सा एक रत्ती विश्वास तो कर। पलटू साहेब कहते हैं कि कहर की लहर से वही बचेगा जो कहर के सागर में बेझिझक कूद जायेगा।

**विशेष**—साधक मरने से डरे तो वह साधक कैसा? सारा अहंकार त्याग देना मरना है। जीने की इच्छा का त्याग उसमें सहज ही हो जाता है। जो जीने की इच्छा त्याग देता है, वह अमर आत्मा में स्थित हो जाता है, जो साधक शरीर में रहते हुए सब समय मन से शरीर त्यागे रहता है, वह सदा निर्भय अमृत रूप है।

रेखता-51

**काछ जो काछिये नाच सोइ नाचिये,**
**काछ बिनु नाच ना तनिक भावै।**
**बाना है सिंह को चाल है सियार की,**
**रहा वह स्यार नहिं चाल पावै॥**
**भेष धरे हंस सुभाव है काग को,**
**हंस जब होय सुभाव जावै।**
**दास पलटू कहै काछ तो नाचि ले,**
**कथनी रहनी इक घाट आवै॥ 51॥**

**शब्दार्थ**—काछ=पेड़ू और जांघ का जोड़, तात्पर्य में पहनाव, वेष। नाच=हाथ फैलाकर नाचना; तात्पर्य में आचरण, बरताव। बाना=वेष, पहनाव।

**भावार्थ**—जो वेष पहनो, वैसा आचरण करो। पवित्र आचरण के बिना वेष शोभा नहीं पाता। वह थोड़ा भी अच्छा नहीं लगता। वेष है साधु का और आचरण करता है मलिन, तो वह सिंह नहीं हो जायेगा, अपितु सियार ही रहेगा। आचरण के बिना वेष क्या करेगा? वेष तो हंस का धारण कर लिया और स्वभाव है कौआ का, तो वह नीर-क्षीर-विवेक न करके गंदगी पर मुंह मारेगा। जब वह हंस होगा, तब कौआ का स्वभाव छूटेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि तूने साधु का वेष धारण किया है, तो साधु-रहनी में रह। तब कथनी और करनी एक रास्ते पर आयेंगी।

रेखता–52

**नाचना नाचु तो खोलि घूँघट कँहै,**
**खोलि के नाचु संसार देखै।**
**खसम रिझाव तो ओट को छोड़ि दे,**
**भर्म संसार को दूरि फेकै॥**
**लाज किसकी करै खसम से काम है,**
**नाचु भरि पेट फिर कौन छेकै।**
**दास पलटू कहै तुहीं सोहागिनी,**
**सोव सुख सेज तू खसम एकै॥ 52॥**

**शब्दार्थ**—खसम=पति, स्वामी, आत्मा। ओट=परदा, झिझक। छेके=रोकेगा। सोहागिनी=पति वाली।

**भावार्थ**—हे मनोवृत्ति ! यदि नाचना है तो घूंघट खोलकर नाच—साधना करना है तो मोह-माया तथा लज्जा त्यागकर साधना कर। परदा खोलकर नाच, जिससे संसार के लोग देखें। यदि आत्मलीनता चाहे, तो अविद्या का परदा दूर कर दे और संसार की मोह-माया तथा लज्जा-शर्म का भ्रम दूर फेंक दे। तुझे संसार से क्या डरना है? तेरा काम तो आत्मलीनता से है। अतएव तू पूर्णरूप से आत्मलीनता की साधना कर, फिर तेरे को कौन रोक सकेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि हे साधक की मनोवृत्ति, तू ही पति वाली होगी। तू अपने आत्मा रूपी पति से अभिन्न होकर सुख की शय्या पर सो जा—आत्मलीन हो जा।

रेखता–53

**सुंदरी पिया की पिया को खोजती,**
**भई बेहोस तू पिया के कै।**
**बहुत सी पद्मिनी खोजती मरि गयीं,**
**रटत ही पिया पिया एक एकै॥**
**सती सब होत हैं जरत बिनु आगि से,**
**कठिन कठोर वह नाहिं झाँकै।**
**दास पलटू कहै सीस उतारि कै,**
**सीस पर नाचु जो पिया ताकै॥ 53॥**

**शब्दार्थ**—सुंदरी= मनोवृत्ति। पिया= आत्मा। पद्मिनी= चार लक्षण वाली स्त्रियों में प्रथम, मनोवृत्ति।

**भावार्थ**—आत्मा की पत्नी मनोवृत्ति आत्मा को खोजती है; परन्तु हे मनोवृत्ति ! तू आत्मा को छोड़कर अनेक पतियों की कल्पना करके अपने आत्मा-पति से अचेत हो गयी है। बहुत-सी उत्तम मनोवृत्तियां पति की खोज में थकित हो गयीं, परन्तु वे आत्मा से विमुख होकर अनेक पतियों की रट लगाये रह गयीं। सच्ची सती वह है जो बिना आग के प्रेम-विरह में जलती है। वह साधना की कठोरता की परवाह नहीं करती। पलटू साहेब कहते हैं कि हे मनोवृत्ति ! अपने सिर को उतारकर जमीन पर रख दे ओर उसी पर चढ़कर नाच, तब पति तेरी तरफ दृष्टि फेरेगा।

**विशेष**—जब बोध हो कि आत्मा ही परमात्मा है और उसकी स्थिति प्राप्त करने के लिए देहाभिमान छोड़कर साधना में लगे, तब आत्म-साक्षात्कार होगा।

रेखता-54

**जक्त के नाथ की जागती कला है,**
**रहै सब माहिं कोइ नाहिं जानै।**
**मरै सिर पटकि कै भटक से आपनी,**
**संत के बचन को नाहिं मानै॥**
**मोह औ माया से बीच परि गया है,**
**करम के बंध से भरम आनै।**
**दास पलटू कहै जीव सब वही है,**
**बेद बेदांत में खोजि छानै॥ 54॥**

**शब्दार्थ**—जागती कला= चेतना, ज्ञान। भरम आनै=भ्रम करता है। वही=ब्रह्म, परमात्मा।

**भावार्थ**—संसार के स्वामी की चेतना ही कला है। वह सबके शरीर में बैठा है, परन्तु कोई इस तथ्य को समझ नहीं पाता है। मनुष्य अपने स्वरूप की भूल से बाहर ईश्वर खोज-खोज कर भटक-भटक मरता है। वह विवेकवान संतों के वचनों को नहीं मानता है। जड़दृश्य की मोह-माया अपने आत्मबोध में आड़ा हो गयी है। सब जीव कर्म-बंधन में पड़े हैं, इसलिए भ्रमित हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि सब जीव वही ब्रह्म एवं परमात्मा ही हैं। यह सत्य वेद-वेदांत से भी छानकर निश्चित हुआ है।

रेखता–55

**मुद्दा को पाइ कै करम को त्यागिये,**
**बिना मुद्दा नहीं करम त्यागै।**
**बस्तु को पाइ संसार तब छोड़िये,**
**गये दोउ दिसा से भीख माँगै॥**
**करम निःकरम यह दोऊ मति सार है,**
**बीच माँहि बहै तो कहाँ लागै।**
**दास पलटू कहै दोऊ को बूझि कै,**
**मरद जो होइ सो निकरि भागै॥ 55॥**

**शब्दार्थ**—मुद्दा= मुद्दआ, उद्देश्य, लक्ष्य, गोल।

**भावार्थ**—आत्मा ही अपना परम तत्त्व है और उसमें लीनता ही जीवन का मुख्य उद्देश्य है, जब यह तथ्य निर्धारित हो जाय, तब कर्मों का त्याग करे। बिना आत्मलीनता उद्देश्य समझे कर्मों का त्याग न करे। जब स्वरूप-बोध रूपी अपनी वस्तु मिल जाय, तब संसार का त्याग करे। यदि आत्मबोध हुए बिना संसार का त्याग किया तो वह स्वरूपस्थिति तथा गृहस्थी के शुभ कर्म दोनों तरफ से जायगा और संसार की कामनाओं में भटकता फिरेगा। गृहस्थी में रहकर शुभ कर्म करना और विरक्त होकर कर्मों से ऊपर उठकर निष्काम पद स्वरूपस्थिति में ठहर जाना, ये दोनों मत अपनी-अपनी जगह पर ठीक हैं। यदि इन दोनों को छोड़कर कोई बीच में बहेगा, तो कहां ठहरेगा? पलटू साहेब कहते हैं कि हे साधक! दोनों को समझ ले और यदि त्याग में वीर है तो गृहस्थी छोड़कर भाग खड़ा हो।

रेखता–56

**सुरति ताना करै पवन भरनी भरै,**
**माँड़ी प्रेम अँग अँग भीनै।**
**तत्तु फुलाय कै ज्ञान का कूच लै,**
**गुढ़ी छूटि जाय तब रहै झीनै॥**
**सुषमना राछ बैराग लपेटना,**
**सबद ढरकी चलै नाहिं छीनै।**

**तन करगह करै नरी तुरिया भरै,**
**दास पलटू सिरी साफ बीनै॥ 56॥**

**शब्दार्थ**—सुरति= मनोवृत्ति। पवन= प्राणवायु। तत्तु= तत्त्व, जड़-चेतन। कूच= कूंचा। गुढ़ी= गुरची, ऐंठन, गांठ। सुषमना= सुषुम्ना, सुषुम्णा, ईडा और पिंगला के बीच की नाड़ी। राछ= ताने के तागे को उठाने-गिराने का औजार। ढरकी= जुलाहों का वह औजार जिससे वे बाने का सूत फेंकते हैं, भरनी। सिरी= ढरकी; करघा।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति को ताना बना के, प्राणवायु को भरनी करे और प्रेम की मांड़ी चढ़ाकर अंग-अंग में भिगा दे। जड़-चेतन का निर्णय विकसित करके ज्ञान के कूच से साफ करे जिससे ग्रंथियां छूट जायं और झीना आध्यात्मिक वस्त्र बुने। सुषुम्णा को राछ बनावे, वैराग्य का लपेटना बनावे और निर्णय शब्दों की न क्षीण होने वाली ढरकी बनावे। शरीर को करघा बनावे और तुरिया को सूत की नरी बनावे। पलटू साहेब कहते हैं, तब करघा साफ कपड़े बीनेगा।

**विशेष**—प्राणायाम, मनोवृत्ति की स्थिरता, प्रेम, जड़-चेतन निर्णय, आत्मज्ञान, वैराग्य, निर्णय शब्दों का आदर आदि से आध्यात्मिक उन्नति होती है।

रेखता-57

**तेल का कसब तमोली जो सीखेगा,**
**तेल से पान को दूरि त्यागै।**
**निरगुनी सरगुनी कसब दुइ जगत में,**
**आपने कसब में दोऊ जागै॥**
**बूझना नाहिं है और के कसब को,**
**और के कसब से दूरि भागै।**
**दास पलटू कहै कसब करु आपना,**
**और के कसब में आगि लागै॥ 57॥**

**शब्दार्थ**—कसब= कस्ब, उपार्जन, धंधा, व्यवसाय।

**भावार्थ**—पान का धंधा करने वाला तमोली यदि तेल का धंधा सीखेगा तो उसके पान के धंधे में घाटा होगा। उसे चाहिए कि वह पान को तेल से दूर रखे। संसार में निर्गुण और सगुण दो उपासनाओं का धंधा है। दोनों अपने-

अपने धंधे में सावधान रहें। दूसरे के धंधे को समझने की आवश्यकता नहीं है अपितु दूसरे के धंधे से दूर भाग जाय। पलटू साहेब कहते हैं कि अपना धंधा करो। दूसरे के धंधे से क्या प्रयोजन!

**विशेष**—अपनी-अपनी उपासना में चले। दूसरे की उपासनाओं की टीका-टिप्पणी में न पड़े। हां, किसी को अन्य की उपासना सही लगे तो उसे समझकर उसी की उपासना में लग जाय।

## 10. साधु वेष को चेतावनी

रेखता-58

**गुरु का सबद दोउ कान में मुद्रिका,**
**उनमुनी तिलक सिर तत्त ताखी।**
**प्रेम का चोलना सत्त सेल्ही बनी,**
**मान कौ मर्दि कै करै खाखी॥**
**संतोष खुराक बिबेक की फावड़ी,**
**हरि नाम के अमल को रहै चाखी।**
**दास पलटू कहै होय बिज्ञान जब,**
**बेद कुरान सब भरैं साखी॥ 58॥**

**शब्दार्थ**—सेल्ही= ऊन आदि की माला। खाखी=मिट्टी, धूल, राख।

**भावार्थ**—गुरु के निर्णय शब्द दोनों कानों की मुद्रिका है, संसार से विरक्ति माथे का तिलक है, तत्त्व-विचार दृष्टि है, प्रेम का अंगरखा है, सत्य की माला है, अभिमान का त्याग खाक लगाना है, संतोष भोजन है, विवेक की फावड़ी है और हरिनाम की आदत का रसपान है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब आत्मसाक्षात्कार होता है तब उसकी प्रामाणिकता वेद-पुराण भी सिद्ध करते हैं।

रेखता-59

**यार फक्कीर तू परा किस ख्याल में,**
**पाँच पच्चीस सँग तीस नारी।**
**एक तुम छोड़िया तीस ठो संग में,**
**होत अस ज्ञान से नर्क भारी॥**

**तीस के कारणे भीख तू माँगता,**
**एक ने कवन तकसीर पारी।**
**दास पलटू कहै खेल यह ना बदो,**
**छुटै जब तीस तो छोड़ प्यारी॥ 59॥**

**शब्दार्थ**—ठो= संख्यावाचक शब्द, अदद। तकसीर= त्रुटि; अपराध। न बदो= न निश्चय करो।

**भावार्थ**—ऐ मित्र त्यागी! तू किस विचार में है? तेरे साथ की पांच ज्ञानेन्द्रियों और पचीस प्रकृतियों की गंदी आदतें नहीं गयी हैं। ये तीसों स्त्रियां तेरे साथ लगी हैं। तुमने केवल एक स्त्री छोड़ी, किन्तु तीस स्त्रियों का राग नहीं गया है। तुमने एक छोड़ा किंतु तीस का राग नहीं छोड़ा। ऐसे ज्ञान नाम के अज्ञान में तो भारी नरक है। तू तीस के कारण नाना कामनाएं कर रहा है, फिर घर की एक स्त्री ने क्या बिगाड़ा था जो उसको छोड़ दिया। पलटू साहेब कहते हैं कि यह तुम्हारा निर्णय सही नहीं है। जब पांच ज्ञानेन्द्रियों और पचीस प्रकृति के विषयों के राग छूट जायं, तब घर की पत्नी को छोड़।

## रेखता-60

**संसार सुख छोड़ि कै भया फक्कीर तू,**
**भया फक्कीर क्या स्वाद पाया।**
**पेट छूटा नहीं भीख क्या माँगता,**
**पाँच पच्चीस सँग लगी माया॥**
**दारा एक तुम तजी घर बीच में,**
**पाँच पच्चीस को संग लाया।**
**दास पलटू कहै क्या नफा तोहि मिला,**
**राम का नाम जो नाहिं आया॥ 60॥**

**शब्दार्थ**—दारा= स्त्री।

**भावार्थ**—तू संसार के सुख को छोड़कर फकीर हुआ है, फकीर होकर फकीरी का क्या आनन्द पाया? पेट तो तेरा छूटा नहीं। भिक्षा क्या मांगता है ? पांच-पचीस की आसक्ति की माया लगी है। तूने घर की एक पत्नी छोड़ दी, किन्तु पांच-पचीस की आसक्ति लेकर घर से आया है। पलटू साहेब

कहते हैं कि तूने क्या लाभ पाया है। राम का नाम तेरे जीवन में चरितार्थ नहीं हुआ—पूर्ण विषय-विरक्ति होकर आत्मलीनता नहीं हुई?

**विशेष**—पलटू साहेब तथा समस्त निर्गुणी संत भिक्षा मांगना उचित नहीं मानते। दूसरी बात है कि देह की विषयासक्ति छोड़कर घर का त्याग करना चाहिए। घर की स्त्री छोड़ दी और विरक्त बनकर अन्य स्त्रियों को देखकर ललचाता है तो ऐसा साधुवेष कलंक है। अतएव विषय-मोह छोड़कर घर छोड़ना चाहिए।

रेखता-61

**यार फक्कीर तू बाँधु फाका कँहै,**
**करो संतोष यह अर्ज मेरी।**
**रहो बेफिकर ह्वै बाँधि कफनी कँहै,**
**पहिरि के बैठु जा प्रेम बेरी॥**
**करो फराख दिल फहम टुक कीजिये,**
**फरक संसार से पीठ फेरी।**
**दास पलटू कहै फकर फारिग हुआ,**
**फटी हजूर में फरद तेरी॥ 61॥**

**शब्दार्थ**—फाका= भूखा रह जाना, उपवास। फराक= फ़राख, विशाल, उदार। फहम= समझ, ज्ञान। फरक= अलगाव, दूरी। फकर= फकीर, संत। फारिग= फ़ारिग़= जिसने किसी काम से छुट्टी पा ली हो, स्वतंत्र, मुक्त। हजूर= हुजूर, कचहरी। फरद= फर्द, आरोप-पत्र।

**भावार्थ**—हे मित्र फकीर! तू समय से उपवास रह जाने का निश्चय कर, किन्तु भीख न मांग। मेरा तुझसे यह विनय है कि तू संतोष धारण करे। तूने साधुवेष रूपी कफन बांध रखा है, तो तू दुनिया से निश्चिंत हो जा। तू अंतर्मुखता में प्रेम कर और उसकी बेड़ी पहनकर अपने आप में स्थित हो जा। दिल को उदार रख और जरा, आत्मज्ञान की समझ रख। सांसारिक कामनाओं से दूर होकर उनसे पीठ दे दे। पलटू साहेब कहते हैं कि जब संत संसार से पूर्ण निष्काम होकर निश्चिंत हो गया, तब हे फकीर! तू समझ ले कि कर्मबंधन की कचहरी से तेरे नाम का मोह-माया रूपी आरोप-पत्र फट गया और तू संसार से पूर्ण मुक्त हो गया।

रेखता-62

**फकीर के बालके गुसा ना कीजिये,**
**गुसा फकीर को नाहिं अच्छा।**
**बात मीठी कहौ नीक सबको लगै,**
**भेष भगवन्त की पकरि पच्छा॥**
**रहनि ऐसी रहौ बहुत गरीब ह्वै,**
**सकल संसार मिलि करै रच्छा।**
**दास पलटू कहै बहुत चुचुकारि कै,**
**बचन को मानि अब लेहु बच्चा॥ 62॥**

**शब्दार्थ**—पच्छा= पक्ष। चुचुकारि कै= पुचकार कर, प्रसन्न करके।

**भावार्थ**—हे फकीर का बालक! हे साधु! क्रोध मत कर। साधु को क्रोध करना शोभा नहीं देता। तुम ऐसी मीठी बानी बोलो कि सबको मीठी लगे। तुमने भगवान का वेष पहन रखा है, तो इसकी लाज रख। ऐसी रहनी में रहो, जिसमें अत्यन्त अकिंचनता रहे—पूर्ण निष्कामता और विनम्रता रहे, फिर पूरा संसार मिलकर तुम्हारी रक्षा करेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं बहुत पुचकारकर तुम्हें कहता हूं, हे बच्चा! मेरी बात अब मान लो।

रेखता-63

**यार फक्कीर फकीरी जो कीजिये,**
**किसी की नाहिं परवाह करना।**
**साहिब का होइ अब होयगा कौन का,**
**उसी के नाम पर ठौर मरना॥**
**परवाह इक उसी की जिसी का भया तू,**
**उसी के द्वार से नाहिं टरना।**
**दास पलटू कहै मजा जब मिलैगा,**
**हाजिर हजूर संतोष धरना॥ 63॥**

**शब्दार्थ**—परवाह= चिंता। साहिब= सद्गुरु। हाजिर हजूर= हाज़िर हुज़ूर, उपस्थित, वर्तमान में प्राप्त।

**भावार्थ**—हे मित्र फकीर! यदि तू फकीरी करता है, तो किसी बात की चिंता न करना। तू सद्गुरु का हो गया है, फिर अब अन्य किसका होकर

रहेगा। अब तू सद्‌गुरु के उपदेश के अनुसार उनकी शरण में रहकर अहंता-ममताहीन हो जा, दुनिया से मर जा। तू जिसकी शरण में हो गया है, उसी सद्‌गुरु का ध्यान रख और उसी के उपदेश के अनुसार चल। उसके द्वार से अब नहीं टरना। पलटू साहेब कहते हैं कि जब तेरे को अंतर्मुखता का अखंड आनन्द मिलेगा, तब तू हर वर्तमान में, प्राप्त परिस्थिति में संतुष्ट रहेगा।

## 11. ज्ञान

रेखता-64

**ज्ञान का चाँदना भया आकास में,**
**मगन मन भया हम लखि पाया।**
**दृष्टि के खुले से नजर सब आ गया,**
**लखा संसार यह झूठि माया॥**
**जीव औ ब्रह्म के भेद को बूझि कै,**
**सबद की साच टकसार लाया।**
**दास पलटू कहै खोलि परदा दिया,**
**पैठि के भेद हम देखि आया॥ 64॥**

**शब्दार्थ**—मगन= लीन। टकसार= प्रामाणिकता।

**भावार्थ**—जब आत्मज्ञान का प्रकाश हृदय-आकाश में हुआ, तब मेरा मन आत्मा में लीन हो गया। मैंने आत्मसाक्षात्कार कर लिया। जब विवेक की दृष्टि खुल गयी, तब सबकी वास्तविकता दृष्टि में आ गयी। संसार को देखा कि इसकी सारी चमक-दमक झूठी है। जीव और ब्रह्म का भेद समझ में आ गया कि वह भिन्न नहीं है—अपितु जीव ही ब्रह्म है। निर्णय शब्दों की प्रामाणिकता का बोध हुआ। पलटू साहेब कहते हैं कि अविद्या का परदा हटा दिया और अपने आप में पैठकर स्वयं का साक्षात्कार कर लिया।

रेखता-65

**छोड़ि कै ज्ञान को होय विज्ञान जब,**
**सत्त के सबद का सोई दागी।**
**सुन्न समाधि में ध्यान को लाइ कै,**
**सहज का ख्याल सोइ बीतरागी॥**

**गगन के बीच में तत्त में मगन है,**
**अविरल भक्ति उर जासु जागी।**
**तुरीयातीत ह्वै चित्त जब इक भयो,**
**रैन दिन मगन है प्रेम पागी॥**
**जागती जोति में रहै गरकाब ह्वै,**
**सबद के बीच में सुरति लागी।**
**दास पलटू कहै संत सोई चक्रवै,**
**भया अद्वैत जब भर्म भागी॥ 65॥**

**शब्दार्थ**—ज्ञान= आत्मज्ञान की समझ। विज्ञान= आत्मज्ञान में लीनता। दागी= दाग, चिह्न, लक्षण। वीतरागी= निर्मोह। गगन= हृदयाकाश। मगन= मग्न, लीन। अविरल= निरंतर। तुरियातीत= संकल्पशून्य दशा। जागती जोति= ज्योतित आत्मा, ज्ञान स्वरूप चेतन। गरकाब= ग़रकाब, डूबा हुआ। चक्रवै= चक्रवर्ती सम्राट।

**भावार्थ**—आत्मज्ञान की समझ से ऊपर उठकर जब आत्मलीनता हो गयी, यही सत्य शब्दों को समझने का लक्षण है। संकल्प शून्य हो गया, यह निर्विषय मन की दशा ही ध्यान की स्थिति है। जो सहज समाधि में सब समय मग्न है, वही वैराग्यवान संत है। हृदयस्थ आत्मतत्त्व के बोध में सब समय डूबा है, तब उसकी अखंड स्वरूपस्थिति रूपी निरंतर भक्ति जग गयी। चित्त एकाग्र होकर जब संकल्पशून्य दशा आ गयी, तब साधक रात-दिन आत्मलीन हो आत्मप्रेम में ही पगा रहता है। वह निरन्तर ज्योतित आत्मा में ही लीन रहता है; क्योंकि उसकी मनोवृत्ति आत्मज्ञानपरक शब्दों में लग गयी है। पलटू साहेब कहते हैं कि वही संत चक्रवर्ती सम्राट है जिसका द्वैत भ्रम मिटकर अद्वैत हो गया, असंग हो गया।

## रेखता-66

**छोड़ि कथनी कँहै ज्ञान से जुदा रहु,**
**रैन औ दिवस क्या पढ़ै गीता।**
**केतिक पंडित मुए नरक में सिधारते,**
**लोभ और मोह बसि रहा रीता॥**

**बिना रहनी रहे मुक्ति ना मिलेगी,**
**काम औ क्रोध को नाहिं जीता।**
**दास पलटू कहै बैठु सतसंग में,**
**आपु में देखि ले राम सीता॥ 66॥**

**शब्दार्थ**—कँहै= को। रीता= खाली, शून्य।

**भावार्थ**—बक-बक करना छोड़ दे और ज्ञान का जो बोझा लादे घूमता है उसको भी फेंक दे। तू रात-दिन गीता क्या पढ़ता है? कितने ही पंडित पढ़-पढ़ कर मर गये और नरक में ही गये। वे लोभ और मोह में पड़कर अच्छी रहनी से शून्य ही रहे। सदाचारपूर्वक अंतर्मुख हुए बिना वासनाओं से छुटकारा नहीं मिलेगा। यदि काम-क्रोध को पूर्णतया नहीं जीता तो ज्ञान क्या लाभ देगा? पलटू साहेब कहते हैं, हे मनुष्य! विवेकवान संतों के सत्संग में बैठ और अंतर्मुख हो जा और अपने में राम-सीता देख ले। परम तत्त्व तू खुद है।

रेखता-67

**हम बासी उस देस के पूछता क्या है,**
**चाँद ना सुरुज ना दिवस रजनी।**
**तीन की गम्मि नहिं नाहिं करता करै,**
**लोक ना बेद ना पवन पानी॥**
**सेसु पहुँचै नहीं थकित भइ सारदा,**
**ज्ञान ना ध्यान ना ब्रह्म ज्ञानी।**
**पाप ना पुन्न ना सरग ना नरक है,**
**सुरति ना सबद ना तीन तानी॥**
**अखिल ना लोक है नाहिं परजंत है,**
**हद्द अनहद्द ना उठै बानी।**
**दास पलटू कहै सुन्न भी नाहिं है,**
**संत की बात कोउ संत जानी॥ 67॥**

**शब्दार्थ**—तीन तानी= तीन गुणों का जाल। परंजत= पर्यन्त, सीमा।

**भावार्थ**—तू मेरा पता क्या पूछता है? मैं उस देश का निवासी हूं जहां चंद्रमा, सूर्य, दिन, रात, त्रिगुण, कर्ता का कर्म, लोक, वेद, पवन, पानी, शेष,

शारदा, ज्ञान, ध्यान, ब्रह्मज्ञानी, पाप, पुण्य, स्वर्ग, नरक, सुरति, शब्द, तीनों गुणों का जाल, अखिल ब्रह्माण्ड, सीमा, हद, अनहद, वाणी, शून्य आदि कुछ नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि संत की बात कोई संत ही जान सकता है।

**विशेष**—चेतन आत्मा एवं निज स्वरूप में कोई जड़ दृश्य नहीं है। वह प्रपंच-शून्य है जो देह-गेहादि समस्त जड़ दृश्यों का मोह छोड़कर आत्मलीन रहता है, वह उस देश का निवासी है जहां प्रपंच शून्यता है।

रेखता-68

**हद्द अनहद्द के पार मैदान है,**
**उसी मैदान में सोय रहना।**
**पैर दक्खिन करै सीस उत्तर धरै,**
**सबद की चोट सम्हारि सहना॥**
**ज्ञान औ ध्यान दोउ थकहिंगे हारि के,**
**सहज समाधि में तत्त महना।**
**चन्द औ सूर उहँ पहुँचि ना सकहिंगे,**
**खुसी के लोक में सोक दहना॥**
**तानि चादर कँहै करो आराम तुम,**
**बचन को मानि कै गाँठि गहना।**
**दास पलटू कहै दूर की बात है,**
**बूझि के किसी से नाहिं कहना॥ 68॥**

**शब्दार्थ**—महना= मथना, विचार करना। दहना= जला देना।

**भावार्थ**—अपनी उच्चतम आत्मस्थिति हद-अनहद से परे शांति का मैदान है। उसी मैदान में सो जाओ। पैर दक्षिण और सिर उत्तर करके—मृत्यु काल की याद करके शांति से सोओ। ज्ञान के शब्दों को सम्हाल अभ्यास करना। वहां ज्ञान-ध्यान थककर हार जाते हैं और हर क्षण सहज समाधि में आत्मतत्त्व का विचार चलता है। वहां चांद-सूर्य की पहुंच नहीं है। इस आत्मलोक में प्रसन्न रहकर शोक को जला देना। इन वचनों को मानकर इन्हें अपनी गांठ में बांध लो और निश्चिंतता की चादर ओढ़कर हर समय सहज समाधि में विश्राम करो। पलटू साहेब कहते हैं कि यह जगत-ज्ञान के पहुंच

के बाहर की बात है। इसको स्वयं समझकर उसका आचरण करना और किसी अनधिकारी से यह बात नहीं कहना।

## 11. मन का विस्तार

रेखता–69

**मनै को राज है एक तिहुँ लोक में,**
**तेहि के अमल में डंड लागै।**
**पाँच मोसील मिलि लगे घर घर मँहै,**
**मारि औ पीटि के रोज माँगै॥**
**चोरी कै भीख लै देत हैं दंड सब,**
**अमल तो एक फिर कहाँ भागै।**
**दास पलटू कहै मच्यो अंधेर है,**
**बसै सतसंग यहि अमल त्यागै॥ 69॥**

**शब्दार्थ**—अमल=अधिकार, शासन। मोसील=वसूलने वाले, टैक्स लेने वाले।

**भावार्थ**—एक मन का ही तीनों लोकों में शासन है। उसके शासन में सब जीवों को दंड देना पड़ता है। आंख, नाक, कान, जीभ और चाम, ये पांच ज्ञानेन्द्रियां जीवों से कर वसूलने वाले हैं जो सबकी देह में रोज मारपीट कर टैक्स वसूलते हैं। सब जीव विषय-भोग रूपी चोरी का भोग करते हैं और दंड देते हैं। एक मन का सब पर अधिकार है, तो लोग उससे भागकर कहां जायेंगे? पलटू साहेब कहते हैं कि इस मन के राज्य में चारों तरफ अंधेर एवं गुंडागर्दी मची है। कल्याणार्थी को चाहिए कि मन के अधिकार से छूटने के लिए सत्संग में निवास करे।

रेखता–70

**मुलुक सरीर में भया नवाब मन,**
**लोभ औ मोह देवान जाके।**
**अमल दस दिसि किहा फौज को राखि कै,**
**काम औ क्रोध सीपाह बाँके॥**

**पाप तहसील वोसूल होने लगी,**
**कुमति खजानची रहे ता के।**
**दास पलटू कहै पाँच पच्चीस को,**
**भया अख्त्यार बेइमान पाके॥ 70॥**

**शब्दार्थ**—नवाब=शासक। देवान=दीवान=वजीर, मंत्री। अमल= अधिकार। सीपाह=सिपाह, सेना। बांके=वीर। तहसील=वसूली, उगाही। पाके=पक्के।

**भावार्थ**—शरीर रूपी राज्य में मन शासक हो गया। उसके लोभ और मोह मंत्री हैं। मन-शासक ने अपनी सेना से जीवन की दशों दिशाओं में अधिकार जमा लिया। काम-क्रोधादि उसकी सेना के वीर सिपाही हैं। मन जीवन में पाप की वसूली कराने लगा—भोगलिप्सा दुराचार कराने लगा। मन-राजा का कोषाध्यक्ष कुबुद्धि है। पलटू साहेब कहते हैं कि पांच ज्ञानेन्द्रियां और पचीस प्रकृतियों का शरीर-राज्य में अधिकार हो गया जो पक्के बेईमान हैं।

रेखता-71

**इधर से उधर तू जायगा किधर को,**
**जिधर तू जाय मैं उधरआवों।**
**कोस हज्जार तू जाय चलि पलक में,**
**ज्ञान की कुटी मैं उहैं छावों॥**
**सुमति जंजीर को गले में डारि कै,**
**जहाँ तू जाय मैं खींच लावों।**
**दास पलटू कहै मारि हौं ठौर में,**
**जहाँ मैदान में पकरि पावों॥ 71॥**

**शब्दार्थ**—सुमति=अच्छी बुद्धि, विवेक।

**भावार्थ**—हे मन! तू इधर से उधर जाता है, परन्तु तू किधर जायेगा? तू जिधर जायेगा मैं उधर आकर तुझे पकड़ूंगा। तू पलक मारते ही हजार कोस की दूरी पर भाग जाता है। मैं वहीं आकर आत्मज्ञान की कुटी छा दूंगा। मैं तुम्हारे गले में विवेक की जंजीर डालकर, कहीं भी जाय, खींच लाऊंगा। पलटू साहेब कहते हैं कि मैदान में खदेड़कर, जहां पकड़ पाऊंगा, वहीं मैं तुम्हें मार दूंगा।

## 13. माया

रेखता–72

**माया के फंद से बचा ना कोऊ है,**
**माया ने किहा संसार सोगी।**
**सुर नर मुनि फिर उलटि गे आइ कै,**
**छोड़ि बैराग फिरि भये भोगी॥**
**संन्यासी बैरागी उदासी औ सेवरा,**
**सेख दुरबेस औ जती जोगी।**
**दास पलटू कहै बूझि हम देखिया,**
**बिना बिबेक सब भेष रोगी॥ 72॥**

**शब्दार्थ**—सेवरा= सेवड़ा, जैनी। दुरबेस= दरवेश, फकीर। जती= यती, त्यागी।

**भावार्थ**—माया के बंधनों से कोई बचता नहीं है। माया ने ही संसार के लोगों को शोकग्रस्त कर दिया है। सुर, नर, मुनि और वैरोगी धर्म के चोंगे में आकर पुनः उलटकर भोगी हो गये। संन्यासी, वैरागी, उदासी, जैनी, शेख, दरवेश, त्यागी, योगी, सब पीछे माया में लिपट जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने समझकर देखा है, विवेक न होने से सब वेषधारी मानस रोगी बने बैठे हैं।

**विशेष**—जो भी असावधान होगा, विवेक छोड़ देगा, वही माया में लिपट जायेगा। अतएव सदैव विवेक का आश्रय लेकर रहे।

रेखता–73

**माया की लहर संसार सब मगन है,**
**खाय भरि पेट भरि नींद सोया।**
**राम को नाम नहिं चेत सपनेहु किहा,**
**सुभग तन पाइ कै बृथा खोया॥**
**मोर और तोर के परा झकझोर में,**
**काम औ क्रोध का बीज बोया।**

**दास पलटू कहै देखि संसार को,**
**बैठि के महूँ भरि पेट रोया॥ 73॥**

**शब्दार्थ**—मगन= मग्न, डूबा। महूँ= मैं भी, मैं।

**भावार्थ**—माया की लहर में सारा संसार डूबा है। वह पेट भर खाता है और नींद भर सोता है। वह राम के नाम के फलस्वरूप अपने आत्मा में, स्वप्न में भी, सावधान नहीं होता है। इतना उत्तम मानव-शरीर पाकर व्यर्थ खो देता है। वह राग-द्वेष के आंदोलन में पड़ा काम-क्रोधादि के बीज बोता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं इस संसार की दशा देखकर बैठकर पेट भर रोता हूं।

रेखता-74

**माया कलवारिनी देत बिष घोरि कै,**
**पिये बिष सबै ना कोऊ भागै।**
**संसार बौराइ गा भया बेहोस सब,**
**लेत नँगियाय ना कोऊ जागै॥**
**अमल बाँका बड़ा छुटै ना चोसका,**
**जीव के संग जब मुहें लागै।**
**एक ठौ परै हैं धूरि में लोटते,**
**दास पलटू एक चोखि माँगै॥ 74॥**

**शब्दार्थ**—कलवारिनी= शराब बनाने वाली। गा= गया। नंगियाय= सब कुछ लूट लेती है। अमल= आदत। बांका = प्रिय। चोसका= चसका, स्वाद। एक ठौ= एक व्यक्ति। चोखि= चूसना, स्वाद लेना।

**भावार्थ**—माया मोह की शराब बनाकर और उसमें उन्मत्तता का विष घोलकर लोगों को पिला रही है। उसे पीकर सब उन्मत्त हैं। कोई उससे हटकर भाग नहीं रहा है। संसार के लोग माया की शराब पीकर पागल होकर अचेत हो गये हैं। माया ने सबका सब कुछ लूट लिया है। कोई उससे सावधान नहीं हो रहा है। माया की आदत बड़ी मीठी लगती है। जब मनुष्य के मुंह में उसका स्वाद लग जाता है, तब छूटता नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि एक तो माया की मदिरा पीकर धूल में पड़ा लोटता है और दूसरा उसका स्वाद लेना चाहता है।

रेखता–75

**माया है राम की लगैगी दौरि कै,**
**यार फक्कीर सम्हारि रहना।**
**लोभ औ मोह की बात ना मानिये,**
**भूख औ नींद जरूर सहना॥**
**भली औ बुरी संसार सब कहैगा,**
**गुरु के सबद की ओट गहना।**
**दास पलटू कहै समय पर बोलिये,**
**बात सब छोड़ि दे फास कहना॥ 75॥**

**शब्दार्थ**—ओट= आधार। फास= खुलासा, स्पष्ट, साफ ।

**भावार्थ**—हे मित्र फकीर! यह माया राम की है। दौड़कर तुम्हें लग जायगी, अतएव तू अपने को सम्हालकर रखना। लोभ-मोह की बात न मानना। भूख और नींद सहने की आदत अवश्य रखना। संसार के लोगों में तुम्हें कोई अच्छा कहेगा और कोई बुरा कहेगा। तुम सद्गुरु के निर्णय वचनों का आधार लेकर सब सह लेना। पलटू साहेब कहते हैं कि वाक्य-संयम रखकर समय पर बोलना, परंतु सारी अनर्गल बातें छोड़कर साफ कहना।

**विशेष**—कोई अलग बैठा राम या ईश्वर अपने पास माया रखता हो और उसे वह सब पर दौड़ाकर सबको नरकगामी बनाता हो; यह बात विवेकयुक्त नहीं है। जब राम या ईश्वर शुद्ध-बुद्ध है तब वह अपने पास माया क्यों रखेगा और उससे किसी को नरकगामी क्यों बनायेगा। यदि वह ऐसा है तो वह यमराज से भी खराब है। क्योंकि यमराज तो जीवों को कर्मफल मात्र देता है, अपनी ओर से किसी को बिना कर्म के फल नहीं देता है।

वस्तुतः हर व्यक्ति राम है। उसकी अपनी भूल से बनायी माया है और वह है मोह। राम की माया राम पर ही कूदकर चढ़ती है। अतएव अलग किसी राम को न दोष देकर स्वयं को सम्हालना चाहिए। सबकी माया उनकी अपना-अपनी बनायी है। जो सावधान हो जायेगा, उसकी माया मर जायगी।

रेखता–76

**भाग रे भाग फक्कीर के बालके**
**कनक औ कामिनी बाघ लागा।**

**मारि तोहि लेहिंगे पड़ा चिल्लायगा,**
**बड़ा बेकूफ तू नाहिं भागा॥**
**सिंगी ऋषि हू से तो मारि लिये,**
**बचे ना कोऊ जो लाख त्यागा।**
**दास पलटू कहै बचैगा सोई जो,**
**बैठि सतसंग दिन राति जागा॥ 76॥**

**शब्दार्थ**—बेकूफ= बेवकूफ़, मूर्ख।

**भावार्थ**—हे फकीर के बालक ! भाग रे भाग ! कनक और कामिनी दो बाघ तेरे को खाने के लिए तैयार हैं। ये तेरे को मार लेंगे और तू पड़ा चिल्लाता रहेगा। तू बड़ा मूर्ख है यदि इनसे दूर नहीं होता है। वन में रहने वाले ऋष्य शृंग को भी तो माया ने मार गिराया। बड़े-बड़े त्यागी भी इससे नहीं बचे। पलटू साहेब कहते हैं कि वही माया से बचेगा जो निरंतर सत्संग में रहकर सावधान रहेगा।

## रेखता-77

**पूरब ठाकुरद्वारा पच्छिम मक्का बना,**
**हिन्दू और तुरुक दुइ ओर धाया।**
**पूरब मूरति बनी पच्छिम में कबुर है,**
**हिन्दू औ तुरुक सिर पटकि आया॥**
**मूरति औ कबुर ना बोलै ना खाय कछु,**
**हिन्दू औ तुरुक तुम कहा पाया।**
**दास पलटू कहै पाया तिन्ह आप में,**
**मुये बैल ने कब घास खाया॥ 77॥**

**शब्दार्थ**—मक्का= अरब का प्रसिद्ध नगर जिसमें मुसलमानों का काबा तीर्थ है। कबुर= कब्र।

**भावार्थ**—पूर्व ठाकुरद्वारा है और पश्चिम मक्का का काबा है। हिन्दू और मुसलमान इन दोनों तरफ दौड़ते हैं। मंदिर में पत्थर की मूर्ति है और काबा में भी पत्थर का पिंड है। हिन्दू और मुसलमान उनमें सिर पटककर लौट आते हैं। मूर्ति और कब्र न बोलते हैं और न कुछ खाते हैं। हे हिन्दू-मुसलमानो ! तुमने वहां क्या पाया? पलटू साहेब कहते हैं कि जिन्होंने सत्य पाया वे अपने आप ही में पाये। मरे हुए बैल ने कब घास खाया?

## 13. निन्दक

रेखता–78

**संत की निंदा को करत जो देखिये,**
**कान को मूँदि ले पाप लागै।**
**पाप के लगे से नरक में जायगा,**
**त्राहि कै त्राहि कै दूरि भागै॥**
**मित्र जो होय तो दुष्ट सम जानिये,**
**संत की निन्दा सुनि दूरि त्यागै।**
**दास पलटू कहै कहै औ सुनै जो,**
**नरक के बीच में भीख माँगै॥ 78॥**

**शब्दार्थ**—त्राहि= बचाओ, रक्षा करो।

**भावार्थ**—यदि कोई संतों की निन्दा करता हुआ दिखे, तो तू अपने कान मूंद ले, अन्यथा तेरे तुझको लगेगा। पाप लगने पर तू नरक में जायेगा; अतएव तू संत-निन्दक की जगह से बचाओ-बचाओ कहकर दूर भाग जा। यदि संत-निन्दक अपना मित्र है तो उसे दुष्ट समझे। संत की निन्दा करने वाले को दूर से ही त्याग दे। पलटू साहेब कहते हैं कि जो संत की निन्दा करता या सुनता है, वह नरक में जाकर भीख मांगता है।

रेखता–79

**देखि निंदक कँहै करौं परनाम मैं,**
**धन्य महराज तुम भक्ति धोया।**
**किहा निस्तार तुम आइ संसार में,**
**भक्त कै मैल बिन दाम खोया॥**
**भयो परसिद्ध परताप से आपके,**
**सकल संसार तुम सुजस बोया।**
**दास पलटू कहै निन्दक के मुए से,**
**भया अकाज मैं बहुत रोया॥ 79॥**

**शब्दार्थ**—निस्तार= कल्याण।

**शब्दार्थ**—यदि कोई मेरी निन्दा करता है तो मैं उसे देखकर उसको प्रणाम करता हूं, और उससे कहना चाहता हूं कि हे महाराज! तुम धन्य हो। तुमने मेरे मल को धोकर मेरी भक्ति उज्ज्वल कर दी है। तुमने संसार में आकर मेरा उद्धार किया। तुमने मुझ भक्त का मनोमैल बिना दाम लिये धो दिया। तुम्हारे प्रभाव से मैं संसार में प्रसिद्ध हो गया हूं। तुमने मेरी निन्दा करके संसार में मेरा सुयश फैलाया है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब मेरा निन्दक मर गया, तब मुझे लगा कि अब मेरी बुराई कौन धोयेगा। अब तो मेरा अकाज हो रहा है। अतएव मैं बहुत रोया।

## 14. मिश्रित उपदेश

रेखता-80

**काम औ क्रोध को आगि बिनु जारि कै,**
**महादल मोह मैदान टारा।**
**पाप औ पुन्न के भरम को छोड़ि कै,**
**गगन के बीच इक जोति बारा॥**
**जीव अमृत पिवै चुवै आकास से,**
**जुक्ति से नाथिया नाग कारा।**
**दास पलटू कहै संत सो अमर हैं**
**उलटि के पकरि तिहुँ काल मारा॥ 80॥**

**शब्दार्थ**—नाग कारा= काला नाग, अहंकार।

**भावार्थ**—काम और क्रोध को बिना भौतिक आग के ज्ञानाग्नि में जला दिया और युद्ध के मैदान में मोह के महादल को मार गिराया। पाप और पुण्य-कर्म के भ्रम से ऊपर उठ गया और हृदयाकाश में आत्मज्ञान की ज्योति जला दी। हृदयाकाश की आत्मस्थिति से अमृत चूता है। उसे साधक पीता है और साधना-युक्ति से अहंकार रूपी काले नाग को नाथकर उसे वश में कर लिया। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे संत अमर आत्मस्थिति प्राप्त करते हैं। वे संसार से लौटकर अंतर्मुख हो जाते हैं, इसलिए भूत, भविष्य तथा वर्तमान रूप तीनों काल उसके लिए समाप्त हो जाते हैं।

**विशेष**—गगन से अमृत चूना, काला नाग नाथना आदि के भिन्न भी अर्थ हो सकते हैं; किन्तु कुल मिलाकर अर्थ है कि वह संत आत्मविजयी हो जाता है।

रेखता–81

**पाँच ने सकल संसार को बसि किया,**
**लोभ औ मोह देवान जा के।**
**काम औ क्रोध मसलहतिका बे दोऊ,**
**पाप औ पुन्न सीपाह वा के॥**
**उजुरख्वाही नहीं गई रैयत सबै,**
**मुलुक में मारि के किया साके।**
**दास पलटू कहै देखि इस अमल को,**
**भागि मैं संत की सरन ताके॥ 81॥**

**शब्दार्थ**—देवान = दीवान, मंत्री। मसलहतिका = सलाहकार। सीपाह = सैनिक। उजुरख्वाही = उज्रख़्वाही, शिकायत करने की इच्छा। साके = शाका, संवत; रोब, दबदबा। अमल = शासन, हुकूमत।

**भावार्थ**—पांच ज्ञान–इन्द्रियों ने पांचों विषयों में बहकर संसार के जीवों को अपने वश में कर लिया है। लोभ और मोह उनके मंत्री हैं; काम और क्रोध उनके सलाहकार हैं और पाप–पुण्य उनके सैनिक हैं। इसी का परिणाम है कि पूरी प्रजा की—मानव मात्र की शिकायत करने की इच्छा नहीं मिटी—सब हर क्षण शिकायत में पड़े हैं। इन मानसिक मनोविकारों ने संसार में सबको मारपीट कर उन पर अपना रोब एवं दबदबा कर लिया है। पलटू साहेब कहते हैं कि मनोविकारों का सर्वत्र शासन देखकर मैंने भागकर संतों की शरण ले ली।

रेखता–82

**ज्ञान ना ध्यान ना जोग ना जुगति है,**
**मुक्ति चेरी भई द्वार ठाढ़ी।**
**तीरथ ना बरत ना दान ना पुन्न है,**
**परी जमराज पर चोट गाढ़ी॥**
**पूजा अचार ना नेम ना धर्म है,**
**लेन को आये बैकुंठ बाड़ी।**
**दास पलटू कहै राह सब छोड़ि कै,**
**सहज की राह इक संत काढ़ी॥ 82॥**

**शब्दार्थ**—बैकुंठ बाड़ी = बैकुंठ का घर, स्वर्ग।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि ज्ञान, ध्यान, योग, युक्ति, तीर्थ, व्रत, दान, पुण्य, पूजा, आचार, नियम, धर्म आदि से परे संतों ने एक सहज-साधना का रास्ता निकाल लिया है जिसके फल में बैकुंठ से मेरा बुलावा आ गया है और मुक्ति सेविका बनकर द्वार पर खड़ी है; क्योंकि सहज-साधना की भारी चोट से वासनारूपी यमराज मारा गया है।

**विशेष**—सहज साधना है उठते-बैठते हर समय मन का साक्षी बनकर रहना, मन में न बहना। इसका फल मन की पवित्रता रूपी स्वर्ग और सर्वत्र अनासक्ति रूपी मोक्ष अपने आप फलते हैं। परंतु यहां तक पहुंचने के लिए नियम-धर्म में चलना ही होगा।

रेखता-83

**सुरति जमुना बही ज्ञान मथुरा बसा,**
**गोकुला ग्राम बिस्वास पाया।**
**संत जसोदा देवकी सतगुरु,**
**नन्द वसुदेव जब प्रेम आया॥**
**जीव औ ब्रह्म श्री कृष्न बलदेव जी,**
**कंस हंकार को मारि नाया।**
**विवेक बृन्दावन छिमा को कदम है,**
**गऊ औ ग्वाल जिय बीच दाया॥**
**सनेह की राधिका सील की गोपिका,**
**तत्त माखन लिहे छीनि खाया।**
**ध्यान सिर मुकुट धै सबद की काछनी,**
**कछे है लाल जी रहस छाया॥**
**लगन के कुन्ज में मगन गोपाल जी,**
**टेर के सुनत आनंद धाया।**
**दास पलटू कहै गगन के बीच में,**
**नाद की बाँसुरी सोर लाया॥ 83॥**

**शब्दार्थ**—नाया = फेंक दिया। कदम = कदम का वृक्ष। तत्त = तत्त्व, जड़-चेतन निर्णय, आत्म तत्त्व। काछनी = घुटनों तक कसकर पहनी हुई धोती

जिसमें दोनों लांगे पीछे खुसी हों। कुंज=वृक्षों-लताओं आदि से ढका या घिरा स्थान।

**भावार्थ**—स्थिर मनोवृत्ति यमुना है। ज्ञान मथुरा है। विश्वास गोकुल गांव है। संत यशोदा ओर सद्गुरु देवकी हैं। प्रेम नन्द और वसुदेव हैं। जीव और ब्रह्म श्री कृष्ण और बलराम हैं। कंस अहंकार है जिसे उन्होंने मार फेंका है। विवेक वृन्दावन है। क्षमा कदम का वृक्ष है। जीव मात्र के प्रति दया करना गायें और ग्वाले हैं। शुद्ध स्नेह राधिका है, शील गोपिका है। आत्मतत्त्व ही माखन है जो छीनकर खाने योग्य है। ध्यान ही कृष्ण का मुकुट है। निर्णय शब्द की काछनी है। शांति ही व्यापक रास है। अध्यात्म में लगन ही कुंजगली है। उसी में साधक-गोपाल अनाहतनाद की वंशी बजाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि गगन के बीच में नाद की वंशी शोर मचाती है।

**विशेष**—मस्तमौला पलटू साहेब ने आध्यात्मिक साधना में कृष्ण चरित का वर्णन कर डाला है।

## रेखता-84

**भक्त से द्रोह करि कोऊ ना बचा है,**
**किया जिन द्रोह सो सबै हारा।**
**पंडवा पाँच जिताय भारत कँहै,**
**गहा गज ग्राह जल बीच मारा॥**
**गये दुरबासा अंबरीख ब्रत टारने,**
**छुटा है गैब से चक्र धारा।**
**दास पलटू कहै हेत प्रहलाद के,**
**खंभ को फोरि कै उद्र फारा॥ 84॥**

**शब्दार्थ**—गैब से=शून्य से। उद्र=वोद्र, उदर, पेट।

**भावार्थ**—भक्त से वैर करके कोई दुख से बच नहीं सकता। जिन्होंने भक्त से वैर किया, वही हार खाया। दुर्योधन ने पांडवों से वैर किया तो श्री कृष्ण ने महाभारत युद्ध में कौरवों को मरवाकर पांडवों को जिता दिया। जल में ग्राह ने गजराज का पैर पकड़कर उसे मारना चाहा तो विष्णु भगवान ने उसे मारकर गजराज को बचा लिया। दुर्वासा मुनि ने भक्त अंबरीष पर क्रुद्ध होकर उन्हें नीचा दिखाना चाहा तो विष्णु का चक्र शून्य से आकर उनके पीछे लग गया। अंततः अबरीष से ही क्षमा मांगने पर उनका दुख मिटा। पलटू साहेब

कहते हैं कि हिरण्यकश्यपु से प्रहलाद को बचाने के लिए विष्णु ने हिरण्य-कश्यपु का पेट फाड़ दिया।

**विशेष**—किसी से वैर करना अपना पतन करना है, और सही आदमी से वैर करके तो अपना पतन रखा-रखाया है। गज-ग्राह की कहानी तो काल्पनिक ही है। प्रहलाद की कहानी में भी अतिरंजना है। दुर्वासा के पीछे चक्र का घूमना भी काल्पनिक है। सार है कि दूसरे से द्रोह करने वाला पतित होता है और संत-भक्त से द्रोह करके तो पतन है ही।

रेखता-85

**सील की अवध सनेह का जनकपुर,**
**सत्त की जानकी ब्याह कीता।**
**मनहिं दुलहा बने आपु रघुनाथ जी,**
**ज्ञान कै मौर सिर बाँधि लीता॥**
**प्रेम बारात जब चली है उमँगि कै,**
**छिमा बिछाय जनवाँस दीता।**
**भूप हंकार के मान को मर्दि कै,**
**धीरता धनुष को जाय जीता॥**
**सुरति औ सबद मिलि पाँच भँवरा फिरे,**
**माँग सेंदुर दिहा राग बीता।**
**संतोष दै दायजो तत्त पुष्पांजली,**
**जनक जी बुद्धि बिनवंत कीता॥**
**किहा है बिदा यह दिहा आसीस है,**
**लोभ औ मोह से रहौ रीता।**
**दसएँ महल पर अवधपुर कोहबरे,**
**दास पलटू सूतै राम सीता॥ 85॥**

**शब्दार्थ**—जनवांस= जनवास, बरातियों के ठहरने की जगह। दायजो= दहेज। तत= आत्मतत्त्व का बोध। बिनवंत= विनय। कोहबरे= देव-पितर का घर।

**भावार्थ**—शील अवध है। स्नेह जनकपुर है। सत्य जानकी है। मन स्वयं रघुनाथ जी दूल्हा बना है। उसके सिर पर ज्ञान का मोर बंधा है। प्रेम

बारात उत्साहित होकर चली। क्षमा बरातियों के ठहरने का स्थान बनी। धैर्य ने मान-मद रूप राजाओं का मर्दन कर धनुष तोड़ दिया। मनोवृत्ति और सार शब्द मिलकर पांच या सात भांवरि किये। वैराग्य का सेंदुर सत्य-सीता के माथे पर लगा दिया। संतोष दहेज दिया गया और आत्मज्ञान की पुष्पांजलि दी गयी। बुद्धि रूपी जनक ने विनय-वंदना की। उसने आशीर्वाद देकर विदा किया। आशीर्वाद है कि लोभ और मोह से सदैव दूर रहो। दसवें महल पर अवधपुर का देव-पितर मंदिर है। पलटू साहेब कहते हैं कि वहीं राम-सीता सोते हैं।

**विशेष**—पूरा राम विवाह देह में ही बता दिया गया है। सिर का तालुमूल दसवां द्वार कहा जाता है। संतों का कुछ समूह वहीं आत्मा का निवास मानता है। वस्तुतः दसों इन्द्रियों के व्यवहार से ऊपर सीता-राम का—मनोवृत्ति तथा आत्मा का संगम है। आत्मस्थिति इन्द्रियातीत है।

### रेखता-86

**बाम्हन तो भये जनेउ को पहिरि कै,**
**बाम्हनी के गले कुछ नाहिं देखा।**
**आधी सूद्रिन रहै घरै के बीच में,**
**करै तुम खाहु यह कौन लेखा॥**
**सेख की सुन्नति से मुसलमानी भई,**
**सेखानी की नाहिं तुम कहौ सेखा।**
**आधी हिन्दुइनि रहै घरै के बीच में,**
**पलटू अब दुहुन के मारु मेखा॥ 86॥**

**शब्दार्थ**—लेखा=हिसाब, ढंग, विधान। सुन्नति=सुन्नत, प्रथा, प्रणाली, मुहम्मद साहेब का किया हुआ; मुसलमानों की वह प्रथा जिसमें बालक की शिश्न-इन्द्रिय का ऊपरी चाम काटा जाता है, ख़तना। मेखा=मेख़, खूंटा, कील, कांटी। मारु मेखा=उपेक्षा कर दो।

**भावार्थ**—लोग जनेऊ पहनकर ब्राह्मण बनते हैं, परन्तु ब्राह्मणी जनेऊ नहीं पहनती। अतएव वह शूद्रा ही रही जो अर्धांगिनी कही जाती है। हे ब्राह्मण कहे जाने वाले लोग! तुम उसी शूद्रिन का बनाया तथा परोसा भोजन नित्य खाते हो। यह तुम्हारा क्या विधान है? मुल्ला का खतना होने से वे मुसलमान बने हैं, परन्तु उनकी बीबी का तो कुछ नहीं हुआ। वह तो गैर मुसलमान ही

रही। कहो मुल्ला! तुम आधा मुसलमान तथा आधा गैर मुसलिम ही रहे। मुल्ला के घर में आधा हिन्दुआनी ही रही। पलटू साहेब कहते हैं कि ब्राह्मण और मुल्ला दोनों के बरताव उपेक्षा करने योग्य हैं।

रेखता-87

**सुन्य के सिखर पर अजब मंडप बना,**
**मन और पवन मिलि करै बासा।**
**एक से एक अनेक जंगल जहाँ,**
**भँवर गुंजार इक भरै स्वासा॥**
**नाम सागर भरा झिलिमिलि मोती झरै,**
**चुनै कोई प्रेम रस हंस खासा।**
**दास पलटू परै जबै दिब दृष्टि में,**
**जरै सब भर्म तब छुटै आसा॥ 87॥**

**शब्दार्थ**—खासा= सही, सत्य। दिब दृष्टि= ज्ञान दृष्टि।

**भावार्थ**—शून्य के शिखर पर अद्‌भुत मंडप बना है। वहां मन और पवन मिलकर निवास करते हैं। वहां एक से एक सुरम्य वन हैं। वहां भंवरों की गूंज है और एक श्वास भरता है। वहां नाम का सागर भरा है और झिलमिल मोती झरता है। उस प्रेम-रस को कोई सही हंस चुगता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब ज्ञान दृष्टि में वह पड़ता है, तब सब भ्रम जल जाता है और जगत की आशा छूट जाती है।

**विशेष**—ऊपर कुछ हठयोग की क्रिया का चमत्कारी वर्णन है। खास बात है कि जब आत्मज्ञान होता है और संसार का मोह पूरा मिट जाता है, तब जीव सदैव आनन्दमय रहता है।

रेखता-88

**नासूत मलकूत जबरूत माना,**
**लाहूत की लज्जत जाय चक्खा।**
**लामकान पर बैठि के जी,**
**रोसन जमीर फक्कीर पक्का॥**
**असमान रखाना खुलि गया,**
**दिल रूह बोलै हक्का पक्का।**

**पलटू दास कहै मुझे नजर आवै,**
**हर वक्त चिहार तरफ मक्का॥ 88॥**

**शब्दार्थ**—लज्जत= स्वाद। लामकान= घररहित, शून्य। रोसनजमीर= रोशन ज़मीर, बुद्धिमान, समझदार। रखाना = रख़ना, खिड़की। रूह= आत्मा। हक्का= ईश्वर की सौगंध। हक्का-बक्का= पवित्र सत्य। चिहार= चारों तरफ। मक्का= अरब का नगर जो मुसलमानों का पवित्र तीर्थ है।

**भावार्थ**—नासूत, मलकूत, जबरूत को माना और जाकर लाहूत का आनन्द लिया। ऐ जी! बुद्धिमान पक्का फकीर शून्य में जा बैठा। फिर आसमान की खिड़की खुल गयी। इसलिए हृदय में बैठा आत्मा पवित्र सत्य का अनुभव करने लगा। पलटू साहेब कहते हैं कि मुझे सब तरफ पवित्र मक्का दिखता है।

रेखता-89

**कनफटा सिरजटा नखी ठाढ़ेसुरी,**
**सैयद सेख दुरवेस हाजी।**
**मौनी जलसैनी पँचअगिन जे तापते,**
**करैं उपवास फिर खायँ भाजी॥**
**जोगी औ जती पौहारी ऊरध मुखी,**
**माया के कारन सब दगाबाजी।**
**दास पलटू कहै झूठ से दूर है,**
**एक ही साच में राम राजी॥ 89॥**

**शब्दार्थ**—पौहारी = पयहारी, केवल दूध पीकर रहने वाला।

**भावार्थ**—कान फाड़कर रहने वाले, सिर पर जटा रखने वाले, नख बढ़ाने वाले, ठाढ़ेश्वरी, सैयद, शेख, दरवेश, हाजी, मौनी, जलशयनी, पंचाग्नि तापने वाले, उपवास रहकर फिर भाजी खाने वाले, योगी, त्यागी, दूधाहारी, ऊर्ध्वमुखी आदि में कितने संपत्ति और स्वामित्व पाने के लिए दगाबाजी एवं छल-कपट करते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मशांति असत्य व्यवहार से दूर हो जाती है। एक सत्य का सरल व्यवहार करने से आत्म-शांति मिलती है।

रेखता-90

**तुरुक लै मुरदा को कब्र में गाड़ते,**
**हिन्दू लै आगि के बीच जारैं।**
**पूरब वै गये हैं वै पच्छूँ को,**
**दोऊ बेकूफ ह्वै खाक टारैं॥**
**वै पूजै पत्थर को कबर वै पूजते,**
**भटक कै मुए दै सीस मारैं।**
**दास पलटू कहै साहिब है आप में,**
**अपनी समझ बिनु दोऊ हारैं॥ 90॥**

**शब्दार्थ**—बेकूफ= बेवकूफ़, नासमझ।

**भावार्थ**—मुसलमान मुरदा को कब्र में गाड़ते हैं और हिन्दू आग में जलाते हैं। एक पूर्व मुख कर मालिक को पुकारता है और दूसरा पश्चिम मुख करके पुकारता है। दोनों ही धूल की रस्सी बटते हैं। एक पत्थर की पिंडी पूजता है और दूसरा कब्र पूजता है। दोनों पत्थर-पानी और शून्य में सिर पटकते हैं और भटक-भटक कर मरते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि परमात्मा या अल्लाह तो मनुष्य का आत्मा है; परन्तु सही समझ हुए बिना दोनों बहिर्मुख होकर जीवन बरबाद करते हैं।

# झूलना

## 16. गुरुदेव और आत्मज्ञान

झूलना-1

**सतगुरु साहिब जब मिहर करी, तब ज्ञान का दीपक बारा है जी।**
**भर्म अँधेरा छूटि गया, दसहूँ दिसि भा उजियारा है जी॥**
**रैन दिवस टूटै नाहीं, लागी ज्यों तेल की धारा है जी।**
**पलटू कहै मोहिं दीख परा, घट घट में ठाकुरद्वारा है जी॥**

**शब्दार्थ**—मिहर= मेहर, मेह्व, कृपा।

**भावार्थ**—सद्‌गुरु साहेब ने जब कृपा की, तब आत्मज्ञान का दीपक जला दिया। फिर सारे भ्रम का अंधकार नष्ट होकर पूर्ण प्रकाश हो गया। अब आत्मज्ञान स्मरण तैलधारा वत निरंतर चलता है और कभी उसमें अंतर नहीं पड़ता है। पलटू साहेब कहते हैं कि अब मुझे दिखता है कि सब शरीर देव-मंदिर हैं और उनमें विराजमान चेतन जीव परमात्मा हैं।

### झूलना-2

**सतगुरु ऐसा तलास कीजै, ज्यों सिकलीगर का मसकला।**
**तुरत जौहर निकारि देवै, इक लहमा पकरि के खूब मला॥**
**दिल का मुरचा सब दाग छुटा, तरवार बनी ज्यों झलझला।**
**पलटू नामर्द से मर्द हुआ, तब बाँधि तरवार सिपाह चला॥**

**शब्दार्थ**—मसकला= सिकलीगरों का औजार जिससे छूरे आदि मांजकर उसे साफ करते तथा धारदार बनाते हैं। जौहर= रत्न, सारतत्त्व, चमक, उत्तमत्ता, वीरता; यहां अर्थ है आत्मज्ञान की चमक। लहमा= लम्हा, पल, क्षण। झलझला= चमकती हुई।

**भावार्थ**—हे कल्याणार्थी ! ऐसे सद्‌गुरु की खोज करो जो तुम्हारे मन को मांजकर उसमें आत्मज्ञान की चमक वैसे ही ला दे, जैसे सिकलीगर मसकला से छुरे को मांजकर उसे चमकदार तथा धारदार बना देता है। फिर साधक का सारा मानसिक विकार छूटकर उसका मन वैसे चमकदार हो जाता है जैसे चमकती तलवार। फिर साधक विषयासक्ति की कायरता त्यागकर वीर हो जाता है। वह योद्धा ज्ञान की तलवार बांधकर मोह सेना से लड़ने के लिए निकल पड़ता है।

### झूलना-3

**कटाच्छ कै हमरी ओरि ताको, सतगुरु करौ दाया है जी।**
**जड़ चेतन दोउ लागि रहे, जबर तेरी माया है जी॥**
**कुछ जोग जुगत बतलाय दीजै, जासे सोधौं मैं काया है जी।**
**पलटू तुम दीनदयाल बड़े, सतगुरु सेती सब पाया है जी॥**

**शब्दार्थ**—कटाच्छ= कटाक्ष, तिरछी निगाह, थोड़ी नजर। माया= शक्ति।

**भावार्थ**—हे सद्‌गुरु ! मेरी ओर आप थोड़ी निगाह फेरकर देखने की कृपा करें। जड़ और चेतन दोनों की गांठ पड़ी है—चेतन जड़ में उलझा

है। हे सद्गुरु! आपकी ज्ञानशक्ति महान है। आप मुझे कुछ योग और युक्ति बता दीजिए, जिनसे मैं अपनी काया शोधकर तथा जड़ाशक्ति से पार होकर निर्मल हो जाऊं। पलटू साहेब कहते हैं कि हे सद्गुरु! आप दीनों पर दया करने वाले महान हैं। मैंने कल्याण का सारा ज्ञान सद्गुरु से ही पाया है।

## झूलना-4

**पूरब पुन्न भये परगट, सतसंग के बीच में जाय परी।**
**आनंद भयो जब संत मिले, वही सुभ दिन वहि सुभ घरी॥**
**दरसन करत त्रयताप मिटे, बिनु कौड़ी दाम मैं जाय तरी।**
**पलटू आवागवन छुटा, रज चरनन की जब सीस धरी॥**

**शब्दार्थ**—पूरब पुन्न= पूर्व जन्मों के पुण्य संस्कार।

**भावार्थ**—मेरे पूर्व जन्मों के शुभ संस्कार उदय हुए, जिनके जोर से मैं विवेकवान संतों के सत्संग में लग गया। जब संत मिले, तब उनके ज्ञान से मन के सारे दुख मिटकर अखंड आनन्द छा गया; अतएव संत-मिलन के दिन और घड़ी ही शुभ हैं। संतों के दर्शन करने से मेरे तीनों ताप मिट गये और बिना कौड़ी तथा बिना दाम दिये, मैं दुख से पार हो गया। पलटू साहेब कहते हैं कि जब मैंने संतों की चरण-रज सिर पर रखी और उनसे आत्मबोध पाया, तो भवसागर से मुक्त हो गया।

## झूलना-5

**पराई चिता की आग महैं, दिन राति जरै संसार है जी।**
**चौरासी चारिउ खान चराचर, कोऊ न पावै पार है जी॥**
**जोगी जती तपी संन्यासी, सबको उन डारा जारि है जी।**
**पलटू मैं हूँ जरत रहा, सतगुरु लीन्हा निकारि है जी॥**

**शब्दार्थ**—जती= यती, त्यागी।

**भावार्थ**—संसार के लोग दूसरे की चिता की आग में रात-दिन जलते हैं—दूसरों के गुणों-दोषों के ऊहापोह में दुखी रहते हैं। मन की व्यर्थ उलझनों में जीव चौरासी—चारों खानियों के चक्कर काटते हैं, कोई उनसे पार नहीं जाता है। योगी, यती, तपस्वी, संन्यासी आदि सबको मन की अविद्या ने जला

डाला है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं अविद्या की आग में जलता रहा; सद्गुरु ने मुझे उस आग से निकाल लिया।

### झूलना –6

**इक नाम अमोलक मिलि गया, परगट भये मेरे भाग हैं जी।**
**गगन की डारि पपिहा बोलै, सोवत उठी मैं जागि हौं जी॥**
**चिराग बरै बिनु तेल बाती, नहिं दीया नहिं आगि है जी।**
**पलटू देखि के मगन भया, सब छुट गया तिर्गुन दाग है जी॥**

**शब्दार्थ**—गगन की डारि= संकल्प-शून्य की स्थिति में। तिर्गुन= त्रिगुण—सत, रज, तम।

**भावार्थ**—आत्मज्ञान परिचायक अनमोल एक सतनाम मिल गया। इससे भाग्य प्रकट हो गया। संकल्प शून्य की स्थिति में अनुभ्व-पपीहा बोलता है। उसका अनुभव कर मैं दृश्य-मोह से जग गया। अब बिना तेल, बत्ती, दीपक और आग के आत्मज्ञान के अनुभव का दीपक निरंतर जलता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं आत्मस्थिति के प्रगाढ़ अनुभव में लीन हो गया और आत्मसाक्षात्कार होने पर प्रकृति के तीनों गुणों के दाग धुल गये।

### झूलना–7

**हमने यह बात तहकीक किया, सबमें साहिब भरपूर है जी।**
**अपनी समुझ कुआँ के पानी, क्या नियरे क्या दूरि है जी॥**
**गाफिल की ओर से सोइ गया, चेतन को हाल हजूर है जी।**
**पलटू इस बात को नहिं मानै, तिस के मुँह में परै धूर है जी॥**

**शब्दार्थ**—तहकीक= परख। हाल हजूर= वर्तमान में स्थित, अपरोक्ष।

**भावार्थ**—मैंने इस सत्य की जांच-परख कर ली है कि सब देहों में परमात्मा स्थित है। किसी कुआं में पानी गहरे में होता है और किसी में निकट, वैसे कोई देर में समझता है और कोई जल्दी। यह अपनी समझ का अंतर है। जो मनुष्य आत्मज्ञान से असावधान होकर परमात्मा को बाहर खोजता है, वह अविद्या की नींद में सो गया है और जो अपने चेतन आत्मा के बोध में है, उसको परमात्मा स्वयं प्रत्यक्ष स्वस्वरूप है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो इस परम सत्य को नहीं स्वीकारता है, उसके मुंह में धूल पड़ती है।

## 17. संत और साधु

झूलना-8

**बादसाह का साह फकीर है जी, नौबत गैब का बाजता है।**
**ज्ञान ध्यान की फौज को साधि के जी, सबर के तख्त पर गाजता है॥**
**लाहूत खजाना मारफत का, सिर नूर का छत्र बिराजता है।**
**पलटू फकीर का घर बड़ा, दीन दुनियाँ दोऊ भीख माँगता है॥**

**शब्दार्थ**—साह= शाह, मूल, स्वामी, महान। नौबत= मांगलिक बाजा। गैब= ग़ैब, अदृश्य। सबर= सब्र, संतोष। गाजता= प्रसन्नता से गर्जता है। लाहूत= शून्य, प्रपंच-शून्य। मारफत= मारफ़त, जरिया, वसीला, ज्ञान; अध्यात्मज्ञान। नूर= ज्योति, ज्ञानज्योति।

**भावार्थ**—सांसारिक बादशाह का भी स्वामी विरक्त निष्काम संत है। उसके जीवन में अदृश्य का मांगलिक बाजा हर समय बजता है—भीतर निश्चिंतता का नाद हर समय उठता है। वह आत्मज्ञान और संकल्पों का त्याग रूपी ध्यान की सेना से संपन्न होकर संतोष के सिंहासन पर अखंड आनन्द में मग्न रहता है। अध्यात्मज्ञान का खजाना प्रपंचशून्य स्थिति है, केवल दशा। उसके सिर पर आत्मज्ञान का ज्योति रूपी राजछत्र शोभायमान होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि फकीर का घर बड़ा है—वह अपनी अनन्त आत्मिक स्थिति में रहता है; किन्तु मजहबी और दुनिया के लोग कामनाबद्ध होकर भोग और स्वामित्व की भीख मांगते हैं।

झूलना-9

**अनुभै परगास भया जिसको, तिसही की बात प्रमान है जी।**
**भीतर के सब खुलि गये पट, पक्का उसी का ज्ञान है जी॥**
**तीन लोक प्रविर्ति की बात कहैं, वा का तेज कैसा जैसे भान है जी।**
**पलटू जगत से पीठि देवै, नहिं संत होना औसान है जी॥**

**शब्दार्थ**—अनुभै= अनुभव, आत्मसाक्षात्कार का ज्ञान। प्रविर्ति= प्रवृत्ति, प्रवाह, बहाव। औसान= आसान, सरल।

**भावार्थ**—आत्मसाक्षात्कार का अनुभव-प्रकाश जिसके जीवन में हुआ, उसी की बात प्रमाणित होती है। जिसके मन के सारे परदे, सारे अज्ञान हट गये, जो दृश्य-मोह रहित स्वरूपस्थ है, उसी का ज्ञान पक्का है। वह सारे

संसार को निरंतर प्रवाहमान रूप देखता और कहता है जैसा कि वह है। ऐसे जड़-दृश्य-मोह से पार संत का ज्ञान सूर्यवत एकरस होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि संत संसार से पूर्ण निष्काम होकर अंतर्मुख होते हैं। संत होना सरल नहीं है।

## झूलना-10

**सील सनेह सीतल बचन, यही संतन की रीति है जी।**
**सुनत कै प्रान जुड़ाय जावै, सब से करते वे प्रीति हैं जी॥**
**चितवनि चलिन मुसक्यानि नवनि, नहिं राग दोष हारि जीति है जी।**
**पलटू छिमा संतोष सरल, तिन कौ गावै स्त्रुति नीति है जी॥**

**शब्दार्थ**—स्त्रुति= श्रुति, वेद।

**भावार्थ**—शील, स्नेह, मीठे वचन यही संतों का व्यवहार है। संतों की बातें सुनकर मन शीतल हो जाता है। संत सबसे प्रेम करते हैं। उनके देखना, चलना, मुस्कराना आदि विनम्रतायुक्त होते हैं। उनके मन में न राग है न द्वेष है, न हार है और न जीत है। पलटू साहेब कहते हैं कि संत के जीवन में क्षमा, संतोष और सरलता सद्‌गुण होते हैं। वेद भी संतों की यही नीति बताते हैं।

## झूलना-11

**आसिक इसक पर जो भये, वे नहिं चाहैं करामात है जी।**
**उनको सोरसार नहीं भावै, वे मस्त रहैं दिन रात है जी॥**
**नहिं भूख लगै नहिं नींद आवै, नहिं पीवत हैं नहिं खात हैं जी।**
**पलटू हम बूझि बिचारि देखा, वही साहिब की जाति है जी॥**

**शब्दार्थ**—आसिक= आशिक़, इश्क एवं प्रेम करने वाला। इसक= इश्क, प्रेम। करामात= बड़प्पन, चमत्कार, दिखावा। सोरसार= शोरगुल, हल्ला-गुल्ला। साहिब= सद्‌गुरु, परमात्मा। जाति= जात, जाति, कुल, वंश; व्यक्तित्व; अस्तित्व; स्वयं, खुद।

**भावार्थ**—जो मनुष्य आत्मस्थिति के प्रेम में डूबे हैं, वे चमत्कार जैसी झूठी बातों को कभी पसंद नहीं कर सकते। उनको झांसा देकर भीड़ बटोरना और हल्ला-गुल्ला अच्छा नहीं लगता। वे आत्मलीनता में रात-दिन डूबे रहते हैं। उनको न भूख लगती है, न नींद आती है, न वे पीते हैं और न खाते हैं।

पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने समझ-विचार कर देख लिया है कि वे ही सद्‌गुरु के वंश हैं अथवा परमात्म स्वरूप हैं।

**विशेष**—देहधारी होने से जीवन्मुक्त भी खाते-पीते, सोते-जागते हैं। सार अर्थ है, उनकी इन सब बातों में स्पृहा नहीं रह जाती है।

## झूलना-12

**राजा रंक को एक जानै, तिसी का नाम फकीर है जी।**
**कंचन औ कांच में भेद नहीं, लखे और की पीर है जी॥**
**सादी गमी कुछ एक नहीं, संतोष का मुलुक जगीर है जी।**
**पलटू अस्तुति निंदा एकै, सोई रोसन-जमीर है जी॥**

**शब्दार्थ**—सादी =शादी, खुशी, आनन्दोत्सव, विवाह। गमी= ग़मी, शोक की दशा। जागीर=ऐश्वर्य। रोसनजमीर= रोशन ज़मीर, बुद्धिमान, समझदार, विवेकी।

**भावार्थ**—उसी को फकीर कहना चाहिए जो राजा और रंक को एक समान समझे। सोना और कांच में समान बुद्धि रखे और दूसरे के दर्द को समझे। उसके जीवन में न आनन्दोत्सव है और न शोक है। उसका तो संतोष ही अपना देश और ऐश्वर्य है। पलटू साहेब कहते हैं कि वह अपनी निन्दा और स्तुति एक समान समझता है। ऐसा संत रोशन जमीर है—परम विवेकी है।

## झूलना-13

**जंगल के बीच मंगल करै, किसी की नहिं परवाह है जी।**
**सबर के तख्त पर जाय बैठा, अजब फकीर बादसाह है जी॥**
**चाहना की एक राह मूँदी, सौ ओर से निकरी राह है जी।**
**पलटू परालबध मोदी भई, वोही करती निरबाह है जी॥**

**शब्दार्थ**—सबर= सब्र, संतोष। अजब= अद्‌भुत। परालबध= प्रारब्ध। मोदी= परचूनिया; दाल-चावल आदि बेचने वाला।

**भावार्थ**—फकीर जंगल के बीच में मंगल करता है। उसको किसी बात की चिंता नहीं रहती। वह संतोष के तख़्त पर जा बैठता है। फकीर अद्‌भुत बादशाह है। उसने इच्छा का एक रास्ता बन्द कर दिया, तो उसकी सेवा में सैकड़ों रास्ते से चीजें आने लगीं। पलटू साहेब कहते हैं कि उसका प्रारब्ध ही

उसको निर्वाह की वस्तुएं देने वाला परचूनिया बन जाता है। प्रारब्ध के बल से उसकी जीवन-यात्रा चलती रहती है।

झूलना-14

**कोई जोग जुगत की साधना में, कोई बैराग लै ढूँढ़ता है।**
**कोई साखी सबद बनाय कहै, जोरि जोरि बैठि कै गूँथता है॥**
**कोई भाँग धतूरा खाइ के जी, गुफा में बैठि के झूमता है।**
**कोई बेद पुरान सिद्धांत पढ़ै, कोई बैठि के निर्गुन गूनता है॥**
**कोई उदासी बनि बन बन फिरै, कोई घायल होइ के घूमता है।**
**पलटू फकीर की राह जुदी, इन बातों के ऊपर थूकता है॥**

**शब्दार्थ**—घायल= बिरही, वियोगजनित पीड़ा में।

**भावार्थ**—कोई योग और युक्ति की साधना करता है। कोई वैरागी बनकर परमात्मा को ढूंढ़ता है। कोई साखी-शब्द बनाने के लिए अच्छर-मात्रा जोड़-जोड़कर उन्हें बैठाता है। कोई भांग-धतूरा खाकर गुफा में बैठा झूमता है। कोई वेद-पुराण आदि के सिद्धान्तों को पढ़ता है। कोई बैठकर निर्गुण का मनन करता है। कोई उदासी बनकर वन-वन भटकता है और कोई ईश्वर के विरह में घायल बना घूमता है। पलटू साहेब कहते हैं कि फकीर का रास्ता अलग है। वह उक्त बातों की उपेक्षा कर अपने आप में मस्त रहता है।

झूलना-15

**कवायद असमान के बीच होवै, दिल फहम से मारि गिरावता है।**
**बंदूक हवा करि दीठ गोली, दम को साधि चलावता है॥**
**गूमठ में जब जाय लगा, मुराकबे नजर में आवता है।**
**खिड़की पारे जब निकरि गया, पलटू दुरबेस कहावता है॥**

**शब्दार्थ**—कवायद= क़वायद, कायदे, नियम; व्याकरण; सेना के युद्ध नियमों के अभ्यास की क्रिया। फहम= समझ। गूमठ= गुंबज मुराकबे= मुराक़बा, आशा करना; रक्षा करना; ध्यान करना। दुरबेस= दरवेश, फकीर।

**भावार्थ**—जब अंतःकरण-आकाश में मोह की सेना को मारने के लिए विवेक-सेना का अभ्यास होता है तब सच्ची समझ दिल की मोह-सेना को मारकर गिरा देती है। विचारों की हवा एवं प्रवाह बंदूक है और ज्ञानदृष्टि गोली

है। साधक अपने श्वास को साधकर एवं साहस कर उन्हें चलाता है। जब मन के गुंबज में ज्ञान की गोली जाकर लगी तब लक्ष्य में ध्यान जम जाता है। जब अविद्या की खिड़की तोड़कर मोह से बाहर निकल गया, पलटू साहेब कहते हैं तब वह दरवेश कहलाता है।

झूलना-16

**दीद बर दीद नजर आवै, तिसको साँच करि जानिये जी।**
**इस दिल सेती फहम करै, उसको तब जाइ पहिचानिये जी॥**
**इस दिल की रूह असमान मँहै, लाहूत के बीच में आनिये जी।**
**पलटू ना जाहिर बात करै, उसकी बात को मानिये जी॥**

**शब्दार्थ**—दीद बरदीद= सामने, प्रत्यक्ष। फहम= समझ। लाहूत= शून्य, प्रपंचशून्य।

**भावार्थ**—जो विवेक से सच ठहरे उसी को मानना चाहिए। जब अपने हृदय में सच्ची समझ होगी तभी वह सत्य की पहचान कर पायेगा। हृदय-स्थित आत्मा का तब साक्षात्कार होता है जब प्रपंचशून्य की स्थिति आती है। पलटू साहेब कहते हैं कि उसी की बात वजनदार होती है, अतएव उसी की बात पर ध्यान दो जो अंतर्मुख है।

## 18. वैराग्य

झूलना-17

**धरम करम सब छोड़ि दिया, छोड़ी जगत की आस है जी।**
**और कछू अब नहिं भावै, संतन के संग बिलास है जी॥**
**अस्तुति निन्दा को पीठि दिया, सनमुख सबद में बास है जी।**
**पलटू अधोमुख कूप मँहै, दीया जरै आकास है जी॥**

**शब्दार्थ**—बिलास= आनन्द।

**भावार्थ**—धर्म-कर्म सब छोड़ दिया और जगत की सारी आशाएं छोड़ दीं। अब अन्य कोई बात अच्छी नहीं लगती, अपितु निरंतर संतों की संगत में आनन्द उत्सव है। मिलने वाली स्तुति-निन्दा से निष्फिक्र हो गया। अब सामने निर्णय शब्दों के अनुसार जीवन का आचरण है। पलटू साहेब कहते हैं कि अंतर्मुख कूप में आत्मज्ञान का दीपक रात-दिन जल रहा है।

## झूलना–18

**पाँच भूत जो बस्सि किया, तो का लै राम को करना जी।**
**आपुइ वह राम जी होइ गया, जियत भया जब मरना जी॥**
**संसार कँहै जब पीठि दिया, तब का संसार से तरना जी।**
**पलटू जब इन्द्री बस्सि किया, तब का मुक्ती लै करना जी॥**

**शब्दार्थ**—पाँच भूत= आंख, नाक, कान, जीभ और चाम अथवा काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा भय।

**भावार्थ**—जब पांच ज्ञानेन्द्रियों एवं मनोविकारों पर पूर्ण विजय हो गयी, तब बाहर से ईश्वर को लेकर क्या करना है ? निष्काम मनुष्य स्वयं परमात्मा हो गया। जब वह जीते जी मर गया—अहंकार-शून्य हो गया। जब संसार का मोह सर्वथा छूट गया, तब अब संसार से क्या तरना रह गया ? पलटू साहेब कहते हैं कि जब इन्द्रिय और मन पूर्ण अपने वश में हो गये तब अब बाहर से मुक्ति लेना क्या रहा ?

## झूलना–19

**भूले मन को समझाय लीजै, सतसंग के बीच में जाय के जी।**
**अबकी बेर नहिं चूकना है, सुन्दर मानुष तन पाइ के जी॥**
**ज्ञान ध्यान की बात को बूझि लीजै, मन में कुछ ठीक ठहराइ के जी।**
**पलटू गगन के बीच मारै, सुरति कमान चढ़ाय के जी॥**

**शब्दार्थ**—बेर= बार, समय। कमान= धनुष।

**भावार्थ**—हे मनुष्यो! सत्संग में जाकर अपने भूले हुए मन को आत्मज्ञान के विषय में समझा लीजिए। कल्याणदायी मनुष्य शरीर मिला है, अतएव अबकी बार असावधान नहीं होना है। आत्मा का ज्ञान करो और संकल्पों को छोड़कर अपने आप शांत रहना रूपी ध्यान की बात समझ लो और इसे मन में दृढ़ कर लो। पलटू साहेब कहते हैं कि मनोवृत्ति के धनुष पर ध्यान का बाण चढ़ाकर मारो और मन गगन के समान शून्य हो जाय।

## झूलना–20

**चढ़ी नाम की भाठी चुवै प्रेम प्याला, पीना सोई सराब है जी।**
**मजलिस दुर्वेस की मतवारी, जिकिर खाना कबाब है जी॥**

**साहिब मासूक आसिक बंदा, नमक में जैसे आब है जी।**
**पलटू खुदाय की राह यही, और करना अजाब है जी॥**

**शब्दार्थ**—मजलिस= सभा, समाज, जलसा। दुर्वेस= दरवेश, फकीर, संत। जिकर= जिक्र, चर्चा, सत्संग। साहिब= स्वामी, आत्मा। मासूक= माशूक़= प्रियतम। आसिक= आशिक़= प्रेमी, साधक। आब= पानी। अजाब = अज़ाब, पाप।

**भावार्थ**—आत्मज्ञान के संज्ञा स्वरूप सतनाम की भाठी से आत्मानुभव का रस चूता है और उसे प्रेम के प्याले में भरकर साधक पीता है। यही सच्ची शराब है। फकीरों की सभा में आत्मज्ञान की मस्तानगी का सत्संग चलना ही कबाब का खाना है। आत्मा प्रियतम है, साधक प्रेमी है, जैसे नमक में स्वाभाविक जल है। पलटू साहेब कहते हैं कि खुदा से मिलने का यही रास्ता है। इसके अलावा बात करना पाप है।

**विशेष**—आत्मा परमात्मा एवं खुदा है। विषय-प्रेम छोड़कर आत्मा में प्रेम करना सच्ची साधना है। आत्मज्ञानी फकीरों की सभा में इसी की चर्चा और साधना करना साधक का कर्तव्य है।

## 19. दिखावा छोड़कर सच्ची साधना करना चाहिए

झूलना-21

**संतन के बीच में टेढ़ रहैं, मठ बाँधि संसार रिझावते हैं।**
**दस बीस सिष्य परमोधि लिया, सबसे वह गोड़ धरावते हैं॥**
**संतन की बानी काटि के जी, जोरि जोरि के आपु बनावते हैं।**
**पलटू कोस चार के गिर्द में जी, सोई चक्रवती कहावते हैं॥**

**शब्दार्थ**—परमोधि लिया= समझा लिया।

**भावार्थ**—ऐसे साधुवेषधारी होते हैं जो संतों के बीच में कटु व्यवहार करते हैं। वे मठ स्थापित करके संसार के लोगों को अपने हावभाव से रिझाने में लगे रहते हैं। दस-बीस मनुष्यों को समझा-बुझाकर और उन्हें शिष्य बना कर सबसे अपने पैर पुजवाने के चक्कर में पड़े रहते हैं। वे संतों की वाणियों में से काट-काट कर अपने नाम से कविता बनाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि वे चार कोस के बीच में अपने आप को लोगों द्वारा चक्रवर्ती सम्राट-बड़का आचार्य कहलाते हैं।

झूलना–22

**पैदा भया मुट्ठा बाँधे, फिरि हाथ पसारे जायगा जी।**
**जने चारि के काँधे चढ़ि चाले, आखिर को फेरि पछितायगा जी॥**
**दुनियाँ दौलत इहाँ छूटै, उहाँ मार घनेरी खायगा जी।**
**पलटू जब बूझि है धरमराजा, उहाँ तब क्या बतियायगा जी॥**

**शब्दार्थ**—बतियायगा= बात करेगा।

**भावार्थ**—मनुष्य मुट्ठी बांधकर पैदा होता है और हाथ पसारकर मरता है और चार लोगों के कंधे पर चला जाता है। ऐसे लोग साधन–भजन बिना अंत में पश्चाताप में डूबकर मरते हैं। दुनिया और दौलत यहीं छूट जाती है। आगे चलकर अपने दुष्कर्मों के परिणाम में नाना दुख भोगता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब यमराज पूछेगा तब वहां वह क्या बात करेगा ?

**विशेष**—यम कोई व्यक्ति नहीं है। वस्तुतः बुरा कर्म करके जीव परिणाम में दुख पायेगा।

झूलना–23

**सच्चे साहिब के मिलने को, मेरा मन लीहा बैराग है जी।**
**मोह निसा में सोय गई, चौंक परी उठि जाग है जी॥**
**दोउ नैन बने गिरि के झरना, भूषन बसन किया त्याग है जी।**
**पलटू जीयत तन त्यागि दिया, उठी बिरह की आगि है जी॥**

**शब्दार्थ**—निसा= निशा, रात्रि।

**भावार्थ**—आत्मा रूपी परमात्मा सच्चा स्वामी है। उसमें स्थित होने के लिए मैंने वैराग्य धारण किया है। मैं मोह की रात्रि में सो रहा था, परन्तु सद्गुरु के उपदेश से चौंककर जाग गया। मेरे नेत्रों से उसी प्रकार आंसू झरते हैं जिस प्रकार पर्वत के झरने। मैंने सब प्रकार के श्रृंगार का त्याग कर दिया है। पलटू साहेब कहते हैं कि देह में रहते–रहते शरीर को त्याग दिया और आत्म–विरह की उठी आग में सब मोह जल गया।

झूलना–24

**सोरहो सिंगार बनाइ कै जी, झमकि झमकि चली प्यारी।**
**सजन के रूप को देखि कै जी, झुकि झुकि परै जस मतवारी॥**

**तन मन की सुधि सब जाति रही, हिये में लगी प्रेम चोट भारी।**
**पलटू जान्यो मैं आपु को जी, अभिगति की है इक गति न्यारी॥**

**शब्दार्थ**—अभिगति= अविगत, अज्ञेय, अविनाशी।

**भावार्थ**—जैसे एक युवती सोलहों शृंगार बनाकर और छम्म-छम्म पैर रखते हुए अपने पति के पास जाय, वैसे कल्याणार्थी मनोवृत्ति अपने को सब तरफ से समेट कर आत्मोन्मुख होती है और आत्मसाक्षात्कार कर आत्मस्थिति में मस्त होकर डूब जाती है। ऐसे साधक को अपने तन-मन की सुधि खो जाती है। उसके हृदय में आत्मानुराग की भारी चोट लगी है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने अपने आप को जाना जो इन्द्रियों से अज्ञेय और अविनाशी है। इसकी दशा संसारिकता से पृथक है।

## झूलना-25

**लगन जिसी से लागि रही, काज उसी से सरा है जी।**
**सब लोक की लाज को तोरि डारे, उसी के घर करो डेरा है जी॥**
**मेरे मन में कुछ डेर नाहीं, हँसैगा लोग बहुतेरा है जी।**
**पलटू घूँघट को खोलि डारो, समरथ सतगुरु का चेरा है जी॥**

**शब्दार्थ**—सरा है= बना है। डेर= डर, भय। चेरा= दास।

**भावार्थ**—सच्चे सद्गुरु से प्रेम लगा है; उसी से मेरा काम बनेगा। मैंने सारे लोक-लाज के बंधनों को तोड़कर फेंक दिया और सद्गुरु की शरण में अपना डेरा डाल दिया है। मेरे मन में कोई भय नहीं है। संसार के लोग मेरा अच्छी तरह मजाक उड़ा लें। पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने जगत-मोह का परदा हटा दिया है और मैं समर्थ सद्गुरु के चरणों का गुलाम बन गया हूं।

## झूलना-26

**साहिब के दास कहाय यारो, जगत की आस न राखिये जी।**
**समरथ स्वामी को जब पाया, जगत से दीन न भाखिये जी॥**
**साहिब के घर में कौन कमी, किस बात को अंतै आखिये जी।**
**पलटू जो दुख सुख लाख परै, वहि नाम सुधारस चाखिये जी॥**

**शब्दार्थ**—आखिये= आखना, कहना, देखना, चाहना।

**भावार्थ**—सद्गुरु का सेवक कहलाकर जगत के भोगों की आशा न करो। जब ज्ञान-वैराग्य संपन्न समर्थ सद्गुरु को पा गया तो संसारी लोगों से

कुछ कामना रखकर उनसे दीन वचन न बोलिये। सद्गुरु की शरण में क्या कमी है ? किस वस्तु के लिए अलग से याचना करे ? पलटू साहेब कहते हैं कि अपने ऊपर चाहे लाखों सुख-दुख द्वन्द्व आवें, उनकी उपेक्षा करके सतनाम के फलस्वरूप आत्मस्थिति का अमृत-रस पान करे।

### झूलना-27

**पहिले संसार से तोरि आवै, तब बात पिया की पूछिये जी।**
**तरवार दुइ ठो है म्यान एकै, किस भाँति से वामें कीजिये जी॥**
**मीठे प्याले को दूर करो, करू प्रेम पियाला पीजिये जी।**
**पलटू जब सीस उतारि धरै, तब राह पिया की लीजिये जी॥**

**शब्दार्थ**—करू= कड़वा।

**भावार्थ**—हे साधक की मनोवृत्ति ! पहले सांसारिक भोगों की कामनाएं हृदय से निकाल दो, इसके बाद आत्मा-पति से मिलने की बात पूछो। तलवार दो हो और म्यान एक, तो किस प्रकार से उन्हें उसमें रखेंगे ? संसारी भोग जिसे आज तक मीठा प्याला मान रखा है उसे दूर कर दो और अंतर्मुखता का कड़वा प्याला पीयो। पलटू साहेब कहते हैं कि जब सिर को उतारकर धर दे—सारा अहंकार विसर्जित कर दे, तब आत्मस्थिति एवं अंतर्मुखता का रास्ता पकड़ा जा सकता है।

### झूलना-28

**फहम की फौज बनाई के जी, सुरति कमान चढ़ाइ लीता।**
**बख्तर प्रेम का पहिनि के जी, गम फील सबर निसान कीता॥**
**आकिल के बान छुड़ाइ के जी, दुर्मति के दल को मारि लीता।**
**खुदी खूब कुफर को मारि के जी, पलटू दुरवेस मैदान जीता॥**

**शब्दार्थ**—फहम= समझ, ज्ञान। सुरति =मनोवृत्ति। कमान= धनुष। बख्तर= कवच। गम= ग़म, शोक, चिंता। फील= फ़ील, हाथी। सबर= सब्र, संतोष। आकिल= आक़िल, अक्लवाला, बुद्धिमान। खुदी= अहंकार। कुफर = कुफ्र, बुराई। दुरवेस= दरवेश, संत, फकीर।

**भावार्थ**—ज्ञान की सेना बनायी, मनोवृत्ति का धनुष चढ़ाया, प्रेम का कवच पहना, संतोष के हाथी पर चढ़कर शोक-चिंता को मार गिराया। बुद्धिमान ने बुद्धि का बाण छोड़कर दुर्बुद्धि की सेना को मार डाला। पलटू

साहेब कहते हैं कि फकीर ने अपने अहंकार रूपी बुराई को मारकर मानस-युद्ध के मैदान में विवेक को विजयी बना दिया।

## झूलना-29

**उसी सावज को मारना जी, न हाड़ न माँस न चाम स्वासा।**
**पूँछ न पाँव न मुख वाके, उसी का सालन बनै खासा॥**
**मुरदा के मारे वह मरै, जीवत बधिक की नाहिं आसा।**
**पलटू जो सावज मारि खावै, तिसी का आवागवन नासा॥**

**शब्दार्थ**—सावज= साउज, वह जानवर जिसका शिकार किया जाय। सालन= रसादार तरकारी। खासा= अच्छा।

**भावार्थ**—हे साधक! उसी पशु को मारना जिसमें हड्डी, मांस, चाम, श्वास, पूछ, पांव, मुख आदि नहीं है। वह है रागात्मक मन। उसी की रसादार अच्छी तरकारी बनती है। वह मुरदा के मारे मरता है। जीवित बधिक द्वारा उसके मारे जाने की आशा नहीं करना चाहिए। अहंकार-शून्य साधक ही मन को मार सकता है, अहंकारी नहीं। पलटू साहेब कहते हैं कि जो साधक मन को मारकर खा जाय—मन पर पूर्ण विजयी हो जाय, उसी का आवागमन नष्ट होता है।

## झूलना-30

**बनिया यह बानि ना छोड़ता है, फिर फिर पसँगा मारता है।**
**केतक बार तैं चोट खाया, उस याद को फेर बिसारता है॥**
**खारी के बीच में खाँड़ डारै, दुरमति को नाहिं मिटावता है।**
**पलटू केता समझाय देखा, तिस पर भी नाहिं सम्हारता है॥**

**शब्दार्थ**—बानि= आदत। खारी= नमक। खांड़= शकर।

**भावार्थ**—बनिया अपनी यह आदत नहीं छोड़ता है। वह बारंबार तौलते समय दूसरों को ठगने के लिए पसंगा मारता है। हे बनिया! तू कितनी ही बार अपनी गंदगी के कारण चोट खाया है, उस दुखद स्थिति को भूल जाता है। तू नमक-शकर मिलाकर उसे शकर के भाव में बेचना चाहता है। तू अपनी दुर्बुद्धि को नहीं दूर करता। पलटू साहेब कहते हैं कि कितना ही समझाकर देखा गया, किन्तु तिस पर भी बनिया अपने को नहीं सम्हालता है।

**विशेष**—यहां बनिया का रूपक है। बात है मन की; 'यह मन बनिया बानि न छोड़े।' मन अपनी जिस करनी से दुख पाता है, उसी को पुनः करता है। दृढ़ विवेक का मतलब है गलती न दोहराये। इसी से सुधार आता है।

### झूलना-31

**बिन मूल कै झाड़ इक ठाढ़ि रहा, तिस पर आ बैठे दुइ पच्छी।**
**इक तो गगन में उड़ि गया, इक लाय रहा बकु ध्यान मच्छी॥**
**गगन में जाइ के अमर भया, वह मरि गया चारा जिन भच्छी।**
**पलटू दोऊ के बीच खेलै, तिहि बात है आदि अनादि अच्छी॥**

**शब्दार्थ**—मूल= जड़। झाड़= वृक्ष, पेड़।

**भावार्थ**—बिना जड़ के एक वृक्ष खड़ा है, वह है शरीर। एक समान शरीर रूपी वृक्ष पर दो पक्षी बैठे हैं जो मूलतः समान हैं; उनमें से एक भोगों से निष्काम होकर आत्मस्थिति के आकाश में उड़ गया और दूसरा मछली खाने के लिए बगुले की तरह कपटपूर्ण ध्यान लगाता है—सांसारिक भोगों की लालसा में डूबा है। एक तो आत्मस्थिति के आकाश में उड़कर अमर स्थिति पा गया और दूसरा जिसने सांसारिक भोगों का स्वाद लिया, वह अपनी स्थिति से गिर गया। पलटू साहेब कहते हैं कि उक्त दोनों की स्थिति जानकर जो त्याग का उत्तम फल जानता है और त्याग से रहता है, उसकी स्थिति सदा उत्तम रहती है।

**विशेष**—उक्त झूलना का भाव ऋग्वेद के 'द्वा सुपर्णा' मंत्र की याद दिलाता है, जो इस प्रकार है—"सुंदर पंख के दो पक्षी हैं जो साथ-साथ रहते हैं और मित्र हैं। ये एक ही समान वृक्ष पर चिपके बैठे हैं। उनमें से एक वृक्ष के फल के स्वाद को चखता है, परन्तु दूसरा नहीं चखता। वह केवल देखता रहता है।" मूल मंत्र इस प्रकार है—

*द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते।*
*तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्ननन्यो अभि चाकशीति॥*

(ऋग्वेद, मंडल 1, सूक्त 164, मंत्र 20)

### झूलना-32

**माया संसार को जीति आई, संसार चला सब हारि है जी।**
**जोगी जती औ सिद्ध तपी, उनको भी लेती मारि है जी॥**

**उनके निकट नहीं आवै, जिनके बिबेक बिचार है जी।**
**पलटू संतन से वह डरती, वे फेंकि मारैं पैजारि है जी॥**

**शब्दार्थ**— पैजारि=पैज़ार, जूता।

**भावार्थ**—माया संसार के लोगों पर विजय करती आयी है और संसार के सब लोग माया से हार गये हैं। यहां तक कि कितने योगी, त्यागी, सिद्ध, तपस्वी को भी माया मार गिराती है। जिनके मन में विचार-विवेक है, माया उनके पास नहीं फटकती। पलटू साहेब कहते हैं कि माया संतों से डरती है। यदि माया संतों के पास पहुंचे तो वे उसे जूते फेंककर मारते और खदेड़ते हैं।

## झूलना-33

**मोटी माया तो सब तजै, मेंही नहीं तजि जात है जी।**
**ओही उनकी खोराक भई, मोटै रहै दिन राति है जी॥**
**पलटू जो मेंही माया तजै, वोही साहिब की जाति है जी॥**

**शब्दार्थ**—मोटी माया=घर, धन, प्राणी-पदार्थ। मेंही=महीन; झीनी माया, मान-बड़ाई। जाति=वंश, अनुगामी।

**भावार्थ**—मोटी माया तो बहुत लोग त्याग देते हैं, परन्तु झीनी माया मान-बड़ाई त्यागना कठिन होता है। मान-बड़ाई ही अभिमानी की खुराक होती है। उसी से वे रात-दिन फूले घूमते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जो झीनी माया मान-बड़ाई का त्याग करता है, वही सद्‌गुरु का सच्चा अनुगामी है, परमात्म स्वरूप है।

## झूलना-34

**जक्त की प्रीति को देखि लिया, नाहक को लोग ठगात हैं जी।**
**स्वारथ के हेतु से प्रीति करैं, दौलत बेटा मँगात हैं जी॥**
**लम्बी दंडवतै आप करैं, दगाबाज की प्रीति कहात है जी।**
**पलटू इनसे सम्हारि रहौ, तेरे मन को चोर लगात है जी॥**

**शब्दार्थ**—दगाबाज=दग़ाबाज़, धोखा देकर लूटने वाला, छली।

**भावार्थ**—संसारियों के प्रेम को देख लिया गया है। लोग संसार के झूठे प्रेम में पड़कर व्यर्थ ही ठगे जाते हैं। संसार में लोग अपने भौतिक स्वार्थ के लिए प्रेम करते हैं। पुत्र भी पिता से धन पाने के लिए प्रेम करता है। जो बहुत

लम्बी दंडवत करता है, वह धोखा देकर लूटने वाला होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे कल्याणार्थी! ऐसे अंध स्वार्थियों से सावधान रहो। ये तुम्हारे मन को चुराने वाले ठग हैं।

## झूलना-35

**इलम पढ़ा पर अमल नहीं, अमल बिनु इलम खाक है जी।**
**इलम पढ़ै औ अमल करै, उसके हम तौ मुस्ताक हैं जी॥**
**बेहद्द कथै औ हद्द रहै, उसका तो मुँह नापाक है जी।**
**पलटू गुफ्तन सोई दीदन, वह तो मारफत की नाक है जी॥**

**शब्दार्थ**—इलम= इल्म, ज्ञान। अमल= आचरण। खाक= ख़ाक, मिट्टी। मुस्ताक= मुश्ताक़, उत्सुक, अभिलाषी, अनुगामी। बेहद= उच्च आध्यात्मिक स्थिति। हद्द= दुनियादारी। गुफ्तन= गुफ़्तन, कथन, कथनी। दीदन= दर्शन, साक्षात्कार, रहनी। मारफत= मारफ़त, अध्यात्म ज्ञान।

**भावार्थ**—ज्ञान की बात तो पढ़ ली, किन्तु उसका जीवन में प्रयोग नहीं है, तो प्रयोग के बिना ज्ञान मिट्टी है। जो ज्ञान पढ़े और उसका जीवन में प्रयोग करे, मैं उसका अनुगामी हूं। बात तो उच्च अध्यात्म स्थिति की करे और जीवन दुनियादारी में रहे, उसकी वाणी अपवित्र है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो कथन में हो, वही रहनी में हो, तो उसका आचरण आध्यात्मिक ज्ञान का उच्च शिखर है।

## झूलना-36

**स्यार की चाल को छोड़ बे बालके, आपु को खूब दरिआफ कीजै।**
**सिंह है तुही तहकीक कर आप में, स्यार के संग को छोड़ दीजै॥**
**अहार तो कीजिये आपु से मारिकै, और के मारा ना कधी लीजै।**
**पलटू तू सिंह ह्वै गरज बे हाँक दै, पकरि गजराज धै पाँव मींजै॥**

**शब्दार्थ**—दरिआफ= दरियाफ़्त, ज्ञात, मालूम। तहकीक= तहक़ीक, जांच-पड़ताल, अनुसंधान, निश्चित।

**भावार्थ**—अबे बालक साधक! सियार जैसी कायरता की चाल छोड़ दे। अपने आप को ठीक से समझ ले कि तू कौन है। तू तो शुद्ध चेतन है, परमात्मा है। तू अपने आप का अनुसंधान कर। तू सिंह है, वीर है; सियार एवं कायर मत बन। स्वयं परिश्रम करके भोजन कर, दूसरे के सामने हाथ

मत पसार। पलटू साहेब कहते हैं कि तू सिंहवत वीर है। अबे साधक! गरजते हुए हांक दे। तू मन रूपी हाथी के पैर पकड़कर उसे मींज दे।

### झूलना-37

**दुनिया कँहै जब तरक किया, कुछ दीन की लज्जत टोवना है।**
**काम क्रोध पकरि कै मारि डारौ, खुदी खूब के ताईं खोवना है॥**
**यारो इस बात की लाज करौ, संतोष का तोसा पोवना है।**
**पलटू साहिब के घर माहीं, टुक पाँव पसारि के सोवना है॥**

**शब्दार्थ**—तरक= तर्क, त्याग। दीन= परमार्थ। लज्जत= स्वाद, आनन्द। टोवना= स्पर्श करना, अनुभव करना। खुदी= ख़ुदी, अहंकार। खूब =अच्छा, भला। तोसा= तोशा, वह खाद्य पदार्थ जो यात्रा में रखा जाय, पाथेय, कलेवा, खाने-पीने की चीज। पोवना= तैयार करना।

**भावार्थ**—साधक सारहीन संसार के भोगों का त्याग करता है। तब वह परमार्थ के स्थिर आनन्द का अनुभव करता है। हे साधक! काम-क्रोधादि को पकड़कर उन्हें मार डालो। याद रखो, अपने स्थिर कल्याण के लिए अपने अहंकार को खो देना है। ऐ मित्रो! अपने त्याग-मार्ग की लाज रखो। जीवन-यात्रा के लिए संतोष का भोजन तैयार करना है। पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु की शरण में पांव पसारकर निश्चिंतता की नींद सोना है।

### झूलना-38

**पहिले फना फिर सेख होवै, कदम मुरसिद को पाइके जी।**
**तब फना फिल्लाह होवै, मारफत मकान ठहराइ के जी॥**
**मुरसिद मुरीद पर मिहर करै, लाहूत को देइ पहुँचाइ के जी।**
**पलटू हूहू आवाज आवै, रूह खास दीदन उहाँ जाइ के जी॥**

**शब्दार्थ**—फना= फ़ना= नाश, मृत्यु। सेख= शेख़, मुहम्मद साहब के वंशजों की उपाधि; मुसलमानों के चार वर्ग—शेख, सैयद, मुगल, पठान में से पहला—शेख; मुसलमानों का गुरु। मुरसिद= मुरशिद, सद्गुरु। फिल्लाह= वस्तुतः, अनुभव। मारफत= मारफ़त, अध्यात्मज्ञान, आत्मज्ञान। मुरीद= शिष्य। मिहर= मेह्र, कृपा। लाहूत= कल्याण दशा। हूहू= ईश्वर का संक्षिप्त नाम। रूह= आत्मा। दीदन= दर्शन, साक्षात्कार।

**भावार्थ**—सद्गुरु की शरण में रहकर उनकी सेवा-भक्ति करते हुए साधना करे और पहले जीते जी मर जाय, तब धर्मोपदेशक गुरु बने। तब जीवतमृत की दशा—अहंकार-शून्यता की दशा प्रमाणित होती है, अनुभव में आती है जब आत्मज्ञान की स्थिति में साधक ठहर जाता है। सद्गुरु शिष्य पर कृपा करके उसे कल्याण की दशा में पहुंचने का उपदेश दे। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मस्थिति का बोध ही ईश्वर की आवाज है, यह तब होता है जब आत्मा स्वयं उस संकल्पशून्य स्थिति में पहुंचकर आत्मसाक्षात्कार करता है।

झूलना-39

**संग्रह त्याग दोऊ को छोड़ि देवै, तब बात पड़ैगी ठीक है जी।**
**अस्तुति निन्दा काँच कंचन में, भेद राखै नहिं नेक है जी॥**
**चार बरन आसरम धरम, ये भी गाड़ी की लीक हैं जी।**
**पलटू सब सेती जुदा रहै, येही बात तहकीक है जी॥**

**शब्दार्थ**—नेक= भला, उत्तम। तहकीक= तहक़ीक़, निश्चित, ठीक।

**भावार्थ**—मोक्ष-इच्छुक संग्रह के लोभ से और त्याग के अहंकार से दूर रहे, तब उसका मन शांत रहेगा। स्तुति तथा निन्दा और कांच एवं कंचन में समता रखे तभी उसका कल्याण होगा। चार वर्ण और चार आश्रम ये भी गाड़ी की लीक की तरह बनी बनायी परिपाटी है। पलटू साहेब कहते हैं कि इन घरौंदों से अलग रहना ही ठीक रास्ता है।

झूलना-40

**घर घर से चुटकी माँगि के जी, छुधा कौ चारा डारि दीजै।**
**फूटा इक तुम्बा पास राखौ, ओढ़न को चादर एक लीजै॥**
**हाट बाट महजित में सोय रहौ, दिन रात सतसंग का रस पीजै।**
**पलटू उदास रहौ जक्त सेती, पहिले बैराग यहि भाँति कीजै॥**

**शब्दार्थ**—महजित= मसजिद।

**भावार्थ**—घर-घर से रोटी के टुकड़े मांगकर भूख को चारा डाल दो। पानी पीने के लिए साथ में एक फूटा तुंबा रखो और ओढ़ने की एक चादर। रास्ते, बाजार तथा मस्जिद-मंदिर में कहीं सो जाओ और रात-दिन सत्संग से आत्मज्ञान की चर्चा का रस पीयो। पलटू साहेब कहते हैं कि हे साधू! संसार से उदास रहो। पहले इसी तरह वैराग्य करो।

### झूलना-41

**बासी टुकड़ा को माँगि खाना, महजित के बीच में सोवना जी।**
**ऊपर इक चिथरा ओढ़ि लेना, अंदर को साफ करि धोवना जी॥**
**दिल में आवै सो कहि देना, उस बात को नाहिं गोवना जी।**
**पलटू गुजर गुजरान गई, सिर खोलि के फिर क्या रोवना जी॥**

**शब्दार्थ**—गोवना= छिपाना। गुजर= बीत जाना। गुजरान= निर्वाह।

**भावार्थ**—हे साधु ! बासी रोटी के एक टुकड़े को मांगकर खा लेना और मस्जिद-देवालय आदि में सो जाना। शरीर पर एक फटी चादर ओढ़ लेना और मन को पूर्ण स्वच्छ रखना। हृदय में जो बात सच लगे उसे बिना छिपाये कह देना। पलटू साहेब कहते हैं कि शरीर का निर्वाह होकर समय बीत जायेगा। सिर खोलकर जब वैराग्य-पथ में कूद पड़ा है, तब शिकायत और चिंता-फिक्र करने की बात कहां रही ?

### झूलना-42

**हमता ममता को दूरि करै, यही तो मूल जंजाल है जी।**
**चाह अचाह को छोड़ि देवै, यहि सहज सुभाव की चाल है जी॥**
**मोर औ तोर बिकार छूटै, सब से मिलै हर हाल है जी।**
**पलटू जिन बासना बीज भूना, वो ही साहिब का लाल है जी॥**

**शब्दार्थ**—हर हाल= प्रत्येक दशा, सब समय।

**भावार्थ**—मैं-मेरा एवं अहंकार-ममता को दूर करता रहे, क्योंकि अहंता-ममता ही फंसाने वाली है। संपत्ति और स्वामित्व की चाहना न रखे और चाहनाहीन होने का अहंकार न करे। यही सहज साधना की रहनी है। मेरा है, तेरा है, ऐसा मनोविकार छोड़ दे और सबसे सब दशा में मेल-जोल एवं समता रखे। पलटू साहेब कहते हैं कि जिसने वासना-बीज को आत्मज्ञान की प्रज्वलित अग्नि से भून दिया, वही सद्‌गुरु का दुलारा शिष्य है।

### झूलना-43

**मेरी मेरी तू क्या करै, मेरी मँहै अकाज है जी।**
**साहिब सब काम सँभारि लेवै, मेरी से आवै बाज है जी॥**
**जिसका तू दास कहावता है, तिसको इस बात की लाज है जी।**
**पलटू तू मेरी छोड़ि देवे, तीनि लोक तेरा राज है जी॥**

**शब्दार्थ**—बाज= दूर होना, छोड़ देना।

**भावार्थ**—मेरा है, मेरा है, ऐसा क्या करता है ? दुनिया की चीजों को मेरी मानना अपना पतन करना है। तू अहंता-ममता छोड़ दे, सद्गुरु तेरा सब काम सम्हाल लेगा। तू जिसका सेवक कहलाता है, उसको तुझे सम्हालने की लज्जा है। पलटू साहेब कहते हैं कि तू संसार की सारी अहंता-ममता छोड़ दे, फिर पूरा संसार तेरा राज्य है।

### झूलना-44

**हवा कँहै खामोस करै, नाक आँख कान मुँह मूँदि भाई।**
**तब नूर तजल्ली दीद करै, असमान की खिरकी खोलि नाई॥**
**खिरकी की राह निकरि जावै, सुनै हक हक आवाज पाई।**
**पलटू दीगर को नेस्त करै, होय खुद अहद इस भाँति जाई॥**

**शब्दार्थ**—हवा= वातावरण। खामोस= ख़ामोश, चुप, मौन, शांत। नूर तजल्ली= नूरे तजल्ली, आध्यात्मिक प्रकाश, आत्म-साक्षात्कार। दीद= देखादेखी, दर्शन, दीदार। खोलि नाई= खोलकर फेंक दिया। हक हक =हक़ हक़, सत्य-सत्य। दीगर= अन्य, दूसरा, अनात्म। नेस्त= जो न हो; तात्पर्य में नकार देना, त्याग देना। खुद= ख़ुद, स्वयं। अहद= पक्का, निश्चय।

**भावार्थ**—हे भाई ! वातावरण शांत रखे और नाक, आंख, कान, मुंह, शिश्न आदि इन्द्रियों का पूर्ण संयम रखे। तब आत्मज्ञान के प्रकाश का साक्षात्कार होता है। हृदयाकाश की अविद्या का किवाड़ खोलकर फेंक दे और विवेक की खिड़की से निकलकर बाहर हो जाय, तब अंतरात्मा से सत्य की आवाज सुनाई देगी। पलटू साहेब कहते हैं कि अनात्म का त्याग करे; तब इस प्रकार साधक स्वतः स्वरूप के पक्का निश्चय में दृढ़ हो जायेगा।

### झूलना-45

**जब मैं नाहीं तब वह आया, मैं ना वह यह कौन मानै।**
**गूँगे ने गुड़ खाइ लिया, जबान बिना क्या सिफत आनै॥**
**दरियाव औ लहर तो दोय नहीं, समा औ रोसनी कौन छानै।**
**पलटू भगवान की गति न्यारी, भगवान की गति भगवान जानै॥**

**शब्दार्थ**—मैं= देहाभिमान। वह= परम सत्य। जबान= जीभ। सिफत= सिफ़त, विशेषता, गुण। दरियाव= दरिया, समुद्र। समा= शमा, दीपक। रोसनी = रोशनी, प्रकाश।

**भावार्थ**—जब मेरा देहाभिमान नष्ट हो गया, तब सत्य की स्थिति हुई— 'जब मैं नाहीं, तब वह आया।' किन्तु 'मैं न वह'—'मैं' प्रत्यक्ष देहाभिमान नहीं तथा 'वह' परोक्ष सत्य नहीं, अपितु अपना स्वतः आत्म–अस्तित्व रहा। 'यह कौन माने ?' यह तो वही अनुभव करेगा जो उस स्थिति का अनुभवी है। मैं का अहंकार मिट जाना परमात्मस्थिति है। गूंगा गुड़ खाने के बाद उसका स्वाद नहीं बता सकता। जीभ के बिना गुड़ की विशेषता क्या कह सकता है ? समुद्र और लहर दो नहीं, दीपक की लौ और प्रकाश दो नहीं, इसी प्रकार आत्मा–परमात्मा दो नहीं। पलटू साहेब कहते हैं कि परमात्मा की दशा विलक्षण है। परमात्मा की दशा परमात्मा ही जानता है।

**विशेष**—समुद्र और उसकी लहर का उदाहरण दिया जाता है। परन्तु यह सब भ्रम ही पैदा करता है। समुद्र और लहर दोनों विकारी हैं। वस्तुतः आत्मा ही परमात्मा है, परन्तु यह अनुभव तब होता है जब देहाभिमान सर्वथा मिट जाता है।

## झूलना–46

**साहिब मोर कुछ एक नाहीं, जो है सो सब कुछ तोर है जी।**
**मुझको इस बात की नाहिं खबर, आगे परा मुझे भोर है जी॥**
**इस हमता ममता के कारन, तुमसे भये हम चोर है जी।**
**पलटू अब मुझको चेत परा, तेरा नहिं कहै मन मोर है जी॥**

**शब्दार्थ**—भोर= भुलावा।

**भावार्थ**—हे सद्गुरु ! मेरा कुछ एक पदार्थ भी नहीं है, जो कुछ है वह सब आपका है; किन्तु इस सत्य का मुझे कोई पता नहीं था। इसलिए मुझसे भूल होती रही। इस अहंता–ममता के ही कारण मैं आपके सामने चोर सिद्ध हुआ। पलटू साहेब कहते हैं कि अब मैं समझ पाया कि मेरा मन पूर्णतया आपको समर्पित नहीं है।

## झूलना–47

**बड़ा भया तौ क्या भया, जो दिल का नाहिं उदार है जी।**
**बड़ा सबसे समुद्र भया, पानी पड़ा वो खार है जी॥**

**समुद्र सेती इक कूप भला, पिये सकल संसार है जी।**
**पलटू सबसे छोट भया, सोई सबका सिरदार है जी॥**

**शब्दार्थ**—सिरदार= सरदार, शासक, अगुआ, श्रेष्ठ।

**भावार्थ**—कोई बड़ा कहलाने से बड़ा नहीं होता, अपितु उदार हृदय से समता-सेवा करने वाला बड़ा होता है। समुद्र सदा से बड़ा है, परन्तु उसका पानी खारा है। समुद्र की अपेक्षा एक छोटा कुंआ अच्छा है जिसका पानी संसार के सब लोग पीते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जो मनुष्य अपने को सबसे छोटा मानता है, वह सबसे श्रेष्ठ हो जाता है।

### झूलना-48

**पात पात कै आपा लुटाय देवै, पाछे फूलै परास है जी।**
**कदली बाँस मँहै जब फर लागा, फिर नहिं कुछ उस की आस है जी॥**
**जियत मरै तन त्यागि देवै, सहै जगत उपहास है जी।**
**पलटू पहिले यह करि लेवै, तब जाय सतगुरु के पास है जी॥**

**शब्दार्थ**—परास= पलास। कदली= केला।

**भावार्थ**—पलास का वृक्ष जब अपने सब पत्ते गिरा देता है, तब फूलों से लद जाता है। केले और बांस जब फलते हैं, तब उसके बाद वे नष्ट हो जाते हैं। फिर उनसे फल की आशा नहीं की जा सकती। साधक जीते जी मर जाय—सारा अहंकार छोड़ दे, देहाभिमान त्याग दे और संसार से प्राप्त उपहास निर्विकार भाव से सह ले। पलटू साहेब कहते हैं कि जब पहले ऐसी रहनी बना ले, तब सद्गुरु के पास जाय।

### झूलना-49

**जाय संत सेवा में लागि रहै, यही धर्म जिग्यास है जी।**
**तन मन सेती जब नाहिं टरै, करै चरन में बास है जी॥**
**दीन दयाल हैं संत बड़े, जो पुजवैं मन की आस है जी।**
**पलटू जो संत उपदेस करै, सोई कीजै विस्वास है जी॥**

**शब्दार्थ**—धर्म जिग्यास= धर्म जिज्ञासा, धर्म जानने की अभिलाषा।

**भावार्थ**—साधक संतों के पास जाकर उनकी सेवा में लग जाय। यही धर्म को समझने का लक्षण है। तन-मन अर्पित करके उनकी शरण से न हटे,

अपितु उनके चरणों की शरण में ही निवास करे। संत दीनों पर दया करने वाले हैं। वे मुमुक्षु को सत्योपदेश देकर उसे कल्याण पथ में अग्रसर होने का बल देते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संत जो उपदेश करें, उन पर विश्वास करके वैसा आचरण करे।

## झूलना-50

**जिसे चोट लगी है ज्ञान की जी, तिसको नहीं कुछ भावता है।**
**आठ सिधि नौ निधि भईं आइ खड़ी, तिस को वह दूरि बहावता है॥**
**संसार कँहै दै पीठि बैठा, अपने मन को खूब रिझावता है।**
**पलटू जहँ मन की गम्मि नहीं, तहँ वह जोति जगावता है॥**

**शब्दार्थ**—रिझावता है= प्रसन्न करता है। गम्मि= गम, पहुंच।

**भावार्थ**—जिसे आत्मज्ञान की चोट लग जाती है, उसको अन्य कुछ अच्छा नहीं लगता। आठ सिद्धियां और नौ सिद्धियां उसके सामने हाथ जोड़े भले खड़ी रहें, परन्तु उनको वह दूर खदेड़ देता है। वह संसार की तरफ पीठ देकर अंतर्मुख हो जाता है और अपने मन को स्वरूपस्थिति में लीन करता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जहां मन की पहुंच नहीं होती है, वह उस आत्मस्वरूप में निर्विकल्प स्थिति की ज्योति जलाता है।

## झूलना-51

**कर्म बिना नहिं ज्ञान होवै, कर्म कँहै नहिं निंदिये जी।**
**फल कारन ज्यों झाड़ फूलै, फूल झरि जाय फल लीजिये जी॥**
**पाछे सेती बेटा होवै, पहिले मुसक्कत कीजिये जी।**
**पलटू पहिले जब ऊख बोवै, पाछे सेती रस पीजिये जी॥**

**शब्दार्थ**—मुसक्कत= मशक़्क़त, श्रम, मेहनत।

**भावार्थ**—पवित्र कर्म से अंतःकरण पवित्र होकर आत्मज्ञान होता है; अतएव शुद्ध कर्म के बिना ज्ञान नहीं होता है। इसलिए कर्म की निन्दा न कीजिए। पेड़ में फूल लगकर उनसे फल होते हैं, फूल झड़ जाते हैं। पहले परिश्रम करके पुत्र पाला जाता है, पीछे वह माता-पिता की सेवा करता है। मनुष्य पहले ईख बोता है, उसे सींचता, गोड़ता, खाद देता तथा रक्षा करता है, तब पीछे उसे उसका मीठा रस पीने को मिलता है।

झूलना–52

**जो गया साहिब के खोजने को, सो आपै गया हेराय है जी।**
**समुँदर के बीच में बुन्द परा, उसी में गया समाय है जी॥**
**पानी लहरि लहरि पानी, को भेद सकै अलगाय है जी।**
**पलटू हरफ मसी दोय नाहीं, यह बात ले ठीक ठहराय है जी॥**

**शब्दार्थ**—हरफ= हरफ़, वर्णमाला का अक्षर, लिखावट। मसी= मसि, स्याही, रोशनाई।

**भावार्थ**—जो परमात्मा को खोजने गया, वह स्वयं खो गया। समुद्र में बुंद पड़ी तो वह उसमें समा गयी। पानी लहर है और लहर पानी है। दोनों में भेद कौन कर सकता है ? पलटू साहेब कहते हैं कि अक्षर और स्याही दो नहीं है। यह तथ्य ठीक समझ लो कि आत्मा–परमात्मा दो नहीं हैं।

**विशेष**—समुद्र-बुंद, पानी–लहर दोनों विकारी हैं। इसलिए ये उदाहरण उपयुक्त नहीं हैं, किन्तु इनकी कहावत चलती है। वस्तुतः परमात्मा को खोजने का मतलब है अपना माना हुआ सब कुछ खो देना। जब देहादि सारे अनात्म का अहंकार खो गया, तब आत्मा स्वयं परमात्मा है। आत्मा से अलग कोई परमात्मा नहीं है। सारे अनात्म का मोह छोड़ देने पर आत्मा स्वयं परमात्मा है।

झूलना–53

**मुक्ति मुक्ति सब खोजत हैं, मुक्ति कहो कहँ पाइये जी।**
**मुक्ति के हाथ औ पाँव नहीं, किस भाँति सेती दिखलाइये जी॥**
**ज्ञान ध्यान की बात बूझिये, या मन को खूब समझाइये जी।**
**पलटू मुये पर किन्ह देखा, जीवत ही मुक्त हो जाइये जी॥**

**शब्दार्थ**—सेती= से।

**भावार्थ**—मुक्ति–मुक्ति कहकर सब उसे खोज रहे हैं। कहो भला, मुक्ति कहां मिलेगी ? मुक्ति के न हाथ हैं और न पांव हैं। किस प्रकार वह दिखाई देगी ? हे मुक्ति इच्छुक ! संतों से आत्मज्ञान और ध्यान की बात पूछो और अपने मन को खूब समझाकर उसे शुद्ध करो और अंततः संकल्पशून्य एवं दृश्य–अभाव करो। जब मन स्ववश हो गया, मर गया, हलचल बंद हो गयी, यही मुक्ति है। पलटू साहेब कहते हैं कि मरने के बाद मुक्ति किसने पायी ? जीते जी मुक्त हो जाओ।

**विशेष**—जीवन में उलझे रहकर मरने के बाद मुक्ति पाने की आशा भुलावा है। जीते जी मन उद्वेग-शून्य हो गया, सारी इच्छाएं बुझ गयीं, यही मुक्ति है। जो आज मुक्त है वह आगे सदा मुक्त है।

## झूलना-54

**उठै झनकार गगन के बीच में, लगा दिन राति इक रंग है जी।**
**टूट तहँ लगी है सुरति और निरति की, तान गावै सबद सोहंग है जी॥**
**सहज के खेल में जोति हीरा बरै, नहीं कोइ दूसरा संग है जी।**
**पलटू महल अठएँ ऊपर गई, हवास देखि के दंग है जी॥**

**शब्दार्थ**—गगन= खोपड़ी। सोहंग= सोऽहम्, सः अहम्, वह मैं। अठएँ ऊपर= आठ चक्रों के ऊपर। आठ चक्र गुदा से लेकर खोपड़ी तक हैं, वे हैं मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, सहस्रसार तथा सुरति कमल। हवास= होश, ज्ञान। दंग= विस्मित, चकित, स्तब्ध, आश्चर्यान्वित।

**भावार्थ**—ब्रह्माण्ड (खोपड़ी) में अनाहतनाद की झनकार उठ रही है। रात-दिन एक समान उसकी गति है। वहां सुरति-निरति का—मनोवृत्ति की लीनता का क्रम लगा है। वहां सोऽहम् शब्द का तान गाया जा रहा है। यह आत्मज्ञान की सहज-साधना में ज्ञान का हीरा प्रकाशित होता है। शुद्ध आत्मस्थिति में द्वैत नहीं रहता। वह असंग दशा है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब आठों चक्रों के ऊपर गया, तब वहां के ज्ञान का अनुभव पाकर चकित रह गया।

## झूलना-55

**उस देस की बात मैं कहता हूँ, असमान के बीच सुलाख है जी।**
**बादसाह उसी के बीच बैठा, सूझि परै बिनु आँख है जी॥**
**सुरुख तो उसका चिहरा है, आफताब तसद्दुक लाख है जी।**
**पलटू वहँ हू हू अवाज आवै, उसमें मेरा दिल मुस्ताक है जी॥**

**शब्दार्थ**—सुलाख= सुराख, छेद। सुरुख= सुर्ख़, लाल। आफताब= आफ़ताब, सूर्य। तसद्दुक= न्योछावर। मुस्ताक= मुश्ताक़, उत्सुक।

**भावार्थ**—मैं उस देश की बात कहता हूं जहां खोपड़ी के बीच में एक छेद है। बादशाह आत्मा उसी के बीच बैठा है। भौतिक आंखों के बिना वह

दिखता है। उसका चेहरा लाल है। लाखों सूर्य उस पर न्योछावर करने योग्य हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि वहां हू-हू की आवाज आती है। उसके लिए मेरा मन उत्सुक है।

**विशेष**—आठ चक्र रूपी महल काल्पनिक है। अनाहतनाद नसों की झनकार है। यह आरंभिक साधना में मन रोकने का एक आधार मात्र है। इसके आगे सोऽहम् का भाव उत्तम है कि जिसे मैं खोजता हूं वह मैं हूं।

खोपड़ी के तालुमूल के छेद में आत्मा बैठा है और वह लाल रंग का है, यह कल्पित धारणा है। आत्मा रंग-रूप रहित ज्ञान मात्र है। हू-हू की आवाज भी कल्पित है।

## झूलना-56

**प्रतिबिंब अकास को देखा चहै, भरै घट में उसका भास है जी।**
**उसी घट को फिर फोरि डारै, आखिर को रहै अकास है जी॥**
**इस भाँति से जड़ सरीर मँहै, चेतन करै परगास है जी।**
**पलटू सरीर का नास होवै, चेतन का नाहीं नास है जी॥**

**शब्दार्थ**—परगास= प्रकट, उजाला, ज्ञानस्वरूप।

**भावार्थ**—आकाश का प्रतिबिम्ब देखने की इच्छा हो तो जल से भरे हुए घड़े में उसका आभास देखा जा सकता है। यदि उस घट को फोड़ दे तो आकाश नहीं फूटता है, अपितु घट में पड़े हुए आकाश के प्रतिबिम्ब का नाश होता है। इसी प्रकर जड़-शरीर में चेतन आत्मा रहता है और उसका ज्ञान उसमें प्रकाश करता है। पलटू साहेब कहते हैं कि शरीर का नाश होता है, चेतन का नाश नहीं होता।

**विशेष**—आकाश शून्य है। उसका प्रतिबिम्ब नहीं होता। जल में जो दिखता हुआ प्रतिबिम्ब है जिसे आकाश का प्रतिबिम्ब कहा जाता है, वह आकाश में फैले हुए गर्दा-गुब्बार का, जड़कणों के घनाकार का प्रतिबिम्ब है, आकाश का नहीं। यह सत्य है कि शरीर का नाश होता है, चेतन आत्मा का नहीं।

## झूलना-57

**अपने सरूप को जिन्ह पाया, वह जाय रहा भवपार है जी।**
**असाध को साधि चेतन्न किया, भीतर बाहर उजियार है जी॥**

**जीव ब्रह्म की गाँठि को खोलि डारा, निरवार लिया सब सार है जी।**
**पलटू कुछ भूख पियास नहीं, उसी नाम का एक अधार है जी॥**

**शब्दार्थ**—असाध= असाध्य, अति कठिन। निरवार= निर्णय।

**भावार्थ**—जो मनुष्य अपने चेतन स्वरूप को समझकर उसमें स्थित हो गया, वह संसार-सागर से पार हो गया। आज तक मन का सुलझना असंभव लगता था, उसे सुलझाकर पूर्ण शांत कर लिया और सावधान कर लिया। अब भीतर-बाहर के सारे व्यवहार ज्ञान-प्रकाश में होने लगे—भीतर मन शांत है और बाहर व्यवहार सुलझा है। जीव और ब्रह्म के अबोध की ग्रंथि को विवेक से खोल डाला और निर्णय हो गया कि जीव स्वयं ब्रह्म है, सार-सत्य स्वरूप है। पलटू साहेब कहते हैं कि स्वस्वरूप का बोध होते ही संसार की कोई इच्छा नहीं रह गयी। स्वरूपज्ञान में ही निरंतर स्थिति हो गयी।

झूलना-58

**उस घर का भेद न कोउ जानै, जहँवा सेती जिव आवता है।**
**सब खोजत खोजत मूड़ गये, उस घर का भेद न पावता है॥**
**अधबीच सेती सब लोग फिरे, उक्ती सेती ठहरावता है।**
**पलटू हम ने तहकीक किया, सब और का और बतावता है॥**

**शब्दार्थ**—सेती= से। मूड़ गये= मर गये। उक्ती= उक्ति, कथन, वाणी। तहक़ीक़= जांच-पड़ताल, अनुसंधान।

**भावार्थ**—जीव जहां से आते हैं, उस स्थान का रहस्य कोई नहीं जानता। इस तथ्य को खोजते-खोजते सब मर गये, उसका पता कोई नहीं पाता है। आधे बीच से ही सब लौट पड़ते हैं। केवल वाणी के बल से अपनी-अपनी कल्पना को खड़ी करते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने अनुसंधान करके देखा, तो लगा कि सब मतवादी विभिन्न काल्पनिक बातें करते हैं।

**विशेष**—कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां सब जीव रहते हों और वहां से संसार में आते हों। जड़-चेतन दोनों नित्य हैं। दोनों सब समय रहते हैं। अविनाशी चेतन वासना-वश देह धरते-छोड़ते रहते हैं। जो जीव सब वासना छोड़ देता है, वह अपने आप में स्थित हो जाता है और सदैव के लिए मुक्त हो जाता है।

## झूलना–59

**बेद पुरान पंडित बाँचै, करता अपनी दूकान है जी।**
**अरथ को बूझि के टीका करै, माया में मन बिकान है जी॥**
**औरन को परमोध करै, खाली आपना मकान है जी।**
**पलटू कागद में खोजत है, साहिब कहीं लुकान है जी॥**

**शब्दार्थ**—परमोध= प्रबोध, ज्ञान। लुकान= छिपा।

**भावार्थ**—पंडित वेद-पुराण पढ़ते हैं और धर्म की अपनी दुकान करते हैं। मूल के अर्थ को समझकर टीका करते हैं, परन्तु उनका मन माया में बिका है। वे दूसरे को तो ज्ञान देते हैं, परन्तु उनका अपना हृदय ज्ञान से खाली है—मन पवित्र नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि लोग पोथी-पत्रा में खोजते हैं। क्या परमात्मा कहीं छिपा बैठा है ?

## झूलना–60

**और को मैं नहिं जानता हौं, निंदक साहिब मेरा है जी।**
**जिन्ह ने मेरी नजात किया, करौं कदम में डेरा है जी॥**
**धोबी होय करि साफ करै, ऐसा गुरु हम हेरा है जी।**
**पलटू उन्हैं दंडौत करै, वोही साहिब हम चेरा हैं जी॥**

**शब्दार्थ**—साहिब= स्वामी, गुरु। नजात= निजात, मुक्ति, मोक्ष, छुटकारा।

**भावार्थ**—मैं अन्य को नहीं जानता हूं। मेरी निन्दा करने वाला मेरा गुरु है। उसी ने मुझे मुक्ति दिलायी है; इसलिए उसके कदमों में झुकता हूं। मैंने अपना ऐसा गुरु खोजा है जो धोबी बनकर मेरा मल धोता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं अपने निन्दक का साष्टांग-आठों अंगों—सिर, हाथ, पैर, आंख, जांघ, हृदय, वचन और मन से प्रणाम करता हूं। मेरा निन्दक मेरा गुरु है, मैं उसका दास हूं।

## झूलना–61

**संतन की निंद न कीजिये जी, संतन की निंद में नाहिं भला।**
**चौरासी भोग वह भोगि आया, चौरासी भोगन फेरि चला॥**
**संतन को कुछ परवाह नहीं, अपने पाप सेती वह आप जला।**
**पलटू उसका जो मुँह देखै, तिस का भी मुँह फिर होय काला॥**

**शब्दार्थ**—निन्द= निन्दा। सेती= से।

**भावार्थ**—संतों की निन्दा मत करो। संतों की निन्दा करने से भलाई नहीं होगी। जीव चौरासी चक्कर का भोग कर आया है। यदि आज मन मैला करेगा तो पुनः चौरासी चक्कर में घूमेगा। संतों को तो इसकी चिन्ता नहीं रहती है कि हमें कोई क्या कहता है ? वस्तुतः निन्दक अपने मन की खराबी की आग में स्वयं जलता है। पलटू साहेब कहते हैं कि निन्दक का समर्थक भी नीची गति को जाता है।

### झूलना–62

**भजनीक जो होय सो भजन करै, भजनीक के बीच में हम नाहीं।**
**भजन में जाइ के बैठि रहै, अब कौन करै आवाजाही॥**
**लोन की डेरी फिर कौन खावै, जब जाय परी वह सिंधु माहीं।**
**पलटू कहकहा जिन्ह झाँका, उनको अब आवना क्या चाही॥**

**शब्दार्थ**—भजनीक= भजन गाकर उपदेश करने वाला। भजन= सेवा, आराधना; स्वत्व; विभाजन; आत्मस्थिति। डेरी= डली। कहकहा= क़हक़हा, खिलखिलाकर हंसना; जोर की हंसी; चीन की दीवार जो उत्तरी जातियों के आक्रमण से बचने के लिए पंद्रह सौ मील लम्बी बनवायी गयी थी। यह सात आश्चर्यों में गिनी जाती है। यहां अर्थ है आत्मस्थिति की मस्ती।

**भावार्थ**—भजन गानेवाले या कीर्तन करनेवाले वह सब करें। मैं उनके बीच का जीव नहीं हूं। मैं जाकर भजन में बैठ गया हूं। सदैव स्वतः स्वरूप में लीन हूं। अब कौन भजन–कीर्तन में आवाजाही करे ? जब नमक की डली समुद्र में गल गयी तब उसे कौन खावे ? पलटू साहेब कहते हैं कि स्वरूपस्थिति के अखंड आनन्द का जिनको निरंतर अनुभव हो रहा है, उनको अब क्या पाना शेष रह गया ?

### झूलना–63

**द्वादस आँगुर बैठे चलै, चलत अठारह जाय है जी।**
**सूते के ऊपर तीस आँगुर, चौसठि मैथुन को थाह है जी॥**
**जती तपी की आठ आँगुर, जोगी की चारि ठहराव है जी।**
**जिसके भीतर बाहर नाहीं, तेहि काल कधी नहिं खाय है जी॥**
**पलटू आठ आँगुर जाय भीतर को, वाकी देह नहीं नसाय है जी॥**

**शब्दार्थ**—आँगुर= अंगुल।

**भावार्थ**—बैठे हुए मनुष्य का बारह अंगुल, चलते हुए का अठारह अंगुल, सोने वाले का तीस अंगुल, मैथुन के समय चौसठ अंगुल, यती तथा तपस्वी का आठ अंगुल, योगी का चार अंगुल श्वास बाहर चलता है। जो मनुष्य देह के भीतर-बाहर की कल्पना छोड़कर स्वरूपलीन है, वह काल से मुक्त है। पलटू साहेब कहते हैं कि जिसका श्वास आठ अंगुल भीतर चलता है उसकी देह नष्ट नहीं होती।

**विशेष**—शब्द के अनुसार अर्थ कर दिया गया है। इसका विषय इन पंक्तियों के लेखक को अनुभूत नहीं है। स्वरूपलीन काल से मुक्त है, यह यथार्थ है, क्योंकि वह कालातीत अमर आत्मा में लीन है। आठ अंगुल श्वास भीतर चले तो उसकी देह अमर हो जाती है, यह बात समझ में नहीं आती है, क्योंकि देह सबका नश्वर है।

झूलना-64

**भूत पिसाच जो पूजत हैं, फिर फिर होवै वै भूत है जी।**
**भूत जोनि भरमत फिरैं, उनका वही आकूत है जी॥**
**गुबरैला फूल पै ना बैठे, वो जा बैठे गुह मूत पै जी।**
**पलटू कुल रीति नहीं छोड़ै, जहाँ बाप गया तहाँ पूत है जी॥**

**शब्दार्थ**—आकूत= अभिप्राय।

**भावार्थ**—जो मनुष्य भूत-पिशाच पूजते हैं, वे बारंबार भूत-पिशाच ही होते हैं। वे भूत-प्रेत की योनि में भटकते-फिरते हैं, क्योंकि उनकी मानसिकता का यही अभिप्राय है। गोबर का कीड़ा फूलों पर नहीं बैठता है। वह मल-मूत्र पर ही बैठता है। पलटू साहेब कहते हैं कि संसारी लोग अपने कुल की बुरी रीति नहीं छोड़ते। जहां पिता गया, वहीं पुत्र जाता है।

**विशेष**—भूत-प्रेत केवल भ्रम है। इनकी कोई योनि नहीं है। भूत-प्रेत पूजने वाले अज्ञान में भटकते हैं। जब भूत-प्रेत की योनि है ही नहीं तब उसमें कोई जायेगा क्या!

झूलना-65

**पंडित अच्छर को बूझि गया, फिर नहिं पोथी वह बाँचैगा।**
**भिच्छुक सेती बादसाह भया, वह नहिं भिच्छा को जाचैगा॥**

**मूरति की सूरति आप भया, मूरति आगे क्या नाचैगा।**
**पलटू जगत की चाल भूलै, जब अपने रंग में राचैगा॥**

**शब्दार्थ**—सेती= से। जांचैगा= मांगेगा।

**भावार्थ**—जब पंडित अच्छर के अभिप्राय स्वरूप अक्षय निज स्वरूप आत्मा को समझ गया, तब वह पोथियों में नहीं उलझेगा। वह तो विषय-कामना की दरिद्रता से छूटकर निष्काम स्वरूपस्थिति की गद्दी का बादशाह हो गया। अब वह सांसारिक भोगों की भीख नहीं मांगेगा। जो देवमूर्ति का स्वरूप स्वयं हो गया, वह जड़-मूर्तियों के सामने क्या नाचेगा ? पलटू साहेब कहते हैं कि जब साधक अपने आत्मभाव में लीन हो गया, तब उसकी सांसारिकता की चाल भूल जाती है।

## झूलना-66

**चोर साह का काला मुँह करिके, जंगल के बीच में सोवना जी।**
**चुपचाप अकेले बैठि रहना, दिन रात काया को सोधना जी॥**
**जहँ बापु माई की गम्म नहीं, रोवना नाहीं हँसना जी।**
**पलटू जगत से दूरि रहौ, जान बूझि नाहक क्यों फँसना जी॥**

**भावार्थ**—चोर और साहू की उपेक्षा करके जंगल में सोना, और अकेला शांत हो बैठकर रात-दिन अपने तन-मन के विकारों को निकालते रहना। स्वरूपस्थिति में माता-पिता की पहुंच नहीं है। वहां रोना-हंसना दोनों नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि सांसारिक मायाजाल से दूर रहो। जान-समझ लेने के बाद भी व्यर्थ बंधनों में क्यों फंसना ?

## झूलना-67

**चलाचली की राह मँहै, भली भला कुछ कीजिये जी।**
**आखिर को मरना ठीक हुआ, दुख नाहिं किसी को दीजिये जी॥**
**जिसमें परस्वारथ होय सकै, उस ज्ञान को घोरि के पीजिये जी।**
**पलटू कारिख को धोय डारै, चंदन का टीका लीजिये जी॥**

**शब्दार्थ**—कारिख= तन-मन-वचन की मलिनता। चंदन= सद्गुण।

**भावार्थ**—जगत चला-चली की राह है। यहां से चल देना है; इसलिए जो बन सके भलाई का काम कीजिए। अंततः शरीर और संसार आज-कल में छोड़ देना है, इसलिए किसी प्राणी को दुख न दीजिए। ऐसे ज्ञान का प्याला

घोलकर पीजिए जिससे दूसरे का कल्याण कर सको। पलटू साहेब कहते हैं कि तन, मन तथा वाणी के दुष्कर्मों को विवेक से धो डालो और सद्‌गुण रूपी चंदन का जीवन में लेपन करो।

झूलना–68

**दुरवेस उधर की बात कहौ, जिससे हुआ दुरवेस है जी।**
**कौन चीज तू देखि आया, सो बात कहौ संदेस है जी॥**
**काला पियरा या सुरख देखा, केहि रँग कौने भेष है जी।**
**पलटू वह मेरा पीर भाई, जिन्ह जाय देखा वह देस है जी॥**

**शब्दार्थ**—दुरवेस= दरवेश, फकीर, संत। सुरख= सुर्ख़, लाल। पीर= गुरु।

**भावार्थ**—हे दरवेश! जिस उद्देश्य को लेकर तुम दरवेश हुए हो, उसकी बात बताओ। तुमने क्या अनुभव किया, उसका मुझे उपदेश करो। जिसका तुमने दर्शन किया है, वह काला है कि पीला अथवा लाल है ? उसका क्या रंग तथा कैसा वेष एवं स्वरूप है ? पलटू साहेब कहते हैं कि हे भाई! जिसने आत्म–देश का अनुभव किया है, वह फकीर मेरा पीर है, गुरु है।

**विशेष**—सच्चा संत एवं फकीर मन को संकल्पशून्य कर आत्मलीन रहता है। उसमें न कोई रूप है और न रंग। वह तो प्रपंचशून्य आत्मसत्ता एवं स्व–अस्तित्व मात्र है।

# अरिल

## 20. सद्‌गुरु और संत

अरिल–1

**तिरगुन रोग प्रचंड जगत सब मरि गया।**
**औषद पीसें करम कारगर ना भया॥**
**अधिक अधिक गरुवाय दुक्ख लिये खोयगा।**
**अरे हाँ पलटू सतगुरु मिलै जो बैद नीक तब होयगा॥ 1॥**

**शब्दार्थ**—तिरगुन= त्रिगुण—रज, सत और तम। नीक= अच्छा, नीरोग।

**भावार्थ**—जड़ प्रकृति के तीनों गुणों का रोग सब देहधारियों को लगा है और वे उसी में घुल-घुल कर मरते हैं। लोग कर्मकांड के बाह्याडंबर की औषध घोटकर पीते हैं, परन्तु वह रोग दूर करने में सफल नहीं होता। बल्कि कर्मजाल में फंसकर भवरोग का बोझा अधिकाधिक बढ़ता है। इसी दुख में पड़े-पड़े सब जीव अपने को धोखे में खोते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जब सद्गुरु रूपी वैद्य मिले, तब जीव भवरोग से मुक्त होता है।

अरिल-2

**जो कोइ चाहै नाम तो नाम अनाम है।**
**लिखन पढ़न में नाहिं निःअच्छर काम है॥**
**रूप कहौ अनरूप पवन अनरेख ते।**
**अरे हाँ पलटू गैब दृष्टि से संत नाम वह देखते॥ 2॥**

**शब्दार्थ**—गैब दृष्टि= प्रपंच-शून्य दृष्टि। निःअच्छर= वर्ण-मात्रा से रहित। अनरूप= रूपरहित। अनरेख= रूप-रेख रहित।

**भावार्थ**—यदि कोई परमतत्त्व का बोध नाम के आधार पर चाहता है तो वह नाम अनाम है—नाम-रूप से परे है। वह लिखने-पढ़ने में नहीं आता है। वह वर्ण-मात्रा से परे तत्त्व है। आत्म स्वरूप को वैसे रूपरहित कहना चाहिए जैसे वायु बलवान होकर भी रूप-रेख रहित है। पलटू साहेब कहते हैं कि संत जन संकल्प-शून्य दृष्टि से आत्मसाक्षात्कार करते हैं।

**विशेष**—निज स्वरूप स्वचेतन अस्तित्व भौतिक नाम-रूप से परे है। संकल्प शांत होने पर अपने अस्तित्व का साक्षात्कार होता है।

अरिल-3

**नाम डोरि है गुप्त कोऊ नहिं जानता।**
**निःअच्छर निःरूप दृष्टि नहिं आवता॥**
**ररंकार आकार पवन को देखना।**
**अरे हाँ पलटू देखत हैं इक संत और सब पेखना॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—निःअच्छर= वर्ण-मात्रा से रहित। निःरूप= रूप से रहित। ररंकार= रमैयाराम चेतन।

**भावार्थ**—नाम एवं संज्ञा के आधार पर हम आत्मतत्त्व का बोध प्राप्त करते हैं। वह चित्तवृत्ति की शून्य अवस्था में फलित होता है। यह गुप्त भेद है। इसे बहिर्मुखियों में कोई नहीं जानता है। अपना आत्म-अस्तित्व वर्णमाला

और रूप-रंग से परे है। वह चर्मचक्षु से देखने की वस्तु नहीं है। जैसे वायु अदृश्य है वैसे आत्मा अदृश्य है। उसका आकार कहा जाय तो वह केवल ररंकार है, अर्थात रमैयाराम चेतन मात्र है। पलटू साहेब कहते हैं कि इस आत्मसाक्षात्कार दशा को कोई संत देखता है। शेष लोग तो देखने का दंभ करते हैं।

अरिल-4

**फूटि गया असमान सबद की धमक में।**
**लगी गगन में आग सुरति की चमक में॥**
**सेसनाग औ कसठ लगे सब काँपने।**
**अरे हाँ पलटू सहज समाधि की दसा खबर नहिं आपने॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—असमान= आकाश, ब्रह्मरंध्र। सबद= अनाहतनाद। सुरति= मनोवृत्ति। चमक= एकाग्रता। सेसनाग= शेषनाग। कमठ= कच्छप।

**भावार्थ**—शब्द की धमक से आकाश फट गया और सुरति की चमक से गगन में आग लग गयी। पृथ्वी को अपने ऊपर धारण करने वाले शेषनाग और कच्छप कांपने लगे। पलटू साहेब कहते हैं कि सहज समाधि की दशा यही है कि साधक उस समय संसार को भूल जाता है।

**विशेष**—ग्रंथकार कवि-हृदय हैं। शब्द की धमक है अनाहतनाद और सुरति की चमक है मन की एकाग्रता। इससे मन-मस्तिष्क के परदे हट गये, तो शेषनाग और कच्छप जो पौराणिक पृथ्वी के धारक हैं, वे कांप उठे। यह कथन का तामझाम है। अर्थ है कि काम-क्रोधादि निरस्त हो गये। सहज-समाधि में मन लीन रहता है, इसलिए यह दशा प्रपंच-शून्यता की है।

अरिल-5

**पुरजे पुरजे उड़ैं झूठ भरि ना कहै।**
**साहिब के घर बीच झुठाई ना लगै॥**
**त्यागै तन की आस कसौटी खरी है।**
**अरे हाँ पलटू तब रीझैगा राम भक्ति क्या परी है॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—भरि= मात्र, किंचित। लगै= चले। परी= व्यर्थ पड़ी।

**भावार्थ**—चाहे शरीर के पुरजे-पुरजे उड़ जायं, किन्तु किंचित भी झूठ न बोले; क्योंकि परमात्मा के घर में झुठाई नहीं चलती है। परमात्मा का घर है आत्मशांति, स्वरूपस्थिति की कसौटी खरी है। उसके लिए साधक शरीर को

रखने की आशा छोड़ देता है। पलटू साहेब कहते हैं कि तभी राम प्रसन्न होगा—आत्मा में विश्राम मिलेगा। ध्यान रहे, क्या भक्ति राह में गिरी-पड़ी वस्तु है कि उसे सहज ही उठा लो। देहाभिमान विसर्जित करने पर, जीते जी मर जाने पर स्वरूपस्थिति होती है जो सच्ची भक्ति है—'स्वस्वरूपानुसंधानं भक्तिरित्यभिधीयते' (आदि शंकराचार्य) स्वस्वरूप का अनुसंधान भक्ति कहलाता है।

## संत

### अरिल-6

**संत भये बादसाह गैब के तखत पर।**
**छत्र फिरै हरिनाम किहा तिहु लोक सर॥**
**धजा फरक्कै सुन्न अदल भी बड़ी है।**
**अरे हाँ पलटू नौबति आठौ पहर गगन में झरी है॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—गैब= ग़ैब, अदृश्य, प्रपंच-शून्य, संकल्प-शून्य, दृश्य-अभाव की दशा। सर= विजय। अदल= न्याय। नौबति= नौबत, मंगलसूचक बाजा।

**भावार्थ**—संत संकल्प-शून्यता की स्थिति रूपी तख़्त पर बैठकर बादशाह हो जाते हैं। वे तीनों लोकों को जीत लेते हैं—दृश्य मात्र का मोह छोड़ देते हैं। उनका आत्मज्ञान छत्र घूमता है। उनके मन की प्रपंच-शून्यता ही उनका ध्वजा-पताका फहराना है। उनका न्याय भी बड़ा है—जड़ दृश्य को त्यागकर स्वतः द्रष्टा स्वरूप चेतन में ठहरना। पलटू साहेब कहते हैं कि उनके हृदय-गगन में आठों पहर अखंड आनन्द रूप मंगलसूचक बाजा बजता है।

### अरिल-7

**सब में बड़े हैं संत दूसरा नाम है।**
**तिसरे दस औतार तिन्हैं परनाम है॥**
**ब्रह्मा बिसुन महेस सकल संसार है।**
**अरे हाँ पलटू सबके ऊपर संत मुकुट सरकार है॥ 7॥**

**शब्दार्थ**—नाम= सतनाम, आत्मज्ञान।

**भावार्थ**—सबसे बड़े संत हैं, वे ही सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मा का ज्ञान देते हैं; अतएव पहले संत, तब आत्मज्ञान। तीसरे नम्बर में माने गये दस

अवतार हैं। उन्हें नमस्कार है। फिर तो ब्रह्मा, विष्णु, महेश और सारा संसार ही है। पलटू साहेब कहते हैं संत सबके ऊपर सिरमुकुट हैं।

अरिल-8

**जीवन है दिन चार भजन करि लीजिये।**
**तन मन धन सब वारि संत पर दीजिये॥**
**संतहिं के सब होइ जो चाहै सो करैं।**
**अरे हाँ पलटू संग लगे भगवान संत से वे डेरैं॥ 8॥**

**शब्दार्थ**—वारि= निछावर।

**भावार्थ**—जीवन चार दिन का है। आत्मशोधन कर आत्मलीन होने की साधना करो। इसके लिए अपने तन, मन, धन एवं सर्वस्व संतों के चरणों में न्योछावर कर दो। संत से ही कल्याण का रास्ता मिलेगा। उनके उपदेश से ही मुमुक्षु का उद्धार होगा। पलटू साहेब कहते हैं कि भगवान भी संत के पीछे-पीछे घूमते हैं और उनकी शरण से अपना कल्याण चाहते हैं। वे संत से डरते हैं।

**विशेष**—श्रीमद्‌भागवत में श्री कृष्ण जी कहते हैं कि इच्छारहित, मननशील, शांत, निर्वैरी, समदर्शी संतों के पीछे मैं इसलिए घूमता हूं कि उनके चरणों की रज मेरे ऊपर पड़े और मैं पवित्र हो जाऊं। यथा—

*निरपेक्षं मुनिं शातं निर्वेरं समदर्शनम्।*
*अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यंघ्रिरेणुभिः॥ भागवत 11, 14, 16॥*

अरिल-9

**ऋद्धि सिद्धि से बैर संत दुरियावते।**
**इन्द्रासन बैकुंठ बिष्टा सम जानते॥**
**करते अविरल भक्ति प्यासा हरिनाम की।**
**अरे हाँ पलटू संत न चाहैं मुक्ति तुच्छ केहि काम की॥ 9॥**

**शब्दार्थ**—दुरियावते= भगाते हैं, हटाते हैं। अविरल= निरंतर, अखंड।

**भावार्थ**—संत ऋद्धि-सिद्धि की उपेक्षा करते हैं और उन्हें दूर खदेड़ते हैं। इंद्रासन और बैकुंठ को मल की तरह समझते हैं। वे अखंड आत्मलीनता की भक्ति करते हैं। उन्हें हर क्षण हरि नाम की प्यास रहती है। पलटू साहेब कहते हैं कि संत मुक्ति नहीं चाहते। वह तो उनके लिए तुच्छ और निरर्थक है।

**विशेष**—जो सबसे सब समय निष्काम है, वह निरन्तर मुक्त है। अब उसे बाहर से मुक्ति पाने का क्या प्रयोजन होगा? पलटू साहेब फक्कड़ी संत हैं, इसलिए वे झटके में बात कहते हैं। इससे सामान्य लोगों को भ्रम हो सकता है कि क्या वे मुक्ति नहीं मानते थे। परन्तु ध्यान रहे, वे सब समय मुक्त थे। जो पूर्ण निष्काम है, वह निरंतर मुक्त है।

### अरिल-10

**जिन्हके ज्ञान बैराग भक्ति में प्रीति है।**
**रहनी कहनी एक हारि ना जीति है॥**
**संतोषी निरवृति भजन पर सिर दिया।**
**अरे हाँ पलटू सबद बिबेकी संत आतमा बसि किया॥ 10॥**

**शब्दार्थ**—निरवृत्ति= निवृत्ति, छुटकारा।

**भावार्थ**—जिनके हृदय में आत्मज्ञान है, विषयों से वैराग्य है और सद्गुरु-भक्ति में प्रीति है, जिनकी कथनी और रहनी एक समान है; जिनके मन में न हार है और न जीत है; जो पूर्ण संतोषी तथा जगत-प्रपंच से निवृत्त हैं, और जिन्होंने आत्मलीनता रूपी भजन में अपने को समर्पित कर दिया है; पलटू साहेब कहते हैं कि वे सारासार शब्दों के विवेकी संत आत्मस्ववश जीवन्मुक्त हैं।

### अरिल-11

**आगम कहैं न संत भड़ेरिया कहत है।**
**संत न औषधि देत बैद यह करत है॥**
**झार फूँक ताबीज ओझा को काम है।**
**अरे हाँ पलटू संत रहित परपंच राम को नाम है॥ 11॥**

**शब्दार्थ**—आगम= होनहार, भविष्यकी बात। भड़ेरिया= पाखंडी। ओझा= सोखा, भुवा, बैगा। परपंच= प्रपंच।

**भावार्थ**—संत किसी का भविष्य नहीं बताते हैं। यह तो पाखंडियों का काम है। संत औषध देने का काम नहीं करते। यह वैद्यों का काम है। झाड़-फूंक करना तथा ताबीज बनाकर देना, यह ओझा का काम है। पलटू साहेब कहते हैं कि संत इन झगड़ों से रहित रामलीनता में रहते हैं।

अरिल–12

**मोह माया को त्यागि जगत से भगे हैं।**
**करि इन्द्री का दमन भजन में लगे हैं॥**
**ज्ञान बिबेक विचार रहनि में रहत हैं।**
**अरे हाँ पलटू हरि संतन की बात ऊधौ से कहत हैं॥ 12॥**

**शब्दार्थ**—रहनि= पवित्र आचरण, आत्मलीनता।

**भावार्थ**—संत माया-मोह को त्यागकर सांसारिक झगड़े से भाग खड़े हुए हैं। वे इन्द्रियों को अपने वश में करके आत्मलीनता के अभ्यास में लगे हैं। वे आत्मज्ञान, आत्मा-अनात्मा का विवेक, अनात्म का त्यागकर आत्मा में रमने की रहनी में हर क्षण रहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि इस प्रकार संतों की बात हरिजी उधो से कहते हैं।

अरिल–13

**केहू भेष में नाहिं रहै अड़बंग है।**
**देवे मंहै कुसाद खाय में तंग है॥**
**जग से रहै उदास महरमी अंत के।**
**अरे हाँ पलटू ऐसी रहनि रहै सो लच्छन संत के॥ 13॥**

**शब्दार्थ**—अड़बंग= विचित्र, बेफिक्र। कुसाद= कुशाद, उदार। महरमी= भेद जानने वाला।

**भावार्थ**—जो किसी एक वेष में न रहकर विचित्र वेष में रहता है; दूसरों को देने में उदार है और अपने जीवन पर खर्च करने में मितव्ययी है; जो संसार की चमक-दमक से उदास रहता है और अंतिम दशा—स्वरूपस्थिति का ज्ञाता तथा उसमें रमने वाला है; पलटू साहेब कहते हैं कि जो ऐसी रहनी में रहता है, उसके संत के लक्षण हैं।

**विशेष**—किसी एक वेष में न रहकर विचित्र वेष में रहना संशोधनीय है। वस्तुतः तड़क-भड़क वेष में न रहकर सादे में रहना चाहिए और एक स्थिर वेष में रहना ठीक है।

अरिल–14

**बिगत राग जो होय ज्ञान में चक्कवै।**
**तुरिया से आतीत भजन में पक्कवै॥**

**रहनी गहनी एक सबद पहिचानिये।**
**अरे हाँ पलटू ऐसा जो कोई होय गुरु करि मानिये॥ 14॥**

**शब्दार्थ**—चक्कवै= चक्रवर्ती, सम्राट।

**भावार्थ**—जो सब प्रकार के मोह से रहित है, आत्मज्ञान में लीन चक्रवर्ती सम्राट है; तुरीया से भी ऊपर उठकर स्वरूपस्थिति में पक्का दृढ़ है; जिनकी रहनी और व्यवहार एक समान है; जो नाना प्रकार के शब्दों के सार-असार को पहचानता है; पलटू साहेब कहते हैं कि यदि ऐसा कोई संत मिले, तो उसे सद्गुरु समझकर आदर दो।

अरिल-15

**आसन दृढ़ जो होय नींद आहार में।**
**अठएँ लोक की बात कहै टकसार में॥**
**आठौ पहर असोच रहै दिल खुसी पर।**
**अरे हाँ पलटू तन मन धन सब वार डारिहौं उसी पर॥ 15॥**

**शब्दार्थ**—टकसार= निर्णय, सच्चा, सत्य। असोच= चिंतारहित।

**भावार्थ**—जो आसन में दृढ़ है, भोजन और नींद में संयमी है, आठवें लोक की बात का सही निर्णय करता है; जो चौबीसों घंटे चिंतारहित तथा प्रसन्नचित्त रहता है, पलटू साहेब कहते हैं कि मैं अपने तन, मन, धन उसी के चरणों में न्योछावर कर दूंगा।

**विशेष**—आठवें लोक की बात संभवतः आठवां चक्र सुरति कमल हो, जो काल्पनिक है। आठवें लोक का सही रूप कहा जा सकता है पांच ज्ञानेन्द्रियां, मन और बुद्धि से परे स्वस्वरूप चेतन। वही आत्मा है और वही अपना लोक है।

अरिल-16

**दुख सुख संपति विपति मान अपमान है।**
**सत्रु मित्र भूपाल सो एक समान है॥**
**कनक काँच ना भेद ज्ञान में तिच्छना।**
**अरे हाँ पलटू ऊधौ से हरि कहैं संत के लच्छना॥ 16॥**

**शब्दार्थ**—तिच्छना= तीक्ष्ण, तेज, प्रवीण।

**भावार्थ**—दुख, सुख, संपत्ति, विपत्ति, मान, अपमान, शत्रु, मित्र, प्रजा, राजा, कनक और कांच में समान बुद्धि रखने वाले तथा आत्मज्ञान में प्रवीण

होना संत के लक्षण हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि हरिजी ऐसा ऊधो से कहते हैं।

अरिल–17

**संत हमारे प्रान रहौं मैं साथ में।**
**तीन लोक सब रहै संत के हाथ में॥**
**मोहूँ डारै बेचि उजुर मैं ना करौं।**
**अरे हाँ पलटू हरि ऊधौ से कहैं संत से मैं डेरौं॥ 17॥**

**शब्दार्थ**—उजुर= उज्र, आपत्ति, विरोध।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि हरिजी ने ऊधो से कहा कि संत मेरे प्राण हैं। मैं सदा संतों के साथ रहता हूं। संत के हाथों में तीनों लोक और सब कुछ रहता है। संत चाहे तो वे मुझे दूसरों के हाथों में बेच दें; अतएव मैं संत के विपरीत कुछ भी नहीं कहता हूं। मैं संतों से डरता रहता हूं।

अरिल–18

**संत हमारी देह और ना कोऊ है।**
**ढरै पसीना संत ढरै मोर लोहू है॥**
**दोनों एक सरीर देखत कै दुइ धरौं।**
**अरे हाँ पलटू हरि ऊधौ से कहैं दुष्ट राई करौं॥ 18॥**

**शब्दार्थ**—लोहू= रक्त। राई= राजा, श्रेष्ठ।

**भावार्थ**—हरि जी ऊधो से कहते हैं कि संत मेरी देह हैं और संत के समान मेरा कोई नहीं है। जहां संत का पसीना गिरता है वहां मेरा रक्त गिरता है। मैं और संत देखने में दो हैं, वस्तुतः एक शरीर हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संतजन दुष्ट को उपदेश देकर उसे श्रेष्ठ मनुष्य बना देते हैं।

अरिल–19

**संत का मैं संत मोर अंतर ना तनिक है।**
**संत बिना मैं जैसे फनि बिनु मनि कहै॥**
**लछमी मोर सरीर सो दासी संत की।**
**अरे हाँ पलटू हरि ऊधो से कहैं बात यह तंत की॥ 19॥**

**शब्दार्थ**—फनि= सर्प। मनि= मणि। तंत= तत्त्व, सत्य।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि हरि जी ने ऊधो से कहा कि मैं संत का हूं और संत मेरे हैं। हम दोनों में थोड़ा भी अंतर नहीं है। मैं संतों के बिना वैसे नहीं जी सकता जैसे मणि के बिना सर्प नहीं जी सकता। लक्ष्मी मेरा शरीर है, परन्तु वह संतों की दासी है। यह सब सत्य है।

अरिल-20

**तिल को तेल बसाय फूल के संग में।**
**सलिता गंगा होत परै जब गंग में॥**
**लोहा कंचन होय पारस के परस से।**
**अरे हाँ पलटू मूरख कथते ज्ञान संत के दरस से॥ 20॥**

**शब्दार्थ**—बसाय= सुगन्धित होता है। सलिता= सरिता, नदी।

**भावार्थ**—तिल का तेल फूलों के साथ सुगन्धित हो जाता है। साधारण नदियां गंगा में मिलकर गंगा हो जाती हैं। लोहा पारस के स्पर्श से सोना हो जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मूर्ख भी संतों के दर्शन-सत्संग पाकर आत्मज्ञान का प्रवक्ता हो जाता है।

अरिल-21

**संतन किया बिचार पुजबे को दोय है।**
**की हरि की हरि भक्त और न कोय है॥**
**सब देवन के देव बड़े तिहुँ काल में।**
**अरे हाँ पलटू और देव को पूजि परै जंजाल में॥ 21॥**

**शब्दार्थ**—जंजाल= उलझन।

**भावार्थ**—संतों ने विचार किया कि पूजने योग्य दो हैं; एक हरि और दूसरा हरिभक्त। इनके अलावा कोई पूज्य नहीं है। संत-भक्त तीनों काल में सब देवों के देव हैं। अन्य देव को पूजकर तो उलझन में पड़ना है।

**विशेष**—संत, भक्त या प्राणी के अलावा कोई हरि नहीं मिल सकता, जिसकी पूजा की जा सके। वस्तुतः हरि प्राणि समूह है और उसमें संत-भक्त उच्च हैं।

अरिल-22

**हरिजन हरि हैं एक सबद के सार में।**
**जो चाहैं सो करैं संत दरबार में॥**

**तुरत मिलावै नाम एक ही बात में।**
**अरे हाँ पलटू लाली मेंहदी बीच छिपी है पात में॥ 22॥**

**शब्दार्थ**—हरिजन= संत, भक्त, ज्ञानी।

**भावार्थ**—हरिजन, ज्ञानी संत जन ही हरि हैं। हरि शब्द का सार यही है। संत दरबार में वे जो चाहें वह करें। वे एक ही बात में सतनाम के अर्थ स्वरूप आत्मबोध तुरंत देते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मेंहदी के हरे पात में जैसे लाली छिपी है, वैसे आत्मा में परमात्मत्व छिपा है।

अरिल–23

**जो तू चाहै नाम बैठु सतसंग में।**
**संत मिला जो होय केहू के रंग में॥**
**उनसे सब कछु होय फलै में फूल है।**
**अरे हाँ पलटू हरि जन हरि में रहै बास ज्यों फूल है॥ 23॥**

**शब्दार्थ**—नाम= सतनाम, सतनाम का तात्पर्य आत्मबोध।

**भावार्थ**—यदि तुम सतनाम का अर्थस्वरूप आत्मबोध चाहते हो, तो विवेकवान संतों के सत्संग में बैठो। यदि विवेकवान संत मिले हैं, वे किसी भी रूप में हों, उन्हीं से कल्याण की सारी बातें होंगी। फूल से फल होता है और अंततः फूल मानो फल ही में समा जाता है। संत से आत्मज्ञान मिलता है और संत आत्मज्ञान में समा जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संतजन हरि में उसी प्रकार लीन रहते हैं जिस प्रकार फूल में उसकी सुगंध।

**विशेष**—हरि आत्मा है। संतजन आत्मलीन रहते हैं। यही उनकी हरि में लीनता है।

## 21. वैराग्य

अरिल–24

**तुरी अठारह लाख अमीरी बलख की।**
**दिया मर्द ने छोड़ आस सब खलक की॥**
**चिथरा पहिरि लँगोटी साका कै गया।**
**अरे हाँ पलटू रहा अखाड़े का यार फकीरी लै गया॥ 24॥**

**शब्दार्थ**—तुरी= घोड़ा; सवार। खलक= ख़ल्क़, जीव समूह, जगत। साका= कीर्ति का संवत।

**भावार्थ**—बलख बुखारे का बादशाह जिसके पाठ अठारह लाख घोड़े और घुड़सवार थे, बलख बुखारे की अमीरी थी, वह वैराग्य-वीर पूरे संसार के भोगों की आशा त्यागकर फकीर हो गया। उसने चिथड़े की लंगोटी पहनकर विरक्ति ले ली और अपनी कीर्ति का संवत चला गया। पलटू साहेब कहते हैं कि वह साधु के अखाड़े का यार था। उसने सच्ची फकीरी की।

अरिल-25

**गोरख डारा कूप मँहै लै दरब को।**
**बारह बरस सुकदेव तजा ना गरभ को॥**
**दत्तात्रय सनकादि माया तजी केतनी।**
**अरे हाँ पलटू बड़े खिलाड़ी यार हमारे ओतनी॥ 25॥**

**शब्दार्थ**—दरब = द्रव्य, धन। केतनी = कितने ही, बहुत। ओतनी = सगे भाई।

**भावार्थ**—गोरखनाथ ने धन को कुएं में डाल दिया। शुकदेव संसार को दुख रूप समझकर माता के गर्भवास से बारह वर्ष तक नहीं निकले। दत्तात्रय, सनक, सनंदन, सनातन, सनत्कुमार आदि कितने वैराग्यवान माया को त्यागकर विरक्तिमार्ग अपनाये। पलटू साहेब कहते हैं कि ये हमारे सगे भाई विरक्त वैराग्यवान बड़े खेलाड़ी यार हैं।

**विशेष**—कहते हैं कि गोरखनाथ जी महाराज अपने शिष्यों के सहित चल रहे थे। उनका सेवक शिष्य अपने झोले की बड़ी चिन्ता रखता था। यह बात गोरखनाथ जी समझ गये। उन्होंने उसके झोले से अशर्फियां निकालकर कुएं में डाल दीं और अपने शिष्य से कहा कि अब तू झोले की चिंता से मुक्त हो गया।

शुकदेव जी बारह वर्ष की उम्र में ही विरक्त हो गये; तो अतिशयोक्ति में कहा गया कि वे जगत को दुखरूप समझकर माता के गर्भ में बारह वर्ष तक रह गये। उसके बाद पैदा हुए।

पलटू साहेब कहते हैं कि ये सभी विरक्त फकीर मेरे ओतनी हैं, सगे भाई हैं।

## 22. कच्चा वैराग्य

अरिल-26

**मरै मँहै जिव डरै जिवै की चाहना।**
**बिपति मँहै दुख होय सम्पति मँह गावना॥**

**सबसे रहै पुजाय पूजना कष्ट है।**
**अरे हाँ पलटू कंचन काँच से भेद फकीरी नष्ट है॥ 26॥**

**शब्दार्थ**—मरै मँहै= मरने से।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि मरने से डरता है, जीते रहने की इच्छा है, विपत्ति आने पर दुखी होता है, संपत्ति पाने पर प्रसन्न होकर उसकी डींग हांकता है, अपने को सबसे पुजवाने की चेष्टा है, किन्तु दूसरे को पूजने में कष्ट है और कंचन तथा कांच में अंतर मानता है, तो फकीरी नष्ट है।

**विशेष**—कंचन और कांच में व्यवहारतः भेद तो है ही, किन्तु विवेकवान कंचन को अंततः मिट्टी समझते हैं, इसलिए उसके लिए लालच नहीं करते हैं।

अरिल–27

**अस्तुति से खुश होय निंदा में क्रोध है।**
**मित्र सेती है भाव दुष्ट से विरोध है॥**
**सादी में सुख होय गमी में रोवना।**
**अरे हाँ पलटू हर्ष सोक जो रहै फकीरी खोवना॥ 27॥**

**शब्दार्थ**—सादी= शादी, खुशी, अनुकूलता; विवाह।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि अपनी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न होता है, निन्दा सुनकर क्रोधित होता है, मित्र से मोह है, वैरी के प्रति क्रोध है। अनुकूलता में, आनन्द में फूलता है और प्रतिकूलता में रोता है। इस प्रकार जिसके जीवन में हर्ष–शोक है, उसकी फकीरी खो गयी है।

## 23. भेष

अरिल–28

**अटकि रहे सब जाय माया का चहला भारी।**
**बूड़ैं औ उतरायँ पंडित ज्ञानी ब्रह्मचारी॥**
**ये कलऊ के भक्त ब्याज दे करते बट्टा।**
**अरे हाँ पलटू बटुरि बटुरि सब स्यार सिंह को मारै ठट्टा॥ 28॥**

**शब्दार्थ**—चहला= कीचड़, दलदल। कलऊ= कलियुग। बट्टा= दलाली। बटुरि= इकट्ठा होकर।

**भावार्थ**—माया का दलदल भयंकर है। उसमें वेषधारी फंसते हैं। पंडित–ज्ञानी और ब्रह्मचारी उसी में डूबते–उतराते हैं। ये कलियुगी वेषधारी ब्याज पर अपने रुपये देते हैं, माल खरीदने–बेचने में दलाली का कमीशन खाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जैसे बहुत–से सियार इकट्ठे होकर सिंह की हंसी उड़ावें, वैसे ये कलियुगी वेषधारी वैराग्यवानों की खिल्ली उड़ाते हैं।

### अरिल–29

**सस्ते मँहै अनाज खरीद कै राखते।**
**महंगी में डारैं बेचि चौगुना चाहते॥**
**देखो यह बैराग दाम को गाड़ते।**
**अरे हाँ पलटू जम की बात है दूर हाकिम अब डाँड़ते॥ 29॥**

**शब्दार्थ**—दाम= रुपये। जम= यम, वासना। हाकिम= सरकारी अधिकारी।

**भावार्थ**—ये कच्चे साधुवेषधारी अन्न पैदा होने के समय में उसे सस्ते में खरीदकर रखते हैं। जब अन्न महंगा होता है तब उसे बेचते हैं और लाभ चौगुना चाहते हैं। इनका वैराग्य तो देखो, रुपये को जमीन में गाड़कर रखते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि यमराज तो उन्हें समय से दंड देंगे। वर्तमान में तो सरकारी अधिकारी ही इनको दंडित करते हैं।

### अरिल–30

**करते बट्टा ब्याज कसब है जगत का।**
**माया में है लीन बहाना भगति का॥**
**तनिक कहीं नहिं छुई गया बैराग है।**
**अरे हाँ पलटू जनमें पूत कपूत लगाया दाग है॥ 30॥**

**शब्दार्थ**—कसब= कस्ब, धनोपार्जन, व्यवसाय, पेशा।

**भावार्थ**—दलाली का कमीशन खाना, ब्याज पर पैसा देना संसारी मनुष्य का पेशा है। यदि साधु ऐसा करे तो वह माया में लीन है। उसका भक्ति–वैराग्य बहाना मात्र है। उसके जीवन में वैराग्य का थोड़ा भी स्पर्श नहीं हुआ है। पलटू साहेब कहते हैं कि साधु–वेष में शिष्य नहीं, वैराग्य–वेष में दाग लगाने वाले कुशिष्य हैं।

### अरिल–31

**पगरी धरा उतारि टका छः सात का।**
**मिला दुसाला आय रुपैया साठ का॥**

**गोड़ धरे कछु देहि मुड़ाए मूड़ के।**
**अरे हाँ पलटू ऐसा है रुजगार कीजिये ढूँढ़ि के॥ 31॥**

**शब्दार्थ**—पगरि= पगड़ी। टका= रुपया। दुसाला= दुशाला, उत्तम ऊनी शाल। रुजगार= रोजगार, व्यापार।

**भावार्थ**—छह रुपये की पगड़ी सिर से उतारकर धर दी और साधु वेष धर लिया तो साठ रुपये का दुशाला मिल गया। सिर मुड़ाकर साधु-वेष धर लेने पर लोग उनके पैर छूते हैं और कुछ वस्त्र-द्रव्य आदि भी देते हैं। पलटू साहेब नकली वेषधारियों से व्यंग्य में कहते हैं कि यह तुम्हारा साधु-वेष करने का व्यापार अच्छा है। इसे खोज कर कीजिए।

अरिल-32

**मसक्कत ना ह्वै सकी मुड़ाया मूड़ तब।**
**सेंति मेंति में खाय मिला औसान अब॥**
**तब नागा ह्वै लिहिन रहे ना काम के।**
**अरे हाँ पलटू मारि पीटि के खाहिं सो बेटा राम के॥ 32॥**

**शब्दार्थ**—मसक्कत= मशक्कत= मेहनत, परिश्रम। सेतिमेंति= निःशुल्क, मुफ्त। औसान= सुख, सहज में।

**भावार्थ**—घर-गृहस्थी में रहकर मेहनत न कर सके, तो मूड़ मुड़ाकर नागा-साधु हो गये। अब सहज और मुफ्त में खाने-पीने को मिल रहा है। जब घर में काम-काज न कर सके तब नागा बाबा बन गये। पलटू साहेब कहते हैं कि अब ये राम के भक्त बने जनता को मारपीट कर खाते हैं।

अरिल-33

**करामाति नट खेल अंत पछितायगा।**
**चटक मटक दिन चारि नरक में जायगा॥**
**भीर भार से संत भागि के लुकत हैं।**
**अरे हाँ पलटू सिद्धाई को देखि संत जन थुकत हैं॥ 33॥**

**शब्दार्थ**—करामाति= करामात, चमत्कार, कार्य-कारण व्यवस्था से रहित घटना। लुकत हैं= छिपते हैं।

**भावार्थ**—चमत्कार दिखाना जालसाजी नट-खेल के समान है। यह सब करनेवाला धार्मिक वेषधारी अंत में पश्चाताप करेगा। वह चार दिन की भीड़ और धन की चमक-दमक में चौंधियाकर अंत में नरक जायेगा। संत तो

भीड़भाड़ से हटकर एकांत सेवन करते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि सिद्धि का संत जन तिरस्कार करते हैं।

अरिल-34

**झूठा सब संसार झूठे पतियात हैं।**
**दुइ झूठे इक ठौर नरक में जात हैं॥**
**जहँवा सुनैं पखंड तहाँ सब धावते।**
**अरे हाँ पलटू संतन केरे पास कोऊ नहिं आवते॥ 34॥**

**शब्दार्थ**—पतियात = विश्वास करते हैं। पाखंड = दिखावा, जालसाजी।

**भावार्थ**—संसार के अधिक लोग झूठी एवं क्षणिक वस्तुओं के इच्छुक हैं। इसलिए उनको धोखा देने वाले झुठाई का जाल फैलाते हैं और उसी में सब विश्वास करते हैं। इस प्रकार दो झूठे एक जगह मिलकर नरक में जाते हैं। जहां पाखंड एवं दिखावा की बात होती है, वहीं सब दौड़े जाते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि विवेकवान संतों के पास ऐसे लोगों में कोई नहीं आता है।

अरिल-35

**जक्त भक्त कछु नाहिं बीच में रहि गये।**
**ज्यों अधमारा साँप केहू ओर ना भये॥**
**बेंचि बेंचि हरि नाम दाम लै लै धरै।**
**अरे हाँ पलटू सबद न बूझै तनिक फकीरी क्या करै॥ 35॥**

**शब्दार्थ**—दाम = रुपये, धन।

**भावार्थ**—ऐसे लोग न तो जगत में रहकर गृहस्थी का शुद्ध आचरण किये और न विरक्त होकर शुद्ध भक्ति-वैराग्य किये, अपितु बीच में ही रह गये। जैसे अधमरा सांप किसी तरफ के न भये। ऐसे धार्मिक सिद्ध नामधारी भगवान का नाम बेच-बेचकर धन इकट्ठा करते हैं। ऐसे लोग निर्णय शब्दों को थोड़ा भी नहीं समझना चाहते, तो उनका साधु वेष क्या अच्छा फल देगा ?

## 24. चेतावनी

अरिल-36

**क्या लै आया यार कहा लै जायगा।**
**संगी कोऊ नाहिं अंत पछितायगा॥**

**सपना यह संसार रैन का देखना।**
**अरे हाँ पलटू बाजीगर का खेल बना सब पेखना॥ 36॥**

**शब्दार्थ**—पेखना= पेखन, प्रेक्षण, तमाशा, पाखंड।

**भावार्थ**—मित्र! जन्मते समय क्या लेकर आये हो और शरीर छोड़ते समय क्या लेकर जाओगे? याद रखो, तुम्हारा कोई साथ नहीं देगा, अतएव तुम्हें अंत में पश्चाताप करना पड़ेगा। रात में सोते समय जैसे सपने देखते हैं, वैसे इस संसार का दृश्य है। पलटू साहेब कहते हैं कि बाजीगर का खेल जैसे दिखावा मात्र होता है, वैसे तुम्हारा सारा भौतिक ऐश्वर्य तमाशा मात्र है।

अरिल–37

**जीवन कहिये झूठ साँच है मरन को।**
**मूरख अजहूँ चेति गहो गुरु सरन को॥**
**मास के ऊपर चाम चाम पर रंग है।**
**अरे हाँ पलटू जैहैं जीव अकेले कोउ ना संग है॥ 37॥**

**शब्दार्थ**—मरन= मरण, मृत्यु।

**भावार्थ**—जीवन लुप्त हो जायेगा, इसलिए इसे झूठा कहना चाहिए; और मरना परम सच्चाई है, जिसके बाद यहां का कुछ अपना नहीं होगा। हे भोले! आज भी सावधान होकर सद्गुरु की शरण ग्रहण कर। तेरा अपना माना गया शरीर मांस का लौंदा है। मांस के ऊपर चाम है और चाम पर रंग चढ़ा है। पलटू साहेब कहते हैं कि जीव संसार से अकेला ही जायेगा। उसका कोई साथ देनेवाला नहीं है।

अरिल–38

**भजि लीजै हरि नाम सोई तो नफा है।**
**आवैगा जब काल तेही दिन रफा है॥**
**बाजीगर को ढोल तमासे सब गया।**
**अरे हाँ पलटू बिगरि गया जब नाच नचनियाँ रहि गया॥ 38॥**

**शब्दार्थ**—रफा= रफ़ा, दूर किया हुआ; दूर जा पड़ेगा।

**भावार्थ**—हरि नाम का भजन कर लो, आत्मचिंतन कर अंतर्मुख हो जाओ। यही जीवन का लाभ है। जिस दिन मृत्यु आयेगी, तुम अपना माने हुए सब कुछ से दूर जा पड़ोगे। बाजीगर ने ढोल बजाया और सब लोग इकट्ठे

होकर उसका तमाशा देखने आ गये। पलटू साहेब कहते हैं कि बाजीगर का सारा खेल समाप्त हो गया, तब खेलाड़ी मात्र रह गया। इसी प्रकार जीव का सारा खेल मौत आने पर समाप्त हो जायेगा और जीव अकेला चल देगा।

### अरिल-39

**सुरनर मुनि इक समय सबै मरि जाहिंगे।**
**राजा रंक फकीर काल धै खाहिंगे॥**
**तीनि लोक सब डेरै भीम की हाँक में।**
**अरे हाँ पलटू जोधा भीम समान मिलै हैं ख़ाक में॥ 39॥**

**शब्दार्थ**—डेरै= डरते थे। जोधा= योद्धा। खाक= ख़ाक, मिट्टी।

**भावार्थ**—देवता, मनुष्य, मुनि आदि सब एक दिन मरते हैं। राजा हो या दरिद्र, सबको काल पकड़ खाता है। भीम की हांक देने पर तीन लोक के लोग डरते थे। पलटू साहेब कहते हैं कि भीम के समान योद्धा भी धूल में मिल जाते हैं।

### अरिल-40

**भूलि रहा संसार काँच की झलक में।**
**बनत लगा दस मास उजाड़ा पलक में॥**
**रोवन वाला रोया आपनी दाह से।**
**अरे हाँ पलटू सब कोई छेंके ठाढ़ गया किस राह से॥ 40॥**

**शब्दार्थ**—दाह= संताप, मोहजनित पीड़ा। छेकें ठाढ़= घेरकर खड़े।

**भावार्थ**—संसार के लोग कांच की चमक-दमक को हीरा मानकर भूले हैं। शरीर के बनने में दस महीने लगे, परन्तु मौत ने उसे पलक मारते उजाड़ फेंका। उसके लिए रोनेवाले अपनी मोहजनित पीड़ा से रोते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि सभी स्वजन तो उसे घेरकर खड़े थे, किन्तु वह किस रास्ते से निकल गया, कोई पता नहीं पाया।

### अरिल-41

**माया ठगिनी बड़ी ठगे यह जाति है।**
**बचे न इह से कोय लगी दिन राति है॥**
**कौड़ी नाहीं संग करोरिन जोरि कै।**
**अरे हाँ पलटू गे राजा रंक फकीर लँगोटी छोरि कै॥ 41॥**

**शब्दार्थ**—करोरिन= करोड़ों।

**भावार्थ**—माया बड़ी ठगिनी है। यह सबको ठगती जाती है। इससे कोई बचता नहीं है। यह रात-दिन सबके पीछे ठगने के लिए लगी रहती है। लोग जानते हैं कि अंत में यहां से जाते समय एक कौड़ी भी साथ नहीं जायगी, परन्तु वे करोड़ों की संपत्ति जोड़ते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि राजा, रंक और फकीर लंगोटी यहीं छोड़कर चले जाते हैं।

**विशेष**—माया जड़ है। वह क्या ठगेगी ? वस्तुतः हम उसमें मोहित होते हैं, इसलिए स्वयं ठगाते हैं।

### अरिल-42

**कच्चा महल उठाय कच्चा सब भवन है।**
**दस दरवाजा बीच झँकता कवन है॥**
**कच्ची रैयत बसै कच्ची सब जून है।**
**अरे हाँ पलटू निकरि गया सरदार सहर अब सून है॥ 42॥**

**शब्दार्थ**—कच्चा महल= शरीर। रैयत= प्रजा, इन्द्रियां। जून= समय, दिन का आधा भाग।

**भावार्थ**—शरीर रूपी कच्चा महल उठाया गया है। सभी शरीर कच्चे भवन हैं। ध्यान दो, इस दस दरवाजे के भवन शरीर में रहकर देखने-जानने वाला कौन है ? यह चेतन आत्मा है जो अविनाशी है। शरीर-भवन की प्रजा इन्द्रियां हैं, वे भी कच्ची हैं। यहां तक कि सभी समय अनात्म पदार्थ कच्चे हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जब शरीर का सरदार चेतन आत्मा निकल जाता है, तब शरीर-शहर सूना हो जाता है।

### अरिल-43

**हाथ गोड़ सब बने नाहिं अब डोलता।**
**नाक कान मुख ओही नाहिं अब बोलता॥**
**काल लिहिसि अगुवाय चलै ना जोर है।**
**अरे हाँ पलटू निकरि गया असवार सहर में सोर है॥ 43॥**

**शब्दार्थ**—अगुवाय= आगे आकर। असवार= सवार, जीव। सहर=शहर।

**भावार्थ**—जीव के निकल जाने पर हाथ-पैर तो बने हैं, परन्तु वे स्वयं हिलते-डुलते नहीं हैं। नाक, कान तथा मुख वे ही हैं, परन्तु न वे सूंघते हैं, न

सुनते हैं और न बोलते हैं। काल आगे आकर जीव को ले गया। किसी का बल नहीं लगा कि उसे रोक ले। पलटू साहेब कहते हैं कि जीव-सवार निकल गया। नगर में रोना चल रहा है।

### अरिल-44

**आलम का बाच्छाह दुहाई मुलुक में।**
**हाथ जोरि सब खड़े हकूमत खलक में॥**
**तेल फुलेल लगाय जरकसी पाग है।**
**अरे हाँ पलटू आखिर होना खाक लील का दाग है॥ 44॥**

**शब्दार्थ**—आलम= संसार, जनसमूह। बाच्छाह= बादशाह। दुहाई= पुकार, प्रताप, ऐश्वर्य। खलक=संसार, मनुष्य जाति। जरकसी= ज़रकशी, कलाबत्तू का काम। लील का दाग= नील का दाग, कलंक।

**भावार्थ**—जनसमूह का बादशाह जिनका देश में ऐश्वर्य और प्रताप है। मनुष्यों पर जिनका शासन है और लोग जिनके सामने हाथ जोड़कर खड़े रहते हैं। वे शरीर में सुगंधित तेल लगाते हैं और बेलबूटे से शोभायमान पगड़ी बांधते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि अंत में उन्हें भी मिट्टी में मिलना है। उन्होंने असंयम करके अपने मन में कलंक का दाग लगा लिया।

### अरिल-45

**आया मूँठी बाँधि पसारे जायगा।**
**छूछा आवत जात मार तू खायगा॥**
**किते बिकरमाजीत साका बँधि मरि गये।**
**अरे हाँ पलटू राम नाम है सार सँदेसा कहि गये॥ 45॥**

**शब्दार्थ**—साका= संवत।

**भावार्थ**—मनुष्य मूठी बांधकर जनमा है और अंत में हाथ पसारकर जायेगा। आते भी खाली हाथ, और जाते भी खाली हाथ; किन्तु यहां की माया के मोह में पड़कर दुष्कर्म किया तो इसके परिणाम में दुख भोगेगा। विक्रमादित्य जैसे कितने सम्राट अपना संवत चलाकर मर गये। पलटू साहेब कहते हैं कि मानो उन्होंने भी यह संदेश दिया कि रामनाम ही जीवन में सार है—जिसका नाम राम है उस आत्मा में पूर्ण विश्राम पा जाना, आत्मराम हो जाना जीवन का फल है।

अरिल–46

**जो जनमा सो मुआ नाहिं थिर कोइ है।**
**राजा रंग फकीर गुजर दिन दोइ है॥**
**चलती चक्की बीच परा जो जाइ कै।**
**अरे हाँ पलटू साबित बचा न लोइ गया अलगाइ कै॥ 46॥**

**शब्दार्थ**—लोई= लोग।

**भावार्थ**—जो प्राणी जन्म लेता है, वह मरता है। संसार में कोई स्थिर होकर नहीं रहता। राजा हो, दरिद्र हो या फकीर हो, दो दिन गुजरकर सब चले जाते हैं। जनम-मरण की चक्की में जो पड़ा, उसमें से कोई देह-सहित नहीं रहा। सब देह छोड़कर चले गये।

अरिल–47

**माया यार फकीर कँहै जंजाल है।**
**सांप खिलौना करै एक दिन काल है॥**
**मांछी मधु लै धरै छोरि कोइ खाइगा।**
**अरे हाँ पलटू सिंह करै जो जतन स्यार होइ जायगा॥ 47॥**

**शब्दार्थ**—जतन= संग्रह।

**भावार्थ**—हे मित्र! माया फकीर के लिए भवबंधन है। जो सांप को खिलौना बनाकर उसका खेल करेगा। उसको वह एक दिन काट खायेगा। मधुमक्खियां मधु संचय करती हैं, परन्तु उसे अन्य मनुष्य निकालकर खा लेगा। यदि सिंह संग्रह करता है, तो सियार हो जायेगा।

अरिल–48

**टोप टोप रस आनि मक्खी मधु लाइया।**
**इक लै गया निकारि सबै दुख पाइया॥**
**मोको भा बैराग ओहि को निरखि कै।**
**अरे हाँ पलटू माया बुरी बलाय तजा मैं परखि कै॥ 48॥**

**शब्दार्थ**—टोप-टोप= बूंद-बूंद। बलाय= बला, विपत्ति, दुख।

**भावार्थ**—मधुमक्खियां वनस्पतियों से बूंद-बूंद रस लाकर मधु बनाती हैं। कोई मनुष्य आया और उसे निकाल ले गया। इससे सारी मक्खियों को दुख हुआ। इस बात को देखकर मुझे वैराग्य हो गया। पलटू साहेब कहते हैं

कि माया को भयंकर दुखदायी जानकर और उसे परखकर मैंने उसका त्याग कर दिया।

अरिल-49

**फूलन सेज बिछाय महल के रंग में।**
**अतर फुलेल लगाय सुन्दरी संग में॥**
**सूते छाती लाय परम आनन्द है।**
**अरे हाँ पलटू खबरि पूत को नाहिं काल कौ फन्द है॥ 49॥**

**शब्दार्थ**—फुलेल= सुगंधित तेल।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि रंगमहल में फूलों की शय्या बिछा-कर शरीर और वस्त्रों में इतर तथा सुगंधित तेल लगाकर और सुन्दरी युवती को छाती से लगाकर सोये, बड़ा आनन्द माने हैं, पलटू साहेब कहते हैं कि परन्तु इन बच्चों को पता नहीं है कि यह आत्मा के लिए काल की फांसी है।

अरिल-50

**कलिया नान-पुलाव पेट भरि खाइ कै।**
**सीस मँहै सराब चिराग जराइ कै॥**
**चीरे बन्द लगाय गले में सोवते।**
**अरे हाँ पलटू लगे फिरिस्ते आय पूत तब रोवते॥ 50॥**

**शब्दार्थ**—कलिया= भूनकर-रसेदार पकाया हुआ मांस। नान-पुलाव= मांस-भात मिला व्यंजन, मांसोदन। चीरेबंद= विशेष बुनावट का वस्त्र। फिरिस्ते= फ़रिश्ता, ईश्वर-दूत, तात्पर्य में मृत्यु।

**भावार्थ**—कलिया और नान-पुलाव पेट भरकर खाकर, सिरहने शराब का दीपक जलाकर और गले में विशेष प्रकार की बुनावट वाला कपड़ा डाल कर सोते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जब मृत्यु सामने आ गयी, तब रोने लगे।

अरिल-51

**झूठ साच कहि दाम जोरि कै गाड़ने।**
**औषधि कूटहि रोज जिये के कारने॥**
**जीयै बरष हजार आखिर को मरैगा।**
**अरे हाँ पलटू तन भी नाहीं संग कहा लै करैगा॥ 51॥**

**शब्दार्थ**—दाम= धन।

**भावार्थ**—सांच-झूठ बोलकर धन जोड़े और जमीन में गाड़े, नित्य औषध कूटकर खाते हैं जिससे लम्बे समय तक जीवित रहें। यदि कोई हजार वर्ष भी जी जाय, तो भी अंत में तो मरना ही है। पलटू साहेब कहते हैं कि शरीर भी साथ चलने वाला नहीं है, तब अन्य वस्तुएं रखकर क्या करेगा?

## 25. वैराग्य, स्वरूपस्थिति और वीरता

अरिल–52

**खाला के घर नाहिं भक्ति है राम की।**
**दाल भात है नाहिं खाये के काम की॥**
**साहिब का घर दूर सहज ना जानिये।**
**अरे हाँ पलटू गिरे तो चकनाचूर बचन को मानिये॥ 52॥**

**शब्दार्थ**—खाला= ख़ाला, माता की बहिन, मौसी।

**भावार्थ**—राम की भक्ति मौसी का घर नहीं है कि वहां जाकर दस दिन गुलछर्रे उड़ा आओ। वह खाने का दाल-भात भी नहीं है। आत्मस्थिति रूपी साहेब का घर दूर है। वह सब कुछ त्याग से मिलता है। उसे सहज मत समझिये। यदि उस मार्ग पर चलकर गिरे, तो चकनाचूर हो जाओगे। पलटू साहेब कहते हैं कि यह मेरी बात मान लो।

अरिल–53

**समुझि बूझि पगु धरै मरे की चाल है।**
**सिर के मोल बिकाय फकीरी ख्याल है॥**
**दूध छठी का जाय तनिक ना मानते।**
**अरे हाँ पलटू साहिब का घर दूर खिलौना जानते॥ 53॥**

**शब्दार्थ**—चाल= रहनी। दूध छठी का= छठी का दूध एक मुहावरा है; इसका अर्थ होता है कड़ी मेहनत, इतनी मेहनत पड़ना कि बचपन का सुख याद आ जाय।

**भावार्थ**—वैराग्य पथ पर समझ-बूझकर पैर रखना चाहिए। यह मृत्यु की रहनी है। फकीरी ख्याल में जीना सिर अर्पित करके साधना करना है। वैराग्य पथ पर चलना कठोर तप है। उसे थोड़ा नहीं समझना चाहिए। पलटू

साहेब कहते हैं कि स्वरूपस्थिति विषयासक्ति से सर्वथा परे है। लोग उसे खिलौना समझते हैं।

अरिल-54

**पहले कबर खुदाय आसिक तब हूजिये।**
**सिर पर कफ्फन बाँधि पाँव तब दीजिये॥**
**आसिक को दिन राति नाहिं है सोवना।**
**अरे हाँ पलटू बेदर्दी मासूक दर्द कब खोवना॥ 54॥**

**शब्दार्थ**—कबर= कब्र। आसिक= आशिक़, प्रेमी, अनुरक्त। बेदर्दी= दया रहित। मासूक= माशूक़, प्रियतम, स्वरूपस्थिति, आत्मा।

**भावार्थ**—पहले अपने माने गये शरीर की कब्र खुदा लो, तब स्वरूप-स्थिति के प्रेमी बनो—पहले शरीर का मोह सर्वथा त्यागकर वैराग्य के पथ पर पैर रखो। अपने सिर पर पहले कफन बांध लो तब मोक्ष पथ पर पांव रखो। स्वरूपस्थिति के प्रेमी को रात-दिन सावधान रहना है, उसे कहीं मोह की झपकी न लगे। आत्मा रूपी प्रियतम बेदर्द है। वह मोह करने की थोड़ी भी सुविधा नहीं देता है। तुम मोह कब खोओगे ?

अरिल-55

**जो तुझको है चाह सजन को देखना।**
**करम भरम दे छोड़ि जगत का पेखना॥**
**बाँध सुरति की डोरि सब्द में पिलैगा।**
**अरे हाँ पलटू ज्ञान ध्यान के पार ठिकाना मिलैगा॥ 55॥**

**शब्दार्थ**—सजन= प्रियतम, आत्मा। देखना= साक्षात्कार। पेखना= दिखावा।

**भावार्थ**—यदि तुम्हें आत्मसाक्षात्कार की चाह है, तो कर्मकांड, बाहर से परमात्मा पाने का भ्रम और दिखावा छोड़ दो। जब तुम अपनी मनोवृत्ति को स्वरूपज्ञान परिचायक निर्णय शब्दों में लगाओगे पलटू साहेब कहते हैं कि तब वाचिक आत्मज्ञान तथा उसके अनुमान से ऊपर उठकर स्व-स्वरूप में ही स्थित हो जाओगे।

अरिल-56

**छोड़ौं न दरबार इसिम पर मरौंगा।**
**सिफति करौं दिन राति टारै ना टरौंगा॥**

**जिव मेरो बरु जाय हारिहौं जनम को।**
**अरे हाँ पलटू तेरो अब कहलाय कहावौं कवन को॥ 56॥**

**शब्दार्थ**—इसिम= इस्म, नाम, संज्ञा, तात्पर्य में गुरु का नाम। सिफति= सिफ़त, विशेषता, गुण, लक्षण, स्वभाव, गुणगान।

**भावार्थ**—मैं सद्गुरु का दरबार नहीं छोड़ूंगा। उनके नाम पर अपनी जान देने के लिए तैयार रहूंगा। रात-दिन गुरु का गुणानुवाद करूंगा। उनके द्वार से हटाने पर भी नहीं हटूंगा। मेरे प्राण भले चले जायं, परन्तु सद्गुरु के चरणों में अपना जीवन समर्पित कर दूंगा। पलटू साहेब कहते हैं कि हे सद्गुरु! मैं आपका दास कहलाता हूं, फिर अब दूसरे किसका दास कहलाऊंगा?

अरिल-57

**आठ पहर की मार बिना तरवार की।**
**चूके सो नहिं ठौर लड़ाई धार की॥**
**उसही से यह बनै सिपाही लाग का।**
**अरे हाँ पलटू पड़ै दाग पर दाग पंथ बैराग का॥ 57॥**

**शब्दार्थ**—लाग का= लगन का, लगाव का, परम शांति के विरही का।

**भावार्थ**—मन को निर्मल तथा स्ववश करने की साधना का युद्ध बिना तलवार के आठ पहर की मार है—चौबीस घंटे का घमासान है। यह तेज धार की लड़ाई है। जो इस युद्ध में असावधान हो गया, उसको शांति का स्थान नहीं मिलेगा। जो लगनशील साधक-योद्धा होगा, उसी से मन को जीतने का काम बनेगा। जैसे युद्ध-क्षेत्र में लड़ने वाले योद्धा के हाथों में दाग पर दाग पड़ते हैं, वैसे वैराग्य पथ में चलने वाले साधकों के मन में सावधानी पर सावधानी बढ़ती जाती है।

अरिल-58

**कड़ुवा प्याला नाम पिया सो ना जरै।**
**देखा देखी पिवै ज्वान सो भी मरै॥**
**धर पर सीस न होय उतारै भुइँ धरै।**
**अरे हाँ पलटू छोड़ै तन की आस सरग पर घर करै॥ 58॥**

**शब्दार्थ**—धर= धड़। सरग= स्वर्ग, आत्मशांति।

**भावार्थ**—सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मज्ञान का कड़वा प्याला जो पीता है, वह मोह-शोक में नहीं जलता है। जो ज्वान-योद्धा दूसरे की नकल करके वैराग्य के पथ में आता है, वह पुनः पतित हो जाता है। धड़ पर सिर न रखे, उसे उतारकर जमीन पर रख दे—देहाभिमान पूर्णतया मिटा दे। पलटू साहेब कहते हैं कि शरीर की आशा छोड़कर स्वरूपस्थिति रूपी स्वर्ग पर अपना स्थान बनावे।

### अरिल-59

**भक्ति करै कोइ सूर जक्त से तोरि कै।**<br>
**ज्ञान लिये समसेर लड़ै झकझोरि कै॥**<br>
**रहै खेत पर ठाढ़ भक्ति की डेर मँहै।**<br>
**अरे हाँ पलटू झूठा टिकै न कोइ राम के घर मँहै॥ 59॥**

**शब्दार्थ**—समसेर=शमशीर, तलवार। डेर=डर, भय।

**भावार्थ**—कोई शूर-वीर साधक संसार का मोह छोड़कर भक्ति करता है। वह आत्मज्ञान की तलवार लेकर मन से झकझोरकर लड़ता है। भक्ति का भय रखकर कि वह छूट न जाय, युद्ध क्षेत्र में अड़ा रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मस्थिति में वह नहीं ठहर सकता, जो असत अनात्म पदार्थों का मोही है।

### अरिल-60

**राम के घर की बात कसौटी खरी है।**<br>
**झूठा टिकै न कोय आजु की घरी है॥**<br>
**जियतै जो मरि जाय सीस लै हाथमें।**<br>
**अरे हाँ पलटू ऐसा मर्द जो होय परै यहि बात में॥ 60॥**

**शब्दार्थ**—राम के घर की बात=स्वरूपस्थिति की दशा।

**भावार्थ**—स्वरूपस्थिति में अविचल भाव में वह ठहर सकता है जो वैराग्य की खरी कसौटी में टिक सके। वर्तमान में अनुभव के आधार पर कहना पड़ता है कि इसमें असत-अनात्म पदार्थों का मोह रखने वाला कोई नहीं ठहर सकता। जो साधक जीते जी मर जाय—सारी अहंता-ममता छोड़ दे और अपना सिर अपने हाथ में लेकर एवं जीवन की आशा छोड़कर मन के विकारों से युद्ध करे, वही सफल होगा। पलटू साहेब कहते हैं कि जो ऐसा वैराग्य-वीर हो, वह इस स्वरूपस्थिति की बात में पड़े।

अरिल–61

**सबद लिहे तरवारि म्यान है ज्ञान का।**
**दुरमति मुरचा खोय मसकला ध्यान का॥**
**सतसंगति की ओटि मूठि है नामकी।**
**अरे हाँ पलटू रहै हाथ में लगी समय पर काम की॥ 61॥**

**शब्दार्थ**—मसकला= मांजने का औजार। ओटि= ओट, आड़ा; आधार, शरण।

**भावार्थ**—निर्णयपूर्ण आत्म परिचायक शब्द तलवार है। आत्मज्ञान की म्यान है। ध्यान का मसकला है जिससे दुर्बुद्धि का मुरचा रगड़कर साफ हो जाता है। सत्संग की शरण है और सतनाम की मुठिया है। पलटू साहेब कहते हैं कि यह हाथ में लगी रहे, तो समय पर काम देगी–मन के बवंडर को साधक काट सकेगा।

अरिल–62

**साहिब के घर बीच गया जो चाहिये।**
**सिर को धरै उतारि कदम को नाइये॥**
**जियते जी मरि जाय सोई बहुरायगा।**
**अरे हाँ पलटू जेकरे जिव की चाह सोई भगि जायगा॥ 62॥**

**शब्दार्थ**—साहिब के घर= आत्मस्थिति। बहुरायेगा= लौटेगा, वापस आयेगा।

**भावार्थ**—जो स्वरूपस्थिति के अविचल घर में अपना ठहराव चाहे, वह अपने सिर को उतारकर जमीन पर धर दे, तब पांव उस तरफ रखे। जो जीते जी मर जायेगा, सारी अहंता–ममता छोड़ देगा, वही अपने घर—स्वरूपस्थिति में लौटेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि जिसको देह में रहकर दुनिया के सारहीन भोगों को भोगने की लालसा है, वह सत्संग–साधना के अखाड़े से भाग खड़ा होगा।

अरिल–63

**बार न बाँकै मोर कोई क्या करैगा।**
**रूठै तीनिउँ लोक नाहिं मन डेरैगा॥**
**रच्छा करते आप दिये दोउ हस्त हैं।**
**अरे हाँ पलटू सिर पर गोबिदनंद खड़े समरत्थ है॥ 63॥**

**शब्दार्थ**—डेरैगा= डरेगा। गोविन्दनन्द= श्री गोविंद साहेब; ये पलटू साहेब के गुरु थे।

**भावार्थ**—मेरा बाल बांका नहीं होगा। मेरा कोई क्या करेगा? तीनों लोक नाखुश हो जाय, तो भी मेरा मन भय नहीं करेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरे समर्थ गुरुदेव श्री गोविन्द साहेब मेरे सिर पर खड़े हैं और वे अपने दोनों हाथों से मेरी रक्षा करते हैं।

अरिल-64

**धरौ फूँकि के पाँव कुसंग ना कीजिये।**
**भजन मँहै भँग होय सोच ना लीजिये॥**
**कोउ ना पकरै फेट करै जो त्याग है।**
**अरे हाँ पलटू माया संग्रह करै भक्ति में दाग है॥ 64॥**

**शब्दार्थ**—फेट= फेंट, फेंटा, कमर में लपेटी धोती।

**भावार्थ**—हे सुख चाहनेवाले! जीवन में फूंक-फूंक कर पैर रखो, गलत काम न करो और कुसंगति न करो। कुसंग करने से भजन में भंग होगा। कुसंग से बचकर चिंतारहित रहो। यदि तुम त्याग-मार्ग से चलोगे, तो तुम्हारा कोई फेंटा नहीं पकड़ सकता है, तुम्हें कोई गिरा नहीं सकता है। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि माया-संग्रह किया जाता है, तो यह भक्ति एवं साधना में दाग लगाना है।

**विशेष**—संग्रह सेवा के लिए हो। केवल संग्रह और सेवा न करना पाप बटोरना है।

अरिल-65

**मन में बिनती करै डगमगी छोड़ि दै।**
**जरै मरै अब बनै सिंधोरा हाथ लै॥**
**मरै कहै जब चली सगुन तब क्या करै।**
**अरे हाँ पलटू सती बटोरै बस्तु जरे से जब डेरै॥ 65॥**

**शब्दार्थ**—सिंधोरा= सेंदुरदान। सगुन= शकुन, शुभ घड़ी।

**भावार्थ**—मन विनम्र रखे और उसकी डगमगाहट छोड़कर साधना में दृढ़ रहे। सती जब हाथ में सेंदुरदान लेकर सती होने के लिए निकल पड़ी है,

तो उसके जलकर मर जाने से ही उसका मंगल है। जब वह जल मरने के लिए चल पड़ी, तब शुभ घड़ी देखने की क्या आवश्यकता है ? पलटू साहेब कहते हैं कि सती उस दशा में वस्तुओं का संग्रह करती है, जब वह जलने से डर जाती है।

**विशेष**—सती के नाम पर स्त्रियों का पति की लाश के साथ जलने की प्रथा अज्ञानमूलक और पापपूर्ण है। यहां तो उसका उदाहरण मात्र है। बात विरक्त के लिए है। विरक्त मरने के लिए साधु वेष लेता है। विरक्त वह हो जो विनम्र, दृढ़ और त्याग से रह सके। विरक्त का मन मर जाना चाहिए, माया-मोह से रहित हो जाना चाहिए।

अरिल-66

**हरि चर्चा से बैर संग वह त्यागिये।**
**अपनी बुद्धि नसाय सबेरे भागिये॥**
**सरबस वह जो देइ तो नाहीं काम का।**
**अरे हाँ पलटू मित्र नहीं वह दुष्ट जो द्रोही राम का॥ 66॥**

**शब्दार्थ**—सबेरे= शीघ्र। सरबस= सब कुछ।

**भावार्थ**—जो आध्यात्मिक चर्चा एवं सत्संग से वैर रखता हो, उसका साथ छोड़ दीजिए। उसकी संगत से तो अपनी बुद्धि नष्ट होगी। इसलिए उससे शीघ्र हट जाइये। यदि वह सब सांसारिक सुविधा देता है, तो वह निरर्थक है। पलटू साहेब कहते हैं कि वह मित्र नहीं, शत्रु है जो आध्यात्मिक ज्ञान एवं सत्संग का विरोधी है।

अरिल-67

**आसन दृढ़ ह्वै रहै जगत से हारना।**
**निद्रा बसि में करै भूख को मारना॥**
**काम क्रोध को मारि आपु को खोवना।**
**अरे हाँ पलटू पाँव पसारे यार मौज से सोवना॥ 67॥**

**भावार्थ**—अपनी शांति स्थिति में दृढ़ होकर रहे, निकट-दूर के सभी मनुष्यों से हार मानकर रहे। उनसे लड़े न। भूख और नींद पर संयम रखे। काम-क्रोधादि को मारकर अपने देहाभिमान को खो दे। पलटू साहेब कहते हैं कि हे मित्र ! इस रहनी में रहकर निश्चिंत आनन्द में सोवो।

### अरिल-68

**संत सोई ह्वै जाय संजम में जो रहै।**
**गया आपु को भूलि खबर अब को कहै॥**
**आगि के बीच पतंग बहुरि ना होन की।**
**अरे हाँ पलटू परी सिंधु में जाय डेरी जब लोन की॥ 68॥**

**शब्दार्थ**—संजम= संयम। डेरी= डली।

**भावार्थ**—संत वही हो जाता है जो अपने मन-इन्द्रियों पर पूर्ण संयम कर लेता है। वह देहाभिमान को भूलकर आत्मलीन हो जाता है, फिर उसकी खबर बताने कौन आवे ? पतंग आग के बीच में पड़ गया तो वह जीवन में लौट नहीं सकता और नमक-डली जल में पड़ी तो वह लौट नहीं सकती। पलटू साहेब कहते हैं कि वैसे जो सारे अनात्म का अहंकार छोड़कर आत्मलीन हो गया, वह बढ़-बढ़ कर बातें नहीं करता।

### अरिल-69

**माया औ बैराग दोऊ में बैर है।**
**लिये कुल्हाड़ी हाथ मारता पैर है॥**
**किया चहै बैराग मया में जायगा।**
**अरे हाँ पलटू जो कोइ माहुर खाय सोई मरि जायगा॥ 69॥**

**शब्दार्थ**—माहुर= विष।

**भावार्थ**—माया और वैराग्य, इन दोनों में वैर है। वैरागी माया संग्रह में लगा है तो वह अपने हाथ से अपने पैर में कुल्हाड़ी मारता है। करना चाहता है वैराग्य और माया में डूबा है। पलटू साहेब कहते हैं कि कोई भी मनुष्य जो विष खायेगा, वही मर जायेगा।

**विशेष**—विरक्त व्यक्तिगत जीवन के लिए अधिक संग्रह न करे। समूह की सेवा के लिए संग्रह हो तो वह खर्च होता रहे।

### अरिल-70

**लोकलाज जनि मानु बेद कुल कानि को।**
**भली बुरी सिर धरौ भजौ भगवान को॥**
**हँसि है सब संसार तो माख नमानिये।**
**अरे हाँ पलटू भक्त जक्त से बैर चारों जुग जानिये॥ 70॥**

**शब्दार्थ**—कानि= लोक लज्जा; मर्यादा, लिहाज। माख= अपमान जनित क्रोध, अमर्ष।

**भावार्थ**—लोक, वेद, कुल, जाति आदि की मर्यादा, लज्जा आदि को मत मानो। यदि कोई तुम्हें भला-बुरा कहे, तो उसको नम्रतापूर्वक सह लो और भगवान का भजन करो—आत्मचिंतन में रहो। सारा संसार तुम्हारी हंसी उड़ाये तो तुम इसको लेकर अमर्ष न करो। पलटू साहेब कहते हैं कि भक्त और जगत का वैर सब समय रहा है। संसारी बुद्धि के लोग सब समय साधकों की निन्दा करते रहे हैं।

अरिल-71

**देव पित्र दै छोड़ि जगत क्या करैगा।**
**चला जा सूधी चाल रोइ सब मरैगा॥**
**जाति बरन कुल खोइ करौ तुम भक्ति को।**
**अरे हाँ पलटू कान लीजिये मूँदि हँसै दे जक्त को॥ 71॥**

**शब्दार्थ**—पित्र= मृत पित्र।

**भावार्थ**—काल्पनिक जड़ देवता और मृत पित्र की पूजा छोड़ दे। संसार के लोग तेरा क्या बिगाड़ लेंगे ? तू अपने सदाचार और आत्मज्ञान के सीधे पथ पर चलता चल। संसार के लोग रो-रो कर मरते हैं, तो उन्हें मरने दे। जाति, वर्ण और कुल का पाखंड तथा लज्जा त्यागकर तू अपने निर्मल भक्ति के आचरण में चल। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि लोग तेरी हंसी उड़ाते हैं तो तू अपने कान मूंद ले। संसारियों को हंसने दे।

अरिल-72

**केतिक जुग गये बीति माला के फेरते।**
**छाला परि गये जीभ राम के टेरते॥**
**माला दीजै डारि मनै को फेरना।**
**अरे हाँ पलटू मुँह के कहे न मिलै दिलै बिच हेरना॥ 72॥**

**शब्दार्थ**—हेरना= खोज करना, विवेक से स्थिर करना।

**भावार्थ**—माला फेरते तुम्हारे कितने ही युग बीत गये। राम-राम कहते-कहते तेरी जीभ में छाले पड़ गये। अतएव तुम माला छोड़ दो, अपितु अपने मन को जड़ दृश्य से फेरो। पलटू साहेब कहते हैं कि मुंह से कहने से राम नहीं मिलता है। राम तो हृदय में बैठा है, अतएव अपने हृदय में खोजो।

अरिल-73

**तीरथ ब्रत में फिरे बहुत चित लाइ कै।**
**जल पखान को पूजि मुए पछिताइ कै॥**
**बस्तु न बूझी जाय अपाने हाथ में।**
**अरे हाँ पलटू जो कुछ मिलै सो मिलै संत के साथ में॥ 73॥**

**शब्दार्थ**—वस्तु= सत्य तत्त्व, आत्म स्वरूप।

**भावार्थ**—व्रत-उपवास किये, मन में उत्साहित होकर तीर्थों में घूमे और वहां पानी-पत्थर की पूजा करते-करते थक गये और मन का पश्चाताप बना रहा। वस्तु अपने हाथ में होते हुए भी बिना उसके विशेषज्ञ द्वारा बताये समझ में नहीं आती है। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मज्ञान और साधना की अक्ल विवेकवान संतों की संगत में मिलती है।

अरिल-74

**केतिक फिरै उदास बनै बन धावते।**
**केतिक साधैं जोग खाक सिर नावते॥**
**केतिक कथनी कथैं केतिक आचार में।**
**अरे हाँ पलटू कोउ न पावै पार बड़े दरबार में॥ 74॥**

**शब्दार्थ**—खाक= मिट्टी, राख।

**भावार्थ**—परम सत्य की खोज में कितने लोग उदास होकर वन-वन में दौड़ते रहते हैं। कितने लोग सिर से पैर तक राख लगाकर योग साधते हैं। कितने लोग वक्तव्य देने में लगे रहते हैं और कितने लोग बाह्याचार में हरदम लगे रहते हैं; किन्तु पलटू साहेब कहते हैं कि इन बाहरी बातों से उस स्वरूप स्थिति रूपी बड़े दरबार की समझ किसी को नहीं मिलती है।

अरिल-75

**सुपना यह संसार लागता आइ कै।**
**चले जुवा में हारि मनुष तन पाइ कै॥**
**देखत सोना लगै सकल जग काँच है।**
**अरे हाँ पलटू जीवन कहिये झूठ तो मरना साँच है॥ 75॥**

**शब्दार्थ**—सुपना= स्वप्न।

**भावार्थ**—यह संसार स्वप्नवत है, किन्तु अज्ञानवश यथार्थ लगता है। इसी धोखे में, कल्याणदायी मनुष्य तन पाकर भी भोग के जुआबाजी में जीवन को हार चले। पलटू साहेब कहते हैं कि देखने में तो सोना लगता है, परन्तु सारा संसार कांच है। जीवन झूठा है। मरना सच्चा है।

### अरिल–76

**तीसो रोजा किया फिरे सब भटकि कै।**
**आठो पहर निमाज मुए सिर पटकि कै॥**
**मक्के में भी गये कबर में खाक है।**
**अरे हाँ पलटू एक नबी का नाम सदा वह पाक है॥ 76॥**

**शब्दार्थ**—पहर= तीन घंटे का समय। नबी= हजरत मुहम्मद।

**भावार्थ**—रमजान के दिनों में तीसों दिन उपवास रहे और मक्का–मदीना भटक आये। चौबीसों घंटों की नमाज अदा करते रहे और मस्जिद में सिर पटक–पटक कर थक गये। मक्का भी गये। कब्रों को सिर झुकाये; किन्तु उसमें तो मिट्टी है। पलटू साहेब कहते हैं कि नबी का बताया एक अल्लाह का नाम ही पवित्र है।

**विशेष**—बाहरी कर्मकाण्ड में अध्यात्म की इति श्री मत समझो। अल्लाह को समझो। वह तुम्हारे दिल–दरगाह में मौजूद है।

### अरिल–77

**ना बाम्हन ना सूद्र न सैयद सेख है।**
**हम तुम कोऊ नाहिं बोलता एक है॥**
**दूजा कोऊ नाहिं यही तहकीक है।**
**अरे हाँ पलटू लाख बात की बात कहा हम ठीक है॥ 77॥**

**शब्दार्थ**—तहकीक= तहक़ीक़, परीक्षित, सत्य।

**भावार्थ**—न कोई ब्राह्मण है, न शूद्र है, न सैयद है और न शेख है। मेरे और तुम्हारे में कोई अंतर नहीं है। सबके भीतर बैठे बोलने वाले चेतन आत्मा एक समान हैं। इसके अलावा कोई दूसरा नहीं है जिसे पाना है, यही परीक्षित सत्य है। पलटू साहेब कहते हैं कि यही लाख बातों में सच्ची बात है। मैंने ठीक कहा है।

अरिल–78

**डाँड़ी पकरे ज्ञान छिमा कै सेर है।**
**सुरत सबद से तौल मनै का फेर है॥**
**भला बुरा इक भाव निबाहै ओर है।**
**अरे हाँ पलटू संतोष की करै दुकान महाजन जोर है॥ 78॥**

**शब्दार्थ**—ओर= आदि, अंत।

**भावार्थ**—आत्मज्ञान की डांड़ी पकड़े, क्षमा का सेर रखे, मनोवृत्ति और निर्णय शब्दों से तौलकर मन के चक्कर को शांत करे। अनुकूल-प्रतिकूल जो कुछ आवे समता भाव से उन्हें निपटाता रहे और अंत तक शांति की रहनी में रहे। पलटू साहेब कहते हैं कि संतोष का व्यापार करे। वही बड़ा पूंजीपति है।

अरिल–79

**करामात सब झूठ बिस्वास को थापना।**
**जैसे स्वान को हाड़ लोहू है आपना॥**
**कहे सेती का मिलै रांड़ कै गावना।**
**अरे हाँ पलटू जो जस करै सो मिलै आपनी भावना॥ 79॥**

**शब्दार्थ**—करामात= चमत्कार। रांड़= राड़, निकम्मा, हीन, नीच, कायर, भगोड़ा, मूर्ख। गावना= प्रलाप।

**भावार्थ**—सारे चमत्कार असत्य होते हैं। छली-कपटी लोग जनता के मन में उसका अंधविश्वास आरोपित करते हैं। जैसे कुत्ता सूखी हड्डी चूसता है, किन्तु उसे अपने जबड़े से निकले हुए रक्त का स्वाद मिलता है और वह मानता है कि हड्डी से मिल रहा है; वैसे मनुष्य को अपने ही कर्मों के फल मिलते हैं, किन्तु उसे लगता है कि किसी भगवान, भवानी अथवा सिद्ध की कृपा से मिलते हैं। किसी के कहने से क्या मिलेगा ? चमत्कार तो मूर्खों का प्रलाप है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो मनुष्य जैसी मनोभावना रखता और कर्म करता है उसको वैसा ही फल मिलता है।

अरिल–80

**लाखों मौनी फिरैं लाखों बाघम्बरी।**
**उर्धमुखी औ नखी लाखों लोहलंगरी॥**

**लाखों जल में पड़े ( लाखों ) धूरि को छानते।**
**अरे हाँ पलटू जामें राजी राम सो कोउ नहिं जानते॥ 80॥**

**शब्दार्थ**—लोह लंगरी= लोह की जंजीर में अपने तन को बांधकर तप करने वाले।

**भावार्थ**—लाखों मौनी घूमते हैं, लाखों बाघ का चाम ओढ़कर घूमते हैं। लाखों ऊपर मुख करके तप करने वाले हैं। नख बढ़ाकर तथा लोह की जंजीर पहनकर तप करने वाले लाखों हैं। लाखों जल में पड़कर तप करने वाले और शरीर में धूल लगाकर तप करने वाले हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जिससे अंतरात्मा को पूर्ण शांति मिले, उस तथ्य को ये कोई नहीं जानते।

अरिल–81

**हरि कै दास कहाय जतन ना कीजिये।**
**बाकी दीजै छोड़ि पेट भरि लीजिये॥**
**जतन करैगा जोई सोई पछितायगा।**
**अरे हाँ पलटू जोगवै आग चकोर पंख जरि जायगा॥ 81॥**

**शब्दार्थ**—जतन= संग्रह। जोगवै= स्थिर रखे।

**भावार्थ**—हरि भक्त कहलाकर संग्रह न करे। अपना जीवन-निर्वाह करे, और शेष धन को परिवार या समाज की सेवा के लिए छोड़ दे। जो अधिक संग्रह करेगा वह अंत में पश्चाताप करेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि चकोर आग को अपने पास स्थिर रखेगा, तो उसके पंख जल जायेंगे।

**विशेष**—यह मान्यता है कि चकोर चंद्रमा का प्रेमी है। वह आग को चंद्रमा का टुकड़ा मानकर उसे निगल जाता है और जलता नहीं। लेकिन अगर वह आग अपने पास रखेगा तो उसके पंख जल जायेंगे। इसी प्रकार साधक अपने निर्वाह से अधिक संग्रह करेगा, तो वह साधना नहीं कर पायेगा, अपितु पुनः माया में लिपट जायेगा।

अरिल–82

**चक्की चलती देखि दिया मैं रोय है।**
**पीस गया संसार बचा न कोय है॥**
**अधबीचे में परा कोऊ ना निरबहा।**
**अरे हाँ पलटू बचिगा कोऊ संत जो खूँटे लगि रहा॥ 82॥**

**शब्दार्थ**—चक्की= मोह-माया। खूंटे= स्वसत्ता, आत्मस्वरूप।

**भावार्थ**—माया-मोह की चलती हुई चक्की देखकर मैं रो दिया। संसार के सभी जीव इसमें पिस रहे हैं। कोई इससे बचता नहीं है। जो थोड़ा सावधान हुआ वह भी आधे बीच से पुनः लौटकर माया-मोह में पड़ गया। कोई इससे पूरा नहीं निकल पाता। पलटू साहेब कहते हैं कि कोई वह बिरला संत इस माया-मोह की चक्की से पूर्ण निकल गया जो आत्मलीन हो गया।

**विशेष**—आत्मा अपने को भूलकर माया-मोह की चक्की में पिस रहा है। जो पूर्ण सावधान होकर अपने में लौट आया, वह बच गया। माया-मोह की चक्की का मूल खूंटा तो आत्मा स्वयं है। वह अपनी भूल से उसको चला रहा है। जब अपने में सावधान होकर ठहर गया तब माया मोह समाप्त हो गया।

अरिल-83

**डेरै लोक की लाज परलोक नसायगा।**
**माया के परसंग ज्ञान मिटि जायगा॥**
**तजै न भोग बिलास चाहता जोग है।**
**अरे हाँ पलटू बिना बिचार बिबेक भेष में रोग है॥ 83॥**

**शब्दार्थ**—डेरै= डरे, भय करे। जोग= योग।

**भावार्थ**—जो मनुष्य संसार से डरेगा और लोक-लाज में पड़ा रहेगा, उसका कल्याण कार्य नष्ट हो जायगा। माया-मोह में लगे रहने से आत्मज्ञान मिट जायेगा। चाहते तो हैं योग-वैराग्य, परंतु विषयों का भोग-विलास नहीं छोड़ते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि विचार-विवेक न होने से साधुवेषधारी भी मानसिक रोग में पड़े रहते हैं।

अरिल-84

**तीरथ संत समाज आत्मा गंग है।**
**तट है सील सनेह रु दया तरंग है॥**
**निरमल नीर गंभीर ज्ञान धारा बहै।**
**अरे हाँ पलटू गुरु दरियाव नहाय तो दुरमति ना रहै॥ 84॥**

**शब्दार्थ**—दरियाव= दरिया, नदी, समुद्र।

**भावार्थ**—संत समाज तीर्थ है, आत्मा गंगा है, शील और स्नेह तट हैं, और दया तरंग है। आत्मज्ञान के निर्मल जल की गंभीर धारा बह रही है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो मनुष्य गुरुज्ञान के दरिया में स्नान करता है, उसमें दुर्बुद्धि नहीं रह जाती है।

अरिल–85

**साफी छानै सुरति अमल हरि नाम का।**
**और अमल सब झूठ नाहिं है काम का॥**
**काया कूँड़ी करै पवन का घोटना।**
**अरे हाँ पलटू पीवै प्याला प्रेम ज्ञान घर लोटना॥ 85॥**

**शब्दार्थ**—साफी= छनना, छानने का वस्त्र। सुरति= मनोवृत्ति। अमल= कार्य; आचरण; अधिकार, शासन; नशा; आदत; प्रभाव, भोगकाल; समय; यहां का तात्पर्य है नशा।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति की छननी से हरिनाम एवं आत्मज्ञान का नशा छाने। शरीर को कूड़ी बनावे और प्राण की घोटनी से घोटे और प्रेम का प्याला पीये। इसके अतिरिक्त सारे नशा निरर्थक हैं, झूठ में फंसाने वाले हैं। प्रेम-प्याला पीकर आत्मज्ञान की स्थिति में विश्राम करे।

अरिल–86

**पहिले ह्वै वैराग भक्ति तब कीजिये।**
**सतसंग कै जोग ज्ञान तब लीजिये॥**
**ऐसे उपजै ज्ञान भक्ति को पाइ कै।**
**अरे हाँ पलटू लै जा उपरै मारि ठोक ठहराय कै॥ 86॥**

**शब्दार्थ**—जोग= योग। उपरै= ऊपर, माया से अतीत दशा, पारगत।

**भावार्थ**—साधक को पहले विषयों से वैराग्य होना चाहिए। इसके बाद सद्गुरु-संतों में भक्ति होनी चाहिए। फिर सत्संग के प्रभाव से मनोनिग्रह रूप योग सिद्ध होता है। मन एकाग्र होने से आत्मज्ञान का साक्षात्कार होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे साधक! मन को ठोक-ठहराकर उसे मोह-माया से ऊपर उठा ले।

अरिल–87

**जहाँ न जप तप नेम ज्ञान ना ध्यान है।**
**पानी पवन अकास नाहिं ससि भान है॥**

**जोग जुक्ति ना सुरति नाहिं दिन रात है।**
**अरे हाँ पलटू मन बुधि चित ना जाय तहाँ की बात है॥ 87॥**

**शब्दार्थ**—ससि= शशि, चंद्रमा।

**भावार्थ**—जिस स्थिति में जप, तप, नियम, ज्ञान, ध्यान, पानी, पवन, आकाश, चंद्रमा, सूर्य, योग, युक्ति, सुरति, दिन, रात आदि कुछ नहीं है और जहां मन, बुद्धि तथा चित्त की गति नहीं है, वहां की बात है।

**विशेष**—यह है संकल्प-शून्य स्वरूपस्थिति दशा। इसमें स्वरूपस्थिति के अलावा कुछ नहीं रहता।

अरिल-88

**नवनि गरीबी दया भक्ति का मूल है।**
**इतना गुन ना होय बास बिनु फूल है॥**
**बड़ा भया किस काम करै हंकार है।**
**अरे हाँ पलटू मीठ कूप जल पिवै समुंदर खार है॥ 88॥**

**शब्दार्थ**—नवनि= विनम्रता। गरीबी= सादगी।

**भावार्थ**—विनम्रता, सादगी और दयाभाव भक्ति का मूल है। यदि उपर्युक्त सद्गुण न हो तो वह वैसे सारहीन है जैसे सुगंध रहित फूल। यदि अहंकार करता है तो बड़ा होना किस काम का। पलटू साहेब कहते हैं कि छोटे जलाशय, कुआं का मीठा जल सब पीते हैं, बड़ा समुद्र किस काम का जिसका जल खारा है।

## 26. मन

अरिल-89

**मन ना पकरा जाय बहादुर ज्वान है।**
**करत रहै खुरखुन्द बड़ा सैतान है॥**
**ऐसा यार हरीफ रहत मन हलक में।**
**अरे हाँ पलटू उड़ता कोस हजार पच्छ बिनु पलक में॥ 89॥**

**शब्दार्थ**—खुरखुंद= हलचल, बदमाशी। हरीफ= हरीफ़, समान व्यवसायी, शत्रु, धूर्त। हलक= हलक़, गला, कंठ। पच्छ= पंख।

**भावार्थ**—मन पकड़ने में नहीं आता है। यह वीर जवान है। यह बदमाशी करता रहता है। यह महा शैतान है। पलटू साहेब कहते हैं कि यह

ऐसा धूर्त मित्र है कि कंठ में ही रहता है और पलक मात्र में बिना पंख के हजार कोस उड़ जाता है।

अरिल–90

**काम क्रोध बसि किहा नींद अरु भूख को।**
**लोभ मोह बसि किया दुक्ख औ सुक्ख को॥**
**पल में कोस हजार जाय यह डोलता।**
**अरे हाँ पलटू वह ना लागा हाथ जौन यह बोलता॥ 90॥**

**शब्दार्थ**—डोलता= भटकता, भागता।

**भावार्थ**—काम, क्रोध, नींद, भूख, लोभ, मोह, दुख और सुख को वश में कर लिया; परन्तु मन पल मात्र में हजार कोस भाग जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि देह में रहकर जो बोलता है, उस चेतन आत्मा का बोध न हुआ, तो सब अधूरा ही है।

**विशेष**—आत्मज्ञान हो और मन वश में हो तब अध्यात्म की पूर्णता है।

अरिल–91

**नापै चारिउ खूँट थहावै समुँद को।**
**सब परबत को तौलि गनै फिर बूँद को॥**
**हारा सब संसार बात है फेर का।**
**अरे हाँ पलटू वह नहिं लागै हाथ जो चालिस सेर का॥ 91॥**

**शब्दार्थ**—खूँट= कोना, तरफ। चालिस सेर का= मन।

**भावार्थ**—मन पृथ्वी के चारों कोने नाप आता है, समुद्र को उलीचता है, पर्वत को तौलता है और फिर समुद्र की बूंद को गिनता है। सारा संसार मन से हार गया है। इसमें केवल समझ का फेर है। पलटू साहेब कहते हैं कि वह पकड़ में नहीं आता है जो चालीस सेर का है। वह है मन।

**विशेष**—जब यह समझ लिया जाता है कि मन मैं नहीं हूं। मन आभास मात्र है। इसके साथ जब भोग और स्वामित्व की इच्छा समाप्त हो जाती है, तब मन मर जाता है, शांत हो जाता है।

अरिल–92

**जानि बूझि के परै आप से भाड़ में।**
**तासे काह बिसाय खुसी जो मार में॥**

**पीटा गा बहु बार तनिक नहिं डेरत है।**
**अरे हाँ पलटू यह मन भया चमार चमारी करत है॥ 92॥**

**शब्दार्थ**—भाड़= अग्निकुंड। डेरत= डरता।

**भावार्थ**—मन जान-बूझकर आग में कूदता है। उसको कैसे रोका जा सकता है जो मार खाने में ही प्रसन्न रहता है। मन भोगों तथा अहंकार में पड़कर अगणित बार पीटा गया है, परन्तु यह दुष्कर्म से थोड़ा भी नहीं डरता। पलटू साहेब कहते हैं कि यह मन चमार है और चमारी करता है।

अरिल-93

**सहज कूप में परै सहज रन जूझना।**
**सहजै सिंह सिकार अगिन कै कूदना॥**
**कितनी करै हियाब बात सब गर्द है।**
**अरे हाँ पलटू मन को राखै मार सिपाही मद है॥ 93॥**

**शब्दार्थ**—रन= रण। हियाब= साहस। गर्द= धूल, व्यर्थ।

**भावार्थ**—कूप में डूबना सहज है, रणक्षेत्र में युद्ध करना सहज है, सिंह का शिकार करना सहज है और आग में कूदना भी सहज है। बाहरी बातों में चाहे जितना साहस करे, व्यर्थ है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो मन को शांत रखता है, वह वीर योद्धा है।

## 27. माया

अरिल-94

**दिया जक्त बौराय माया कलवारिनी।**
**द्रव्य लेइ बिष देइ पियावै बारुनी॥**
**इक तो लोटै धूरि चोख इक माँगता।**
**अरे हाँ पलटू अमल नहीं यह भूत धाय के लागता॥ 94॥**

**शब्दार्थ**—कलवारिनी= शराब पिलाने वाली। बारुनी= वारुणी, शराब। चोख= तेजी से। अमल= आदत, व्यसन।

**भावार्थ**—भोग और स्वामित्व की चाह रूपी माया कलवारिनि ने जगत के लोगों को पागल बना दिया है। शराब बेचनेवाला लोगों से पैसे लेकर विष देता और शराब पिलाता है। शराब पीकर एक आदमी धूल में पड़ा लोटता है

और दूसरा उसी के सामने तेज शराब पीने को मांगता है। पलटू साहेब कहते हैं कि यह शराब की लत व्यसन नहीं, भूत है और दौड़कर पीने वाले को धर दबोचती है। यही दशा संपत्ति और स्वामित्व के मोही की होती है।

## 28. मान

अरिल-95

**लोभ मोह को तजा तजा जग आस को।**
**काम क्रोध को तजा भूख और प्यास को॥**
**नंगा बन बन फिरै बसन ना तने में।**
**अरे हाँ पलटू सबै बात गई खोय बड़ाई मान में॥ 95॥**

**शब्दार्थ**—बसन= वस्त्र, कपड़े।

**भावार्थ**—लोभ-मोह को त्याग दिया। जगत-भोगों की आशा छोड़ दी। काम-क्रोध को त्याग दिया। भूख-प्यास पर पूरा संयम कर लिया। नंगा होकर वन-वन घूमते हैं; परन्तु ये सारे त्याग व्यर्थ हो गये जब मन में मान-बड़ाई का रोग लगा है।

## 29. कनक-कामिनी

अरिल-96

**निकरे घर को त्यागि लराई करन को।**
**चले खेत से भागि डेरे जब मरन को॥**
**दुइ नंगी तरवार किहा तिन्ह गरद है।**
**अरे हाँ पलटू कनक कामिनी सेती बचै सो मरद है॥ 96॥**

**शब्दार्थ**—खेत= रणक्षेत्र, साधना क्षेत्र। गरद= गर्द, धूल। मरद= मर्द, वीर।

**भावार्थ**—लोग घर को त्यागकर और विरक्ति-वेष लेकर साधना के रणक्षेत्र में मन से युद्ध करने निकले; किन्तु जब मरने का भय सवार हुआ तब रणक्षेत्र से भाग खड़े हुए। पलटू साहेब कहते हैं कि दो नंगी तलवारे हैं, एक कनक और दूसरी कामिनी। इनने कायरों को धूल में मिला दिया है। जो इनसे अपने को बचा ले, वह वीर योद्धा है।

## 30. मूर्खता

अरिल-97

**हरि हीरा हरि नाम फेंकि तेहिं देत हैं।**
**सिद्धाई है काँच तुच्छ को लेत हैं॥**
**करामाति को देखि मूढ़ ललचात हैं।**
**अरे हाँ पलटू इन बातन से संत बहुत अलसात हैं॥ 97॥**

**शब्दार्थ**—सिद्धाई= झुठाई का जाल। करामाति= चमत्कार, छल-कपट। अलसात= निष्क्रिय रहते।

**भावार्थ**—हरि और हरिनाम जो हीरा है, उसे लोग त्याग देते हैं और सिद्ध बनने का ढोंग जो कांच है उसको लेते हैं। चमत्कार लगने वाली बातों को देखकर मूर्ख-समाज ललचाता है और वहां फंसता है। पलटू साहेब कहते हैं कि इस छल-कपट के जाल का संतों में अभाव होता है।

**विशेष**—आत्मा हरि है, किन्तु लोग उसके प्रति उदास रहते हैं। सिद्ध, चमत्कारी बाबा ये धर्म के नाम पर छल-कपट करने वाले बदमाश होते हैं। किन्तु इनके जाल में लोग लौकिक लाभ के झांसे में फंसते हैं। ये सिद्ध कहलाने वाले धूर्त दे कुछ नहीं सकते किन्तु इनके बहकाव में अशिक्षित से अधिक शिक्षित मूर्ख फंसते हैं। विवेकवान संत इसका विरोध करते हैं। आध्यात्मिक ऊंचाई पर चढ़ा हुआ साधक कारण-कार्य-व्यवस्था के विरुद्ध काम कर सकता है, यह घोर अंधविश्वास है। आध्यात्मिक ऊंचाई का अर्थ है पूर्ण शांत हो जाना, न कि आकाश में उड़ना जो असंभव है।

अरिल-98

**लोभ मोह के बीच परा सब लोग हैं।**
**काम क्रोध सुत नारि नरक का भोग हैं॥**
**पीये हैं विष धाय अमृत करि जानते।**
**अरे हाँ पलटू मने करै हित जानि बैर सबमानते॥ 98॥**

**शब्दार्थ**—मने करै= रोकने से, निवारण करने से।

**भावार्थ**—संसार के सब लोग लोभ-मोह के बीच में पड़े हैं। काम, क्रोध और पुत्र-पत्नी का मोह नरक का भोग है। संसारी मनुष्य दौड़-दौड़कर विषय रूपी विष पीते हैं, परन्तु उसे वे अमृत मानते हैं। पलटू साहेब कहते हैं

कि उनके कल्याण के लिए उन्हें इस पतन पथ से रोका जाता है, तो वे उपदेष्टा को ही शत्रु मान लेते हैं।

## 31. दुर्मति

अरिल–99

**दुरमति जेहि माँ बसै ज्ञान हर लेत है।**
**तुरत करत है नास बड़ा दुख देत है॥**
**तेज पुंज हर लेय बुद्धि बल भावना।**
**अरे हाँ पलटू दुरमति बसे बिलाय गया हैरावना॥ 99॥**

**शब्दार्थ**—बिलाय गया=नष्ट हो गया।

**भावार्थ**—जिसमें दुर्बुद्धि बसती है, ज्ञान खो जाता है। ज्ञान नष्ट होने से मनुष्य का तत्काल पतन होता है। यह दुर्बुद्धि बहुत दुखदायी है। दुर्बुद्धि ज्योतित आत्मज्ञान, विवेक-बल और श्रद्धा को नष्ट कर देती है। पलटू साहेब कहते हैं कि दुर्बुद्धि के कारण ही रावण जैसा प्रतापवान नष्ट हो गया।

अरिल–100

**लाख खाय जो स्वान चाटने जायगा।**
**तजि कै काग कपूर विष्ठा को खायगा॥**
**तजै न चोरी चोर सहै बहु सासना।**
**अरे हाँ पलटू छुटै न जिव की खोय लगी वह बासना॥ 100॥**

**शब्दार्थ**—सासना= दण्ड, दुख। खोय= आदत।

**भावार्थ**—कुत्ता लाखों बार उत्तम व्यंजन खा ले, तो भी अवसर पाने पर गंदी वस्तु चाटने जायगा। कौआ कपूर को त्यागकर विष्टा खायेगा। चोर पुलिस द्वारा बहुत दंड पाने पर भी चोरी नहीं छोड़ता। पलटू साहेब कहते हैं कि मनुष्य में जो आदत एवं वासना लग जाती है, वह छूटती नहीं है।

अरिल–101

**मन माया ना तजै उलटि फिरि लागता।**
**ज्यों जहाज कै काग जहाजै ताकता॥**
**मारे मिटै न छुटै टेव है करम की।**
**अरे हाँ पलटू मिटै न जिव की खोय परी है जनम की॥ 101॥**

**शब्दार्थ**—टेव= आदत, व्यसन। खोय= आदत।

**भावार्थ**—मन माया-मोह को नहीं छोड़ता। वह उससे दुख पाने पर भी उसी में वैसे लौटकर लगता है, जैसे समुद्र के जहाज का काग आकाश में उड़ने पर भी पुनः जहाज को ही अपना आश्रय समझता है। मरने पर भी कर्मों के अध्यास उससे नहीं छूटते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि उसकी जन्म-जन्मान्तर की आदत नहीं छूटती।

अरिल-102

**बातन केरी लाग चलै तरवार है।**
**करते दोउ दल जोरि बात पर मार है॥**
**कछू कोऊ कहि जाय नफा ना टोट है।**
**अरे हाँ पलटू संतहि सहैं कुबचन कठिन यह चोट है॥ 102॥**

**शब्दार्थ**—लाग= शत्रुता, वैर। टोट= घाटा, हानि।

**भावार्थ**—मनुष्यों में बातों को लेकर वैर हो जाता है, फिर आपस में कटु वचनों की तलवार चलती है। दोनों विरोधी दल जोर देकर बात-बात की मार करते हैं। विवेक से देखने पर लगता है कि हमारे लिए कोई कुछ भी कह डाले, उसमें न हमारा लाभ है और न हानि है। पलटू साहेब कहते हैं कि संत ही कटुवचन की चोट सहते हैं।

अरिल-103

**नित उठि सुनै पुरान धसै बैराग ना।**
**बिषय बासना लील छुटै वह दाग ना॥**
**छुटै नहीं मरजाद बड़ाई खात है।**
**अरे हाँ पलटू ज्यों ज्यों सुनै पुरान अधिक लपटात है॥ 103॥**

**शब्दार्थ**—लील= नील, दाग।

**भावार्थ**—नित्य-नित्य पुराण सुनते और बांचते हैं, किन्तु मन में वैराग्य का प्रवेश नहीं होता है। विषय-वासना का नील-दाग नहीं छूटता है। मान-मर्यादा का परदा हटा नहीं पाते हैं और उन्हें बड़प्पन की व्याधि खा रही है। पलटू साहेब कहते हैं कि ज्यों-ज्यों पुराण सुनते हैं त्यों-त्यों माया में अधिक लिपटते जा रहे हैं।

अरिल–104

**भूला एक न दोय सकल संसार है।**
**लोक बेद के साथ बहा मँझधार है॥**
**मैं भूला बहु बार भेड़ के संग में।**
**अरे हाँ पलटू अबकी भया है चेत गुरु के रंग में॥ 104॥**

**शब्दार्थ**—भेड़= भेड़ जानवर; अंधविश्वासी।

**भावार्थ**—एक-दो नहीं, किन्तु पूरे संसार के लोग ही भूले हैं। लोक और वेद, लोक-मर्यादा और पुस्तक-प्रमाण के साथ सभी मनुष्य भ्रांति-धारा में बह रहे हैं। इन अंधविश्वासियों की भेड़िया धंसान में मैं भी बहुत बार भूल चुका हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि अबकी बार सद्‌गुरु की संगत पाकर जग गया हूं।

अरिल–105

**जौं लगि पहुँचै नाहिं कथै ना झूठी बानी।**
**मिलै सबद जब जाय साच टकसार ठिकानी॥**
**जोरि जारि दुइ बात कहै जो राम की।**
**अरे हाँ पलटू ज्यों बालू की भीत रही किस काम की॥ 105॥**

**शब्दार्थ**—टकसार= प्रामाणिक।

**भावार्थ**—जब तक निजस्वरूप में पूर्ण विश्राम न मिल जाय, तब तक अनुभवहीन नकली वाणी का कथन न करे। जब प्रामाणिक स्वरूपस्थिति प्राप्त कर ले, तब उसकी वाणी अनुभव से मेल खायेगी। जो लोग आत्माराम में लीन हुए बिना उसके सम्बन्ध में जोड़-जोड़ कर वाणी कहते हैं उनका सारा कथन बालू की दीवार उठाने की तरह निरर्थक है।

## 32. विविध उपदेश

अरिल–106

**मैं जानौं जग स्यान जगत है बौरहा।**
**भजै नहीं भगवान केतिक हमने कहा॥**
**तजै सरग की राह नरक में जात है।**
**अरे हाँ पलटू परै आपसे कूप कहे रिसियात है॥ 106॥**

**शब्दार्थ**—स्यान= सयान, समझदार। बौरहा = भोलाभाला, बेबूझ। रिसियात= क्रोध करता है।

**भावार्थ**—मैं समझता था कि संसार के लोग समझदार हैं, परन्तु वस्तुतः वे भोले हैं। गुरुजन कितना समझाते हैं परन्तु संसार के लोग भगवान के भजन में—आत्मशोधन में नहीं लगते। लोग मन की पवित्रता रूपी स्वर्ग का रास्ता छोड़ते हैं और मन की मलिनता रूपी नरक के रास्ते में जाते हैं। लोग मोह-वश स्वयं भव-बंधनों के कुएं में कूदते हैं। यदि उनको मना किया जाय तो वे क्रोध करते हैं।

### अरिल-107

**जननी रहै तो बाँझ पै साकट ना जनै।**
**होतै बरु मरि जाय जिये से ना बनै॥**
**पुत्र से भला मदार फरै ना दोष में।**
**अरे हाँ पलटू पुत्रवंती हरि भक्त होय जेहि कोष में॥ 107॥**

**शब्दार्थ**—साकट= अभक्त, आध्यात्मिकता से रहित। मदार= एक विषैले रस का पौधा। कोष= कोख, कुक्षि, पेट।

**भावार्थ**—पैदा करने की शक्ति रखने वाली जननी का वंध्या रह जाना अच्छा है, परन्तु अभक्त एवं धर्मविरुद्ध पुत्र को जन्म न दे। अशिष्ट पुत्र पैदा होते ही मर जाय तो अच्छा है। उसके जीने में भला नहीं है। अशिष्ट पुत्र से अच्छा मदार का पौधा है, क्योंकि उससे मां-बाप को दोष नहीं लगेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि जिसके पेट से हरि-भक्त पैदा हो, वही सच्ची पुत्रवती है।

### अरिल-108

**केतिक कहा पुकारि कोऊ नहिं बूझता।**
**करम बंध संसार तनिक नहिं सूझता॥**
**भेष मँहै परपंच अकेले डोलना।**
**अरे हाँ पलटू जुदी हमारी राह हमैं क्या बोलना॥ 108॥**

**शब्दार्थ**—करम-बंध= अपने गंदे कर्मों में बंधा।

**भावार्थ**—संतजन पुकार-पुकार कर कितना समझाते हैं, परन्तु कोई समझना नहीं चाहता। संसार के लोग अपने गंदे कर्मों के संस्कार में बंधे हैं। उन्हें थोड़ा भी नहीं समझ पड़ता। साधु-वेषधारियों की भीड़ में भी बड़ा-बड़ा

प्रपंच है, इसलिए अकेला ही विचरना ठीक है। पलटू साहेब कहते हैं कि हमारा रास्ता ही अलग है—अंतर्मुखता। हमें वेष भगवान से झख नहीं मारना है।

अरिल–109

**सब भेड़ी की राह चले हैं जूटि कै।**
**इक ओर आसिक चला अकेला फूटि कै॥**
**उलटि के खेलै खेल भया मन मगन में।**
**अरे हाँ पलटू छुटा भुइँचपा जाय एक ठो गगन में॥ 109॥**

**शब्दार्थ**—आसिक= आशिक़, आत्मानुरागी। भुइँचपा= जमीन में चिपका, माया–मोह में डूबा। एक ठो= एक व्यक्ति, अकेला।

**भावार्थ**—संसार के लोग भेड़िया धंसान में एक के पीछे एक चलते हैं। विवेक–विचार नहीं करते। इसलिए आत्मानुरागी व्यक्ति इनसे अलग होकर अकेला ही चला। वह सांसारिकता से विमुख होकर अंतर्मुखता की साधना में लग गया और उसका मन आत्मलीन हो गया। पलटू साहेब कहते हैं कि जो मोह–माया में चिपका था, वह अकेला अब निर्मलता के आकाश में उड़ गया।

अरिल–110

**भंग भजन में करै दुष्ट यह पेट है।**
**बिना भजन भगवान से नाहीं भेंट है॥**
**सतसंगति जब करै भूख तब मिटैगी।**
**अरे हाँ पलटू यहि का यही इलाज फिकिर सब फटैगी॥ 110॥**

**शब्दार्थ**—भूख= तृष्णा, वासना, ललक।

**भावार्थ**—यह दुष्ट पेट भजन–साधना में बाधा डालता है। और भजन के बिना आत्मा का साक्षात्कार नहीं होगा। जब साधक विवेकवान संतों का सत्संग करेगा, तब उसकी विषय–तृष्णा मिटेगी। पलटू साहेब कहते हैं कि भव–व्याधि की यही चिकित्सा है। सत्संग तथा विवेक–साधना से सारे मोह–शोक दूर हो जायेंगे।

**विषय**—पेट को भोजन दो और मन को अंतर्मुखता की साधना।

अरिल-111

**जग के लेखे जोगिया बाउर होइ गया।**
**जोगिया के लेखे बाउर जक्त सब ही भया॥**
**कौन करै यह न्याव दोऊ परमान है।**
**अरे हाँ पलटू सरग नरक की राह सदा अलगान है॥ 111॥**

**शब्दार्थ**—लेखे= हिसाब से, समझ से। बाउर= पागल। परमान= प्रमाण, उचित, सत्य।

**भावार्थ**—संसारी बुद्धि वालों की समझ से विरक्त संत पागल हैं और विरक्त संतों की समझ से संसारी बुद्धि वाले पागल हैं। दोनों के बीच में कौन न्याय करे कि दोनों में से कौन पागल है; क्योंकि दोनों अपने को सही मानते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि स्वर्ग और नरक के रास्ते सदैव अलग-अलग हैं।

**विशेष**—मन-इंद्रियों की उत्तेजना में रहने वाले नरक के रास्ते में हैं और जिनकी इन्द्रियां और मन शांत हैं, वे स्वर्ग के रास्ते में हैं। नरक है उत्तेजना और स्वर्ग है शांति। यहां स्वर्ग का अर्थ पौराणिक स्वर्ग नहीं है जो वस्तुतः नरक ही है, क्योंकि वह मलिन देह-विलास की कल्पना है।

अरिल-112

**संतन किया बियाह दुलहिनी ज्ञान की।**
**सतगुरु दिया कराय बेटी जजमान की॥**
**तन माड़ो के बीच अजब इक चेहरा।**
**अरे हाँ पलटू मन दुलह रघुनाथ चढ़े सिर सेहरा॥ 112॥**

**शब्दार्थ**—जजमान= यजमान। चेहरा= स्वरूप। रघुनाथ= इन्द्रियों का स्वामी आत्मा। सेहरा= फूलों और गोटे आदि की लड़ियां जो दूल्हे और दुलहिन के सिर पर बांधी जाती हैं और मुंह पर लटकती रहती हैं।

**भावार्थ**—संतों ने एक विवाह रचाया, जिसमें मन सम्बन्धी आत्मा दुलहा बना और आत्मज्ञान की स्थिति दुलहिनी बनी, जो विवेक यजमान की बेटी है। शरीर रूपी मंडप के बीच में ज्ञानस्वरूप चेतन आत्मा और आत्मस्थिति का एक अद्‌भुत रूप-सौंदर्य है, जिसके शिरोभाग पर ज्ञान-ज्योतित सेहरा चढ़ा है।

**विशेष**—आत्मा दूल्हा है और शांति दुलहिन। आत्मा और शांति का एकमेक हो जाना जीवन की ऊंचाई है।

अरिल–113

**रहते रोजा नित्त साँझ कै मुरगी मारै।**
**आठो वक्त निमाज गाय की कुही निहारै॥**
**सब में रहै खुदाय गले में छूरी देता।**
**अरे हाँ पलटू जाया चाहै भिस्त खून गरदन पर लेता॥ 113॥**

**शब्दार्थ**—कुही= कूल्हा, धड़ और जांघ का जोड़, कमर के दोनों ओर की हड्डी। भिस्त= बहिश्त, स्वर्ग।

**भावार्थ**—मुसलमान कहलानेवाले रमजान के दिनों में नित्य दिन भर उपवास रहते हैं; किन्तु रात होते ही मुरगी मारते हैं। आठों पहर नमाज पढ़ते हैं; किन्तु गाय का कूल्हा निहारते हैं कि इसे मारकर खायं। वस्तुतः सब प्राणियों में खुदा बसता है किंतु प्राणियों के गले को छूरी से रेतते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि ये लोग जाना तो चाहते हैं स्वर्ग, परन्तु निरीह प्राणियों की गर्दन काटकर अपने ऊपर हत्या का अपराध लेते हैं।

अरिल–114

**मुसलमान के जिबह हिन्दू के मारै झटका।**
**खाइ दूनों मुरदार फिरत हैं दूनिऊँ भटका॥**
**वै पूरब को जाहिं पछिम वै ताकते।**
**अरे हाँ पलटू महजिद देवल जाय दोऊ सिर मारते॥ 114॥**

**शब्दार्थ**—जिबह= ज़बह, गला काटकर जान लेने का कार्य। झटका = एक ही बार में गला काट देना।

**भावार्थ**—मुसलमान जानवर के गला को रेतकर मारते हैं और हिंदू एक बार में मारते हैं। दोनों मुरदा खाते हैं, अतएव दोनों भटके फिरते हैं। हिन्दू पूर्व मुंह कर उपासना करते हैं और मुसलमान पश्चिम मुंह कर उपासना करते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि दोनों देवालय तथा मस्जिद में जाकर सिर पटकते हैं।

**विशेष**—मंदिर-मस्जिद में राम-रहीम नहीं है, किन्तु सबके दिल में है; इसलिए किसी प्राणी को दुख न देना सच्ची उपासना है।

### अरिल-115

**करम बँधा संसार बँधावै आप से।**
**जमपुर बाँधा जाय करम की फाँस से॥**
**कोई न सकै छुड़ाय रस्सा यह मोट है।**
**अरे हाँ पलटू संतन डारा काटि नाम की ओट से॥ 115॥**

**शब्दार्थ**—करम= कर्म, राग-द्वेषपूर्ण कर्म। जमपुर= यमपुर, गर्भवास। मोट= मोटा, बलवान। ओट= आधार।

**भावार्थ**—राग-द्वेष जनित कर्म बंधनों में संसार के जीव बंधे हैं और उसी बंधन में आज पुनः अपने को बंधा रहे हैं। इस कर्म की फांसी में ही बंधकर जीव पुनः-पुनः गर्भवास में जाता है। कर्म का यह रस्सा बड़ा जबर्दस्त है। इसको कोई तोड़ नहीं पाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि संतजन सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मज्ञान का आधार लेकर कर्मबंधन का रस्सा काट डालते हैं।

### अरिल-116

**बाँधे बनिया हाट नहीं है लावना।**
**इसक बिना का राग बनै नहिं गावना॥**
**मन मानै सो करै बात यह चौज की।**
**अरे हाँ पलटू कहे सुने से नाहिं फकीरी सौक की॥ 116॥**

**शब्दार्थ**—इसक= इश्क़, प्रेम, चाह। चौज= चाहना, इच्छा। सौक= शौक, तीव्र लालसा।

**भावार्थ**—कहावत है—'बांधे बनिया बाजार नहीं लगता।' बनिया को मजबूर करके उससे बाजार नहीं लगवाया जा सकता। प्रेम के बिना संगीत नहीं निकलता और गाते नहीं बनता। जिस काम को मन लाभकारी मान लेता है, वह उस काम को समर्पित होकर करता है। कोई काम तत्पर होकर करना प्रबल इच्छा का परिणाम है। पलटू साहेब कहते हैं कि फकीरी कहने-सुनने से नहीं होती, अपितु तीव्र लालसा से होती है।

### अरिल-117

**निकरे जग से तोरि भया मन त्याग में।**
**मारग पकरिन कठिन धसे बैराग में॥**

**माया आगे मिली रहे ललचाय कै।**
**अरे हाँ पलटू धँसे जक्त में फेर महंती पाय कै॥ 117॥**

**शब्दार्थ**—धंसे=डूबे।

**भावार्थ**—संसारी माया-मोह की रस्सी तोड़कर घर से निकल पड़े। मन त्याग में लग गया। विषय-विरक्ति के कठिन मार्ग को पकड़े और वैराग्य में मग्न हो गये। कुछ दिनों के बाद आगे संसार की माया मिली और उसमें आसक्त हो गये। पलटू साहेब कहते हैं कि महंती पाकर सांसारिक माया-जाल में पुनः उलझ गये।

## 33. वर्ण-मात्रा के आधार पर उपदेश

अरिल-118

**कक्का केती कही समुझाय कहा कोई नहिं मानै।**
**खारी और कपूर दोऊ एकै में सानै॥**
**कंचन घुँघुची आनि तुला एकै में तौलै।**
**अरे हाँ पलटू झूठा मारै गाल, साच कैसे कै बोलै॥ 1॥**

**शब्दार्थ**—खारी=नमक।

**भावार्थ**—क अक्षर के आधार पर संत पलटू साहेब उपदेश करते हैं और कहते हैं कि मैं कितना ही समझाकर कहता हूं, परन्तु कोई कहा नहीं मानता है। संसार के लोग नमक और कपूर को एक में ही मिलाते हैं—सही-गलत का भेद नहीं समझते हैं। सोना और घुंघची को एक ही भाव समझते हैं। मिथ्याभाषी लोग बकबक करते हैं, तो सत्यवादी कैसे अपनी बात कहे?

अरिल-119

**खख्खा खरा बनावै खोट खोट को खरा बनावै।**
**चोर चौतरे बैठि साह को पकरि मँगावै॥**
**काम क्रोध नहिं मरै गुरु औ सिष्य अनारी।**
**अरे हाँ पलटू हमरा तत्त बिचार, कहौ को सुनै हमारी॥ 2॥**

**शब्दार्थ**—तत्त विचार=आत्मा-अनात्मा का विवेक।

**भावार्थ**—ख अक्षर के आधार पर पलटू साहेब कहते हैं कि लोग सत्य को झूठ तथा झूठ को सत्य सिद्ध करने में लगे हैं। चोर खुले मैदान के चबूतरे

पर बैठकर सत्यपरायण को पकड़ मंगाता है और उसको दंडित करता है। गुरु और शिष्य दोनों साधना से अनभिज्ञ हैं, अतएव उनके मन के काम-क्रोध मरते नहीं हैं। मेरा आत्म-अनात्म का तत्त्वविचार कौन सुने ?

अरिल-120

**गग्गा गाली पावैं संत सिद्ध की करैं बड़ाई।**
**सूद्र कलंदर द्रव्य सिद्ध से माँगन जाई॥**
**अंधे ऐना हाथ कहौ कैसे कै सूझै।**
**अरे हाँ पलटू हमरा तत्त विचार, बचन कोई नहिं बूझै॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—कलंदर= एक वर्णसंकर मानी गयी जाति। ऐना= दर्पण।

**भावार्थ**—ग अक्षर से उपदेश है कि सच्चे संत गाली पाते हैं; और सिद्ध नामधारी जो जालसाज होते हैं, उनकी लोग बड़ाई करते हैं; और सामान्य जनता सिद्ध कहलाने वालों से पुत्र, धनादि मांगने जाती है। अंधों के हाथों में दर्पण दिया जाय, तो कहो, वे उसमें अपने मुंह के प्रतिबिम्ब कैसे देख सकते हैं ? पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा तत्त्व विचार कोई नहीं समझता है।

अरिल-121

**घग्घा घर में बस्तु हिरान ढूँढ़न को बन-बन धावै।**
**गुरु सिष दोउ अंध कहौ को राह बतावै॥**
**राजा पाँच पचीस काल की चोट है।**
**अरे हाँ पलटू बचिहैं कोई साध नाम की ओट है॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—हिरान= खोया।

**भावार्थ**—घ अक्षर कहता है कि आत्मा रूपी अपनी वस्तु हृदय-घर में है, किन्तु अज्ञान-वश उसे खोजने के लिए वन-वन भटकते हैं। गुरु और शिष्य दोनों विवेकहीन हैं। कहो, कौन किसको रास्ता बतावे। शरीर में पांच ज्ञानेन्द्रियां और पचीस प्रकृतियां शासक हैं। इनकी चोट हर क्षण लगती रहती है। पलटू साहेब कहते हैं कि इनकी चोट से कोई संत आत्मज्ञान की रहनी में रहकर अपने को सुरक्षित रख सकेगा।

अरिल-122

**नन्ना नाना कीन्हें भेष मिटी नहिं मन की आसा।**
**बहुरुपिया का स्वांग अंत को नर्क निवासा॥**

**माया दै दै ढोल सबन को नाच नचाया।**
**अरे हाँ पलटू लगी रहै वह डोरि बहुरि चौरासी आया॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—डोरि= वासना।

**भावार्थ**—न अक्षर कहता है कि लोग नाना प्रकार वेष तो बनाते हैं, परन्तु उनके मन की आशा-तृष्णा नहीं मिटती। बहुरुपिया जैसा नाना वेष बनाकर स्वांग एवं तमाशा करने से अंत में नरक में ही निवास होगा। माया ढोल बजा-बजा कर सबको नाच नचाती है। पलटू साहेब कहते हैं कि अनात्म वस्तुओं में जिसकी वासना की डोरी लगी है, उसे बारंबार चौरासी चक्कर में भटकना होगा।

अरिल-123

**चच्चा चरक मरक संसार मकर से दुनिया खावै।**
**बातैं कहै बनाय सोई अब सिद्ध कहावै॥**
**मिली नहीं कछु बस्तु भेद का मरम न जाना।**
**अरे हाँ पलटू चरम दृष्ट संसार इष्ट कैसे पहिचाना॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—चरक मरक= चकर-मकर, दिखावा। मकर= जालसाजी। इष्ट= प्रिय, उपास्य।

**भावार्थ**—च अक्षर कहता है कि संसार एक दिखावा है। यह स्थिर नहीं, बदलता रहता है। कुछ लोग ऐसे हैं जो जालसाजी करके लोगों को फंसाते हैं और उनसे अपना स्वार्थ साधते हैं। जो छलपूर्ण बात करते हैं वे सिद्ध कहलाते हैं। उन्हें अपनी आत्म-वस्तु का थोड़ा भी भेद नहीं मिला और वे पवित्र रहनी का रहस्य नहीं जान सके। पलटू साहेब कहते हैं कि संसार के लोग तो चर्म दृष्टिवाले हैं। उन्हें केवल देहबुद्धि है। वे परम उपास्य आत्मा को कैसे पहचान सकते हैं?

अरिल-124

**छछ्छा छके नहिं हरिनाम पीवते भाँग धतूरा।**
**बैठि गुफा के बीच खान को लड्डू पेड़ा॥**
**मँगनी कीन्हीं जाय ब्याह बिन रही कुमारी।**
**अरे हाँ पलटू खसम पड़ा नहिं चीन्ह, झूठ कस लावै तारी॥ 7॥**

**शब्दार्थ**—खसम= पति, स्वामी। तारी= ध्यान।

**भावार्थ**—हरिनाम का रस नहीं पिये, अपितु भांग-धतूरा पीते हैं। गुफा में जा बैठे, किन्तु लड्डू-पेड़े खाने के लिए लालायित हैं। लड़की की मंगनी तो कर लिये, किन्तु उसका पति से विवाह नहीं हुआ और वह कुंवारी ही रह गयी। पलटू साहेब कहते हैं कि पति तो पहचानने में नहीं आया, फिर झूठा ध्यान क्या करते हैं ?

**विशेष**—मनोवृत्ति रूपी पत्नी का चेतन-आत्मा पति है; परन्तु यह बोध नहीं है तो मनुष्य की मनोवृत्ति भटकती है।

## अरिल-125

**जज्जा जटा रखाये सीस बगल में निर्गुन फाँसी।**
**गो पर करते घात देखन को बड़े उदासी॥**
**बुझी नहीं है आग राख में रहती दब की।**
**अरे हाँ पलटू तन से देखा त्याग, चाह यह सबके मन की॥ 8॥**

**शब्दार्थ**—निर्गुन= गुणरहित, दुर्गुण। गो= इन्द्रियां।

**भावार्थ**—ज अक्षर कहता है कि सिर पर जटा रख लिये और बगल में दुर्गुणों की फांसी लेकर घूम रहे हैं। देखने में बड़े उदासी लगते हैं, किन्तु इन्द्रियों के भोगों पर घात लगाये रहते हैं। इनके मन की कामनाओं की आग बुझी नहीं है अपितु राख में दबी आग जैसी मन में दबी है। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे लोगों का वेष देखकर तो लगता है कि ये त्यागी हैं, किन्तु इनके मन में सारे भोगों को भोगने की चाहना बनी है।

## अरिल-126

**झझ्झा झंखत फिरत कम्मखत रोइ कै जनम गँवावै।**
**वस्तु न सकै सम्हारि दोऊ गति सोग लगावै॥**
**हीरा लै लै हाथ आप से देत बहाई।**
**अरे हाँ पलटू करम लिखा है पोत, कहो कस हीरा पाई॥ 9॥**

**शब्दार्थ**—झंखत= झींखत, दुखी होते, कुढ़ते। कम्मखत= कमबख़्त, अभागा। पोत= कांच का टुकड़ा।

**भावार्थ**—झ अक्षर कहता है कि अभागा मनुष्य दुखी होकर भटकता है और भीतर से रो-रो कर जीवन खोता है। अपनी आत्मवस्तु को सम्हालकर नहीं रख पाता है। लोक-परलोक दोनों से असफल होकर शोक-पीड़ित

भटकता है। मानवजीवन कल्याण-साधना करने का स्थान होने से हीरा है, परन्तु मनुष्य उसे व्यर्थ के कामों में खो देता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब कर्म में कांच का टुकड़ा लिखा है, तब हीरा कैसे पावे ? जब हम गलत कर्म करेंगे तब दुख मिलेगा।

अरिल-127

**टट्टा टरै खेत से भागि सूर और बीर करारी।**
**हाथ जोरि मिलि गये माया जब दीन्ही तारी॥**
**लाखन में कोई संत माया का मुहड़ा फेरी।**
**अरे हाँ पलटू संतन किया बिबेक, माया भइ उनकी चेरी॥ 10॥**

**शब्दार्थ**—खेत= क्षेत्र, साधना क्षेत्र। करारी= दृढ़ता। तारी= ताली, लालच।

**भावार्थ**—ट अक्षर कहता है कि दृढ़ कहलाने वाले शूर-वीर साधक साधना-क्षेत्र से भागकर हट गये। जब माया ने उन्हें लालच दिया तब वे हाथ जोड़ विनयावनत होकर माया के सामने झुक गये। लाखों में कोई बिरला संत होगा जो माया का लगाव छोड़कर वैराग्य में दृढ़ रहता हो। पलटू साहेब कहते हैं कि जिन संतों ने विवेक कर माया को चित्त से उतार दिया, माया उनकी दासी हो गयी।

अरिल-128

**ठट्ठा ठौर लेहु ठहराय गुरु से पूछि ठिकाना।**
**करड़ी खैंचि कमान सुरत से फोड़ निसाना॥**
**फूट जाय ब्रह्मांड गगन में करै रकाना।**
**अरे हाँ पलटू बड़े मरद का काम, रुंड पर बाँधे बाना॥ 11॥**

**शब्दार्थ**—करड़ी= जोर से। कमान= धनुष। रकाना= स्थान, ठिकाना। रुंड= धड़, जिसमें सिर न हो।

**भावार्थ**—ठ अक्षर कहता है कि हे मुमुक्षु ! सद्गुरु से पूछकर अपनी स्थायी स्थिति कर लो। सुरति के धनुष को जोर से खींचकर लक्ष्य को बेध दो जिससे माया का ब्रह्माण्ड फूट जाय और निर्मलता के आकाश में अपनी दृढ़ स्थिति बना लो। पलटू साहेब कहते हैं कि यह बड़े वीर का काम है कि वह सिर को गुरु के चरणों में समर्पित करके धड़ पर साधुवेष रूपी कफन बांधे।

## अरिल-129

**डड्डा डगर से रहे भुलाय नगर को राह बताये।**
**चले पैर नहिं एक मनौ मुहँई से आये॥**
**मजलिस बैठि गँवार कहै पहुँचे हैं हमहीं।**
**अरे हाँ पलटू पड़ैं कसौटी जाय सार टकसार में तबहीं॥ 12॥**

**शब्दार्थ**—मजलिस= सभा, समाज, जलसा। गंवार= मूर्ख, अनाड़ी।

**भावार्थ**—ड अक्षर कहता है कि ऐसे लोग होते हैं कि वे स्वयं पथ से भटके हैं और दूसरों को मोक्ष-नगर का रास्ता बताते हैं। वे साधना-पथ में एक पैर भी नहीं चले हैं। मानो वे वाणी से मोक्ष का वक्तव्य करके उसमें पहुंचे हैं। वे मूर्ख सभा में बैठकर कहते हैं कि केवल मैं ही अध्यात्म के उच्च शिखर पर पहुंचा हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि जब सच्चे संतों के सत्संग में उनकी कसौटी होती है, तब उनका नकली तेज उतर जाता है।

## अरिल-130

**ढड्ढा ढालों की क्या ओट लड़ौ ले सब्द कटारी।**
**खड़े रहौ मैदान हाँक दै सुरति सम्हारी॥**
**तिलतिल लागैं घाव टरै नहिं खेत से।**
**अरे हाँ पलटू अड़ा रहा कोई साध, धनी के हेत से॥ 130॥**

**शब्दार्थ**—ओट= आड़ा। हांक= पुकार, ललकार। धनी= आत्मा।

**भावार्थ**—ढ अक्षर कहता है कि हे साधक! परोक्ष-उपासना रूपी ढाल का आड़ा क्या लेना, निर्णय शब्दों की तलवार लेकर साधना के क्षेत्र में मन के दुर्गुणों से युद्ध करने में लगे रहो। युद्ध के मैदान में हर क्षण खड़े रहो और अपनी मनोवृत्ति सम्हालकर दुर्गुणों को ललकार कर लड़ो। शरीर के तिल-तिल में घाव लगे तो भी युद्ध-क्षेत्र से न हटो। पलटू साहेब कहते हैं कि कोई बिरला साधु आत्म-उद्धार के लिए मन के दुर्गुणों से युद्ध करने में अडिग होकर डटा रहता है।

## अरिल-131

**तत्ता तन में लाये छाल कुम्भ का बक्कल पहिरे।**
**बैठि गुफा में जाय खोद के धरती गहिरे॥**
**करते प्रानायाम उलटि कै खैंचे स्वासा।**
**अरे हाँ पलटू बैठे आसन मारि, मिटी नहिं मन की आसा॥ 14॥**

**शब्दार्थ**—कुम्भ= केला का पेड़। बक्कल= वल्कल, पेड़ की छाल।

**भावार्थ**—त अक्षर कहता है कि कितने साधक वृक्ष की छाल या केला की छाल पहनते हैं, जिसे वल्कल कहते हैं और पृथ्वी में गहरा गड्ढा खोदकर गुफा बनाते हैं और उसमें जा बैठते हैं। वे प्राणायाम करते हैं और उलटकर श्वास खींचते हैं। अनुलोम (ऊपर से नीचे की ओर) तथा विलोम (नीचे से ऊपर की ओर) श्वास खींचते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि वे आसन जमाकर बैठते तो हैं, किन्तु मन की सांसारिक आशाएं नहीं मिटतीं, तो उनका सब करना व्यर्थ रहता है।

अरिल–132

**थथ्था थकित भये हम देखि सबै गफलत में सोवैं।**
**भक्ति का पौधा काटि बिषय का अंकुर बोवैं॥**
**तपसी भे धनवंत सावै सब भये भिखारी।**
**अरे हाँ पलटू रोगी ह्वै गये नीक, बैद सब भये अजारी॥ 15॥**

**शब्दार्थ**—सावै= साहु, व्यवसायी। अजारी= रोगी।

**भावार्थ**—थ अक्षर कहता है कि सारे लोग माया-मोह की असावधानी में पड़े सो रहे हैं, इसलिए मैं इनसे हार बैठा हूं। ये लोग भक्ति का पौधा काटकर विषयवासना के बीज अंकुरित कर रहे हैं। तपस्वी संपदाशाली हो गये और व्यवसायी दरिद्र हो गये। पलटू साहेब कहते हैं कि रोगी निरोगी हो गये और वैद्य रोगी हो गये—साधारण लोग भक्ति-ज्ञान के पथ में लगकर मन निर्मल कर लिये और बड़े महात्मा कहलाने वाले मान-बड़ाई के मोह में पड़कर मन मैला कर लिये।

अरिल–133

**दद्दा दबकि रहा है स्यार सिंह का पहिरे बाना।**
**दाग दगाये सीस लड़न का मरम न जाना॥**
**हाकिम रहे छिपाय भेद पाया नहिं कोई।**
**अरे हाँ पलटू तक तक रहिये ताक, कहै सो दुसमन होई॥ 16॥**

**शब्दार्थ**—स्यार= सियार। हाकिम= हुकूमत करने वाला, बड़ा अफसर।

**भावार्थ**—द अक्षर कहता है कि सियार सिंह का वेष पहनकर अपने को छिपा रखा है। सिर पर तो साधना करने का चिन्ह लगा लिये, किन्तु मानसिक-युद्ध का भेद नहीं समझ पाये। उनके ऊपर हुकूमत करने वाले गुरु

लोग भी उनका भेद छिपाये रखे, इसलिए उनका कोई भेद नहीं जान सका। पलटू साहेब कहते हैं कि हम बारंबार देखते और उनकी पोल-पट्टी जानते हैं, किन्तु उनका भेद बतावें तो उनके शत्रु बनेंगे।

अरिल-134

**धध्धा धनी कहावैं बड़े पूँजी घर में नहिं इक किन।**
**बैठ करत गुमान रैनि दिन जात भजन बिन॥**
**चौड़ी लाय दुकान करैं पकवानहिं फीका।**
**अरे हाँ पलटू जानै खावनहार और नहिं स्वाद उसी का॥ 17॥**

**शब्दार्थ**—किन= कण, थोड़ा।

**भावार्थ**—ध अक्षर कहता है कि लोग धर्म और अध्यात्म-साधना के धनी तो कहलाते हैं, किन्तु उनके हृदय-घर में पवित्र रहनी का एक कण भी नहीं है। वे धर्म का अहंकार और भ्रम करके तो बैठे हैं, किन्तु उनका पूरा समय आत्मशोधन के बिना जा रहा है। दुकान तो बड़ी है, किन्तु पकवान फीके हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि आध्यात्मिक साधना के रसिक उनकी पोलपट्टी जानते हैं। अन्य लोग उसका स्वाद क्या जानें ?

अरिल-135

**पप्पा पड़ै पतंगा जाय आपसे दीपक माहीं।**
**तन को दिया जराय सोच दीपक को नाहीं॥**
**पहिले तो दीपक जरै पाछे जरै पतंग।**
**अरे हाँ पलटू हरि हरिजन से प्रीति करि मिलि दोऊ इक अंग॥ 18॥**

**शब्दार्थ**—हरि= ज्ञान, आत्मा। हरिजन= ज्ञानी, साधक।

**भावार्थ**—प अक्षर कहता है कि पतिंगे स्वयं दीपक की लौ में कूदकर जल मरते हैं। इससे दीपक को कोई दुख नहीं होता। पहले तो दीपक जलता है और पीछे पतिंगे उसमें लिपटकर जलते हैं। मोह-वश मनुष्य विषयों में लिपटकर जल मरते हैं। पलटू साहेब कहते हैं, किन्तु साधक आत्मज्ञान में रत होता है और अंततः आत्मलीन हो जाता है।

अरिल-136

**फफ्फा फाका फिकर जरूर फरक आलम से रहिये।**
**भली बुरी कहि जाय बात दो सबकी सहिये॥**

**कहर मेहर की नजर लगन साहिब से लावै।**
**अरे हाँ पलटू लगी रहै वह डोरि, छुटै तो गोता खावै॥ 19॥**

**शब्दार्थ**—फाका= फ़ाक़ा, निराहार, उपवास, ग़रीबी। फिकर= फ़िक्र, चिन्ता। फरक= फ़रक़, दूरी, अलग। आलम= भीड़भाड़। कहर= क़हर, विपत्ति, दुख। मेहर= मेह्र, कृपा। कहर-मेहर= दुख-सुख।

**भावार्थ**—फ अक्षर कहता है कि गरीब एवं सादा होकर रहो, कल्याण की चिंता अवश्य रखो, और दुनियादारी लोगों से हटकर रहो। लोगों से तुम्हारी स्तुति और निन्दा होती हो तो ये दोनों बातें निर्विकार भाव से स्वीकार करो। चाहे विपत्ति हो या संपत्ति सब समय अंतर्मुख होकर आत्मानुरागी रहो। पलटू साहेब कहते हैं कि अंतर्मुखता की डोरी सदैव लगी रहे। यदि यह टूट जायगी तो दुनिया में डूबोगे।

अरिल-137

**बब्बा बगुला कीन्हे भेष हंस की बोली बोलै।**
**नीर छीर दोउ महै आप से परदा खोलै॥**
**राँगा रूपा सेत नजर बिन को अलगावै।**
**अरे हाँ पलटू जहवाँ नाहीं हंस तहाँ बगु हंस कहावै॥ 20॥**

**शब्दार्थ**—रांगा= एक प्रसिद्ध सस्ता धातु। रूपा= चांदी। सेत= उजला।

**भावार्थ**—ब अक्षर कहता है कि बगुले हंस का वेष बनाकर हंस की बोली बोलते हैं, परन्तु जब नीर-क्षीर अलग करने का समय आता है तब बगुले की पोलपट्टी स्वयं खुल जाती है। रांगा और चांदी दोनों सफेद होते हैं। उसको परखने की दृष्टि हुए बिना दोनों का भेद कौन कर सकता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जहां हंस नहीं होते हैं, वहां बगुले ही हंस कहलाते हैं।

अरिल-138

**भभ्भा भरमन ही को खै करै इंद्रिन से निगरा।**
**नाम से रहै भुलाय चित्त दै करते सिगरा॥**
**निगरा सिगरा नाहिं जोई है जाग्रत जोगी।**
**अरे हाँ पलटू निगरा सिगरा आहिं, कहो कोई रोगी भोगी॥ 21॥**

**शब्दार्थ**—खै= क्षय, नाश। निगरा= निग्रह, नियंत्रण, रोक। सिगरा= संग्रह। निगरा-सिगरा= त्याग-संग्रह।

**भावार्थ**—भ अक्षर कहता है कि मन के भ्रम और भटकाव को क्षीण करे, समाप्त करे। कुछ लोग इन्द्रियों का ऊपरी ढंग से रोकथाम रखते हैं, परन्तु सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मा को भूलकर सांसारिक संग्रह में चित्त लगाकर डूबे हैं। वस्तुतः जो त्याग के अहंकार और संग्रह के लोभ से अलग है वह सावधान योगी है। पलटू साहेब कहते हैं कि त्याग के अहंकारी और संग्रह के लोभी लोग कहना चाहिए कोई रोगी-भोगी होते हैं।

## अरिल-139

**मम्मा मन मुरीद होइ नाहिं आपु वै पीर कहावैं।**
**बिना बंदगी फैज कहो कोइ कैसे पावै॥**
**कितनौ नाचौ नाच नाक बिन नकटी बाई।**
**अरे हाँ पलटू सतगुरु होहिं दयाल, देहिं तौ मिलै बड़ाई॥ 22॥**

**शब्दार्थ**—मुरीद= शिष्य। पीर= गुरु। बंदगी= वंदना, सेवा, प्रणाम। फैज= फ़ैज़, परोपकर; हित, लाभ; यश।

**भावार्थ**—म अक्षर कहता है कि जिसका अपना मन शिष्य नहीं हुआ, वे दूसरों को शिष्य बनाने के लिए स्वयं गुरु बन बैठते हैं। बिना सेवा और विनम्रता के लाभ एवं सुयश कहो कैसे मिल सकता है ? जिसको नाक नहीं है, वह कितना ही नाच नाचे, नकटी बाई ही रहेगी—विनम्रता के बिना गुरुवाई हास्यास्पद ही है। पलटू साहेब कहते हैं कि दयालु सद्गुरु से आत्मबोध पाकर जब साधक विनम्रता से सेवा-साधना करता है, तब उसको लाभ एवं सुयश मिलता है।

## अरिल-140

**रर्रा राँड़ भराये माँग नैन भरि काजर लाये।**
**बिना खसम की सेज कहा भा फूल बिछाये॥**
**तन पर लत्ता नाहिं ओढ़ाती खसमहिं सोई।**
**अरे हाँ पलटू बिना भजन की राँड़, कहो कितना तन धोई॥ 23॥**

**शब्दार्थ**—खसम= पति। लत्ता= सड़ा-फटा वस्त्र। राँड़= मूर्ख। भजन = आत्मशोधन।

**भावार्थ**—र अक्षर कहता है कि विधवा स्त्री मांग भर सेंदुर लगाये, नेत्र भर काजल पारे और फूलों से सजाकर शय्या बिछाये, तो बिना पति के यह सब किस काम का ? उसके शरीर पर चीथड़ा भी नहीं है, परन्तु वह अपनी

नग्नता ही अपने कल्पित पति को ओढ़ाती है। इसी प्रकार बिना आत्मशोधन के मूर्ख कहो कितना अपना जीवन निर्मल कर सकता है?

**विशेष**—यथार्थ सद्गुरु की शरण में समर्पित हुए बिना, आत्मबोध और आत्मशोध बिना कोई अहंकारी बनकर कल्याण नहीं कर सकता।

### अरिल–141

**लल्ला लालच बुरी बलाय यही सब बात बिगारी।**
**लालच जेहि का नाम माया की है महतारी॥**
**कनिक कामिनी रूप धरे सुर नर मुनि लूटै।**
**अरे हाँ पलटू ऐसा कोई ना मिला जो इनसे छूटै॥ 24॥**

**शब्दार्थ**—बलाय= बला, विपत्ति, आफत, दुख।

**भावार्थ**—ल अक्षर कहता है कि लालच भारी विपत्ति है। इसी ने जीवन के सारे काम को बिगाड़ा है। जिसे लालच कहते हैं, यह माया की जननी है। इसी से सब माया एवं धोखा पैदा होता है। यह लालच कनक और कामिनी रूप धारणकर एवं लालच से कनक-कामिनी में फंसकर सुर, नर, मुनि सब लूटे गये। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसा कोई नहीं मिलता है जो लालच से परे रहता हो।

### अरिल–142

**वव्वा वारूँ तन मन सीस उसी का कहूँ संदेसा।**
**हित अपना पहिचान सुनत ही मिटै कलेसा॥**
**पूरन प्रगटे भाग मिले वहि देस के साईं।**
**अरे हाँ पलटू करिये उनसे प्रीत नहीं उनसे अधिकाई॥ 25॥**

**शब्दार्थ**—साईं= स्वामी, सद्गुरु।

**भावार्थ**—व अक्षर कहता है कि मैं अपने शरीर, मन और सिर उस सद्गुरु के चरणों में समर्पित करता हूं और उसी के उपदेश बताता हूं। सद्गुरु के उपदेश से मुमुक्षु अपने कल्याण की बात समझ लेता है। गुरु के उपदेश सुनकर तुरंत मन का दुख मिट जाता है। स्वरूपस्थिति-देश का महरमी स्वामी सद्गुरु यदि मिल जाय, तो मुमुक्षु का पूर्ण भाग्य उदय हुआ समझना चाहिए। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे पूर्ण सद्गुरु से प्रेम करो। उनसे बड़ा कोई नहीं है।

अरिल-143

**सस्सा सरबर करते स्यार सिंह से रार बढ़ावै।**
**काग कहै हम बड़े हंस से गाल बजावै॥**
**भूँकन लागे स्वान संत सुनि कान को मूँदा।**
**अरे हाँ पलटू आखिर बड़े सो बड़े दिन चार का धींगम धूँगा॥ 26॥**

**शब्दार्थ**—सरबर= बराबरी, समानता। रार= झगड़ा। धींगमधूँगा= दुष्टता, द्वंद्व, झगड़ा।

**भावार्थ**—स अक्षर कहता है कि सियार सिंह से अपनी बराबरी की डींग हांकते हैं और झगड़ा करते हैं। कौआ बक-बक करके कहता है कि मैं हंस से बड़ा हूं। झगड़ालू लोग बकबक करने लगे, तो संतों ने उनकी द्वंद्वात्मक बातें सुनकर अपने कान मूंद लिये। पलटू साहेब कहते हैं कि अंततः बोध और रहनी में रहने वाले ही बड़े होते हैं और इसलिए वे ही बड़े हैं, शेष लोगों का तो चार दिन के लिए बकबक करना मात्र है।

अरिल-144

**हहा हक है वही हलाल सबर से बैठे आवै।**
**खाना वही हराम पेट को माँगन जावै॥**
**हाथी धीरज धरै साँझ को मन भर पावै।**
**अरे हाँ पलटू टूक टूक को स्वान, बीस घर भटका खावै॥ 27॥**

**शब्दार्थ**—हक= हक़, अधिकार, कर्तव्य। हलाल= जायज़, उचित, ठीक। सबर= सब्र, संतोष। हराम= नाजायज़, अनुचित।

**भावार्थ**—ह अक्षर कहता है कि मनुष्य अपना कर्तव्य कर्म करता रहे और संतोष करके स्थिर रहे; फिर जो कुछ प्राप्त हो, वही उचित समझे, उसी पर अपना अधिकार माने। पेट के लिए दूसरे के घर मांगने जाना अनुचित है। हाथी धैर्य धारण करके खड़ा रहता है, तो शाम को अपनी भारी खुराक पाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि कुत्ते एक टुकड़े के लिए बीसों घर भटकते हैं।

अरिल-145

**अआ अपनी ओर निहार तुझे क्या परी परारी।**
**घर में मूसै चोर और को झिखै अनारी॥**

**अपनी करनी साच और सब झूठ कहानी।**
**अरे हाँ पलटू धोय सिताबी हाथ, जात है बहता पानी॥ 28॥**

**शब्दार्थ**—परारी= दूसरे का, पराई। झिखै= झिड़कता है, डांटता है; बकबक करता है। सिताबी= शिताबी, शीघ्रता।

**भावार्थ**—अ मात्रा कहती है कि हे कल्याणार्थी! तू अपनी ओर देख। तुझे दूसरे की क्या चिंता है? हे अनाड़ी! तेरे हृदय-भीतर कामादि चोर हर क्षण तेरा आत्मधन लूटते हैं। तू अपनी रक्षा नहीं करता है। तू दूसरे की क्या शिकायत या चिंता करता है, दूसरे के लिए क्या बक-बक करता है ? अपनी करनी और रहनी को हर क्षण शुद्ध बनाये रखना जीवन की सत्यता है। शेष अन्य के विषय में बकबक करना झूठी कहानी है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे कल्याणार्थी! जीवन के उत्तम समय का निर्मल जल बहा जा रहा है। तू शीघ्र अपने हाथों को धो ले—अपने को सब तरफ से मुक्त कर ले।

अरिल-146

**ईई इसम करै कोइ मरद और सब पेट जियावैं।**
**मार गया कोइ सिंह खान को गीदड़ धावैं॥**
**छत्र फिरै सिर ऊपर सोई बाच्छाह कहावै।**
**अरे हाँ पलटू सब नायक हो जायँ, तो बग्घी कौन लदावै॥ 29॥**

**शब्दार्थ**—इसम= इस्म, नाम, संज्ञा। मरद= मर्द, वीर। बाच्छाह= बादशाह। नायक= निर्देशक, सरदार। बग्घी= चार पहियों की घोड़ा गाड़ी।

**भावार्थ**—ई मात्रा कहती है कि कोई शूरवीर एवं मनोविजयी अपना नाम उजागर करता है। शेष लोग तो अपने पेट पालते हैं। एक सिंह किसी जानवर को मारता है। सिंह के चले जाने पर उसे खाने के लिए गीदड़ दौड़ते हैं। जिसके सिर के ऊपर छत्र रहता है, वह बादशाह कहलाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि यदि सब निर्देश करने वाले सरदार हो जायं, तो बग्घी में सामान लादने वाला कुली कौन रहेगा ?

अरिल-147

**उऊ उमर गई सब बीति चलन को दिन है थोरा।**
**अहमक भजन बिचारु गोड़ धरि करौं निहोरा॥**
**भूले कौल करार धनी घर कैसे जइहौ।**
**अरे हाँ पलटू सिर पर मारै धौल काल तब कहाँ लुकइहौ॥ 30॥**

**शब्दार्थ**—अहमक= अहमक़, बेवकूफ, मूर्ख। निहोरा= प्रार्थना, निवेदन; कृपा, उपकार, एहसान; अवलंब, सहारा; यहां अर्थ है प्रार्थना, निवेदन। कौल= प्रतिज्ञा। करार= क़रार, प्रतिज्ञा। धौल= चोट, आघात। लुकइहौ= छिपोगे।

**भावार्थ**—उ मात्रा कहती है कि हे मनुष्य! तुम्हारी सब आयु बीत गयी है। अब संसार से चलने के दिन थोड़े रह गये हैं। हे मूर्ख! विचार कर और आत्मशोधन में लग जा। मैं इसके लिए तेरे पैर पकड़कर तेरी प्रार्थना करता हूं। तू पूर्व प्रतिज्ञा को भूल गया है। तू धनी के घर कैसे जायेगा? पलटू साहेब कहते हैं कि जब मृत्यु तेरे सिर पर जोर कर आघात करेगी, तब तू कहां छिपेगा?

**विशेष**—यह पुराना विश्वास है कि जीव माता के गर्भ में ईश्वर से प्रार्थना करता है कि मुझे इस गर्भवास से निकाल लो, मैं पैदा होकर तुम्हारा भजन तथा आत्मकल्याण करूंगा। उसी विश्वास के आधार पर ऊपर कहा गया है कि "भूले कौल करार।" गर्भवास में जीव अचेत रहता है। उसमें ऐसी बुद्धि कहां जो किसी से प्रार्थना करे! सार अर्थ है कि जीवन में आत्मशोधन करना चाहिए।

## अरिल-148

**एऐ एक ओर पढ़ै कुरान बाँग धुनि लावै मुलना।**<br>
**एक ओर बाजै संख बेद धुनि पंडित रटना॥**<br>
**सोय रहै मैदान खाय बरु माँगि कै।**<br>
**अरे हाँ पलटू दोऊ घर लागी आग, बचा कोइ भागि कै॥ 31॥**

**शब्दार्थ**—बांग= शब्द, आवाज़, पुकार।

**भावार्थ**—ए मात्रा कहती है कि एक ओर मुलना कुरान पढ़ता है और जोर से बांग देता है और दूसरी ओर शंख बजाकर पंडित वेदों का पाठ करता है। दोनों ईश्वर के एकाधिकारी ठेकेदार बनते और एक दूसरे को काफिर और नास्तिक कहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि दोनों के सम्प्रदायों में मिथ्या अहंकार एवं अज्ञान की आग लगी है। कोई निष्पक्ष विवेकवान इन दोनों की धोखेधड़ी से भागकर बचता है और वह सोचता है कि भले मांगकर खाना पड़े और मैदान में सोना पड़े, परन्तु इन मिथ्याभिमानियों के पास न जाय।

**विशेष**—हिन्दू-मुसलमान के पंडित-मुल्ला सामने थे, इसलिए इनके नाम यहां आये हैं। वस्तुतः संसार के उन सभी सम्प्रदायों को इस अर्थ में

लेना चाहिए जो सत्य के एकाधिकारी ठेकेदार बनते हैं और स्वर्ग तथा मोक्ष अपने सम्प्रदाय के लोगों के लिए ही रिजर्व मानते हैं, शेष सबको नरक तथा भवबंधनों में भटकने के लिए भेजते हैं। ऐसे अहंकारी लोग घोर अंधकार में हैं।

अरिल–149

**ओऔ औरों बैर बिहाय प्रीति सज्जन से जोड़ी।**
**बड़े अनाड़ी लोग जोड़ि कै पाछे तोड़ी॥**
**मौत देहि भगवान सजन से ह्वै जु बिछोहा।**
**अरे हाँ पलटू हँसिहैं बैरी लोग, जीति जब पइहैं दोहा॥ 32॥**

**शब्दार्थ**—बिहाय= छोड़कर, त्यागकर। दोहा= द्रोही, दुश्मन, शत्रु।

**भावार्थ**—ओ मात्रा कहती है कि अन्य सबसे शत्रुता त्यागकर सज्जन-संतों से प्रेम जोड़ना चाहिए। वे लोग बहुत ही बेवकूफ हैं जो सज्जन-संतों से प्रेम जोड़कर पीछे उसे तोड़ देते हैं। यदि संतों का वियोग हो जाय तो इससे अच्छा है कि भगवान मौत दे दे। जब कामादि शत्रु हमारे ऊपर विजय कर लेंगे, तब हमारे विरोधी लोग हमारी हंसी उड़ायेंगे।

अरिल–150

**अंअः औङ ओअं एक और नाहीं कोई दूजा।**
**एक ब्रह्म संसार करौं मैं किसकी पूजा॥**
**समुझ पड़ा करतार करम को किया भगूरा।**
**अरे हाँ पलटू दुरमति भागी दूरि, मिला जब सतगुरु पूरा॥ 33॥**

**शब्दार्थ**—भगूरा= सड़ा दिया, नष्ट कर दिया।

**भावार्थ**—अं मात्रा कहती है कि एक ओं है, दूसरा कोई नहीं है। जब सारा संसार एक ब्रह्म ही है, तब मैं किसकी पूजा करूं? जब समझ में आया कि आत्मा ही कर्ता है और यह अपने राग-द्वेषजनित कर्मों के बंधनों में बंधता है, तब सारे राग-द्वेष जनित कर्मों को नष्ट कर दिया। पलटू साहेब कहते हैं कि पूरा सद्गुरु मिल गया, तब उससे आत्मज्ञान का उपदेश पाकर सारी दुर्बुद्धि दूर हो गयी।

**विशेष**—जड़-चेतन सर्वथा भिन्न हैं और चेतन असंख्य हैं। मन द्वैत बनाता है; अतएव संकल्पों के त्याग से चेतन जीव अकेला, असंग तथा केवल रह जाता है। यही उसका अद्वैत है।

# कवित्त

## कवित्त-1

**पूरन ब्रह्म रहै घट में,**
**सठ तीरथ कानन खोजन जाई।**
**कीट पतंग रहे परिपूरन,**
**कहु तिल एक न होत जुदा ही॥**
**नैन दियो हरि देखन को,**
**पलटू सब में प्रभु देत दिखाई।**
**ढूँढ़त अंध गरंथन में,**
**लिखि कागद में कहुँ राम लुकाही॥ 1॥**

**शब्दार्थ**—कानन= वन, जंगल। लुकाही =छिपा है।

**भावार्थ**—शरीर में बैठा चेतन जीव पूर्ण ब्रह्म है, किन्तु भोला मनुष्य उसे तीर्थ और वनों में खोजने जाता है। कीट-पतंग में भी वह विद्यमान है। वह चेतन जीव से कभी एक तिल भी अलग नहीं होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि प्रकृति ने मनुष्य को आंखें दी हैं जिनसे वह सब प्राणियों में परमात्मा का दर्शन करे। किन्तु विवेकहीन लोग उसे किताबों में खोजते हैं। क्या लिखे हुए कागज में कहीं राम छिपा बैठा है ?

## कवित्त-2

**चाहौं ना चारि धाम चाहौं ना सात पुरी,**
**चाहौं ना तीरथ ना द्वारिका दगावना।**
**नहीं चहौं कैलास नहीं ब्रह्म लोक वास,**
**चहौं न बैकुंठ नाहिं नर्कहू को भावना॥**
**चाहौं न इंद्र लोक चाहौं न मुक्ति द्वार,**
**चाहौं न राम नाहिं भक्ति की बड़ावना।**
**चाहै न पलटू दास पूजी है सकल आस,**
**एक चाह रही संत रेनु केरी चाहना॥ 2॥**

**शब्दार्थ**—संत रेनु= संत-चरणों की धूलि।

**भावार्थ**—मैं चारों धाम नहीं चाहता हूं। सात पुरी, अन्य तीर्थ या द्वारका में अंग दगवाने की भी इच्छा नहीं है। कैलाशवास, ब्रह्मलोकवास तथा बैकुंठ भी नहीं चाहता हूं। नरक जाने की तो इच्छा ही कैसे होगी ? इंद्रलोक और मुक्तिद्वार भी नहीं चाहता हूं। राम को भी नहीं पाना चाहता हूं और उसके प्रति भक्ति को बढ़ाना नहीं चाहता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरी सारी कामनाएं पूरी हो गयी हैं। बस, एक इच्छा है कि शरीर रहे तक संतों की चरणरज का आधार मिला रहे।

**विशेष**—सारी कामनाएं शांत हो जाने पर जीव स्वयं पूर्ण है। वह स्वयं राम है, ब्रह्म है, खुदा है, गॉड है, मुक्त है। इस स्थिति को जीवनपर्यन्त बनाये रखने के लिए सत्संग चाहिए।

### कवित्त-3

**सुक्ख में मगन औ दुख में दिलगीरी आवै,**
**मरत है बड़ाई को छोटाई की अचाहना।**
**अस्तुति में फूलै औ क्रोध करै निन्दा सुनि,**
**मित्र सेती भाव करै दुष्ट से अभावना॥**
**संपति में खुसी औ बिपति बिलाप बड़ा,**
**पूजै में कष्ट है पुजावने की कामना॥**
**पलटू दास चिन्ता ज्यों चरत है सरीर कँहै,**
**बिगरी फकीरी बेकूफी से ना बना॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—दिलगीरी= उदासी, दुख। बेकूफी= बेवकूफ़ी।

**भावार्थ**—सुख में प्रसन्न हैं, दुख में दुखी, प्रशंसा पाने के लिए जान देते हैं, लघुता नहीं चाहते, अपनी स्तुति पाकर फूले फिरते हैं और निंदा पाकर क्रोध करते हैं, मित्र से मोह है, वैरी से द्वेष है, संपत्ति पाकर प्रसन्न हैं, विपत्ति आने पर फूट-फूट कर रोते हैं, दूसरों का सत्कार करने में दुख मानते हैं, किन्तु अपने को पुजवाने के लिए बड़ी इच्छा है, जैसे पशु फसल चर ले, वैसे उनके शरीर को चिंता चर रही है; पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसी स्थिति में फकीरी नष्ट है। मूर्खता रखकर त्याग नहीं बनता।

# सवैया

## सवैया-1

**छिन में बहुत हरि तरंग उठै, छिन में धन खोजत लोग लुगाई।**
**छिन में बहु जोग बैराग कथै, छिन काम किरोध को मारन धाई॥**
**छिन में बहु भोग विलास करै, छिन में उठि धाय करै कुटिलाई।**
**पलटू कपटी मन चोट करै, हम भागि बचे गुरु की सरनाई॥4॥**

**शब्दार्थ**—चोट= आघात, मार।

**भावार्थ**—मन क्षण में हरिभजन की तरंग में डूबता है, क्षण में धन तथा स्त्री खोजता है, क्षण में योग-वैराग्य की बात करता है और काम-क्रोध को मारता है, क्षण में बहुत भोग-विलास में उलझता है, क्षण में कुटिलता करने के लिए दौड़ता है। पलटू साहेब कहते हैं कि यह कपटी मन बारंबार आघात करता है, परन्तु मैंने भागकर सद्गुरु की शरण ली और उसकी चोट से बच गया।

## सवैया-2

**चोर चंडाल चमार कहै और कोऊ, कहै हरिदास है भाई।**
**कोऊ कहै यह तो नारि लुभानो, कोऊ कहै माया रति आई॥**
**निंद करै ता से निंद करैये, अस्तुति को न मनावन जाई।**
**जो हम हैं हरि जानत हैं, अब रैन दिवस उनकौ गुन गाई॥5॥**

**शब्दार्थ**—हरिदास= भगवत भक्त।

**भावार्थ**—मुझे कोई चोर कहता है, कोई भंगी, कोई चमार और कोई कहता है कि भाई, यह तो भगवतभक्त है। कोई कहता है कि यह तो स्त्री का मोही है। कोई कहता है कि यह माया में डूबा है। जो मेरी निन्दा करता है, उसको मैं निन्दा करने देता हूं और जो मेरी स्तुति करता है, मैं उसको धन्यवाद देने नहीं जाता हूं। मैं जो हूं वह हरि जानता है। अब मैं रात-दिन उसी का गुण गाता हूं।

**विशेष**—आत्मा परमात्मा है। बोधवान अपनी सच्ची स्थिति को जानता है और वह उसी में निरन्तर लीन रहता है।

सद्‌गुरवे नमः

# पलटू साहेब की बानी

खंड–तीन

## शब्द

### 1. सद्‌गुरु का महत्त्व

शब्द–1

**बूझि बिचारि गुरु कीजिये, जो कर्म से न्यारा।**
**कर्म-बन्ध हरि दूरि है, बूड़हु मँझधारा॥टेक॥**
**काम क्रोध जिनके नहीं, नहिं भूख पियासा।**
**लोभ मोह एकौ नहीं, नहिं जग की आसा॥ 1॥**
**ज्यों कंचन त्यों काँच है, अस्तुति सो निन्दा।**
**सत्रु मित्र दोउ एक हैं, मुरदा नहिं जिन्दा॥ 2॥**
**जोग भोग जिनके नहीं, नहिं संग्रह त्यागी।**
**बन्द मोष एकौ नहीं, सत सबद के दागी॥ 3॥**
**पाप पुण्य जिनके नहीं, नहिं गरमी पाला।**
**पलटू जीवन-मुक्त ते, साहिब के लाला॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—मोष= मोक्ष। दागी= दागवाला, चिह्न एवं लक्षणवाला। लाला = लाल, प्रिय शिष्य।

**भावार्थ**—हे मुमुक्षु! समझ–बूझकर किसी को गुरु रूप में स्वीकार करो। आत्मशांति रूपी हरि की प्राप्ति राग–द्वेष पूर्ण कर्म–बंधनों से परे की स्थिति है। यदि इस तथ्य को नहीं समझते हो तो संसार–सागर में डूबोगे ॥ टेक ॥ जिनके मन में काम–क्रोध नहीं है; संपत्ति–स्वामित्व की तृष्णा नहीं है, लोभ–मोहादि एक भी मनोविकार नहीं है और न जगत–प्रसिद्धि की

आशा है ॥ 1 ॥ जो सोना और कांच को समान दृष्टि से देखते हैं, स्तुति-निन्दा पाकर समान भाव से रहते हैं; जिनकी शत्रु-मित्र दोनों पर समान दृष्टि है; जिन्हें मरने से भय नहीं है और जीने की इच्छा नहीं है ॥ 2 ॥ जो दिखावटी योगी नहीं हैं और भोगों से दूर हैं; न संग्रह करते हैं और न त्याग का दिखावा करते हैं। जिनका मन विषयों से बंधा नहीं है और जिनका अपने मोक्ष का प्रदर्शन नहीं है। जो सत्य निर्णय के लक्षण वाले हैं ॥ 3 ॥ जो लंपटता तथा हिंसा रूपी पाप नहीं करते और जिनके द्वारा निष्काम भाव पूर्वक पुण्यकर्म होते हैं, जो गरमी-ठंडी में समता से रहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि वे सद्गुरु साहेब के लाल एवं शिष्य जीवन्मुक्ति रहनी में रहते हैं। ऐसे सद्गुरु की शरण में निवास करो ॥ 4 ॥

## शब्द-2

**गुरु दरियाव नहाया है, ताकी दुरमति भागी ॥टेक॥**
**गुरु दरियाव सदा जल निरमल, पैठत उपजै ज्ञाना है ॥ 1 ॥**
**अरसठ तीरथ गुरु के चरनन, स्री मुख आपु बखाना है ॥ 2 ॥**
**जब लग गुरु दरियाव न पावै, तब लग फिरै भुलाना है ॥ 3 ॥**
**पलटू दास हम बैठि नहाने, मिटिगा आना जाना है ॥ 4 ॥**

**शब्दार्थ**—दरियाव= दरिया, नदी, समुद्र। अरसठ तीरथ= अड़सठ तीर्थ, समस्त तीर्थ।

**भावार्थ**—सद्गुरु की सत्संग रूपी नदी में जिसने स्नान किया, उसकी दुर्बुद्धि दूर हो गयी ॥ टेक ॥ सद्गुरु के सत्संग रूपी दरिया का जल सदैव निर्मल रहता है। उसमें डुबकी लगाते ही आत्मज्ञान उत्पन्न होता है ॥ 1 ॥ श्री विष्णु, श्री राम तथा श्री कृष्ण ने स्वयं अपने श्रीमुख से कहा है कि सद्गुरु-संतों के चरणों में समस्त तीर्थों का निवास है ॥ 2 ॥ कल्याणार्थी जब तक सद्गुरु के सत्संग रूपी दरिया में स्नान नहीं करता, तब तक संसार में भूला-भटका फिरता है ॥ 3 ॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने गुरु-दरिया में प्रवेश कर अपना मल धो डाला है। इसलिए मेरा संसार में भटकना बन्द हो गया है ॥ 4 ॥

## शब्द-3

**चादर लेहु धुवाइ है, मन मैल भया है ॥टेक॥**
**सतगुरु पूरा धोबी पाया, सतसंगति सौंदाई है ॥ 1 ॥**

**तिरगुन दाग पर्‌यो चादर में, मलि मलि दाग छुड़ाई है॥ 2॥**
**आँच दिहिन बैराग कि भाठी, सरवन मनन घमाई है॥ 3॥**
**निरखि परखि कै चादर धोइनि, साबुन ज्ञान लगाई है॥ 4॥**
**पलटू दास ओढ़ि चलु चादर, बहुरि न भवजल आई है॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—सौंदाई= सौंदन, गंदे कपड़े रेह में सानना। सरवन= श्रवण। घमाई= धूप में सुखाना।

**भावार्थ**—हे साधक ! मन रूपी चादर मैली है। इसे धुला लो॥ टेक॥ पूर्ण सद्‌गुरु धोबी है। उसकी शरण में जाओ। उनका सत्संग सौंदन है॥ 1॥ मन रूपी चादर में सत, रज तथा तम गुण के कर्मों के दाग पड़े हैं। उन्हें रगड़-रगड़ कर छुड़ा लो॥ 2॥ वैराग्य की भट्ठी में आंच देकर चादर को गरम कर लिया और ज्ञानचर्चा का श्रवण-मनन रूपी धूप में सुखा लिया॥ 3॥ आत्मज्ञान का साबुन लगाकर मन रूपी चादर को निरख-परख कर धो लिया॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसी स्वच्छ मन रूपी चादर को ओढ़कर जीवन का आचरण करो, तो पुनः संसार-सागर में नहीं आना होगा॥ 5॥

### शब्द-4

**सकल तजि गुरु ही से ध्यान लगैहौं॥ टेक॥**
**ब्रह्मा बिस्नु महेस न पुजिहौं, ना मूरत चित लैहौं।**
**जो प्यारा मोरे घट माँ बसतु है, वाही को माथ नवैहौं॥ 1॥**
**ना कासी में करवत लैहों, न पचकोस में जैहों।**
**प्राग जाय तीरथ नहिं करिहौं, जगर न सीस कटैहौं॥ 2॥**
**अजपा और अनाहू साधो, त्रिकुटी ध्यान न लैहौं।**
**पदम आसन खींच न बैठौं, अनहद नाहिं बजैहौं॥ 4॥**
**सबहीं जाप छोड़ि के साधो, गुरु का सुमिरन लैहौं।**
**गुरु मूरत हिरदय में छाई, वाही से ध्यान लगैहौं॥ 4॥**
**दुई खुदी हस्ती जब मेटे, निरंकार कहलैहौं।**
**गगन भूमि में राज हमारो, अनलहक धूम मचैहौं॥ 5॥**
**पलटू दास प्रेम की बाजी, गुरु ही से दाँव लगैहौं।**
**जीतौं तो मैं गुरु को पावौं, हारौं तो उनकी कहैहों॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—जगर= जगन्ननाथ। अनाहू= अनाहतनाद। दुई= द्वैत, अनात्म। खुदी= अहंकार। अनलहक= अनलहक़, मैं सत्य, मैं ब्रह्म, अहं ब्रह्मास्मि। बाजी= दावं।

**भावार्थ**—मैं सब कुछ छोड़कर सद्गुरु का ध्यान लगाऊंगा॥ टेक॥ मैं ब्रह्मा, विष्णु और महादेव को नहीं पूजूंगा और न मूर्ति-पूजा में मन लगाऊंगा। जो आत्म देव चेतन मेरे शरीर में बसता है, मैं उसी को नमन करूंगा—आत्मचिंतन करूंगा॥ 1॥ न काशी में करवट लूंगा और न अयोध्या की पंचकोसी परिक्रमा करूंगा। प्रयागराज में भी जाकर तीर्थ नहीं करूंगा। जगन्नाथ में जाकर अपना सिर नहीं पटकूंगा॥ 2॥ हे संतो ! अजपा जप और अनाहतनाद का भी चक्कर छोड़ दूंगा, और त्रिकुटी में किसी कल्पित बिन्दु का ध्यान नहीं करूंगा। पद्मासन लगाकर अनाहतनाद का बाजा नहीं बजाऊंगा॥ 3॥ हे संतो ! सब जप छोड़कर केवल सद्गुरु का स्मरण करूंगा। मेरे हृदय में सद्गुरु की मूर्ति की छवि छायी है। मैं उसी का ध्यान करूंगा॥ 4॥ मैं जब द्वैत दृश्य और देह का अहंकार त्याग दूंगा, तब आकृतिविहीन शुद्ध चेतन कहलाऊंगा। जब मैं अनलहक़ की धूम मचाऊंगा—मैं सत्य हूं, मैं ब्रह्म हूं के भाव में डूबूंगा तब प्रपंचशून्य स्थिति में मेरा राज्य होगा॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं सद्गुरु से ही प्रेम का दावं लगाऊंगा। यदि मैं जीत गया तो सद्गुरु को पा जाऊंगा और हार गया तो उनका अपना कहलाऊंगा॥ 6॥

## 2. परमात्मा आत्मा है

शब्द-5

**तोमें है तेरा राम बैरागिन, भूलि गया तोहि धाम॥टेक॥**
**घिव ज्यों रहै दूध के भीतर, मथे बिनु कैसे पावै।**
**फूल मँहै ज्यों बास रहतु है, जतन सेती अलगावै॥ 1॥**
**मिंहदी मँहै रहै ज्यों लाली, काठ में अगिन छिपानी।**
**खोदे बिना नहीं कोइ पावै, ज्यों धरती में पानी॥ 2॥**
**ऊख मँहै ज्यों कंद रहतु है, पेड़ रहै फल माहीं।**
**देस देसंतर ढुँढ़त फिरतु है, घट की सुधि है नाहीं॥ 3॥**
**पूरन ब्रह्म रहै तोही में, क्यों तू फिरै उदासी।**
**पलटू दास उलटि कै ताकै, तू ही है अबिनासी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—कंद= क़ंद, चीनी, शकर।

**भावार्थ**—हे वैरागी ! तेरे भीतर तेरा राम है। तुम्हें अपना आत्मधाम भूल गया है॥ टेक॥ जैसे घी दूध में रहता है। मथन किये बिना वह कैसे मिल

सकता है? जैसे फूलों में सुगंधी रहती है, लोग प्रयत्न करके उसे उनसे अलग कर लेते हैं॥ 1॥ मेंहदी के पत्ते में जैसे लाली रहती है। उसे पीसने पर वह निकलती है। काष्ठ में आग रहती है। उसे रगड़कर प्रकट किया जाता है। जैसे पानी धरती के भीतर रहता है। धरती खोदे बिना कोई पानी कैसे पा सकता है?॥ 2॥ जैसे ऊख में शकर रहती है और फल के बीज में वृक्ष रहता है, वैसे तेरे भीतर तेरा परमात्मा रहता है। तू उसे देश-देशांतर में ढूंढ़ता-फिरता है। यह तुझे बोध ही नहीं है कि वह शरीर के भीतर ही है॥ 3॥ हे मनुष्य! पूर्ण ब्रह्म तेरे अस्तित्व में है। तू दुखी होकर क्यों भटकता है? पलटू साहेब कहते हैं कि तू अपनी तरफ घूमकर देख। तू ही अविनाशी परमात्मा है॥ 4॥

## शब्द-6

**क्यों तू फिरै भुलानी जोगिनि, पिय को मरम न जानी॥टेक॥**
**अपने पिय को खोजन निकरी, है तू चतुर सयानी।**
**कंठ में माला खोजै बाहर, अजहूँ लै पहिचानी॥ 1॥**
**मृग की नाभि मँहै कस्तूरी, वाको बास बसानी।**
**खोजत फिरै नहीं वह पावै, होस न करै अपानी॥ 2॥**
**लरिका रहै बगल में तेरे, सहर ढोल दै छानी।**
**खसम रहै पलना पर सूता, पिय पिय करै दिवानी॥ 3॥**
**साचा सतगुरु खोजु जाय तू, दयावंत सत-ज्ञानी।**
**पलटू दास पिया पावैगी, लेहु बचन को मानी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—जोगिनि= योगपरायणा मनोवृत्ति। पिय= प्रियतम, पति, परमात्मा। कंठ= गला। छानी= घूम डाली। खसम= पति।

**भावार्थ**—हे योगपरायणा विरहिनी मनोवृत्ति! तू भूली-भूली क्यों भटकती है? तू प्रियतम परमात्मा का रहस्य नहीं समझती है॥ टेक॥ तू बुद्धिमान और समझदार है। तू प्रियतम परमात्मा को खोजने निकली है। जैसे किसी के गले में माला पड़ी हो, परंतु वह उसे बाहर खोजे, वैसे तेरी दशा है। तू आज भी पहचान ले॥ 1॥ मृग की नाभि में सुगंधित कस्तूरी है और वह उसकी सुगंधी से ओत-प्रोत है; परन्तु वह अज्ञानवश उसे वन-वन खोजता है और पाता नहीं है। वह अपनी तरफ चेत ही नहीं करता है कि कस्तूरी मेरी

नाभि में है॥ 2॥ बालक तेरे पास में है, परन्तु तू उसकी खोज में ढोल बजाकर शहर की गली-गली में भटक रही है। पति शय्या पर सोया है, परन्तु तू दीवानी प्रियतम-प्रियतम कहते हुए उसे बाहर पुकार रही है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि सच्चे सद्गुरु की खोज करो जो दयावान और सत्य स्वरूप का ज्ञानी हो, फिर तू उनके उपदेश से समझ जायगी कि प्रियतम परमात्मा आत्मा ही है। मेरी इस बात को मान लो॥ 4॥

## 3. सद्गुरु-संत की महिमा

शब्द-7

**जै जै जै गुरु गोबिन्द, आरती तुम्हारी।**
**निरखत पदकंज कमल, कोटि पतित तारी॥टेक॥**
**कोटि भानु उदै जा के, दीपक के बारी।**
**छीर है समुद्र जा के, चरन का पखारी॥ 1॥**
**लख चौरासी तीनि लोक, जा की फुलवारी।**
**पुहुप लै कै का चढ़ावों, भँवर कै जुठारी॥ 2॥**
**बाल भोग कहा दीजै, द्वारे पदारथ चारी।**
**कुबेर जी भंडारी जा के, देबी पनिहारी॥ 3॥**
**सुन्न सिखर भवन जा के, तुरिया असवारी।**
**आठ पहर बाजा बजै, सबद की झनकारी॥ 4॥**
**काम क्रोध लोभ मोह, सतगुरु धै मारी।**
**पलटू दास देखि लिया, तन मन धन वारी॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—गोविन्द= पलटू साहेब के गुरु का नाम श्री गोविन्द साहेब। पखारी= धोवन। बाल भोग= प्रातः काल का कलेवा रूप, नैवेद्य, जलपान। वारी= न्योछावर, समर्पण।

**भावार्थ**—हे सद्गुरु श्री गोविन्द साहेब! आपकी बारंबार जय हो। मैं आपकी आरती करता हूं। आपके चरण-कमलों के दर्शन से करोड़ों पतितों का उद्धार हुआ॥ टेक॥ आपने जो आत्मज्ञान की ज्योति जलाई, उससे करोड़ों उदित सूर्य का प्रकाश तुल नहीं सकता। क्षीरसागर तो आपका चरण-धोवन है॥ 1॥ चौरासी लाख योनियां और तीनों लोक जिसकी फुलवारी हैं, उस सद्गुरु की पूजा में भंवरों के जुठारे फूलों को क्या चढ़ाऊं?॥ 2॥ जिसकी सेवा में अर्थ, धर्म, काम तथा मोक्ष चारों पदार्थ द्वार पर खड़े हैं, जिसके

भंडारी धनपति कुबेर जी हैं और लक्ष्मी देवी जिसके यहां पानी भरती हैं, उनको मैं जलपान रूप में क्या समर्पित करूं? ॥ 3 ॥ संकल्प-शून्य की ऊंचाई जिसका निवास स्थान है और आत्मलीनता रूपी तुर्यगा जिसका वाहन है, उसके यहां आठों पहर आत्मज्ञान-अनुभव का बाजा बजता है॥ 4 ॥ सद्गुरु ने काम, क्रोध, लोभ, मोहादि शत्रुओं को मार गिराया है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने उनकी सच्चाई को देख लिया है, इसलिए उनके चरणों में अपने तन, मन, धन को न्योछावर कर दिया है॥ 5 ॥

**विशेष**—पलटू साहेब कवि हृदय हैं। कवि में भावुकता आती है और उसमें अतिशयोक्तियां भी। इन सबकी झलकियां ऊपर प्रदर्शित हैं।

## शब्द-8

**आरती कीजै संत चरन की, यही उपाय न आन तरन की ॥टेक॥**
**संत को जस हरि स्री मुख गावै, संत की रज ब्रह्मा नहिं पावै॥ 1 ॥**
**संत चरन बैकुंठ है लोचत, संत चरन को तीरथ सोचत॥ 2 ॥**
**संत राम से अंतर नाहीं, इक रस देखत दुऊ माहीं॥ 3 ॥**
**लछमी है संतन की दासी, रज चाहत कैलास के बासी॥ 4 ॥**
**कोटि मुक्ति संतन की चेरी, पलटू दास मूल हम हेरी॥ 5 ॥**

**शब्दार्थ**—लोचत= अभिलाषा करता है, इच्छा करता है। रज= धूल।

**भावार्थ**—संतों के चरणों की आरती करो। उनके चरणों में समर्पित हो जाओ। यही भवसागर से तरने का उपाय है। अन्य उपाय नहीं है॥ टेक ॥ श्री विष्णु स्वयं अपने श्रीमुख से संतों के सुयश का गुणगान करते हैं। ब्रह्मा भी संत चरण-रज को अपने सिर पर रखने के लिए तरसते हैं॥ 1 ॥ बैकुंठ के देवता संत-चरण की सेवा करना चाहते हैं। संत-चरण में झुकने के लिए तीर्थवासी भी सोचते हैं॥ 2 ॥ संत और परमात्मा में भेद नहीं है। विवेकवान दोनों शब्दों में एक ही तत्त्व देखते हैं—उद्धारक परमात्मा संत हैं जो प्रत्यक्ष हैं॥ 3 ॥ लक्ष्मी तो संतों की चेरी है। कैलाश के वासी शिव जी भी संत-चरण की धूल चाहते हैं॥ 4 ॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने मुक्ति का कारण संतों को समझा है। करोड़ों मुक्ति संतों की सेविकायें हैं॥ 5 ॥

**विशेष**—संतों में भक्ति होगी, तब उनका सत्संग मिलेगा। फिर आत्मज्ञान होगा। इसके बाद उसके अनुसार आचरण करने से मोक्ष होगा।

## 4. शब्द विवेक

शब्द-9

**अरे मोरे सबद बिबेकी हंसा हो, बैठो सबद की डार॥टेक॥**
**सबदै ओढ़ौ सबद बिछाओ, सबदै भूख अहार।**
**निसि दिन रहौ सबद के घर में, सबदै गुरु हमार॥ 1॥**
**लै हथियार सबद कै मारौ, सबद खेत ठहराओ।**
**कबहुँ कुचाल जो होइ तुम्हारी, सबद में भागि लुकाओ॥ 2॥**
**आदि अनादि सबद है भाई, सबदै मूल बिचारा।**
**जिनके चोट सबद की लागी, आवागवन निवारा॥ 3॥**
**सबदै मूल है सबकै साखा, सबदै सबद समाना।**
**पलटू दास जो सबद बिबेकी, सबद के हाथ बिकाना॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—खेत= रणक्षेत्र। लुकाओ= सुरक्षित होओ। आदि= मूल। अनादि = सदा से। मूल= कारण।

**भावार्थ**—ऐ मेरे शब्दों के विवेकी नीर-क्षीर के निर्णयता हंस! निर्णय-शब्दों की शाखा पर बैठो॥ टेक॥ निर्णय शब्दों को शय्या और ओढ़ना बनाओ और उसी की भूख रखो तथा उसी का आहार करो। रात-दिन निर्णय शब्दों के भवन में रहो। निर्णय शब्द ही हमारा गुरु है॥ 1॥ निर्णय शब्दों के अस्त्र-शस्त्र लेकर भ्रम और वासना को मारो और निर्णय शब्दों के आधार पर ही मन के युद्ध क्षेत्र में अडिग रहो। यदि कभी तुम्हारे मन में खराब बात आये, तो भागकर निर्णय शब्दों की सुरक्षा में घुस जाओ॥ 2॥ हे भाई! सदा से निर्णय शब्द ही कल्याण की जड़ हैं। विचार-विवेक प्रवाहित करने के लिए निर्णय शब्द ही कारण है। जिस मनुष्य के मन में निर्णय-शब्द की चोट लगी, वह संसार कचड़े का मोह त्यागकर भवसागर से पार हो गया॥ 3॥ कल्याण की जड़ निर्णय शब्द है और वे ही उसकी शाखाएं हैं। साधक निर्णय शब्दों में लीन हो जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो शब्दों के विवेकी हैं, वे निर्णय शब्दों के अनुसार अपने सत्स्वरूप आत्मा में समर्पित हो जाते हैं॥ 4॥

**विशेष**—कोई पुस्तक स्वतः प्रमाण नहीं होती, अपितु निर्णय से जो सही सिद्ध हो वही सत्य एवं प्रमाणित है। इसलिए पूर्ण निष्पक्ष हो निर्णयपूर्ण शब्दों का आदर करो।

शब्द-10

**मुए सोई जीवते भाई, जिन्ह लगी सबद की चोट॥टेक॥**
**उनको काऊ कुछ कहै, उन तजी है जक्त की लाज।**
**वो सहज परायन होइ गये, उन सुफल किहा सब काज॥ 1॥**
**उनको और न भावई, इक भावत है सतसंग।**
**वो लोहा से कंचन भये, लगि पारस के परसंग॥ 2॥**
**जिन्ह ने सबद बिचारिया, तिन्ह तुच्छ लगै संसार।**
**वो आय पड़े सतसंग में, सब डारि दिहा सिर भार॥ 3॥**
**सबद छुड़ावै राज को, फिरि सबदै करै फकीर।**
**पलटू दास वो ना जियै, जिन्ह लगा सबद का तीर॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—परायन= निरत, लीन।

**भावार्थ**—जिन्हें निर्णय वचनों की चोट लगी, हे भाई ! वे जीते जी मर गये—अहंकार-शून्य हो गये॥ टेक॥ उन्होंने लोकलाज छोड़कर सत्संग-साधना का पथ अपनाया। उनको कोई कैसा भी उलटा-सीधा कहे, वे इससे निष्फिक्र रहते हैं। वे अपने सहज स्वरूप चेतन आत्मा में लीन हो गये; अतएव उन्होंने अपने कल्याण का सारा काम बना लिया॥ 1॥ उनको अन्य कुछ अच्छा नहीं लगता। उन्हें केवल विवेकवान संतों की संगत अच्छी लगती है। वे सद्गुरु रूपी पारस का स्पर्श पाकर लोहा से कंचन हो गये—विषयासक्त से जीवन्मुक्त हो गये॥ 2॥ जिन्होंने आत्मा-अनात्मा के विवेक के शब्दों का मनन किया, उनको संसार की सारी उपलब्धियां तुच्छ लगती हैं। वे मोह-माया का—सिर का सारा बोझा गिराकर सत्संग में समर्पित हो जाते हैं॥ 3॥ आत्मज्ञान और वैराग्य के शब्द सुनकर मनुष्य अपना सारा राजकाज छोड़ देता है और निर्णय शब्द मनुष्य को त्यागी बना देते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि वह मनुष्य सांसारिकता में नहीं रह पाता जिसे ज्ञान-वैराग्य प्रेरक शब्दों के बाण वेध देते हैं॥ 4॥

## 5. साधु और संत का महत्त्व

शब्द-11

**धन जननी जिन जाया है, सुत संत सखी री॥ 1॥**
**तन मन धन उन पै लै दीजे, सत्तनाम जिन पाया है॥ 2॥**

**माया जाके निकट न आवै, तिरगुन दूर बहाया है॥ 3॥**
**कंचन कांच औ सत्रु मित्र को, भेद नहीं बिलगाया है॥ 4॥**
**सहज समाधि अखंडित जाकी, जग मिथ्या ठहराया है॥ 5॥**
**पलटू दास सोई सुतवंती, संत को गोद खिलाया है॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—धन= धन्य। तिरगुन= त्रिगुण, अनात्म, माया।

**भावार्थ**—हे मित्र! वह माता धन्य है जिसने संत-पुत्र पैदा किया है॥ 1॥ उनके चरणों में शरीर, मन और धन निछावर कर दो जिन्होंने सत्यनाम के अर्थस्वरूप आत्मज्ञान की प्राप्ति की है॥ 2॥ जिनके मन में माया-मोह नहीं लगता और जिन्होंने त्रिगुणात्मक अनात्म जगत की आसक्ति दूर फेंक दी है॥ 3॥ जो कंचन और कांच तथा शत्रु-मित्र में समता बरतते हैं॥ 4॥ जिन्होंने जगत को सारहीन समझ लिया है और जिनकी अखंड सहज समाधि सब समय लगी रहती है॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं ऐसे संत को जिसने अपनी गोद में खेलाया है वही माता सच्ची पुत्रवती है॥ 6॥

## शब्द-12

**संत सिपाही बाँके अवधू, फिर पाछे नहिं ताके॥टेक॥**
**दिनदिन परै कदम आगे को, करैं मुलुक में साके।**
**हाँक देत हैं रन के ऊपर, रहैं प्रेम रस छाके॥ 1॥**
**कच्चा छीर नहीं वै पीवैं, पक्का छीर पिवैं वे माँ के।**
**आलम डेरा देखि कै उनको, छोड़ै सबद धड़ाके॥ 2॥**
**उनको भूख पियास न लागै, ज्यों खाये त्यों फाके।**
**अस्तुति निन्दा दुष्ट मित्र को, एक राह में हाँके॥ 3॥**
**काम क्रोध की गर्दन मारैं, दिल में बहुत फराखे।**
**पलटू दास फरक आलम से, वे असनाव हैं काके॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—बाँके= बांका, वीर, साहसी। साके= कीर्तिमान। आलम= संसार, जन समूह। डेरा= भीड़। फाके= भूखे। फराखे= फ़राख, उदार। फरक= फ़रक़, दूर। असनाव= मित्र, यार।

**भावार्थ**—हे अवधू! वे ही संत वीर सिपाही हैं जो पीछे लौटकर संसार के भोगों की ओर नहीं देखते हैं॥ टेक॥ प्रतिदिन उनके पैर वैराग्य-पथ में आगे पड़ते हैं। वे संसार में अपने त्याग का उत्तम कीर्तिमान उपस्थित करते

हैं। वे मानस-युद्ध में मनोविकारों को ललकारकर मारते हैं। वे आत्मस्थिति के प्रेम-रस में निरंतर तृप्त रहते हैं॥ 1॥ उन्होंने माता का कच्चा दूध नहीं पीया है, किन्तु पक्का दूध पीया है—वे पक्के निश्चय वाले होते हैं। जनसमूह उनको देखकर जोर से उलटा-पलटा कहता है॥ 2॥ किन्तु उनको संसार के भोग तथा सम्मान की भूख-प्यास नहीं लगती। वे तृप्ति और भूख की स्थिति में समतापूर्वक रहते हैं। वे दुष्टों से निन्दा तथा मित्रों से प्रशंसा पाकर दुखी-सुखी नहीं होते, अपितु समान भाव से रहते हैं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि उन्होंने काम-क्रोधादि को नष्ट कर दिया है। वे हृदय के अत्यंत उदार होते हैं। वे दुनियादारी भीड़ से दूर रहते हैं। वे किसमें मोह करेंगे? किसी से नहीं॥ 4॥

## शब्द-13

**दिल को करहु फराख फकीरा, रहु मुहासबे पाक॥टेक॥**<br>
**जो आवै सो देहु लुटाई, क्या कौड़ी क्या लाख।**<br>
**खाहु खियावहु मगन रहौ तुम, सबसे रहु बेबाक॥ 1॥**<br>
**औरत जो दरसन को आवै, नजर से ताकहु पाक।**<br>
**सोना रूपा लाल जवाहिर, तुम्हरे लेखे खाक॥ 2॥**<br>
**माया को चिरकीन लखौ तुम, देखि कै मूँदौ नाक।**<br>
**जब आवै तब देहु चलाई, तनिक न रहियो ताक॥ 3॥**<br>
**संत चकोर को संग्रह नाहीं, संग्रह करै हलाक।**<br>
**पलटू दास कहौं मैं सब से, बार बार दै हाँक॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—फराख= उदार। मुहासबे= हिसाब-किताब में, लेखा-जोखा में। बेबाक= चुकाया हुआ, साफ-सुथरा। पाक= पवित्र। चिरकीन= चिरकीं, मैला, गंदा। हलाक= मरा हुआ, मृत।

**भावार्थ**—हे फकीर! अपने हृदय को उदार रखो और व्यवहार के हिसाब-किताब में पवित्र रहो॥ टेक॥ जो भी तुम्हारे पास आवे चाहे कौड़ी चाहे लाखों की संपत्ति, उसे समाज की सेवा में लगाओ। खाओ और खिलाओ, मन से प्रसन्न रहो और सबसे व्यवहार में साफ-सुथरा रहो॥ 1॥ यदि कोई नारी तुमसे मिलने आवे तो उसे पवित्र दृष्टि से देखो। सोना हो या चांदी हो या लाल-जवाहर, तुम्हारी दृष्टि में वह सब मिट्टी ही दिखना चाहिए॥ 2॥ माया को गंदी वस्तु ही समझो और उसे देखकर अपनी

नाक मूंद लो—माया के मोह से दूर रहो। माया की चीज जब आवे तब उसे समाज की सेवा में लगाओ। इसमें थोड़ी भी ढिलाई न करो॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं बारम्बार पुकारकर सबसे कहता हूं कि संत और चकोर के लिए संग्रह करना कल्याणकारी नहीं है। यदि वे संग्रह करेंगे तो मरेंगे॥ 4॥

**विशेष**—यह धारणा है कि चकोर पक्षी चंद्रमा का प्रेमी होता है। वह अंगार को चंद्रमा का अंश मानकर उसे निगल जाता है, किन्तु जलता नहीं है; किन्तु यदि वह अंगार अपने पास संग्रह करके रखेगा तो जल मरेगा। इसी प्रकार साधु जीवन-निर्वाह ले, किन्तु अपने व्यक्तिगत जीवन के लिए धन का अधिक संग्रह न करे। यदि संग्रह करेगा तो आत्मशांति से दूर हो जायेगा।

## शब्द-14

**संतन संग आनंद परम सुख॥ टेक॥**

**जेकरी संगति ज्ञान होत है, मिटत सकल दुख द्वन्द।**
**उनके निकट काल नहिं आवै, टूटि जात जम फंद॥ 1॥**
**फूल संग से तेल बखानो, सब कोइ करत पसंद।**
**पारस छुए लोह भा कंचन, दुरमति सकल हरंद॥ 2॥**
**हेलुवाई ज्यों अवटि जारि कै, करत खाँड़ से कंद।**
**पलटु दास यह बिनती मोरी, अजहुँ चेत मतिमंद॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—हरंद= दूर हो गयी। खाँड़= गीला गुड़। कंद= सफेद शकर, मिस्री।

**भावार्थ**—संतों की संगत में परम आनंद और स्थिर सुख मिलता है॥ टेक॥ जिन संतों की संगति में रहने से आत्मा-अनात्मा का ज्ञान होता है और सारा दुख-द्वंद्व मिट जाता है, उन संतों के निकट मनःकल्पना रूपी काल नहीं आता है और उनका वासना-बंधन टूट जाता है॥ 1॥ फलों की सुगंध पाकर तेल सुगंधदार प्रशंसनीय हो जाता है। उसको सब रुचि से ग्रहण करते हैं। पारस के स्पर्श से लोहा सोना हो जाता है। इसी प्रकार विवेकवान संतों की संगत पाकर सत्पात्र साधक की सारी दुर्बुद्धि दूर हो जाती है॥ 2॥ पलटू साहेब कहते हैं कि हे मंदबुद्धि मनुष्य! मैं निवेदन करता हूं, तू आज भी सावधान हो जा। जैसे हलवाई खांड़ को पकाकर उसे उत्तम कंद बना देता है, वैसे संत तुझे शोधकर शुद्ध बना देंगे। अतएव उनकी संगत कर॥ 3॥

## शब्द-15

**चतुरन से हम दूरि, कहत ऊधो से स्री मुख॥टेक॥**
**तीरथ बरत जोग जप तप में, मोसे न भेंट सहै कितनौ दुख।**
**ज्ञान कथै बहु भेष बनावै, इहौ बात सब तुक्ख॥ 1॥**
**नेम अचार करै कोउ कितनौ, कवि कोबिद सब खुक्ख।**
**तिरदंडी सरबंगी नागा, मरै पियास औ भुक्ख॥ 2॥**
**तजि पाखंड करै सतसंगति, जहाँ भजन में सुक्ख।**
**पलटु दास हरि कहि ऊधो से, सतसंगति में सुक्ख॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—तुक्ख= तुच्छ। खुक्ख= व्यर्थ। सरबंगी= निष्काम, उदार, समतालु। भुक्ख= भूखा।

**भावार्थ**—श्री कृष्ण महाराज अपने श्री मुख से ऊधो से कहते हैं कि मैं चतुर-चालाक लोगों से दूर रहता हूं॥ टेक॥ तीर्थ, व्रत, हठयोग, जप, तप, करके कोई कितना ही दुख सहे, मुझसे नहीं मिल सकता—आत्मसाक्षात्कार नहीं कर सकता। कोई ज्ञान की बड़ी कथनी करे, बहुत तड़क-भड़क वेष बना ले, तो ये सब बातें तुच्छ हैं॥ 1॥ कोई बहुत नियम से रहे, कितना बड़ा आचारी बन जाय, कवि और पंडित हो जाय, ये सब बातें व्यर्थ हैं। कोई त्रिदंडी बने, सरबंगी बने, नागा बने, बहुत भूख-प्यास सहे, तो इससे स्वरूप-बोध नहीं होगा॥ 2॥ पलटू साहेब कहते हैं कि श्री कृष्ण ने ऊधो से यही कहा कि कल्याणार्थी सारा पाखंड छोड़कर विवेकवान संतों का सत्संग करे। सत्संग और आत्मशोधन में ही स्थिर सुख है॥ 3॥

## शब्द-16

**जिन पाया तिन पाया है, सतसंग सखी री॥टेक॥**
**तीरथ बरत करै कोउ कितनौं, नाहक जनम गँवाया है॥ 1॥**
**जप तप यज्ञ करै कोउ कितनौं, फिरि फिरि गोता खाया है॥ 2॥**
**बेद पढ़ी पढ़ि पंडित मरिगा, फिरि चौरासी आया है॥ 3॥**
**पलटू दास बात है सहजी, संतन भेद बताया है॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—गोता खाया है= मन के भवसागर में डूबा है।

**भावार्थ**—हे मित्र ! जिन्होंने आत्मबोध और आत्मशांति पायी, वे सत्संग से ही पाये॥ टेक॥ तीर्थयात्रा और उपवास कोई कितना ही कर डाले, वह व्यर्थ में जन्म खोता है॥ 1॥ कोई जप, तप, यज्ञ कितने ही कर डाले,

आत्मबोध बिना बारंबार मन के भवसागर में डूबता है॥ 2॥ शास्त्र-अध्ययन कर-करके विद्वान मर जाते हैं और वे पुनः जगत-नगर में भटकते हैं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि कल्याण का रास्ता सहज है। संतों ने आत्मबोध का रहस्य सब समय बताया है। अतएव सत्संग करो॥ 4॥

## 6. संसार की क्षणभंगुरता

शब्द-17

**कहवाँ से जिव आये कहवाँ समाने हो साधो।**
**का देखि रहेउ भुलाय कहाँ लिपटाने हो साधो॥ 1॥**
**निर्गुन से जिव आये सर्गुन समाने हो साधो।**
**भूलि गये हरि नाम माया लिपटाने हो साधो॥ 2॥**
**जैसे तुरकी घोड़ खैंचि लट बागा हो साधो।**
**ऊँच सीस भये नीच चुगन लागे कागा हो साधो॥ 3॥**
**आठ काठ कै पिंजरा दस दरवाजा हो साधो।**
**कौनिक निकसा प्रान कौन दिसि भागा हो साधो॥ 4॥**
**रोवत घर की नारि केस लट खोले हो साधो।**
**आज मँदिर भयो सून कहाँ गये राजा हो साधो॥ 5॥**
**आलहि बाँस कटाइन डँडिया फँदाइन हो साधो।**
**पाँच पचीस बराती लेइ सब धाये हो साधो॥ 6॥**
**तीरे दिहिन उतारि सकल नहवावैं हो साधो।**
**करि सोरहो सिंगार सबै जुरि आये हो साधो॥ 7॥**
**आलहि चंदन कटाइन घेरि घर छाइन हो साधो।**
**लोग कुटुम परिवार दिहिन पहुड़ाई हो साधो॥ 8॥**
**लाइ दिहिन मुख आगि काठ करि भारा हो साधो।**
**पुत्र लिये कर बाँस सीस गहि मारा हो साधो॥ 9॥**
**चहुँ दिसि पवन झकोरै तरवर डोलै हो साधो।**
**सूझत वार न पार कौन दिसि जाना हो साधो॥ 10॥**
**हियवाँ नहिं कोइ आपन जेसे मैं बोलों हो साधो।**
**जस पुरइनि कर पात अकेला मैं डोलों हो साधो॥ 11॥**
**विष बोयों संसार अमृत कैसे पावों हो साधो।**
**पुरब जनम कर पाप दोस केहि लावों हो साधो॥ 12॥**

**भौसागर की नदिया पार कैसे पावों हो साधो।**
**गुरु बैठे मुख मोड़ि मैं केहि गोहरावों हो साधो॥13॥**
**जेहि बैरिन कर मूल ताहि हित मान्यो हो साधो।**
**पलटू दास गुरु ज्ञान सुनत अलगान्यो हो साधो॥14॥**

**शब्दार्थ**—आठ काठ= आठ अंग—घुटना, हाथ, पांव, छाती, सिर, वचन, दृष्टि और बुद्धि। दस दरवाजा= दो आंख, दो नाक, दो कान, मुख, गुदा, शिश्न और ब्रह्मरंध्र। आलहि= तुरंत। पहुड़ाई= लिटा दिया।

**भावार्थ**—हे साधो! जीव कहां से आया है और यह कहां लीन हो गया है? हे साधो! किसे देखकर यह भूल रहा है और किसमें आसक्त हो गया है?॥ 1॥ जीव का शुद्ध स्वरूप चेतन तीनों गुणों से परे है, किन्तु वह जड़ त्रिगुण में लिपटा है। वह हरिनाम स्वरूप अपने आत्मा को भूलकर माया में आसक्त हो गया है॥ 2॥ जैसे तेज तुर्की घोड़ा बागडोर खींचते ही भाग खड़ा होता है, वैसे यह जीव समय आते ही शरीर से निकल भागता है। बड़े-बड़े अहंकारियों के सिर भी नीचे हो जाते हैं और यदि वे जंगल में मरते हैं तो उनके शरीर को फोड़-फोड़ कर कौए खाने लगते हैं॥ 3॥ आठ अंगों तथा दस दरवाजे के इस शरीर-पिंजड़े से प्राणधारी जीव किस द्वार से निकलकर किस दिशा में भाग खड़ा हुआ, कोई नहीं जान पाता है॥ 4॥

हे साधो! घर की नारी बालों की लट खोलकर बिफर कर रो रही है। आज मंदिर सूना हो गया। मेरा राजा प्राणवल्लभ कहां गया?॥ 5॥ तुरंत लोग हरे बांस कटाये और अर्थी रूपी डोली सजा दिये और पांच-पचीस बराती उसे लेकर श्मशान घाट को ले दौड़े॥ 6॥ श्मशान घाट पर उतार दिये और उसे स्नान कराने लगे। पीछे उसे शववस्त्र पहनाकर फूलों से श्रृंगारित कर दिये और साथी-बराती घेरकर खड़े हो गये॥ 7॥ तुरंत चंदन की लकड़ी फड़वाकर उससे चिता रूपी घर को चारों तरफ से छा दिये। पश्चात परिवार तथा कुटुंबी लोग शव को उस पर लिटा दिये॥ 8॥

हे साधो! इसके बाद शव के मुख में आग लगा दिये और लकड़ी का भार ऊपर से लाद दिये। पश्चात पुत्र हाथ में बांस लेकर परिक्रमा करते हुए शव के सिर पर जोर से मारने लगा॥ 9॥ हे साधो! वासना-वायु चारों ओर से बहता है और उसमें यह शरीर-वृक्ष हिलता है। अबोधी जीव को वार-पार नहीं दिखता है। किस दिशा में जाना है, पता नहीं चलता है॥ 10॥ हे साधो!

इस संसार में मेरा कोई अपना नहीं है जिससे मैं बात करूं। हे साधो ! जैसे पुरइन के पत्ते हवा में हिलते हैं वैसे मैं अकेला भटकता हूं॥ 11॥ हे साधो ! मैंने संसार में आकर और माया-मोह बनाकर विष के बीज बोये हैं फिर अमृत कहां पाऊंगा? हे साधो ! यह मेरे पूर्व जन्मों का विषयाध्यास रूप पाप है जिसमें मैं आज भी बंधा हूं। मैं अन्य किसको दोष दूं? ॥ 12॥

हे साधो ! मन की वासना रूपी भवसागर की नदी विकराल है। उसको मैं कैसे पार करूं? सद्गुरु मुझसे मुख घुमाकर अपनी स्वरूपस्थिति में बैठे हैं। अब मैं किसको पुकारूं? ॥ 13॥ हे साधो ! सारे मानसिक विकार रूप शत्रुओं की जो जड़ है, उस भोग-कामना तथा देहाभिमान को मैंने अपना हितकारी माना है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं जब सद्गुरु के उपदेश से अपने असंग आत्म स्वरूप को ठीक से समझ पाया, तब मैं सारे दृश्यमान स्थूल-सूक्ष्म मोह-माया से सर्वथा पृथक हो गया॥ 14॥

### शब्द-18

**लादि चला बंजारा है, कोउ संग न साथी॥टेक॥**
**जाति कुटुम सब रुदन करत है, फेरि बैठि मुख दारा है॥ 1॥**
**छुटिगै बरदी लुटिगै टाँडा, निकरि गया वह प्यारा है॥ 2॥**
**बैठे काग सून भा मंदिल, कोई नहीं रखवारा है॥ 3॥**
**पलटू दास तजो मृगतृस्ना, झूठा सकल पसारा है॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—बंजारा= बनजारा, व्यापारी। दारा= स्त्री, पत्नी। बरदी= बैल, शरीर। टाँडा= समूह, भीड़, वह सामान जो लादकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता है।

**भावार्थ**—जीव-व्यापारी अपने कर्मों की गठरी लादकर चल दिया। उसका कोई संगी-साथी न हो सका॥ टेक॥ कुटुम्ब-परिवार के लोग विलाप कर रहे हैं। पत्नी रो-धोकर और मुख घुमाकर बैठ गयी॥ 1॥ शरीर रूपी बैल छूट गया और उस पर लदा हुआ सारा माल-ऐश्वर्य छूट गया। जो प्रियतम था वह आत्मा निकल गया॥ 2॥ अब सूने भवन पर कौए बैठ रहे हैं। उसका कोई रखवाला नहीं रह गया है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि हे कल्याणार्थी ! माया का सारा विस्तार झूठा है। इसलिए इसकी मृगतृष्णा सर्वथा छोड़ दो॥ 4॥

### शब्द-19

**भजि लीजै हरि नाम, काम सकल तजि दीजै॥टेक॥**
**मातु पिता सुत नारि बांधवा, आवै ना कोउ कामा।**
**हाथी घोड़ा मुलुक खजाना, छूटि जैहैं धन धामा॥ 1॥**
**जब तुम आया मूठी बाँधे, हाथ पसारे जाना।**
**सूखा हाथ जगत की माया, ताहि देखि ललचाना॥ 2॥**
**नर तन सुभग भजन के लायक, कौड़ी हाट बिकाना।**
**हरिगा ज्ञान परा कूसंगति, अमृत में बिष साना॥ 3॥**
**एक न भूला दुइ ना भूला, भूला सब संसारा।**
**पलटू दास हम कहा पुकारी, अब ना दोस हमारा॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—सुभग= भाग्यवान, सुंदर।

**भावार्थ**—हे शांति इच्छुक! जगत की सारी कामनाएं त्यागकर हरिनाम-भजन कर॥ टेक॥ याद रख, माता-पिता, पुत्र, पत्नी तथा बंधु-बांधव तेरा कल्याण नहीं कर सकते। हाथी, घोड़े, देश, कोश, संपत्ति और सदन सब एक दिन छूट जायेंगे॥ 1॥ मुट्ठी बांधकर तू जन्मा था और हाथ पसार कर जाना है। जगत की माया से तेरे हाथ खाली ही रहेंगे। परन्तु तू उसी को देखकर ललचा रहा है॥ 2॥ यह मानव शरीर भाग्यशाली है। इसमें आत्मज्ञान तथा आत्मशोधन करके शांति प्राप्त किया जा सकता है, परन्तु तू इसे विषय-भोगों में खोकर संसार-बाजार में कौड़ी में बेच रहा है। तू कुसंगति में पड़ा है, इसलिए तेरा आत्मज्ञान खो गया है। तूने अमृत में विष मिला दिया है—अपने शुद्ध स्वरूप चेतन को विषयों में जोड़ दिया है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि एक मनुष्य नहीं भूला है, दो मनुष्य नहीं भूला है, अपितु पूरा संसार ही भूला है। मैं पुकारकर कहता हूं। अब गुरु को दोष न देना॥ 4॥

### शब्द-20

**वृद्ध भये तन खासा, अब कब भजन करहुगे॥टेक॥**
**बालापन बालक सँग बीता, तरुन भये अभिमाना।**
**नख सिख सेती भई सफेदी, हरि का मरम न जाना॥ 1॥**
**तिरिमिरि बहिर नासिका चूवै, साक गरे चढ़ि आई।**
**सुत दारा गरियावन लागे, यह बुढ़वा मरि जाई॥2॥**

**तीरथ बर्त एकौ नहिं कीन्हा, नहिं साधु की सेवा।**
**तीनिउ पन धोखे में बीते, ऐसे मूरुख देवा॥ 3॥**
**पकरा आइ काल ने चोटी, सिर धुनि धुनि पछिताता।**
**पलटू दास कोऊ नहिं संगी, जम के हाथ बिकाता॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—तिरमिर= आंख का रोग । साक= दमा। यम= वासना।

**भावार्थ**—शरीर पूरा वृद्ध हो गया है, अब कब भजन-साधना करोगे?॥ टेक॥ तुम्हारा बालपन बालकों के साथ खेलते-कूदते बीत गया। जवानी आयी, तो तुम अभिमानी बन बैठे। अब सिर से पैर तक के बाल सफेद हो गये, परंतु अपने आत्मतत्त्व का रहस्य नहीं समझा॥ 1॥ आंख में रोग लग जाने से ठीक दिखाई नहीं देता, कान बहरे हो गये हैं, नाक से गंदगी चूती है और दमा से गले तक सांस चढ़ती रहती है। पुत्र-पत्नी गाली देते हैं कि यह बुढ़वा मर जाता तो अच्छा होता॥ 2॥ न तूने तीर्थ-व्रत किया और न संतों की सेवा की। तेरी तीनों अवस्थाएं धोखे में बीत गयीं। तू मूर्ख मिट्टी का देवता बन गया॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जब मौत ने आकर तेरी चोटी पकड़ी, तब तू सिर पटक-पटक कर पश्चाताप करता है। याद रख, तेरा कोई साथ नहीं देगा। तू वासनाओं के हाथों बिक गया है॥ 4॥

## शब्द- 21

**भजन करु मूरख कहँ भटकै रे॥ टेक॥**
**यह संसार माया कै लासा, छूटै नाहिं जो सिर पटकै रे॥ 1॥**
**माया मोह रैन का सपना, झूठे माहिं कहा अटकै रे॥ 2॥**
**भरा घट घन हरि नाम अमी है, जग चहला में लपटै रे॥ 3॥**
**मिलु सतगुरु तोहि नाम पिलावै, जावै तपनि जुगन जुग कैरे॥ 4॥**
**नहिं डेरात जम बाँधि के ठगिहैं, ऊपर गोड़ नरक लटकै रे॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—घन= पूर्ण। चहला= कीचड़।

**भावार्थ**—हे मूर्ख! आत्मचिंतन कर। तू कहां भटक रहा है?॥ टेक॥ यह संसार माया का लासा है। आत्मशोधन के बिना यह छूट नहीं सकता, चाहे तू सिर पटककर थक जाय॥ 1॥ जहां तक माया की चमक-दमक है और उसका मोह होता है, यह सब रात के सपने के समान सारहीन और असत्य है। ऐसी झूठी माया में तू क्यों फंस रहा है?॥ 2॥ हरिनाम का अमृत

तेरे भीतर पूर्णरूपेण भरा है—तू अमृत स्वरूप आत्मा है, फिर तू संसार के कीचड़ में क्यों लिपट रहा है?॥ 3॥ तू सद्गुरु के दर्शन कर। वे तुझे स्वस्वरूप का अमृत बोध देंगे। फिर अनादिकाल से लगी तेरी जलन समाप्त होकर तू शीतल हो जायगा॥ 4॥ तू माया-मोह से क्यों नहीं डर रहा है? याद रख, वासना रूपी यम तुझे बांधकर पीड़ित करेगा। तू पुनः माता के गर्भ में पैर ऊपर तथा सिर नीचे करके लटकेगा॥ 5॥

## शब्द-22

**पाती आई मोरे पीतम की, साईं तुरत बुलायो हो॥टेक॥**
**इक अँधियारी कोठरी, दूजे दिया न बाती।**
**बाँह पकरि जम ले चले, कोइ संग न साथी॥ 1॥**
**सावन की अँधियरिया, भादों निज राती।**
**चौमुख पवन झकोरही, धड़कै मोरि छाती॥ 2॥**
**चलन तो हमैं जरूर है, रहना यहँ नाहीं।**
**का लैके मिलब हजूर से, गाँठी कछु नाहीं॥ 3॥**
**पलटु दास जग आय के, नैनन भरि रोया।**
**जीवन जनम गँवाय के, आपै से खोया॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—यम= वासना। हजूर= हुजूर, हाकिम।

**भावार्थ**—मेरे प्रियतम मित्र मृत्यु का पत्र आया है। स्वामी ने तुरंत बुलाया है॥ टेक॥ कब्र की एक अंधियारी कोठरी होगी। उसमें कोई प्रकाश नहीं होगा। मौत बांह पकड़कर ले चली! उससे छुड़ाने वाला मेरा कोई संगी-साथी नहीं दिखा! मौत ने कब्र में डाल दिया॥ 1॥ सावन-भादौं की काली घटा की घोर अंधियारी की तरह मेरी रात होगी। चारों तरफ से झंझावात के झकोर में पड़े हुए के समान मैं वासना के झोंके में पड़ा डोल रहा हूं। इससे मेरा हृदय धड़क रहा है॥ 2॥ मुझे इस संसार से अवश्य चलना है। यहां मुझे रहना नहीं है। मेरे पास आत्मबोध तथा आत्मशुद्धि का बल नहीं है, फिर मैं किस बल पर भवबंधन के नियम रूपी हाकिम से बचूंगा॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि संसार में आकर मनुष्य जीवनपर्यंत केवल रोता है। यह अपने आपको न समझकर जीवन-जन्म को माया-मोह में डालकर खो देता है॥ 4॥

शब्द-23

**घरिय पहर में कूच तुम्हारा, मन तुम भयो अनारी हो॥ 1॥**
**केहि कारन धन धाम सँवारहु, नाहक करहु बेगारी हो॥ 2॥**
**जम राजा से का तुम कहिहौ, पूछै दै दै गारी हो॥ 3॥**
**घर की नारी फेरि मुँह बैठी, बड़ी रही हितकारी हो॥ 4॥**
**गाँठी दाम राह न पैंड़ा, बूड़ि मुए मँझधारी हो॥ 5॥**
**पलटु दास संतन बलिहारी, हमको पार उतारी हो॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—घरिय= घड़ी। पैंड़ा= पथ, रास्ता।

**भावार्थ**—हे मनवशी जीव! घड़ी-पहर में तेरी संसार से विदाई हो जायगी। परंतु तू मूढ़ बना सो रहा है॥ 1॥ तुम किसलिए धन-धाम के श्रृंगार में लगे हो? तुम व्यर्थ में यह बेगारी कर रहे हो॥ 2॥ जब तुम्हारा सामना यमराज से पड़ेगा, तब वह तुम्हें गाली दे-दे कर पूछेगा कि तूने संसार में घिनौने कर्म क्यों किये, फिर तुम उसको क्या उत्तर दोगे?॥ 3॥ घर में रहनेवाली तुम्हारी पत्नी तुम्हारा बड़ा हित करनेवाली थी, परंतु वह तुमसे मुंह मोड़ कर बैठ जायेगी। उसकी पहुंच उस तक नहीं होगी। तुम्हें अपने कर्मफल स्वयं भोगने होंगे॥ 4॥ संसार का पथ लंबा है। तुम्हारे पास रास्ते का कोई खर्च-साधन नहीं है। तुम बीच धारा में डूबकर मरोगे॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं संतों के चरणों में अपने को न्योछावर करता हूं। उन्होंने मुझको संसार-सागर से पार उतार दिया॥ 6॥

**विशेष**—कोई ऐसा यमराज नहीं है जो जीव से पूछताछ करे। वस्तुतः अपने कर्मों के संस्कार अंतःकरण में छपते हैं और उनके फल भोगने पड़ते हैं। इसलिए जीवन का लाभ है उत्तम कर्म। वे ही सब समय जीव को सुख देते हैं। मन की तरंगों से परे रहना जगत से पार होना है।

शब्द-24

**कै दिन का तोरा जियना रे, नर चेतु गँवार॥टेक॥**
**काची माटी कै घैला हो, फूटत नहिं बेर।**
**पानी बीच बतासा हो, लागै गलत न देर॥ 1॥**
**धूआँ कौ धौरेहर हो, बारू कै भीत।**
**पवन लगै झरि जैहै हो, तृन ऊपर सीत॥ 2॥**

**जस कागद कै कलई हो, पाका फल डार।**
**सपने कै सुख संपति हो, ऐसो संसार॥ 3॥**
**घने बाँस का पिंजरा हो, तेहि बिच दस द्वार।**
**पंछी पवन बसेरू हो, लावै उड़त न बार॥ 4॥**
**आतसबाजी यह तन हो, हाथे काल के आग।**
**पलटु दास उड़ि जैबहु हो, जब देइहि दाग॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—घैला = घड़ा। धौरेहर = धौरहरा, मीनार। बारू = बालू। आतसबाजी = आतिशबाज़ी, पटाखा आदि, आग से खेलना।

**भावार्थ**—हे भोला मनुष्य! सावधान हो जा! तेरा जीवन कितने दिनों का है?॥ टेक॥ मिट्टी के कच्चे घड़े के फूटने में देरी नहीं लगती। पानी में पड़े बताशे के गलने में देरी नहीं लगती॥ 1॥ धुएं की मीनार, बालू की भित्त और घास पर पड़ी ओस की बूंदें वायु के झोंके से छिन्न-भिन्न हो जाती हैं॥ 2॥ जैसे कागज का लेप क्षण में गलकर धुल जाता है, पके फल शाखा से गिर जाते हैं, और सपने में मिली सुख-संपत्ति जागने पर खो जाती है, वैसे संसार की सारी उपलब्धियां खो जाती हैं॥ 3॥ सघन हड्डियों का यह शरीर पिंजड़ा है। इसमें कान, मुख आदि दस दरवाजे हैं। इसमें प्राणपक्षी की सवारी पर जीव बैठा है। इसके उड़ जाने में देरी नहीं लगती॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि यह शरीर पटाखे का खेल है। काल ने अपने हाथ में आग ले रखा है। जैसे वह उसे दागेगा, वैसे जीव इस पिंजड़ा को छोड़कर उड़ जायेगा॥ 5॥

## शब्द-25

**काल बली सिर ऊपर हो, तीतर का बाज।**
**चंगुल तर चिचियैहौ हो, तब मिटिहैं मिजाज॥ 1॥**
**भजन बिना का नर तन हो, रैयत बिनु राज।**
**बिना पिता का बालक हो, रोवै बिनु साज॥ 2॥**
**देव रु पितर उपासक हो, परिहैं जम गाज।**
**बहुत पुरुष कै नारी हो, बिस्वा नहिं लाज॥ 3॥**
**काम क्रोध बिनु मारे हो, का दिहे सिर ताज।**
**पलटु दास धृग जीवन हो, सब झूठ समाज॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—मिजाज= प्रकृति, तेवर। रैयत= प्रजा। गाज= बिजली, चिर्री।

**भावार्थ**—हे मनुष्य! बलवान काल तेरे ऊपर नाच रहा है। जैसे बाज पक्षी तीतर को धर दबोचता है, वैसे काल प्राणी को मार गिराता है। हे अभिमानी! तू मौत के चंगुल में पड़ा विलख-विलख कर रोयेगा, तब तेरा तेवर नष्ट हो जायेगा॥ 1॥ अंतर्मुख हुए बिना मनुष्य शरीर वैसे है जैसे राजा के बिना प्रजा अनाथ हो जाती है और जैसे बिना माता-पिता का बालक अनाथ होकर विलखता है॥ 2॥ जो लोग केवल कल्पित देवी-देवता और मृत पितर के उपासक हैं, उनके ऊपर वासनाओं की चिर्री पड़ेगी। बहुत पुरुषों की स्त्री वेश्या होती है। उसे लज्जा नहीं होती, वैसे नाना देवी-देवताओं की उपासना में भटकनेवाले मनुष्य आत्मबोध और आत्मशांति से दूर रहते हैं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि हे कल्याणेच्छुक! यदि तुमने काम-क्रोधादि को मारकर आत्मशांति नहीं पायी तो सिर पर ताज लगाने से क्या होगा? ऐसे जीवन को धिक्कार है। जिसमें मेहित होकर हम भटक रहे हैं, वह माया का साज-सामान क्षणिक होने से झूठा है॥ 4॥

### शब्द-26

**मेरे मनुआँ रे तुम तो निपट अनारी॥ टेक॥**

**कौड़ी कौड़ी लाख बटोरहु, नाहक किहेहु बेगारी।**
**तहु चढ़ि चलेहु चारि के काँधे, दूनों हाथ पसारी॥ 1॥**
**बहुरि बहुरि कै राँध परोसी, आये मूड़ फेकारी।**
**जाति कुटुँब सब रोवन लागे, सँग लागि बूढ़ि महतारी॥ 2॥**
**तुहरे संग कोऊ नहिं जाई, कोठा महल अटारी।**
**अपने स्वारथ को सब रोवै, झूठ मूठ कै आरी॥ 3॥**
**धरमराय जब लेखा मँगिहैं, करबेहु कौन बिचारी।**
**पलटू कहत सुनो भाई साधो, इतनी अरज हमारी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—राँध परोसी= रांध पड़ोसी, आस-पास के लोग। मूड़ फेकारी= सिर उघारे। आरी= यारी, मित्रता।

**भावार्थ**—हे मेरे मन! तू बड़ा बेवकूफ है॥ टेक॥ तूने कौड़ी-कौड़ी कर लाख-करोड़ बटोर लिया। तूने यह व्यर्थ की बेगारी की। अंततः तू चार के कंधों पर चढ़कर हाथ पसारे चल दिया॥ 1॥ आस-पास के लोग सिर खोले तथा दुख प्रकट करते हुए आये। जाति और कुटुम्ब के लोग सब रोने लगे।

बूढ़ी माता लिपटकर रोने लगी॥ 2॥ याद रखो, तुम्हारे साथ न कोई प्रेमी मित्र जायेगा और न कोठा-महल तथा अटारी। जो लोग रोते हैं वे अपने स्वार्थवश रोते हैं। दुनिया की मित्रता झूठी है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जब यमराज तुमसे तुम्हारे कर्मों का हिसाब मांगेगा तब तुम क्या विचार करोगे, और क्या उत्तर दोगे? हे संतो! सुनो, मेरी इतनी ही विनती है कि आज सावधान हो जाओ॥ 4॥

**विशेष**—किसी के मरने पर जो लोग रोते हैं वे अपने स्वार्थ में हानि मानकर रोते हैं। मरनेवाले की हमदर्दी में नहीं रोते। यदि निरर्थक मनुष्य मर जाय तो लोगों को कुछ झटका नहीं लगता। यदि बहुत दिनों का रोगी-असमर्थ मनुष्य मरे तो घरवाले प्रसन्न होते हैं।

## शब्द-27

**पानी बीच बतासा साधो, तन का यही तमासा है॥टेक॥**
**मुट्ठी बाँधे आया बंदा, हाथ पसारे जाता है।**
**ना कुछ लाया न ले जायगा, नाहक क्यों पछिताता है॥ 1॥**
**जोरू कौन खसम है किसका, कैसा तेरा नाता है।**
**पड़ा बेहोस होस कर बंदे, बिषय लहर में माता है॥ 2॥**
**ज्यों ज्यों बंदे तेरी पलक परत है, त्यों त्यों दिन नगिचाता है।**
**नेकी बदी तेरे संग चलेगी, और सब झूठी बाता है॥ 3॥**
**प्रान तुम्हारे पाहुन बंदे, क्यों रिस किये कुहाता है।**
**पलटू दास बंदगी चूके, बंदा ठोकर खाता है॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—रिस= क्रोध। बंदगी= विनय, सेवा। कुहाता है= रूठता है।

**भावार्थ**—हे संतो! जैसे पानी में पड़ा बताशा क्षण में गल जाता है, वैसे शरीर का खेल क्षण-पल में समाप्त हो जाता है॥ टेक॥ हे बंदे! तू मुट्ठी बांधकर पैदा हुआ है और यहां से एक दिन तुम्हें हाथ फैलाकर जाना है। न कुछ लेकर आया है और न लेकर जायेगा। व्यर्थ में क्यों हानि-लाभ के द्वंद्व में पड़कर पश्चाताप में डूबा है?॥ 1॥ कौन किसकी पत्नी है और कौन किसका पति है? तेरा किसी से कैसा सम्बन्ध है? तू मोह में डूबकर अचेत पड़ा है। हे बंदे! सावधान हो जा। तू विषयों की लहर में क्यों मतवाला हो गया है?॥ 2॥ हे मनवशी! तेरे जितने पलक गिरते हैं उतना तेरी मौत निकट आती जाती है। याद रख, तेरे साथ अच्छे-बुरे कर्मों के संस्कार चलेंगे, शेष

सारी चमक-दमक व्यर्थ है ॥ 3 ॥ हे बंदे ! तेरे प्राण पहुने की तरह हैं। ये आज-कल में चले जायेंगे। क्यों किसी पर क्रोध करके रूठता है? पलटू साहेब कहते हैं कि हे बंदे ! तूने विनम्रता और सेवा कार्य से अपने को अलग करके स्वयं को धोखा दिया है, इसीलिए दुख उठा रहा है ॥ 4 ॥

## 7. वैराग्य और विरह

शब्द-28

**जनि कोइ होवै बैरागी हो, बैराग कठिन है ॥ टेक ॥**
**जग की आसा करै न कबहूँ, पानी पिवै ना माँगी हो।**
**भूख पियास छुटै जब निद्रा, जियत मरै तन त्यागी हो ॥ 1 ॥**
**जा के धर पर सीस न होवै, रहै प्रेम लौ लागी हो।**
**पलटु दास बैराग कठिन है, दाग दाग पर दागी हो ॥ 2 ॥**

**शब्दार्थ**—धर= धड़, सिर रहित शरीर।

**भावार्थ**—भावुकता में कोई वैराग्य का वेष न पहन ले, क्योंकि वैराग्य का रास्ता भोग और स्वामित्व को त्यागकर होता है, इसलिए विषयी मन को यह कठिन है॥ टेक॥ जो विरक्त हो वह संसार के भोग और सम्मान की आशा कभी न करे और मांगकर पानी न पिये, अपितु स्वावलम्बी हो। भूख-प्यास और निद्रा में व्याकुल न हो, अपितु इन पर संयम हो। इतना ही नहीं, शरीर का अहंकार छोड़कर मर जाय—पूरा अभिमान-शून्य हो जाय॥ 1 ॥ जिसके धड़ पर सिर न हो—पूर्ण अहंता-ममता-शून्य हो और आत्मलीन हो, वह वैराग्य का आनन्द पा सकता है। पलटू साहेब कहते हैं कि वैराग्य कठिन है। जैसे योद्धा जीवनपर्यन्त युद्ध करता है तो उसके हाथों में अस्त्र-शस्त्र चलाने से दाग पर दाग पड़ जाते हैं, वैसे वैराग्य-साधना निरंतर करते-करते वैराग्यवान के मन में वैराग्यवृत्ति का पक्का अभ्यास हो जाता है॥ 2 ॥

शब्द-29

**जेकरे अँगने नौरँगिया, सो कैसे सोवै हो।**
**लहर लहर बहु होय, सबद सुनि रोवै हो ॥ 1 ॥**
**जेकरे पिय परदेस, नींद नहिं आवै हो।**
**चौंकि चौंकि उठै जागि, सेज नहिं भावै हो ॥ 2 ॥**

**रैन दिवस मारै बान, पपीहा बोलै हो।**
**पिय पिय लावै सोर, सवति होइ डोलै हो॥ 3॥**
**बिरहिनि रहे अकेल, सो कैसे कै जीवै हो।**
**जेकरे अमी कै चाह, जहर कस पीवै हो॥ 4॥**
**अभरन देहु बहाय, बसन धै फारौ हो।**
**पिय बिनु कौन सिंगार, सीस दै मारौ हो॥ 5॥**
**भूख न लागै नींद, बिरह हिये करकै हो।**
**माँग सेंदुर मसि पोछ, नैन जल ढरकै हो॥ 6॥**
**केकहैं करै सिंगार, सो काहि दिखावै हो।**
**जेकर पिय परदेस, सो काहि रिझावै हो॥ 7॥**
**रहै चरन चित लाइ, सोई धन आगर हो।**
**पलटु दास कै सबद, बिरह कै सागर हो॥ 8॥**

**शब्दार्थ**—नौरँगिया= नारंगी का पेड़। अमी= अमृत। अभरन= आभूषण। बसन= वस्त्र। मसि= काजल। केकहैं= किस पर। धन= धनि, युवती, मनोवृत्ति। आगर= कुशल, चतुर।

**भावार्थ**—जिसके आंगन में नारंगी का पेड़ हो, वह निश्चिंत होकर कैसे सो सकता है? हवा से नारंगी का पेड़ अत्यन्त लहराता है। उसके शब्द सुनकर पति-विहीना युवती रोती है॥ 1 ॥ जिसका पति परदेश है, उसको नींद नहीं आती। वह थोड़ी नींद लगते ही चौंक-चौंक कर जग जाती है। उसको शय्या अच्छी नहीं लगती॥ 2 ॥ नारंगी के पेड़ पर बैठा पपीहा रात-दिन पीव-पीव बोलकर मानो पति-विहीना युवती को विरह-बाण मारता है। वह पीव-पीव शब्द का शोर करके मानो सौत की तरह दुख देता है॥ 3 ॥ पति-विहीना विरहिन युवती अकेली है। वह पति के बिना कैसे चैन से रह सकती है? इसी प्रकार जिस साधक के मन में स्वरूपस्थिति रूपी अमृत पीने की इच्छा है, वह विषय-भोग रूपी विष कैसे पी सकता है?॥ 4॥

हे पति-विहीना बिरहिन युवती! आभूषणों को अंगों से निकालकर फेंक दे और देह के वस्त्रों को फाड़ दे। पति के बिना श्रृंगार कैसा? सिर को पटक कर मर जा॥ 5॥ विरहिन को न भूख लगती है और न प्यास लगती है। उसको तो पति-वियोग का बाण हृदय में कसकता है। वह मांग से सेंदुर और नेत्र से काजल पोंछ देती है और उसकी आंखों से आंसू के प्रवाह चलते हैं॥ 6॥ वह किस पर श्रृंगार करे और उसे किसको दिखावे? जिसका पति परदेश में है, वह किसको मोहित करे?॥ 7॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जिस

साधक की मनोवृत्ति सद्गुरु के चरणों में लीन है, वही चतुर है। मेरे उपदेश विरह-सागर हैं॥ 8॥

**विशेष**—मनोवृत्ति आत्मविमुख होकर दुख में भटकती है। जब वह आत्म-पति से अभिन्न हो जाती है, तब सुखी हो जाती है।

### शब्द-30

**जाके लगी सोई तन जानै, दूजो कवन हाल पहिचानै॥टेक॥**
**है कोइ भेदी भेद बतावै, कैसे बिरहिनि दिवस गँवावै॥ 1॥**
**मारग दूर पथिक सब हारे, उतरन को भवसागर पारे॥ 2॥**
**उकठा पेड़ सीचै जो माली, घायल फिरौं भई मतवाली॥ 3॥**
**एक तो लागी प्रेम की गाँसी, दूजे सहौं जक्त उपहासी॥ 4॥**
**लागी लगन टरै नहिं टारे, क्या करै औषद बैद बेचारे॥ 5॥**
**पलटू दास लगी तन मेरे, घायल फिरैं और बहुतेरे॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—उकठा पेड़=सूखा पेड़। गांसी=तीर।

**भावार्थ**—जिसके मन में आत्मलीनता की लगन लगी है, वही इसे समझ सकता है। दूसरा कौन इस दशा को समझ सकता है?॥ टेक॥ जो आत्मलीनता में निरंतर रहता है, वही इस रहस्य को समझ-समझा सकता है कि कैसे आत्मरति की विरहिनी मनोवृत्ति दिन व्यतीत करती है॥ 1॥ भवसागर से पार उतरने के लिए रास्ता लम्बा है—जितना अबोध और विषय-तृष्णा है उतना मार्ग लम्बा है। इसीलिए अध्यात्म पथ के अधिक पथिक जगत-तृष्णा की चपेट में पड़कर बीच में ही हारकर बैठ जाते हैं॥ 2॥ यदि माली सूखे पेड़ को सींचकर हरा कर दे तो कोई मुझ आत्म-विरही को इस विरह से अलग कर सकता है। साधक की मनोवृत्ति कहती है कि मैं सद्गुरु के आत्मज्ञान-बाण से घायल होकर मतवाली बनी विचर रही हूं॥ 3॥ एक तरफ मुझे आत्मप्रेम का बाण लगा है, दूसरी तरफ संसार के लोगों का उपहास सहना होता है॥ 4॥ आत्मा में निंरतर लीन रहने की मेरी लगन लगी है। इस लगन को कोई हटा नहीं सकता। संसारी वैद्य बेचारे मेरी क्या औषध कर सकते हैं?॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मेरे जीवन में आत्मलीनता की लगन लगी है। अन्य बहुतेरे आत्मानुरागी भी सद्गुरु के उपदेश-बाण से घायल होकर विचरते हैं॥ 6॥

शब्द-31

**मेरे लगी सबद की गाँसी है, तबसे मैं फिरौं उदासी है॥टेक॥**
**नैनन नीर ढुरन मोरे लागे, परी प्रेम की फाँसी है॥ 1॥**
**भूषन बसन नहीं मोहिं भावै, छोड़ा भोग बिलासी है॥ 2॥**
**मन भया छीन दीन हुई सब से, अबला नाम पियासी है॥ 3॥**
**चारिउ खूँट कानन गिरि खोजा, खोजा मथुरा कासी है॥ 4॥**
**जासे पूछौं कोउ न बतावै, और करै उपहासी है॥ 5॥**
**पलटु दास हम खोजि निकारा, ह्वै बैरागिनि खासी है॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—गांसी= बाण। खूंट= कोना, दिशाएं। कानन= वन। गिरि= पर्वत।

**भावार्थ**—साधक की मनोवृत्ति कहती है कि मुझे सद्गुरु के द्वारा आत्मबोधपरक उपदेश के बाण लगे, तब से मैं सांसारिकता से उदास होकर विचरने लगी॥ टेक॥ मेरे गले में आत्मरति की प्रेम-फांसी लगी है। मेरे नेत्रों से नीर झरते हैं॥ 1॥ अब मुझे आभूषण और वस्त्र अच्छे नहीं लगते। मैंने भोग-विलास का त्याग कर दिया है॥ 2॥ मेरे मन की तृष्णा मिट गयी है और मैं सबसे नम्र हो गयी हूं। (मनोवृत्ति कहती है कि) मेरा अबला नाम है। मैं आत्मलीनता की भूखी-प्यासी हूं॥ 3॥ मैंने चारों दिशाओं, कोने-कोने तथा वन-पर्वतों में खोजा और मथुरा-काशी आदि सभी तीर्थों में खोजा॥ 4॥ मैं जिससे पूछती हूं कि परमात्मा कहां है, वही मेरा मजाक उड़ाता है॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने अंतर्मुख होकर खोज निकाला कि आत्मा ही परमात्मा है। उसी में लीन होने के लिए मैंने लोगों से शुद्ध विरक्ति ले ली है॥ 6॥

शब्द-32

**पिया पिया बोलै पपीहा है, सबद सुनत फाटै हीया है॥टेक॥**
**सोवत से मैं चौंकि परी हौं, धकर धकर करै जीया है॥ 1॥**
**पिय की सोच परी अब मोको, पिय बिनु जीवन छीया है॥ 2॥**
**बैरी होइ के आय पपीहा, बिरह जँजाल मोहिं दीया है॥ 3॥**
**हित मेरा यह बड़ा पपीहा, उपदेस आइ मोहिं कीया है॥ 4॥**
**पलटु दास पपिहा की दौलत, बैराग जाइ हम लीया है॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—हीया= हृदय। छीया= क्षीण, नष्ट, व्यर्थ। दौलत= बदौलत, कृपा से।

**भावार्थ**—आत्म-अनुराग में डूबी मनोवृत्ति कहती है कि पपीहा-पक्षी पीव-पीव बोलता है, तो उसके ये शब्द सुनकर मुझे अपने प्रियतम आत्मा की याद आती है और उनमें तदगत हुए बिना मेरा हृदय फटता है॥ टेक॥ पपीहा का पीव-पीव शब्द सुनकर सोते से मैं जग गयी और अपने प्रियतम आत्मा की याद कर मेरा दिल धड़कने लगा॥ 1॥ अब मुझे प्रियतम आत्मा से मिलने की चिंता हो गयी है। अपने प्रियतम के बिना मेरा जीवन नष्ट हो रहा है॥ 2॥ पपीहा मानो मेरा वैरी होकर उसने मुझे आत्मा के लिए विरह-व्यथा का जंजाल दे दिया है॥ 3॥ परंतु ऐसी बात नहीं है। पपीहा मेरा बड़ा हितकारी है। उसने मुझे मानो उपदेश दिया कि तू संसार के कूड़े-कचड़े में भटक रही है और दुख भोग रही है। तू सावधान होकर अपने प्रियतम आत्मा में रमण कर॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि पपीहा की कृपा से मैं जगत-भोगों से वैराग्य लेकर आत्मोन्मुख हो गया हूं॥ 5॥

### शब्द-33

**साहिब के घर बिच जावोंगी। जावोंगी सुख पावोंगी॥टेक॥**
**प्रेम भभूत लगाय कै सजनी। संतन कँहै रिझावोंगी॥ 1॥**
**अचरा फारि करौं मैं कफनी। सेल्ही सुरति बनावोंगी॥ 2॥**
**धूनी ध्यान अकास में देहौं। नाम को अमल चढ़ावोंगी॥ 3॥**
**पलटू दास मारि कै गोता। भक्ति अभय लै आवोंगी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—साहिब= स्वामी, आत्मा। अचरा= आंचल। सेल्ही= सूत-ऊन आदि की माला। अमल= नशा।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति कहती है कि मैं अपने प्रियतम आत्मा की स्थिति में जाऊंगी और उसमें स्थित होकर अक्षय सुख पाऊंगी॥ टेक॥ हे सखी! शरीर में प्रेम की खाक लगाकर संतों को प्रसन्न कर लूंगी॥ 1॥ मैं आंचल फाड़कर कफन बनाऊंगी और सुरति की माला बनाऊंगी॥ 2॥ हृदयाकाश में ध्यान की धुनी लगाऊंगी और सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मस्मरण का नशा चढ़ाऊंगी॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मनोवृत्ति सत्संग में गोता लगाकर स्वस्वरूपानुसंधान रूपी निर्भय भक्ति प्राप्त करेगी॥ 4॥

## शब्द-34

**अब तो मैं बैराग भरी। सोवत से मैं जाग परी॥ 1॥**
**नैन बने गिर के झरना ज्यों। मुख से निकरै हरी हरी॥ 2॥**
**अभरन तोरि बसन धै फारौं। पापी जिउ नहिं जात मरी॥ 3॥**
**लेउँ उसास सीस दै मारौं। अगिनि बिना मैं जाउँ जरी॥ 4॥**
**नागिनि बिरह डसत है मोको। जात न मोसे धीर धरी॥ 5॥**
**सतगुरु आइ किहिन बैदाई। सिर पर जादू तुरत करी॥ 6॥**
**पलटू दास दिहा उन मोको। नाम सजीवन मूल जड़ी॥ 7॥**

**भावार्थ**—मनोवृत्ति कहती है कि अब तो मैं वैराग्य-भाव से भर गयी हूं और मोह-नींद से जग गयी हूं॥ 1॥ मेरे नेत्र आत्म-विरह में पर्वत के झरने बन गये और मुख से हरिनाम निकल रहा है॥ 2॥ मैंने आभूषणों को तोड़ दिया और वस्त्रों को फाड़ दिया। यह पापी जान निकल नहीं रही है॥ 3॥ मैं आत्मविरह में लम्बी सांस लेती हूं और सिर पटकती हूं। मैं बिना अग्नि के जली जा रही हूं॥ 4॥ आत्म-वियोगजनित विरह-नागिन मुझे डंस रही है। आत्मा से मिले बिना मुझे धैर्य नहीं हो रहा है॥ 5॥ सद्गुरु ने आकर मेरी चिकित्सा की, फिर तो मेरे सिर पर तुरंत जादू जैसा प्रभाव पड़ गया॥ 6॥ पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु ने मुझे सतनाम की जड़ी-बूटी दे दी जिसका अर्थ है सत्स्वरूप आत्मा का बोध॥ 7॥

## शब्द-35

**साहिब से लागी री सजनी। मेरो ब्याह भयो बिन मँगनी॥ 1॥**
**लागि गई तब लाज कहाँ की। कल न परै दिन रजनी॥ 2॥**
**ना नैहर ना सासुर की मैं। सहज लगी कछु लगनी॥ 3॥**
**जब हम रहे पिया तब नाहीं। बूझौ बात बैरगनी॥ 4॥**
**ज्ञान में सोवौं मोह में जागौं। नहिं सोवौं नहिं जगनी॥ 5॥**
**भूखल नाहिं न रहौं खाये बिनु। नहिं संग्रह नहिं त्यगनी॥ 6॥**
**पलटू दास चलौं नहिं बैठौं। नहीं भजन नहिं भजनी॥ 7॥**

**शब्दार्थ**—लागि= प्रेम। मँगनी= सगाई, ब्याह पक्का करने की रस्म। पिया= आत्मा। भजनी= भजन करनेवाला।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति कहती है कि हे सखी! मेरा प्रेम एवं अनुराग आत्मा-स्वामी से लग गया है। उनसे मेरा बिना मंगनी के विवाह हो गया

है॥ 1॥ जब लगाव हो गया तब लज्जा कैसी? अब मुझे आत्मा से बिछुड़कर रात-दिन कभी शांति नहीं मिलती॥ 2॥ मेरा न नैहर है और न सासुर। मेरा सम्बन्ध प्रियतम आत्मा से कुछ ऐसा है जो सहज है॥ 3॥ जब मेरा अहंकार था तब प्रियतम आत्मा का अनुभव नहीं था। यह वैराग्य की बात है। इसे समझो॥ 4॥ मैं आत्मज्ञान में विश्राम कर सोती हूं और मोह के सम्बन्ध में जागती रहती हूं। कहीं मोह नहीं करती हूं। अंततः न मैं सोती हूं और न जागती हूं। अपितु एकरस स्वरूपस्थ हूं॥ 5॥ मैं भूखी नहीं रहती हूं और खाती भी नहीं हूं। आत्मा में ये दोनों बातें नहीं हैं। न मैं संग्रह करती हूं और न त्याग करने का अनुभव करती हूं॥ 6॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं न चलता हूं और न बैठता हूं और न भजन करता हूं तथा न मैं भजन करने वाला हूं॥ 7॥

**विशेष**—देह के नाम-रूप की अहंता-ममता मिटाकर जब साधक आत्मलीनता की प्रगाढ़ता में रहता है, तब वह भौतिक धरातल से उठ जाता है। उसकी स्थिति मन-वाणी से परे होती है।

## शब्द-36

**प्रेम बान जोगी मारल हो, कसकै हिया मोर॥टेक॥**
**जोगिया कै लालि लालि अँखियाँ हो, जस कँवल के फूल।**
**हमरी सुरुख चुनरिया हो, दूनों भये तूल॥ 1॥**
**जोगिया कै लेउँ मिर्गछलवा हो, आपन पट चीर।**
**दूनौं कै सियब गुदरिया हो, होइ जाब फकीर॥ 2॥**
**गगना में सिंगिया बजाइन्हि हो, ताकिन्हि मोरी ओर।**
**चितवन में मन हरि लियो हो, जोगिया बड़ चोर॥ 3॥**
**गंग जमुन के बिचवाँ हो, बहै झिरहिर नीर।**
**तेहिं ठैयाँ जोरल सनेहिया हो, हरि लै गयो पीर॥ 4॥**
**जोगिया अमर मरै नहिं हो, पुजवल मोरी आस।**
**करम लिखा बर पावल हो, गावै पलटू दास॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—हिया= हृदय। तूल= तुल्य, समान। सिंगिया= सींगी, हिरन के सींग का बना हुआ बाजा जिसे योगी बजाते हैं।

**भावार्थ**—योगी ने मुझे प्रेम का बाण मारा है। अतएव मेरे हृदय में रह-रहकर पीड़ा होती है। टेक॥ योगी की कमल फूल के समान लाल-लाल

आंखें हैं और मेरी भक्ति-भावना की लाल चुनरी, अतएव दोनों समान हो गये हैं॥ 1॥ मैं योगी का मृगछाला लूंगा और अपने शरीर का वस्त्र, दोनों को मिलाकर गुदरी बनाऊंगा और फकीर हो जाऊंगा॥ 2॥ योगी ने अपनी सींगी आकाश में बजायी और मेरी ओर देखा। उसने मेरी ओर ऐसा नेत्र कटाक्ष किया कि मेरा मन चुरा लिया। इसलिए लगता है कि योगी बड़ा चोर है॥ 3॥ इड़ा-पिंगला के बीच सुषुम्ना में श्वास का निर्झर नीर बहता है। उसमें चित्त एकाग्र करने का प्रेम लगाया और एकाग्रता आने पर मन की पीड़ा मिट गयी॥ 4॥ योगी अमर आत्मा में लीन होने से वस्तुतः अमर होता है। उसने मुझे अमर आत्मा का बोध देकर मेरी दुख-निवृत्ति की आशा पूरी कर दी। पलटू साहेब कहते हैं कि मनोवृति कहती है कि मेरे अच्छे कर्म में लिखा अविनाशी आत्मा रूपी वर का बोध मिल गया है॥ 5॥

## शब्द-37

**पिय से मान न कीजै रजनी, सजनी हठ तजि दीजै॥ 1॥**
**जो तू पिय को चाहै प्यारी, सतसंगति भजि लीजै॥ 2॥**
**पलटु दास तन मन धन दै कै, प्रेम पियाला पीजै॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—रजनी= रात । सजनी= सखी।

**भावार्थ**—अज्ञान रात में पड़ी हुई हे मनोवृत्ति सखी! आत्मा के सामने अहंकार न कर, हठ छोड़कर उसमें लीन हो जा॥ 1॥ हे प्यारी मनोवृत्ति! यदि तू आत्म-पति को चाहती है, तो विवेकवान संतों की संगति में समर्पित हो जा॥ 2॥ पलटू साहेब कहते हैं कि अपने तन, मन और धन को सद्गुरु-संतों के चरणों में समर्पित करके भक्ति-प्रेम का प्याला पियो॥ 3॥

## शब्द-38

**घूँघट को पट खौलौंगी। जोगिन ह्वै के डोलौंगी॥ 1॥**
**लोक लाज कुल कानि छोड़ि कै। हँसि हँसि बातैं बोलौंगी॥ 2॥**
**का रिसियाइ करै कोइ मेरा। जग से नाता तोरौंगी॥ 3॥**
**ज्ञान की ढोल बजाय रैन दिन। गगन रखाना फोरौंगी॥ 4॥**
**पलटू दास भई मतवारी। प्रेम पियाला घोरौंगी॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—रिसियाय= नाखुश होकर। रखाना= रख़ना, छोटी खिड़की।

**भावार्थ**—साधनापरायण मनोवृत्ति कहती है कि मैं अविद्या का परदा हटाकर योगिनी होकर विचरण करूंगी॥ 1॥ लोक-लाज और कुल की मर्यादा छोड़कर सबसे हंस-हंस कर प्रसन्न मन से बातें करूंगी॥ 2॥ संसार के लोग नाखुश होकर मेरा क्या बिगाड़ लेंगे? मैं संसार से अपना सम्बन्ध तोड़ दूंगी॥ 3॥ मैं रात-दिन आत्मज्ञान का ढोल बजाकर संकल्प-शून्य की खिड़की खोलूंगी॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि साधनापरायण मनोवृत्ति आत्मलीनता में मतवाली हो गयी और कहती है कि मैं आत्म-प्रेम का प्याला पीऊंगी॥ 5॥

### शब्द-39

**सतगुरु से लागी नेही है, बात बहुत यह मेहीं है॥टेक॥**
**परदा काह खसम से कीजै, जिन देखा सब देंही है॥ 1॥**
**भूलि परी मैं जग के बीचे, बाँह पकरि लिहा तेही है॥ 2॥**
**दीनदयाल पतित के पावन, जन सरनागति लेही है॥ 3॥**
**पलटू दास धन्य इक सतगुरु, और बात सब येही है॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—मेहीं= बारीक, सूक्ष्म। खसम= पति।

**भावार्थ**—मेरा प्रेम सद्‌गुरु से लग गया है। यह बात बड़ी सूक्ष्म है॥ टेक॥ पति से क्या परदा करना जिसने सारी देह देखी है। इसी प्रकार सद्‌गुरु से छिपाव-दुराव कैसा जो मानस-मर्मज्ञ है॥ 1॥ मैं जगत की मोह-माया में भूलकर भटक रहा था। सद्‌गुरु ने मेरी बांह पकड़कर अपनी ओर खींच लिया॥ 2॥ सद्‌गुरु दीनों पर दया करने वाले, पतितों को पवित्र करने वाले और कल्याणार्थी जनों को अपनी शरण में लेकर उन्हें निभाने वाले हैं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि एक सद्‌गुरु धन्य हैं जिनकी शरण से कल्याण होता है। शेष बातें तो यों ही हैं॥ 4॥

### शब्द-40

**जल औ मीन समान, गुरु से प्रीति जो कीजै॥टेक॥**
**जल से बिछुरै तनिक एक जो, छोड़ि देत है प्रान॥ 1॥**
**मीन कँह लै छीर में राखै, जल बिनु है हैरान॥ 2॥**
**जो कछु है सो मीन के जल है, जल के हाथ बिकान॥ 3॥**
**पलटू दास प्रीति करै ऐसी, प्रीति सोई परमान॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—छीर= क्षीर, दूध।

**भावार्थ**—सद्गुरु से वैसा ही प्रेम करो जैसे मछली जल से करती है॥ टेक॥ मछली यदि जल से बिछुड़ जाय तो वह प्राण त्याग देती है॥ 1॥ यदि मछली को दूध में डालकर रखा जाय, तो वह उसे पसंद नहीं करेगी। वह तो जल के बिना दुखी होती है॥ 2॥ मछली का सर्वस्व जल है। वह जल के हाथों बिकी है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जो साधक इसी प्रकार सद्गुरु से प्रेम करता है उसी का प्रेम प्रामाणिक होता है॥ 4॥

## शब्द-41

**जानी जानी पिया हो, तुमको पहिचानी॥टेक॥**
**जब हम रहली बारी भोली, तुम्हरो मरम न जानी।**
**अब तो भागि जाहु पिया हम से, तब हम मरद बखानी॥ 1॥**
**बहुत दिनन पर भेंट भई है, फाग खेलन हम ठानी।**
**धन सम्पत लै खाक मिली तन, तजि के मान गुमानी॥ 2॥**
**इँगला पिंगला सुखमन खेलै, अजपा सखी सयानी।**
**तुरिया नाँघि चली घर अपने, झझकि झझकि झझकानी॥ 3॥**
**प्रेम के रंग अबीर भरि थारी, जोति में जोति समानी।**
**पलटू जीते हारि चले पिय, ना कछु लाभ न हानी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—बारी= बालक। मरद= वीर। झझकि= झिझक, हिचक, लज्जा-जनक, संकोच।

**भावार्थ**—साधनापरायण मनोवृत्ति कहती है कि हे प्रियतम आत्मा ! मैंने तुमको जान लिया, समझ लिया और पहचान लिया है॥ टेक॥ जब मैं कच्ची बुद्धि की मूर्खा थी तब तुम्हारा निर्मल स्वरूप नहीं समझ सकी थी। परन्तु अब मैं तुम्हें ठीक से समझ गयी हूं कि तुम्हीं मेरे सर्वस्व हो। अब तुम मुझसे दूर हो जाओ तो मैं तुम्हें वीर समझूं—अब मन आत्मलीनता नहीं छोड़ सकता॥ 1॥ अनादिकाल की भूल मिटी और अब आत्म-पति का बोध हुआ। अब मैंने निश्चय कर लिया है कि तुमसे ही निरंतर प्रेम का फाग खेलूंगी। अब सारा मान-गुमान छोड़कर धन-संपत्ति तथा शरीर को धूल समझती हूं॥ 2॥ इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, अजपा जप तथा तुरीया आदि सखियों को लांघकर और साधना-पथ में जो झिझक आती थी उससे पार होकर आत्म-प्रेम का अबीर थाली में भरकर आत्मदेव से ही फाग खेलती हूं

और मनोवृत्ति ज्योति आत्म-ज्योति में लीन हो गयी है। पलटू साहेब कहते हैं कि अब मनोवृत्ति-पत्नी जीत गयी और आत्मदेव-पति हार गये; क्योंकि फाग खेल में नारी ही जीतती है और पुरुष हारता है—चित्तवृत्ति आत्मलीन हो गयी। अब जीवन में न लाभ रह गया और न हानि॥ 3-4॥

**विशेष**—काव्य के अलंकारों को हटाकर सार अर्थ यह है कि अबोध दशा में मन बाहरी चमक-दमक में भटकता है। जब निज स्वरूप का ठीक से बोध होकर स्वरूपलीनता हो जाती है तब दुनिया के हानि-लाभ समाप्त हो जाते हैं और पूर्ण विश्राम मिल जाता है—"हानि लाभ दोउ देह के झूठे, निज को जानि अमरते *(भवयान)*।

शब्द-42

**जो पिय के मन मानी रे, सोइ नारि सयानी॥टेक॥**
**पीतम हमरे पाती पठाई, देखि देखि मुसुकानी।**
**बाँचत पाती जुड़ानी छाती, आपु में उलटि समानी॥ 1॥**
**भूषन भोजन नींद न भावै, देखत रूप अघानी।**
**लोग कहैं सखि लाज करो तुम, हम चेतन ह्वै बौरानी॥ 2॥**
**रंग महल में जाइ के बैठी, रितु बसंत जहँ आनी।**
**सुखमन गावै भाव बतावै, देखि नाच हरखानी॥ 3॥**
**पलटू दास असमान फोरि कै, सबद की करै बखानी।**
**पुतरी लोन की सिंधु समानी, उलटि कहै को बानी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—पिय= प्रीतम आत्मा। सुखमन= सुषुम्ना।

**भावार्थ**—वही मनोवृत्ति शुद्ध है जो प्रियतम चेतन आत्मा में लीन है॥ टेक॥ मनोवृत्ति कहती है कि मेरे प्रियतम पति आत्मा ने मुझे पत्र भेजा। मैं उसको पढ़कर प्रसन्नता में मुस्कराने लगी। उनका पत्र बांचते ही हृदय शीतल हो गया और मैं उलटकर आत्मा में लीन हो गयी अर्थात जब चित्त शुद्ध होते-होते स्वस्वरूप का अनुभव होने लगा तब शांति मिलने लगी और मेरी स्वयं में उलटकर लीनता हो गयी॥ 1॥ अब मुझे शृंगार, भोजन और नींद अच्छे नहीं लगते। मैं अपने आत्मस्वरूप का साक्षात्कार करके तृप्त हो गयी। लोग कहते हैं कि हे सखी! लोकलाज और कुलमर्यादा का पालन करो, परंतु मैं तो आत्मस्वरूप में जाग्रत होकर मस्त हो गयी हूं। अब किसकी लाज और मर्यादा!॥ 2॥ मैं स्वरूपस्थिति रूपी रंगमहल में जाकर बैठ गयी जहां परम शांति की बसंत ऋतु छायी है। इड़ा-पिंगला के बीच सुषुम्ना मानो

गाती, नाचती और भाव बताती है। उसका नाच देखकर मैं हर्षित हूं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि आकाश फोड़कर भौतिक धरातल से उठकर यहां आत्मज्ञान के शब्दों का यथार्थ अर्थ अनुभव में आता है। यदि नमक की डली समुद्र में गल गयी तो वह अपना संदेश देने कैसे आये? इसी प्रकार जिसका मन आत्मलीन हो गया, वह उसका अनुभव कैसे बताये। दूसरा भी जब उस बोध तथा साधना से चलेगा तब उसको अनुभव होगा॥ 4॥

**विशेष**—साधक इड़ा (बाईं नाक की सांस), पिंगला (दायीं नाक की सांस) तथा सुषुम्ना (दोनों नाकों की समान सांस) का प्राणायाम में अभ्यास करता है। उसके साथ अपने लक्ष्य का भी स्मरण करता है। वैसे स्वरूपस्थिति में प्राणायाम का बड़ा महत्त्व नहीं है।

## शब्द-43

**समुझि बूझि रन चढ़ना साधो, खूब लड़ाई लड़ना है॥टेक॥**
**दम दम कदम पड़ै आगे को, पीछे नाहिं पछड़ना है।**
**तिल तिल घाव लगे जो तन में, खेत सेती क्या टरना है॥ 1॥**
**सबद खैंचि समसेर जेर कर, उन पाँचों को धरना है।**
**काम क्रोध मद लोभ कैद कर, मन कर ठौरै मरना है॥ 2॥**
**खड़ा रहै मैदान के ऊपर, उनकी चोट सँभरना है।**
**आठ पहर असवार सुरत पर, गाफिल नाहीं पड़ना है॥ 3॥**
**सीस दिहा साहिब के ऊपर, किसकी डेर अब डेरना है।**
**पलटू बाना रुण्ड के ऊपर, अब क्या दूसर करना है॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—रन= रण, युद्ध। खेत= युद्धक्षेत्र। समसेर= शमशीर, तलवार। जेर= ज़ेर, नीचे, दमन। पांचों= पांचों ज्ञानेन्द्रियां—आंख, कान, नाक, जीभ तथा चाम। साहिब= स्वामी, सद्गुरु। डेर= डर। रुण्ड= धड़।

**भावार्थ**—हे साधो! समझ-बूझ कर मोह-राजा के विरोध में युद्ध में चढ़ाई करना और घनघोर युद्ध करना है॥ टेक॥ हर सांस युद्ध में आगे पैर रखना है। पीछे कभी पछड़ना नहीं है। शरीर के सारे अंग तिल-तिल घाव से भर जायं, तो भी युद्ध क्षेत्र से क्या हटना?॥ 1॥ आत्मज्ञानपरक शब्दों की तलवार खींचकर और पांचों ज्ञानेन्द्रियों का दमन कर उन्हें स्ववश करना है और काम, क्रोध, मद, लोभ आदि का शमन कर मन को मार देना है॥ 2॥ सावधान! मन के युद्धक्षेत्र में डटे रहना और मानसिक विकारों की

चोट को सहकर निर्विकार रहना है। चौबीसों घंटे मनोवृत्ति पर तटस्थ होकर चढ़े रहो। कभी असावधान नहीं होना है॥ 3॥ सद्गुरु के उपदेशों के ऊपर अपना सिर दे दिया। अब किसका भय करना? पलटू साहेब कहते हैं कि साधक अपना अहंकार रूपी सिर तो काट दिया, अब केवल धड़ पर कफन बांधकर मोह-राजा से लड़ना है। साधक को इसके अतिरिक्त अब काम ही क्या रहा?॥ 4॥

शब्द-44

**सो रजपूत जाको काया कोट॥ टेक॥**
**काम क्रोध मन में मउवास। इन दुष्टन को देइ निकास॥ 1॥**
**पाँच सिपाह जगीरीदार। नित उठि मन से करते रार॥ 2॥**
**इन पाँचों को डारो मार। गढ़ भीतर तुमहीं सरदार॥ 3॥**
**लोभ मोह यह करिहैं चोट। जौं लगि पैहैं तिल भर ओट॥ 4॥**
**पलटू दास सोई रजपूत। मन को मारि कै होइ सपूत॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—रजपूत= क्षत्रिय, वीर। कोट= किला। मउवास= चोर। जगीरीदार= पुराने कब्जेदार। सपूत= कुल की सुकीर्ति करने वाला अच्छा पुत्र, लायक।

**भावार्थ**—क्षत्रिय वह है जो काया-कोट पर अपना पूरा नियंत्रण रखता है॥ टेक॥ काम-क्रोधादि मन में रहने वाले चोर हैं। इन दुष्टों को मन से निकाल दे॥ 1॥ आंख, नाक, कान, जीभ और चाम, ये पांच सिपाही पुराने कब्जेदार हैं। ये नित जगने पर मन को बहकाते हैं और द्वंद्व करते हैं॥ 2॥ इन पांचों को जब पूरा अपने वश में कर लेंगे तो इस शरीर-गढ़ के तुम अद्वितीय स्वामी बन जाओगे॥ 3॥ सावधान! काम, क्रोध, लोभादि मनोविकार तुम्हारी थोड़ी भी असावधानी पाकर तुम्हारे ऊपर आक्रमण कर देंगे॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि वही वीर क्षत्रिय है जो मन को मारकर अपना उद्धारक हो गया है॥ 5॥

## 9. सत्योपदेश तथा सद्गुरु की महत्ता

शब्द-45

**बनत बनत बनि जाइ, पड़ा रहै संत के द्वारे॥टेक॥**
**तन मन धन सब अरपन कै कै, धका धनी को खाय॥ 1॥**

**मुरदा होय टरै नहिं टारे, लाख कहै समुझाय॥ 2॥**
**स्वान बिरति पावै सोइ खावै, रहै चरन लौ लाय॥ 3॥**
**पलटू दास काम बनि जावै, इतने पर ठहराय॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—धनी= आत्मधनी गुरु-संत। स्वान बिरति= श्वानवृत्ति= सहज प्राप्त।

**भावार्थ**—यदि साधक विवेकवान संतों के द्वार पर पड़ा रहे, उनकी सेवा तथा सत्संग में लगा रहे तो धीरे-धीरे अपना स्वभाव सुधारते-सुधारते पूर्ण सुधार होकर उसे अविचल शांति मिल जायगी॥ टेक॥ साधक अपने तन, मन, धन तथा सर्वस्व सदगुरु-संतों के चरणों में अर्पित कर दे और उनके शासन को सहर्ष स्वीकार करके सहनशीलतापूर्वक साधना करे॥ 1॥ मुरदा होकर उनकी शरण में पड़ जाय। उनके हटाने पर भी न हटे! मुरदा कहीं हटता है? लाख समझाने पर भी नहीं हटता है। जैसे कुत्ते सहज प्राप्त टुकड़े पर संतोषपूर्वक निर्वाह करते हैं, वैसे यथाप्राप्त वस्तुओं से निर्वाह करते हुए सद्गुरु-संतों की चरण-भक्ति में उत्साहपूर्वक लगा रहे॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जो साधक इतनी बातों पर ठहर जाय, उसका कल्याण हो जायगा॥ 4॥

## शब्द-46

**हाट लगी है दाया की कोइ करैगा सौदा॥ टेक॥**
**लादै को जस लादेन्हि अपजस, परि गइ फाँसी माया की॥ 1॥**
**नफा को आएन्हि मूर गँवाएन्हि, माल जगातिन खाया की॥ 2॥**
**बगल में लरिका सहर ढँढोरा, नाहिं लेइ सुधि काया की॥ 3॥**
**पलटू दास सब जगत भुलाना, लखि परछाहीं छाया की॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—जस= यश, सुकीर्ति। अपजस= अपयश, कुकीर्ति। जगातिन = जगात, जकात, आयात कर। जगातिन= कर वसूलने वाला।

**भावार्थ**—यह संसार बाजार दया का है। सब जीव दुखी हैं। उन पर दया करो। किसी को दुख न दो। क्या कोई यह सौदा करेगा? क्या दूसरों को दुख देने से बचेगा?॥ टेक॥ इस संसार में थोड़े दिन के लिए आये हैं। यहां सुयश का सौदा खरीदकर अपनी जीवन-गाड़ी में लादना चाहिए, किन्तु लोग अपयश का सौदा लादते हैं। इनके गले में माया की फांसी पड़ गयी

है॥ 1॥ मानव जीवन में कल्याण करने का लाभ कमाना था, किन्तु लोगों ने अपना मूलधन विवेक ही खो दिया। इनका सब माल कर वसूलने वालों ने ही खा लिया—मन-इन्द्रियों के गलत आचरण ने ही इनको नष्ट कर दिया॥ 2॥ बगल में बालक है, किन्तु उसके खो जाने की मुनादी पूरे शहर में की जा रही है—परमात्मा स्वयं आत्मा है, परन्तु उसे बाहर खोजा जा रहा है। लोग अपने शरीर पर ध्यान नहीं देते कि इसके आचरण ठीक कर अपने आप को पहचाने॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि सारा संसार स्वस्वरूप को भूलकर बाहर भटका हुआ है। लोग अपनी कल्पनाओं की परछाईं पकड़ना चाहते हैं॥ 4॥

### शब्द-47

**मितऊ देहला न जगाय, निंदिया बैरिन भैली॥टेक॥**
**की तो जागै रोगी भोगी, की चाकर की चोर।**
**की तो जागै संत बिरहिया, भजन गुरु कै होय॥ 1॥**
**स्वारथ लाय सभै मिलि जागैं, बिन स्वारथ न कोय।**
**परस्वारथ को वह नर जागै, जापै किरपा गुरु की होय॥ 2॥**
**जागे से परलोक बनतु है, सोये बड़ दुख होय।**
**ज्ञान खरग लिये पलट जागै, होनी होय सो होय॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—मितऊ= मित्र। खरग= खड्ग, तलवार।

**भावार्थ**—हे मित्र! मुझे जगा देना न! यह माया-मोह की नींद मेरी शत्रुणी है॥ टेक॥ रोगी जागते हैं, भोगी जागते हैं, नौकर जागते हैं अथवा चोर जागते हैं। इनसे हटकर आत्मानुरागी संत जागते हैं और सद्गुरु के उपदेशानुसार आत्मशोधन-आत्मस्थिति करते हैं॥ 1॥ अपने देह-स्वार्थ में सब जागते हैं। बिना स्वार्थ के कोई नहीं जागता है। पर-स्वार्थ में तो वह मनुष्य जागता है जिस पर सद्गुरु की कृपा हुई है और उन्होंने उसे आत्मबोध दिया है—सच्चा पर-स्वार्थ करना है किसी को आत्मबोध देना॥ 2॥ मोह-नींद से जग जाने पर आज से लेकर आगे आनन्द ही आनन्द है। मोह-नींद में सोने से जीव को बड़ा दुख होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं आत्मज्ञान की तलवार लेकर निरंतर जागता हूं। इसका परिणाम जो होना हो, वह हो—इसका परिणाम तो उत्तम है ही॥ 3॥

## शब्द-48

**बनिया समुझ के लाद लदनियाँ॥ टेक॥**
**यह सब मीता काम न आवै, सँग न जाइ परधनियाँ॥ 1॥**
**पाँच मने की पूँजी राखत, होइगे गर्ब गुमनियाँ॥ 2॥**
**करि ले भजन साध कीसेवा, नाम से लाव लगनियाँ॥ 3॥**
**सौदा चाहै तो याँही करि ले, आगे न हाट दुकनियाँ॥ 4॥**
**पलटु दास गोहराय कहत हैं, आगे देस निरपनियाँ॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—परधनियां= प्रधानता, लौकिक श्रेष्ठता। निरपनियाँ= न पनिया, जलरहित, नीरस रेगिस्तान।

**भावार्थ**—हे जीव व्यापारी! समझ-बूझकर सौदा लादो॥ टेक॥ हे मित्र! संसार की माया अंत में काम नहीं आयेगी। तुम्हारे साथ में तुम्हारी आज की लौकिक प्रधानता नहीं जायेगी॥ 1॥ पांच ज्ञानेन्द्रियों के विषय भोगों की मनमानी पूंजी रखते-रखते तुम्हें बड़ा अहंकार और भ्रम हो गया है॥ 2॥ तू साधु की सेवा कर आत्मचिंतन कर और सतनाम के अर्थस्वरूप आत्मस्थिति में लगन लगा॥ 3॥ साधना-भजन का सौदा करना चाहता है तो मानव-शरीर और सत्संग में यहीं कर ले। आगे न सत्संग-बाजार है और न आत्मज्ञान के व्यापारी सद्गुरु के आत्मज्ञान की दुकान है॥ 4॥ पलटू साहेब उच्च स्वर में कहते हैं कि आगे जल-रहित रेगिस्तान देश है—मानव शरीर के अलावा कहीं कल्याण-साधना का स्थान नहीं है॥ 5॥

## शब्द-49

**को खोलै कपट किवरिया हो, सतगुरु बिन साहिब॥टेक॥**
**नैहर में कछु गुन नहिं सीख्यो, ससुरे में भई फुहरिया हो।**
**अपने मन की बड़ी कुलवंती, छुए न पावै गगरिया हो॥ 1॥**
**पाँच पचीस रहै घट भीतर, कौन बतावै डगरिया हो।**
**पलटू दास छोड़ि कुल जतिया, सतगुरु मिलै संघतिया हो॥ 2॥**

**शब्दार्थ**—किवरिया= किवाड़। फुहरिया= फूहड़, बेशऊर, भद्दी, अंडबंड।

**भावार्थ**—सद्गुरु साहेब के अतिरिक्त मन के कपट-किवाड़ को खोलने का ज्ञान कौन दे सकता है?॥ टेक॥ जो नारी नैहर में कुछ गुण-

ढंग नहीं सीखती, वह ससुराल में जाकर फूहड़ होकर रहेगी। अपने मन से बड़ी कुलवंती बनती रही। कभी एक घड़ा पानी भी भर के ना ला सकी॥ 1॥ काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा भय, ये पांच मनोविकार तथा पचीस प्रकृतियां शरीर में रहती हैं। इन्हीं में जीव उलझा रहता है। उसे सद्गुरु के बिना मोक्ष का रास्ता कौन बतावे? पलटू साहेब कहते हैं कि मुझे सद्गुरु साथी-मित्र मिले और मैं कुल-जाति का जंजाल छोड़कर उनके साथ हो लिया॥ 2॥

## शब्द-50

**अबसे खबरदार रहु भाई॥ टेक॥**

**सतगुरु दीन्हा माल खजाना, राखो जुगत लगाई।**
**पाव रती घटने नहिं पावै, दिन दिन होत सवाई॥ 1॥**
**छिमा सील की अलफी पहिनो, ज्ञान लँगोटि लगाई।**
**दया कि टोपी सिर पर दै कै, और अधिक बनि आई॥ 2॥**
**बस्तु पाइ गाफिल मति रहना, निसु दिन करौ कमाई।**
**घट के भीतर चोर लगतु हैं, बैठे घात लगाई॥ 3॥**
**तन बन्दूक सुमति कै सिंगरा, ज्ञान के गज ठहकाई।**
**सुरति पलीता हरदम सुलगै, कस पर राख चढ़ाई॥ 4॥**
**बाहर वाला खड़ा सिपाही, ज्ञान गम्य अधिकाई।**
**पलटू दास आदि के अदली, हरदम लेत जगाई॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—खबरदार= ख़बरदार, होशियार, सावधान, सचेत। सिंगरा= सिंगड़ा, बारूद रखने का सींग का बना खोल। गज= गज़, लोह का छड़ या छड़ जैसी लकड़ी जिससे बंदूक भरी जाती है। पलीता= वह बत्ती जिससे बंदूक या तोप के रंजक में आग लगायी जाती है। कस= व्यक्ति, मनुष्य, अपना शारीरिक व्यक्तित्व। गम्य= समझने योग्य, पहुंचने योग्य। आदि= मूल, स्वरूपज्ञान। अदली= न्याय करने वाला।

**भावार्थ**—हे भाई साधक! आज से सावधान हो जाओ॥ टेक॥ सद्गुरु ने आत्मज्ञान का अक्षय-कोष दिया है। उसे अनेक उपायों से सुरक्षित रखो। वह रत्ती की चौथाई भी घटने न पावे, अपितु दिन-दिन आत्मज्ञान की स्थिति सवाई बढ़ती जाय॥ 1॥ क्षमा और कोमलता की अलफी पहनो, आत्मज्ञान की लंगोटी कसो और दया की टोपी सिर पर लगाओ—क्षमा, विनम्रता,

आत्मज्ञान, दया आदि की रहनी में चलो, तो तुम्हारा अंतःकरण अत्यंत निर्मलता और आनंद से भर जायेगा॥ 2॥

स्वरूपज्ञान अत्यन्त अनमोल वस्तु है। इसे सद्गुरु से पा गये हो। अब उसी में स्थित रहो। इस साधना में असावधानी न करो, अपितु रात-दिन दृश्यों का अभाव कर—संकल्पों को छोड़कर अपने आप में शांत रहने की साधना रूपी कमाई करो। याद रखो, तुम्हारी देह के भीतर काम, क्रोध, लोभादि डाकू घात लगाकर बैठे हैं। तुम्हारे चूकते ही वे तुम्हारे ऊपर हमला कर देंगे॥ 3॥ इन डाकुओं को मारने के लिए शरीर को बंदूक बनाओ, सुबुद्धि का सिंगड़ा बनाओ और आत्मज्ञान के छड़ से बंदूक भरकर डाकुओं को दाग दो। इसके लिए मनोवृत्ति रूपी पलीता रात-दिन विवेक की आग में सुलगते रहना चाहिए और अपने माने गये नाम-रूपात्मक व्यक्तित्व पर राख चढ़ा दो—देहाभिमान मिटा दो॥ 4॥ जो देहाभिमान से पूर्णतया बाहर हो गया है, वह सजग योद्धा की तरह खड़ा रहता है। वह पूर्णतया स्वरूपस्थिति की पहुंच में रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु मूल तत्त्व जड़-चेतन के निर्णयता हैं। वे हर श्वास तुम्हें सावधान करते हैं॥ 5॥

## शब्द-51

**साहिब मेरा सब कुछ तेरा, अब नाहीं कुछ मेरा है॥ 1॥**
**यहि हमता ममता के कारन, चौरासी किहा फेरा है॥ 2॥**
**मृग-जल निरखि के तृषा बुझै नहिं, सूखे अटका बेरा है॥ 3॥**
**यह संसार रैन का सुपना, रूपा भ्रम सीपी केरा है॥ 4॥**
**पलटू दास सब अरपन कीन्हा, तन मन धन और देरा है॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—बेरा= बेड़ा, नाव, जहाज। रूपा= चांदी। देरा= डेरा, घर।

**भावार्थ**—हे सद्गुरु! जो कुछ मेरा माना हुआ है वह सब आपका है। अब मेरा कुछ नहीं है॥ 1॥ इस अहंता-ममता के कारण ही मैं चौरासी-चक्र में घूम रहा हूं॥ 2॥ मृगजल-धूप की लहरियों से प्यास नहीं बुझ सकती—विषयों की व्यर्थ चमक-दमक से मुझे स्थिर तृप्ति नहीं मिल सकती। मेरी जीवन-नाव सूखी रेत में अटक गयी है—व्यर्थ के प्रलोभन में मैं फंस गया हूं॥ 3॥ संसार की सारी माया रात में सोते समय दिखते स्वप्न के समान है। जैसे सीपी में चांदी का भ्रम होता है वैसे सारहीन संसार में सुख का भ्रम होता है॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि इसलिए मैंने अपने माने गये तन, मन, धन और घर सद्गुरु के चरणों में अर्पित कर दिये हैं।

शब्द–52

**टुक हरि भजि लेहु, मन मेरे यार मुसाफिर॥टेक॥**
**पानी पवन अगिन से जोरा, धरती और अकासा।**
**पाँच तत्तु का महल उठाया, तहाँ लिया तुम बासा॥ 1॥**
**को तुम कवन कहाँ ते आया, बारम्बार ठगाया।**
**इतनी बात भुलै के कारन, फिरि फिरि गोता खाया॥ 2॥**
**इतनी बात चेत नहिं तुमको, जिस कारज को आया।**
**माया मोह लालच के कारन, अपनो रूप भुलाया॥ 3॥**
**मन के कारन रामचन्द्र जी, गये गुरू के पासा।**
**खसर फसर में कारज नाहीं, कहते पलटू दासा॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—टुक= थोड़ा। खसर फसर= अनिश्चय, दुविधा, उलझाव।

**भावार्थ**—ऐ मेरे यात्री मित्र मन! थोड़ा हरि भजन कर लो—अपने आपको समझ लो ॥ टेक॥ पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश, इन पांच तत्त्वों से जुड़कर यह शरीर-महल अपने कर्मों के जोर से तुमने बनाया है और इसमें निवास किया है॥ 1॥ तुम कौन हो? तुम्हारा यहां कौन है? तुम कहां से आये हो? तुमने यहां आकर बारंबार अपने को लुटा दिया है। अपने स्वरूप के विस्मरण के कारण तुम बारंबार संसार-सागर में डूबते हो॥ 2॥ मानव-शरीर कल्याण करने की भूमिका है; परन्तु तुम्हें इस बात की सावधानी नहीं है। माया के मोह और जगत-प्रलोभन के कारण तुमने अपने शुद्ध स्वरूप चेतन आत्मा को भुला दिया है॥ 3॥ याद रखो, मन के भवबंधन के कारण ही श्रीरामचंद्र जी गुरु के पास गये। पलटू साहेब कहते हैं कि अनिश्चित बुद्धि में कल्याण नहीं होगा। इसलिए स्वरूपज्ञान में दृढ़ हो जाओ॥ 4॥

शब्द–53

**साहिब के दरबार में कमी कुछ नाहीं।**
**चूक चाकरी में परी दुबिधा मन माहीं॥ 1॥**
**बेनियाज हाजिर रहै तकसीर हमारी।**
**कुसियारी के कीट में किन चारा डारी॥ 2॥**
**अकिल आपनी क्या करै अकीन न आया।**
**बुन्द से पिण्ड सँवारिया तिसको बिसराया॥ 3॥**

**खसम बिसारै आपना सोइ काफिर भाई।**
**पीर पराई ना लखै सोइ जाति कसाई॥ 4॥**
**जाति वही असराफ है दिल दर्द को आनी।**
**पलटु दास सोइ पाक है दुर्वेस निसानी॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—बेनियाज=बेनियाज़, वासना-बंधन से मुक्त, परम स्वतंत्र। तकसीर=त्रुटि, गलती। कुसियारी=कुसवारी, रेशम का जंगली कीड़ा, रेशम का कोया। अकीन=यक़ीन, विश्वास। खसम=पति, स्वामी, आत्मा। असराफ=अशराफ़, सज्जन लोग। पाक=पवित्र। दुर्वेस=दरवेश, फकीर संत।

**भावार्थ**—सद्गुरु के दरबार में अथवा विश्व प्रकृति के क्षेत्र में कोई कमी नहीं है। त्रुटि है अपने कर्तव्य-कर्म में और मन में संदेह होने में॥ 1॥ बंधनों से मुक्त पूर्ण स्वतंत्रता अपने अधिकार में प्रत्यक्ष है, परन्तु गलती हमारी है जो हम सावधान नहीं होते। जीवन-निर्वाह की क्या चिंता? रेशम के कीड़े को कोषा के भीतर किसने चारा डाला है? प्रकृति के नियमों से उसे स्वतः आहार मिलता है॥ 2॥ अपनी बुद्धि क्या करे जब अपने कर्म और प्रकृति के नियमों पर विश्वास नहीं है। प्रकृति के नियम तथा कर्म के जोर से ही रज-वीर्य की बुंद से शरीर की रचना हुई है। परंतु मनुष्य ऐसे कर्म-सिद्धान्त और प्रकृति के नियमों को भूल जाता है॥ 3॥ जिसने अपने आत्मस्वरूप स्वामी को भुला दिया है, हे भाई ! वही काफिर है। जो दूसरे के दर्द को न समझे और पर-पीड़न करे उसी की जाति कसाई है॥ 4॥ सज्जन लोगों की जाति वही है जिसके दिल में सब जीवों पर दया एवं मेहरबानी है। पलटू साहेब कहते हैं कि वही पवित्र है। फकीर के लक्षण हैं परहेजगारी और रहमदिली—संयम और शील॥ 5॥

## शब्द-54

**साहिब से परदा का कीजै। भरि भरि नैन निरखि लीजै॥ 1॥**
**नाचै चली घूँघट क्यों काढ़ै। मुख से अंचल टारि दीजै॥ 2॥**
**सती होय का सगुन बिचारै। कहि के माहुर क्या पीजै॥ 3॥**
**लोक बेद तन मन की डेर है। प्रेम रंग में क्या भीजै॥ 4॥**
**पलटू दास होय मरजीवा। लेहि रतन नहिं तन छीजै॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—सगुन=शकुन, शुभ घड़ी। माहुर=विष। मरजीवा=मरजिया, समुद्र में डूबकर मोती निकालनेवाला।

**भावार्थ**—सद्गुरु से क्या परदा करना? भर-भर नेत्र उनके दर्शन कर लो॥ 1॥ जब नाचने चली तब घूंघट काढ़ने का क्या तुक है? अपितु मुख से आंचल हटा दो॥ 2॥ जब पति की लाश के साथ सती होने चली तब शकुन एवं शुभ घड़ी विचारने की क्या आवश्यकता? लोगों को बताकर विष पीने के का क्या तुक है?॥ 3॥ इसी प्रकार जब तक लोक, वेद, तन और मन का भय है, तब तक कोई साधना के अनुराग-रस में क्या भीजेगा?॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जो मरने की चिंता छोड़कर समुद्र में डूबता है वही मोती खोज निकालता है॥ 5॥

**विशेष**—सब भय और भ्रम छोड़कर आत्मज्ञान की साधना में समर्पित हो जाओ।

### शब्द-55

**गुप्त मते की बात जगत में, फहस न कीजै॥टेक॥**
**पात्र सुपात्र देखि जब लीजै, बस्तु ताहि को दीजै॥ 1॥**
**यह संसार मोम का कपड़ा, जल बिच कोर न भीजै॥ 2॥**
**तजि बकवाद मौन ह्वै रहिये, बोलत काया छीजै॥ 3॥**
**पलटू कहै सुनो भाई साधो, बचन गाँठि गहि लीजै॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—फहस= फ़हश, फूहड़, अश्लील। कोर= किनारा।

**भावार्थ**—स्वरूपज्ञान और स्वरूपस्थिति अंतर्मुखता की बात है; अतएव इसको लेकर फूहड़पन न कीजिये॥ टेक॥ सामने मिले लोगों को परखो कि उनमें क्या सुपात्रता है, वे क्या उसके योग्य हैं। यदि सुपात्र हैं, तो उनको इसका उपदेश दीजिए॥ 1॥ संसार के लोग मोम के कपड़े हैं। जल में उनका किनारा भी नहीं भीग सकता—लोग प्रत्यक्ष भोग-वासनाओं और परोक्ष कल्पनाओं में डूबे हैं। उन्हें आत्मज्ञान नहीं वेधता॥ 2॥ अतएव किसी से बकवास करने की आदत छोड़कर मौन आत्मस्थिति में रहो। व्यर्थ बोलने से मन, वचन तथा तन क्षीण ही होते हैं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि हे भाई संतो ! सुनो, इस बात को अपनी गांठ में बांध लो॥ 4॥

### शब्द-56

**नहीं मुख राम गाओगे, आगे दुख बड़ा पाओगे॥ 1॥**
**राम बिन कौन तारैगा, पकड़ जमदूत मारैगा॥ 2॥**
**कबौं सतसंग ना कीन्हा, भूखे को नाहिं कुछ दीन्हा॥ 3॥**

**माया औ मोह में भूले, कुटुम परिवार लखि फूले॥ 4॥**
**पूछै धर्मराज जब भाई, बचन मुख नाहिं कहि आई॥ 5॥**
**पलटू दास लखि रोया, सुघर तन पाय के खोया॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—कबौं= कभी। सुघर= सुंदर, कल्याणदायी।

**भावार्थ**—यदि मुख से राम-राम नहीं कहोगे—आत्मबोध नहीं ग्रहण करोगे, तो तुम्हें आगे चलकर बड़ा दुख मिलेगा॥ 1॥ आत्मज्ञान और आत्मस्थिति के बिना तुम्हारा भवबंधन कैसे कटेगा? फल यह होगा कि वासनाओं में पिसकर दुख भोगोगे॥ 2॥ तुमने कभी सत्संग नहीं किया और भूखे-प्यासे को भोजन-जल नहीं दिया॥ 3॥ माया के मोह में अपने आप को भूले रहे और कुटुम्ब-परिवार देखकर अहंकार में फूले-फूले घूमते रहे॥ 4॥ जब तुमसे यमराज तुम्हारे कर्मों का लेखा-जोखा लेगा तब तुम्हारे मुख से कुछ उत्तर देते नहीं बनेगा॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं तुम लोगों की दयनीय दशा देखकर दुखी होता हूं। तुमने कल्याणदायी उत्तम मानव-शरीर पाकर उसे व्यर्थ और अनर्थ में खो दिया॥ 6॥

## 10. उच्चतम स्वरूपस्थिति की दशा

शब्द-57

**चलहु सखी वहि देस, जहवाँ दिवस न रजनी॥टेक॥**
**पाप पुन्न नहिं चाँद सुरज नहिं, नहीं सजन नहिं सजनी॥ 1॥**
**धरती आग पवन नहिं पानी, नहिं सूतै नहिं जगनी॥ 2॥**
**लोक बेद जंगल नहिं बस्ती, नहिं संग्रह नहिं त्यगनी॥ 3॥**
**पलटू दास गुरू नहिं चेला, एक राम रम रमनी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—रजनी= रात।

**भावार्थ**—बोधपूर्ण मनोवृत्ति बुद्धि से कहती है कि हे सखी! उस देश को चलो जहां न दिन है, न रात है॥ टेक॥ न पाप है न पुण्य है, न चंद्रमा है न सूर्य है, न सजन है न सजनी है॥ 1॥ वहां धरती, अग्नि, पवन, पानी नहीं है। वहां न सोना है न जागना है॥ 2॥ वहां न लोक है, न वेद है, न जंगल है, न बस्ती है, न संग्रह है और न त्याग है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि वहां गुरु और चेला भी नहीं हैं। बस, केवल एक आत्माराम में निरंतर रमना है॥ 4॥

**विशेष**—चित्त-दृश्य का पूर्ण अभाव हो जाने पर केवल स्वयं आत्माराम शेष स्थित है।

शब्द–58

**साधो भाई उहवाँ के हम बासी, जहवाँ पहुँचै नहिं अबिनाशी॥टेक॥**
**जहवाँ जोगी जोग न पावै, सुरति सबद नहिं कोई।**
**जहवाँ करता करे न पावै, हम हीं करैं सो होई॥ 1॥**
**ब्रह्मा बिस्नु नाहिं गमि सिव की, नहीं तहाँ अबिनासी।**
**आदि जोति उहाँ अमल न पावै, हमहीं भोग बिलासी॥ 2॥**
**त्रिकुटी सुन्न नाहिं है उहवाँ, दंडमेरु ना गिरिवर।**
**सुखमन अजपा एकौ नाहीं, बंकनाल ना सरवर॥ 3॥**
**जहवाँ पाँच तत्त ना स्वासा, जगमग झिलिमिलि नाहीं।**
**पलटू दास की औघट घाटी, बिरला गुरुमुख जाहीं॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—अबिनासी= अविनाशी, माना हुआ परोक्ष ईश्वर। गमि= गम, पहुंच। अमल= अधिकार। औघट घाटी= दुर्गम पथ।

**भावार्थ**—हे भाई साधो! हम वहां के निवासी हैं जहां परोक्ष ईश्वर की पहुंच नहीं है॥ टेक॥ वहां न योगी योग करता है और न वहां सुरति और शब्द हैं। वहां अन्य कर्ता का होना संभव नहीं है। हम जो करते हैं वही होता है॥ 1॥ वहां ब्रह्मा, विष्णु और शिव की पहुंच नहीं है। वहां अन्य अविनाशी माना गया परमात्मा नहीं है। माना हुआ आदि ज्योति का वहां स्थान नहीं है। वहां तो हमारा आत्मतृप्ति का भोग-विलास है॥ 2॥ वहां न त्रिकुटी है, न शून्य है, न मेरुदण्ड है, न पर्वत है। वहां न सुषुम्ना है, न अजपा है, न बंकनाल है और न सरोवर है॥ 3॥ वहां न पांच तत्व हैं, न श्वास है। न झिलमिलाती हुई जगमग ज्योति है। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरी स्थिति चित्त-दृश्य रूप दुर्गम घाटी पार कर जाना होता है। वहां कोई बिरला गुरुमुख पहुंचता है॥ 4॥

**विशेष**—चित्त ही दृश्य है। इसको पार कर स्वरूपस्थिति होती है।

शब्द–59

**साधो भाई वह पद करहु बिचारा, जो तीनि लोक से न्यारा॥टेक॥**
**छर अच्छर चौंतिस में कहिये, सहस नाम तेहि माहीं।**
**निःअच्छर वह जुदा रहतु है, लिखे पढ़े में नाहीं॥ 1॥**

**सुन्न गगन में सबद उठतु है, सो सब बोल में आवै।**
**निःसबदी वह बोलै नाहीं, सो सत सबद कहावै॥ 2॥**
**रहनी रहै कथै फिरि कथनी, उन को कहिये ज्ञानी।**
**रहनी कथनी दूनौं छूटै, सो पूरा बिज्ञानी॥ 3॥**
**सुरति लगावै ध्यान धरै जो, सो सब जाप में आवै।**
**सुरति ध्यान एकौ में नाहीं, सो अजपा कहवावै॥ 4॥**
**जोग करै सो रूढ़ मता है, मुक्ति मँहै सब आवै।**
**छोड़ै रूढ़ अरूढ़ को पावै, साची मुक्ति कहावै॥ 5॥**
**हद बेहद को अनुभै कहिये, निरअनुभै ह्वै जावै।**
**पलटु दास बेहद में बैठे, सो वहि पद को पावै॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—पद= स्थिति। रूढ़ मता= परंपरागत। अनुभै= अनुभव। बेहद = आत्मस्थिति।

**भावार्थ**—हे भाई साधो ! उस शुद्ध चेतन स्वरूप की स्थिति का विचार करो जो तीनों लोकों-समस्त जड़ दृश्य से सर्वथा पृथक है॥ टेक॥ क्षर या अक्षर ककहरा के चौंतीस अक्षरों में आते हैं। इसमें मान्यवरों के सहस्त्र नाम गिनाये जाते हैं। किन्तु निज स्वरूप चेतन अक्षरों से सर्वथा पृथक होने से निःअक्षर है। वह लिखने-पढ़ने में नहीं आता है॥ 1॥ योगी लोग सिर के शून्य गगन में उठने वाले शब्द को सुनते हैं। अतएव वह बोली में आता है। आत्मा तो शब्दातीत है। वह बोलता नहीं। सत शब्द से उसी का संकेत किया जाता है॥ 2॥ पहले भक्ति-ज्ञान और वैराग्य की रहनी में रहे। उसके बाद ज्ञानोपदेश करे। उसको ज्ञानी कहना चाहिए। जब रहनी और कथनी दोनों का अहंकार छूट जाय वह पूरा विज्ञानी है॥ 3॥ जहां मनोवृत्ति स्थिर किया जाता है और आलंबन का ध्यान किया जाता है, वह सब जाप के भीतर आता है—वह चित्त स्थिर करने का आलंबन मात्र है। जहां न कहीं मनोवृत्ति लगाना रहता है और न किसी का ध्यान करना रहता है, वह दृश्य-शून्य दशा शुद्ध चेतन की स्थिति है। यह सच्चा अजपा की दशा कहलाती है॥ 4॥ जो परंपरागत योगाभ्यास किया जाता है वह रूढ़ मत है। यह सब मुक्ति पथ में आता है। जब रूढ़ योग छोड़कर अरूढ़-परम्परा से पार दृश्य-शून्य की स्थिति आती है, वही सच्ची मुक्ति कहलाती है॥ 5॥ हद-स्थूल साधना और बेहद-सूक्ष्म साधना यह मनोगत अनुभव का विषय है। साधक इनसे ऊपर उठकर जब चित्त-शून्य हो जाता है, वह मन के अनुभव से परे शुद्ध शांत स्वस्वरूप की स्थिति होती है। पलटू साहेब कहते हैं कि जब साधक

पारंपरिक सीमाओं की साधना से ऊपर उठकर जड़ प्रकृति क्षेत्र से बाहर हो जाता है—दृश्यातीत शुद्ध चेतन मात्र, तब वह उस स्थिति में ठहर जाता है जो परम पद है॥ 6॥

### शब्द-60

**चित मेरा अलसाना, अब मोसे बोलि न जाइ॥टेक॥**
**देहरी लागै परबत मोको, आँगन भया है बिदेस।**
**पलक उघारत जुग सम बीतै, बिसरि गया संदेस॥ 1॥**
**बिष के मुए सेती मनि जागी, बिल में साँप समाना।**
**जरि गया छाछ भया घिव निरमल, आपुइ से जुपियाना॥ 2॥**
**अब ना चलै जोर कछु मेरा, आन के हाथ बिकानी।**
**लोन की डरी परी जल भीतर, गलि के होइ गइ पानी॥ 3॥**
**सात महल के ऊपर अठएँ, सबद में सुरति समाई।**
**पलटू दास कहौं मैं कैसे, ज्यों गूंगै गुड़ खाई॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—देहरी= देहली, दरवाजे की निचली चौखट की लकड़ी जिसे लांघकर लोग आते-जाते हैं। जुपियाना= चुप हो गया।

**भावार्थ**—मेरा मन कुछ करना नहीं चाहता है, मुझसे बोला भी नहीं जाता है॥ टेक॥ अब दरवाजे की चौखट लांघना पर्वत लांघने के समान कठिन लगता है और आंगन में जाना विदेश जाने के समान कठिन लगता है। पलक झपकना भी युग बीतने के समान लगता है। अब संसार के सारे संदेश-समाचार भूल गये हैं॥ 1॥ राग-द्वेष का विष मर गया, इसलिए मन आत्मज्ञान में जग गया। अहंकार रूपी सर्प निस्तेज होकर बिल में डूब गया। छांछ के जल जाने पर उसकी कलकलाहट की आवाज बंद हो जाती है और घी निर्मल हो जाता है। इसी तरह शांति दशा में मन तर्क छोड़ देता है और वाणी मौन हो जाती है॥ 2॥ अब मेरे अहंकार का कोई बल नहीं चलता है। मैं परम शांति के हाथों बिक गया हूं। नमक की डली पानी में पड़कर जैसे गल जाती है, वैसे मेरा मन आत्म-शांति में पड़कर गल गया है॥ 3॥ सात महल के ऊपर आठवें महल के शब्द में सुरति लीन हो गयी। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं किससे कहूं? गूंगा गुड़ खाय तो वह उसका स्वाद कैसे बता सकता है? आत्मशांति का अनुभव जबान से बताया नहीं जा सकता। उस दशा में पहुंचकर स्वयं अनुभव किया जा सकता है॥ 4॥

**विशेष**—ये सात महल के ऊपर आठवें महल में उठते शब्द की बात कल्पित है। ग्रंथकर्ता ने ऐसी बातों का खंडन स्वयं पीछे अट्ठावनवें तथा

उनसठवें शब्द में कर दिया है। वस्तुतः सारा प्रतीत दृश्य छोड़कर स्वस्वरूप चेतन में ही स्थिति होती है।

## शब्द-61

**सत बेधि रहो है, का से यह भेद कहौं॥टेक॥**
**रोम रोम में नाद उठतु है, जग गति जाइ जरै।**
**हाल हमारी कोऊ ना जानै, और की और करै॥ 1॥**
**पुलकित गात पलक न परै मोर, टकटक ताकि रहो।**
**सिथिल भये मुख बचन न आवै, ज्यों ठगहार गहो॥ 2॥**
**यह अचरज कासे अब कहिये, जिन देखा सोइ जानै।**
**होइ अचरज अचरज को खोजै, तब अचरज पहिचानै॥ 3॥**
**पलटू हेरत आपु हिरानी, केहि बिधि करै सम्हार।**
**होइ अचेत झुकि झुकि परै चेतन, ऐसी हाल हमार॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—सत= स्वरूपबोध।

**भावार्थ**—सत्स्वरूप आत्मबोध ने मुझे बेध डाला है। यह भेद मैं किससे कहूं॥ टेक॥ मेरे शरीर के रोम-रोम में आनन्द का नाद उठता है। सांसारिक मोह-माया तो जल गयी है। मेरी दशा कोई समझ नहीं पाता। इसीलिए लोग कुछ अन्य ही बात समझ रहे हैं॥ 1॥ मेरे तन-मन आनन्द में प्रफुल्लित हैं। मेरे पलक गिरते नहीं हैं, अपितु नेत्र एकटक ताकते रह जाते हैं। मेरा शरीर शिथिल हो गया, मुख से बात नहीं निकलती है। मानो किसी ठग ने मुझे ठग लिया है॥ 2॥ इस आंतरिक दिव्य शांति स्थिति को अब किससे कहा जाय? जिसने इसका अनुभव किया है, वही इस दशा को जान सकता है। जो साधक आश्चर्यचकित होकर इस आश्चर्य की खोज करेंगे वे इस आश्चर्य को समझ सकेंगे॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मस्थिति को खोजते-साधते सारा अहंकार खो गया। अब किस प्रकार अपना सम्हाल करे? चेतन अचेत होकर झुक-झुक पड़ता है। ऐसी दशा मेरी हो गयी है॥ 4॥

**विशेष**—गहरी शांति हो गयी और बाह्य जगत-प्रपंच सारहीन दिखने लगा, जैसा कि वह है।

## शब्द-62

**साचा हरि दरबार, झूठा टिकै न कोई॥टेक॥**
**झूठा छिपै न लाख छिपावै, अंत को होत उघार॥ 1॥**

**झूठा रंग रँगे जो कोई, चटक रहै दिन चार॥ 2॥**
**हरि की भक्ति सहज है नाहीं, ज्यों चोखी तरवार॥ 3॥**
**पलटू दास हाथ अपने से, सिर को लेइ उतार॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—चटक= चमक।

**भावार्थ**—आत्मज्ञान का दरबार सच्चा है। वहां कोई झूठा नहीं टिक सकता॥ टेक॥ लाख छिपाने पर भी असत्य छिप नहीं सकता। अंततः वह प्रकट ही हो जाता है॥ 1॥ यदि कोई नकली रंग में अपने को रंगेगा, तो उसकी चमक चार दिन ही रहेगी, फिर फीका होगा ही॥ 2॥ आत्मज्ञान की रहनी में चलना विषयी मन के लिए सहज नहीं है। वह तो तेज धार की तलवार पर चलना है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जो अपने सिर को अपने हाथ से काटकर उतार ले वही इस पथ पर चल सकता है—जो सारा अहंकार छोड़ देगा वही स्वरूपस्थिति-पथ पर चल सकेगा॥ 4॥

## शब्द-63

**जाय मनाओं मैं साजन को, केहि भाँति सखी रे॥टेक॥**
**भूली फिरों राह न पाओं, सतगुरु चाही सँग लागन को॥ 1॥**
**मैं मूरख मन मलिन भयो है, ज्ञान चाही तन माँजन को॥ 2॥**
**भूख पियास छुटै नहिं मेरी, पाँच भूत चाही त्यागन को॥ 3॥**
**मोह मया निद्रा रहै घेरे, आठ पहर चाही जागन को॥ 4॥**
**पलटू दास साध की संगति, उठि उठि मन चाहै भागन को॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—पांच भूत= काम, क्रोध, लोभ, मोह और भय।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति इन्द्रियों से कहती है कि हे सखी! मैं किस प्रकार अपने स्वामी आत्मा को जाकर मनाऊं?॥ टेक॥ मैं तो उन्हें भूलकर विषयों में भटकती-फिरती हूं। स्वरूपज्ञान की राह नहीं पाती हूं। लगता है कि इसके लिए मुझे सद्गुरु की शरण में समर्पित होना चाहिए॥ 1॥ मैं मूर्ख हूं। मन मैला है। आत्मज्ञान चाहिए जिससे तन-मन को मांजकर उन्हें निर्मल कर लूं॥ 2॥ मेरे में लगी विषयों की भोग-तृष्णा मिटती नहीं है। मुझे चाहिए कि काम, क्रोध, लोभ, मोह और भय इन पांचों भूतों को सर्वथा त्याग दूं॥ 3॥ मुझे माया-मोह की निद्रा घेरे रहती है, जबकि चैबीसों घंटे आत्मज्ञान

में जागना चाहिए॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा मन चाहता है कि मैं उठ-उठकर साधु संगति में भाग जाऊं॥ 5॥

## 11. अनुभव ज्ञान ही सच्चा है

शब्द-64

**कहिबे से क्या भया भाई, जब ज्ञान आप से होई॥टेक॥**
**अललपच्छ के चेटुका, वाको कौन करै उपदेस।**
**उलटि मिलै परिवार में, वासे कौन कहै संदेस॥ 1॥**
**ज्यों सिसु होत मराल के, वाको कौन सिखावै ज्ञान।**
**नीर कँहै अलगाइ कै, वह छीर करतु है पान॥ 2॥**
**सिंह कै बच्चा गिरि पर्यौ, वह खेलत तुरत सिकार।**
**वाको कौन सिखावई, वो हस्ती डारत मार॥ 3॥**
**संत को कौन सिखावता, उन्ह अनुभव भा परकास।**
**सिखई बुद्धि केहि काम की, जो हृदय न पलटू दास॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—अललपच्छ= अलल नाम का पक्षी। चेटुका= बच्चा। सिसु= शिशु, बच्चा। मराल= हंस॥

**भावार्थ**—हे भाई! किसी के सिखाने से क्या होता है? जब अपने अनुभव से ज्ञान हो तब उसकी विशेषता है॥ टेक॥ अलल पक्षी का बच्चा आकाश में ही अपनी माता से पैदा होकर तुरंत उड़ चलता है और अपने परिवार में पहुंच जाता है। उसको इस तरह उड़ने का कोई प्रशिक्षण नहीं देता है॥ 1॥ हंस का बच्चा नीर को छोड़कर केवल क्षीर ले लेता है। उसको इसका कोई उपदेश नहीं देता है। उसका यह जन्मसिद्ध ज्ञान है॥ 2॥ सिंह का बच्चा पैदा होकर बिना प्रशिक्षण के शिकार करता है और हाथी तक को मार गिराता है॥ 3॥ इसी प्रकार संत को जो अनुभव ज्ञान होता है, वह कोई सिखाता नहीं है, किन्तु साधना करते-करते उन्हें स्वतः अनुभव होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि अपने हृदय में अनुभव न हो तो केवल सिखायी हुई बुद्धि किस काम की॥ 4॥

**विशेष**—मनुष्य को शिक्षा की आवश्यकता होती है परन्तु उस सीख को लेकर जब साधक स्वयं साधना करने लगता है, तब उसका अनुभव-स्रोत खुल जाता है। अनुभव का अर्थ ही है—अनु= पीछे, भव= उत्पन्न। प्रयोग के पीछे उत्पन्न ज्ञान।

शब्द–65

**बाचक ज्ञान न नीका ज्ञानी, ज्यों कारिख का टीका॥टेक॥**
**बिनु पूँजी को साहु कहावै, कौड़ी घर में नाहीं।**
**ज्यों चोकर के लड्डू खावै, का सवाद तेहि माहीं॥ 1॥**
**ज्यों सुवान कुछ देखि कै भूँकै, तिस ने तौ कुछ पाई।**
**वाकी भूँक सुने जो भूँकै, सो अहमक कहवाई॥ 2॥**
**बातन सेती नहीं होइ राजा, नहिं बातन गढ़ टूटै।**
**मुलुक मँहै तब अमल होइगा, तीर तुपक जब छूटै॥ 3॥**
**बातन से पकवान बनावै, पेट भरै नहिं कोई।**
**पलटू दास करै सोइ कहना, कहे सेती क्या होई॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—कारिख= कालिख, स्याही, कलंक। सुवान= श्वान, कुत्ता। गढ़= किला। अमल= कब्जा, अधिकार।

**भावार्थ**—हे ज्ञानी! वचन मात्र का ज्ञान अच्छा नहीं होता। वह तो स्याही के टीके के समान कलंक है॥ टेक॥ जिसके घर में कौड़ी भी नहीं है वह बिना पूंजी के महाजन कैसे कहला सकता है। कोई चोकर का लड्डू खाय तो उसे क्या स्वाद मिलेगा?॥ 1॥ जैसे कुत्ता कुछ देखकर भूंकता है, तो उसने देख पाया है, किन्तु जो कुत्ते दूसरे की भूंक सुनकर भूंकते हैं, वे मूर्ख ही कहलाते हैं॥ 2॥ बात बघारने से कोई राजा नहीं हो जाता और बात बघारने से न शत्रु का किला टूटता है। जब तीर और तोप छूटते हैं, युद्ध करके जीत लिया जाता है, तब देश में कब्जा एवं अधिकार होता है॥ 3॥ कोई बातों से पकवान बनावे और खावे, तो उससे पेट नहीं भरता। पलटू साहेब कहते हैं कि जो आचरण में करे, वही बात कहे। केवल वक्तव्य झाड़ने से क्या होता है?॥ 4॥

शब्द–66

**जोई जीव सोई ब्रह्म एक है, दृष्टि अपानी चर्मा॥टेक॥**
**जीव से जाइ ब्रह्म तब होता, जिव बिनु ब्रह्म न होई।**
**फल में बीज बीज में फल है, अवर न दूजा कोई॥ 1॥**
**नीर में लहर लहर में पानी, कैसे कै अलगावै।**
**छाया में पुरुस पुरुस में छाया, दुइ कहवाँ से पावै॥ 2॥**
**अछर में मसी मसी में अच्छर, दुइ कहवाँ से कहिये।**
**गहना कनक कनक में गहना, समझि चुप्प करि रहिये॥ 3॥**

**जीव में ब्रह्म ब्रह्म में जिव है, ज्ञान समाधि में सूझै।**
**माटि में घड़ा घड़ा में माटी, पलटू दास यों बूझै॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—चर्मा= चरम, अंतिम, सीमा। मसी= मसि, स्याही।

**भावार्थ**—जो जीव है वही ब्रह्म है। यही अंतिम दृष्टि एवं ज्ञान है॥ टेक॥ जीव ही शुद्ध होकर ब्रह्म होता है। जीव के बिना ब्रह्म का कोई अस्तित्व नहीं है। फल में बीज है, बीज में फल है। पानी और लहर दो नहीं। पुरुष की ही छाया होती है। पुरुष बिना छाया नहीं। अक्षर और स्याही दो नहीं। सोना और आभूषण एक ही है। मिट्टी और घड़ा दो नहीं। इसी प्रकार जीव में ब्रह्म है और ब्रह्म में जीव है। यह बात तब अनुभव में आती है, जब दृश्य का अभाव होकर समाधि में केवल स्व सत्ता रह जाती है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं ऐसा समझता हूं॥ 1-4॥

**विशेष**—फल, बीज, जल, लहर, पुरुष, छाया, सोना, आभूषण तथा मिट्टी-घड़ा उदाहरण मात्र हैं जो भ्रम भी पैदा कर सकते हैं, क्योंकि ये सब जड़ और विकारी तथा परिवर्तनशील हैं। वस्तुतः जीव ही ब्रह्म है, महान है, परन्तु इसका अनुभव तब होगा जब चित्त-दृश्य का अभाव होकर निराधार स्थिति होती है—असंग, केवल, अद्वितीय, स्वतःशांत।

## 12. मन की दशा

शब्द-67

**ई मन बनिया बान न छोड़ै॥ टेक॥**

**पूरा बाट तरे खिसकावै, घटिया कौ टकटोरै।**
**पसँगा माहै करि चतुराई, पूरा कबहुँ न तौलै॥ 1॥**
**घर में वाके कुमति बनियाइन, सबहिन को झकझोरै।**
**लड़िका वाका महा हरामी, इमरित में विष घोरै॥ 2॥**
**पांच तत्त का जामा पहिरे, ऐंठा गुइँठा डोलै।**
**जनम जनम का है अपराधी, कबहूँ साच न बोलै॥ 3॥**
**जल में बनिया थल में बनिया, घट घट बनिया बोलै।**
**पलटू के गुरु समरथ साईं, कपट गाँठि जो खोलै॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—बान= आदत, बनियई, छल-कपट। बाट= बटखरा, तौलने का लोह या पत्थर का टुकड़ा।

**भावार्थ**—यह मन छल-कपट करने में बनिया है। यह अपनी गलत आदत नहीं छोड़ता है॥ टेक॥ बनिया तौलते समय पूर्ण बाट को नीचे खिसकाकर घटिया बाट टटोलकर उससे अपना माल बेचते समय कम तौलता है। वह पासंग में भी चालाकी करता है और सही नहीं तौलता। यही बात मन की है। वह अच्छे विचारों को छोड़कर सदैव राग-द्वेषपूर्ण गंदे विचारों में डूबा रहता है॥ 1॥ इस मन-बनिया के हृदय में कुबुद्धि रूपी बनियाइन स्त्री है। वह सबको नाना वासनाओं में डालकर झकझोरती रहती है। उस कुबुद्धि-बनियाइन के लड़के काम, क्रोध, लोभ आदि बड़े हरामी हैं। ये सदैव आत्मज्ञान रूपी अमृत में विषय-वासना तथा राग-द्वेष रूपी विष घोलते हैं॥ 2॥ यह पांच जड़ तत्त्वों का जामा शरीर पहनकर अहंकार में ऐंठा-ऐंठा घूमता है। यह अनादिकाल से जन्म-जन्मांतर का विषय-भोगों का अपराधी है। यह कभी सही राय नहीं देता॥ 3॥ चाहे जल में रहे और चाहे थल में रहे, मनुष्य जहां रहे, उसके हृदय में मन-बनिया हर क्षण बोलता रहता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरे सद्गुरु मन-विजयी समर्थ स्वामी हैं। वे मन की कपट गांठ को परखा कर खोलते हैं॥ 4॥

### शब्द-68

**सो बनिया जो मन को तौलै॥ टेक॥**

**मनहिं के भीतर बसी बजार, मनहीं आपु खरीदनहार॥ 1॥**
**मनहीं में लेन देन मनहिं दुकान, मनहीं में मन की गुजरान॥ 2॥**
**मनहीं में लादै उलदै अनत न जाय, मनहिं की पैदा मनहिं में खाय॥ 3॥**
**मनहीं में तराजू मनहीं में सेर, पलटूदास सब मनहीं का फेर॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—गुजरान= निर्वहन। उलदै= माल उतारता है।

**भावार्थ**—सही व्यापारी वह है जो अपने मन को सदैव तौलता रहे, सम्हालता रहे एवं वश में रखे॥ टेक॥ मन के भीतर ही बाजार बसा है और मन स्वयं उसमें सौदा खरीदनेवाला है॥ 1॥ मन के भीतर ही लेन-देन चलता है और मन में ही दुकान लगी है और मन में ही मन का निर्वाह होता है॥ 2॥ मन में ही माल लादता है और उतारता है, अलग नहीं जाता। मन में ही पैदा करता है और मन में ही खाता है॥ 3॥ मन में ही तराजू है और मन में ही सेर है। पलटू साहेब कहते हैं कि मन ही का सब चक्कर है॥ 4॥

**विशेष**—हानि-लाभ, राग-द्वेष, सुख-दुख, शत्रु-मित्र आदि सब मन का ही चक्कर है। मन को ठीक कर लेने वाला शांति पाता है।

## 13. मायाजाल

शब्द-69

**माया हमें अब जनि बगदावो, तुम तो ठगिनी जग बौरावो॥टेक॥**
**देवन के घर भइउ अपसरा, जोगी के घर चेली।**
**सुर नर मुनि तौ सब ही खायो, होइ अलमस्त अकेली॥ 1॥**
**कृस्न कँहै गोपी होइ खायो, राम कँहै होइ सीता।**
**महादेव काँ पारबती होइ, तोसे कोउ न जीता॥ 2॥**
**बिसुन कँह लछमी होइ खायो, ब्रह्मा स्रिष्टि बड़ाई।**
**सिंगी रिषि को बन में खायो, तुम्हरी फिरी दुहाई॥ 3॥**
**दौलत होइ तिनु लोकहि खायो, गिरही की है नारी।**
**पलटू दास के द्वार खड़ी है, लौंड़ी होइ हमारी॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—जनि= मत, ना। बगदावो= बिगाड़ो। लौंड़ी= सेविका, दासी, नौकरानी।

**भावार्थ**—हे माया! अब तुम मुझे मत बिगाड़ो। तुम तो ठगिनी हो। तुमने जगत के लोगों को पागल बना दिया है॥ टेक॥ तुम देवताओं के घर में अप्सरा बनकर, योगी के घर में चेली बनकर उन्हें भटका दिये। सुर-नर-मुनि सबको तूने भटका दिया है। तू अकेली मतवाली बनकर घूमती है॥ 1॥ गोपी, सीता तथा पार्वती बनकर तुमने श्रीकृष्ण, श्रीराम तथा महादेव को भटका दिया। तुमको कोई जीत न सका॥ 2॥ तूने लक्ष्मी बनकर विष्णु को सृष्टि रचने के चक्कर में ब्रह्मा को तथा वन में ऋष्य शृंग को भटका दिया। तुम्हारा चारों तरफ बोलबाला हो गया है॥ 3॥ तूने धन-सम्पति बनकर तीनों लोकों को पाप में लिप्त कर दिया। गृहस्थों के घर में स्त्री बनकर उन्हें भटका दिया। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरे द्वार पर माया मेरी दासी बनकर खड़ी है॥ 4॥

**विशेष**—स्त्री-पुरुष दोनों में मायातीत चेतन आत्मा है और दोनों की काया माया है। स्त्री या पुरुष जो कोई दृश्य-मोह में पड़ा वही स्वयं दुखी

होता है और दूसरों को भ्रम में डालकर दुखी करता है। अतएव अकेली स्त्री माया नहीं है, पुरुष भी माया है, और दोनों के आत्मा मायातीत हैं, शुद्ध चेतन हैं। अतएव दोष एक का नहीं है।

### शब्द–70

**हमसे फरक रहु दूर, माया मौत तुलानी॥टेक॥**
**आन के लेखे तुम अमृत लागहु, हमरे लेखे जस पानी।**
**हमरे तुँह लौंड़ी अस नाहीं, औरन के लेखे घर रानी॥ 1॥**
**औरन के लेखे तू परबत, हम राई सम जानी।**
**सगरो अमल करेहु तुँह माया, हम से रहौ अलगानी॥ 2॥**
**तीनो लोक तुँह निगल गई है, तेहि पर नाहिं अघानी।**
**पलटु दास कह बकसहु माया, नरक कि तुँहीं निसानी॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—अमल= अधिकार, कब्जा। बकसहु= क्षमा करो।

**भावार्थ**—हे माया! तू मौत तुल्य है। तू मुझसे दूर खड़ी हो॥ टेक॥ दूसरों की दृष्टि में तू अमृत लगती है। परन्तु मैं तुझे पानी समझता हूं। मेरी दृष्टि में तू नौकरानी की तरह भी नहीं है, भले अन्य की दृष्टि में महारानी बन बैठी है॥ 1॥ तू अन्य की दृष्टि में पर्वत बराबर ऊंची है, किन्तु मेरी दृष्टि में राई के बराबर है। हे माया! तूने सब पर अपना अधिकार कर लिया है, किन्तु खबरदार! मुझसे दूर रहना॥ 2॥ तुमने सभी प्राणियों को निगल लिया है, तिस पर भी तू तृप्त नहीं हुई। पलटू साहेब कहते हैं कि हे माया! तू मुझको क्षमा कर। तू ही नरक का लक्षण है॥ 3॥

### शब्द–71

**सोई है अतीत जो तौ माया तें अतीत॥ टेक॥**
**माया ठगिनी ठगा संसार, सुर नर मुनि बोरे मँझधार॥ 1॥**
**माया बोलै मीठी बोल, गाँठ से ज्ञान ध्यान लेइ खोल॥ 2॥**
**माया है यह काली नाग, काटै पानी सकै न माँग॥ 3॥**
**पलटू दास माया यह काल, भागि बचे साहिब के लाल॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—अतीत= परे, त्यागी।

**भावार्थ**—वही त्यागी है, जो माया से परे है॥ टेक॥ माया ठगिनी ने संसार के लोगों को ठग लिया है। यह सुर, नर, मुनि सबको भवसागर के बीच में डुबाती है॥ 1॥ माया मीठे बोल-बोलकर मनुष्य के पास से ज्ञान-

ध्यान छीन लेती है॥ 2॥ यह माया काली नागिन है। यह जिसको काटती है, वह पानी भी नहीं मांगकर पी पाता। माया उसे तुरंत मार डालती है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि यह माया काल है। इससे कोई सद्गुरु का लाल ही भागकर बचता है॥ 4॥

**विशेष**—मोह ही माया है और उसका आलंबन जड़ दृश्य है। अतएव वह भी माया है। माया से मुक्त होने का उपाय समस्त जड़ दृश्य से उदास, निराश एवं निस्पृह रहना है।

## 14. कुमति दुखदायी

शब्द-72

**जहाँ कुमति कै बासा है, सुख सपनेहु नाहीं॥टेक॥**
**फोरि देत घर मोर तोर करि, देखै आपु तमासा है॥ 1॥**
**कलह काल दिन रात लगावै, करै जगत उपहासा है॥ 2॥**
**निरधन करै खाये बिनु मारै, आछत अन्न उपवासा है॥ 3॥**
**पलटू दास कुमति है भोंड़ी, लोक परलोक दोउ नासा है॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—भोंड़ी= मूर्खा, बुरी।

**भावार्थ**—जिस परिवार और समाज में कुमति का निवास है वहां उन लोगों को स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता॥ टेक॥ यह कुमति मेरा-तेरा का राग-द्वेष बढ़ाकर परिवार-समाज को तोड़ देती है और स्वयं खड़ी होकर तमाशा देखती है॥ 1॥ कुमति परिवार तथा समाज में रात-दिन कलह का काला सांप लगाती है। कलह में पड़े हुए परिवार-समाज का जगत में उपहास होता है॥ 2॥ कुमति मनुष्य को धनहीन बनाती है। यहां तक परिवार को अन्न के लिए तरसाकर मारती है। कुमति के कारण अन्न रहते हुए लोग भूखे और दुखी रहते हैं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि कुमति मूर्खा और बुरी है। यह लोक-परलोक दोनों का नाश करती है॥ 4॥

## 15 पंडित को प्रबोध

शब्द-73

**पढ़ि पढ़ि क्या तुम कीन्हा पंडित, अपना रूप न चीन्हा॥टेक॥**
**औरन को तुम ज्ञान बताओ, तुम को परै न बूझी।**
**जस मसालची सबहिं दिखावै, वाको परै न सूझी॥ 1॥**

**अपनी खबर नहीं है तुमको, औरन को परमोधो।**
**पढ़ना गुनना छोड़ि के पाँड़े, अपनी काया सोधो॥ 2॥**
**इन्द्रिन से आजिज तुम रहते, इन्द्री मारि गिराओ।**
**माया खातिर बकि बकि मरते, मन अपनो समुझाओ॥ 3॥**
**बुद्धि मँहै परबीन चतुर हो, खाँड़ धूरि में सानौ।**
**पलटू दास कहै सुनु पाँड़े, बचन हमारा मानौ॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—परमोधो= प्रबोध एवं ज्ञान देते हो। आजिज= आजिज़, दीन, अधीन।

**भावार्थ**—हे पंडित! शास्त्रों को पढ़-पढ़ कर तुमने क्या किया? तुमने आज तक अपना आत्मस्वरूप नहीं समझा॥ टेक॥ तुम अन्य को ज्ञान की बातें बताते हो, परन्तु तुम्हें स्वयं को सत्य दिखाई नहीं देता। जैसे मसालची सबको प्रकाश दिखाता है, परन्तु उसे स्वयं कुछ नहीं दिखता॥ 1॥ तुम दूसरों को बोध देते हो, परंतु तुम्हें अपने आप का पता नहीं है कि तुम कौन हो, क्या करते हो और क्या करना चाहिए। अतएव हे पंडित! पढ़ना-गुनना छोड़कर अपनी काया को शोधकर उसे शुद्ध करो॥ 2॥ तुम इन्द्रियों के गुलाम बने हो। उन्हें अपने वश में करो। तुम धन-मान पाने के लिए रात-दिन वक्तव्य झाड़ते हुए थकते हो। यह सब छोड़कर अपने मन को समझाकर उसे संयत करो॥ 3॥ तुम बुद्धि के तेज हो, चतुर हो, परंतु शकर और धूल एक में मिला रहे हो—सही निर्णय नहीं कर रहे हो। पलटू साहेब कहते हैं कि हे पंडित! मेरी बात को मान लो॥ 4॥

## 16. कर्म-भ्रम का जाल

शब्द-74

**तिरथ में बहुत हम खोजा, उहाँ तो नाहिं कुछ पाया।**
**मूरति को पूजि पछिताने, नजर में नाहिं कुछ आया॥ 1॥**
**मुए हम बर्त के करते, बेद को सुना चित लाई।**
**जोग औ जुगति करि थाके, सजन की खबर नहिं पाई॥ 2॥**
**किया जप तप फेरि माला, खोजा षट दरस में जाई।**
**कोई ना भेद बतलावै, सबै सतसंग गुहराई॥ 3॥**
**परे जब संत के द्वारे, संत ने आप सब कीन्हा।**
**दास पलटू जभी पाया, गुरु के चरन चित लाया॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—वर्त= व्रत, उपवास। सजन= परमात्मा, प्रियतम॥

**भावार्थ**—मैं तीर्थों में बहुत खोजा, परंतु वहां कुछ नहीं मिला। मूर्तियों को पूजकर पीछे पश्चाताप हाथ लगा; क्योंकि उसमें कुछ लाभ नहीं दिखा॥ 1॥ मैं उपवास करते-करते दुर्बल हो गया, वेद-शास्त्रों को भी मन लगाकर सुना, और योग-युक्ति करके भी थक गया, परन्तु प्रियतम परमात्मा का पता नहीं लगा॥ 2॥ मैं जप किया, तप किया, माला फेरा और छह दर्शनों में खोजा, परन्तु कोई परमात्मा का रहस्य नहीं बता पाया। अपितु सब कहते हैं कि सत्संग से मिलता है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं जब संतों के द्वार पर गया, तब उन्होंने मेरा सब काम कर दिया। जब मैंने गुरु के चरणों में मन लगाकर उनकी भक्ति की, तब उनसे अपने आप का बोध पा गया॥ 4॥

## शब्द-75

**वह दरबारा भारा साधो, हिन्दू मुसलमान से न्यारा॥टेक॥**
**मक्के रहे न ठाकुरद्वारा, है सब में सब खोजनहारा॥ 1॥**
**नहिं दरगाह न तीरथ संगा, गंगा नीर न तुलसी भंगा॥ 2॥**
**सालिगराम न महजिद कोई, उहाँ जनेव न सुन्नत होई॥ 3॥**
**पढ़ै निवाज न लावै पूजा, पंडित काजी बसै न दूजा॥ 4॥**
**फेरै न तसबी जपै न माला, ना मुरदा ना करै हलाला॥ 5॥**
**मारै न सुवर जिबहे ना गाई, कलमा भजन न राम खुदाई॥ 6॥**
**एकादसी न रोजा करई, डंडवत करै न सिरदा परई॥ 7॥**
**पलटू दास दुई की किस्ती, दोजख नर्क बैकुंठ न भिस्ती॥ 8॥**

**शब्दार्थ**—दरगाह= किसी मुस्लिम संत का समाधि स्थान। संगा= संग, पत्थर। भंगा= भांग। निवाज= नमाज। तसबी= तस्बीह, सौ दाने की माला जिसे मुसलमान फेरते हैं। भिस्ती= बहिश्त, बैकुंठ, स्वर्ग।

**भावार्थ**—हे साधो! आत्मज्ञान का दरबार बड़ा है, और वह हिन्दू-मुसलमान आदि सांप्रदायिक सीमाओं से परे है॥ टेक॥ वह न मक्का में है न ठाकुरद्वारा में। जहां जाओ सभी जगहों में सत्य की खोज करने वाला मनुष्य ही मिलता है॥ 1॥ परमात्मा न दरगाह में मिलता है, न तीर्थ में, न पत्थर की पिंडी में, न गंगा के जल में, न तुलसीदल में और न भांग-धतूरा में॥ 2॥ वह न शालग्राम में मिलता है, न मस्जिद में। आत्मज्ञान के लिए जनेऊ और सुन्नत की आवश्यकता नहीं है॥ 3॥ उसके लिए न नमाज पढ़ने की आवश्यकता है, न पूजा करने की। उसके लिए पंडित और काजी दोनों की आवश्यकता नहीं

है॥ 4॥ उसके लिए न तस्बीह फेरने की जरूरत है, न माला पर जप करने की आवश्यकता है। उसके लिए न किसी जानवर को झटका से मारना है और न उसका गला रेतकर मारना है॥ 5॥ न उसके लिए सुअर मारना है और न गाय का ज़िबह करना है, न कलमा पढ़ना है और न राम और खुदा का नाम लेना है॥ 6॥ उसके लिए न एकादशी को उपवास रहना है और न तीस रोजा के दिन भूखा रहना है। न उसके लिए दंडवत करना है और न सिजदा करना है॥ 7॥ पलटू साहेब कहते हैं कि किसी संप्रदाय की नाव पर बैठकर दोज़ख और नरक पार नहीं करना है और न बैकुंठ तथा बहिश्त में पहुंचना है॥ 8॥

**विशेष**—काबा-काशी, मंदिर-मस्जिद जहां जाओ, मनुष्य मिलते हैं। मनुष्य सर्वोच्च है। उसे चाहिए कि साम्प्रदायिक भावनाओं से ऊपर उठकर किसी आत्मज्ञानी-आत्मलीन सद्गुरु की खोज करे और उनकी सेवा कर उनके सत्संग से अपने आप को समझे और मन के विकारों को मिटाकर आत्मशांति प्राप्त करे।

वैसे हिंसा-हत्या छोड़कर पूजा-नमाज आदि आरंभिक साधक के लिए ठीक है, किन्तु आत्मज्ञान-आत्मशोधन के बिना आत्मशांति नहीं मिलेगी।

दोहा

**पलटू गुनना छोड़ि दे, चहै जो आतम सुक्ख।**
**संसय सोइ संसार है, जरा मरन को दुक्ख॥**

**शब्दार्थ**—गुनना= संकल्प-विकल्प।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि यदि तुम आत्म-सुख चाहते हो, तो संकल्प-विकल्प करना एवं चित्त-दृश्य को छोड़ दो। मन का संशय ही संसार-सागर है, जो जरा-मरण रूपी दुख उत्पन्न करने वाला है।

## 17. जीवन की क्षण-भंगुरता

मंगल शब्द-76

**मैं जानौं पिय मोर, पिया नहिं अपना हो।**
**छिन में कियेहु उजाड़, बसा पुर पटना हो॥ 1॥**
**कब दहुँ गयेहु है निकरि, नाहिं पहिचाना हो।**
**सब कोउ छेके ठाढ़, मरम नहिं जाना हो॥ 2॥**

**वैसिहि सकल सरीर, कछू नहिं बिगरा हो।**
**कवन सकस यह रहा, कवन बिधि निकरा हो॥ 3॥**
**दस दरवाजा सून, रूप नहिं रेखा हो।**
**उड़ि गये पंछी पवन, जात किन्ह देखा हो॥ 4॥**
**नित उठि मंगल होय, छतीसों रागा हो।**
**सो मंदिर भये सून, चुनन लागे कागा हो॥ 5॥**
**जनि कोइ करै गुमान, इहै गति होना हो।**
**पलटू दास हरि नाम, लेइ सो सोना हो॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—पिय= प्रियतम, मिले हुए जीव। सकस= शख़्स, व्यक्ति, जन।

**भावार्थ**—मैं समझता था कि प्रिय जन मेरे हैं, परंतु वे मेरे नहीं हैं। बसा हुआ शरीर रूपी गांव-बाजार क्षण में उजाड़कर चल दिये॥ 1॥ मैं समझ नहीं पाया कि मेरा प्रिय मित्र कब निकल गया। प्रेमी लोग तो उसे घेरकर खड़े थे। लेकिन कोई यह भेद नहीं जान पाया कि जीव किस द्वार से निकल गया॥ 2॥ सारा शरीर पूर्ववत ठीक-ठाक है। कुछ बिगड़ा नहीं है। वह कौन सत्ता रही और किस तरह शरीर से निकल गयी?॥ 3॥ दस दरवाजे का शरीर सूना हो गया। निकल जाने वाले की कोई रूप-रेखा नहीं दिखी। प्राण-पखेरू उड़ गये। उसे जाते किसने देखा?॥ 4॥ जिस भवन में नित प्रातः उठकर मंगलगान होता था और छत्तीसों राग का संगीत होता था, वह मंदिर सूना हो गया और वहां कौए चारा चुनने लगे॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि कोई अभिमान तथा भ्रम में न रहे। यही दशा सब देहधारी की होनी है। हरिनाम लेना एवं आत्मबोध प्राप्त करना ही सोना-रत्न है॥ 6॥

## मंगल शब्द-77

**जनमिउँ दुख की राति, परिउँ भौसागर हो।**
**सोइ गइउँ भ्रम माहिं, कुमति कै आगर हो॥ 1॥**
**सतगुरु दिहिन्हि जगाइ, उठिउँ अकुलाई हो।**
**टूटि गइल भ्रम फंद, परम सुख पाई हो॥ 2॥**
**पिय को दिहिन्हि मिलाइ, हिये मोहि लीन्हा हो।**
**अपनी दासी जानि, परम पद दीन्हा हो॥ 3॥**
**सत्त सुकृति के घैला, प्रेम कै लेजुर हो।**
**पनियाँ भरौं डफोरि, माँग भरि सेंदुर हो॥ 4॥**

**सासु मोरि सुतै गज ओबरि, ननद मोरि अँगना हो।**
**हम धन सुतै धवराहर, पिय संग जगना हो॥ 5॥**
**झिरिहिरि बहै बयारि, अमी रस ढरकै हो।**
**वरमी नौरँगिया के डारि, चँदन गछ मरकै हो॥ 6॥**
**तेहि चढ़ि बोलै हंस, सबद सुनि बाउर हो।**
**मंगल पलटू दास, जगति कै नाउर हो॥ 7॥**

**शब्दार्थ**—आगर= खान, ढेर, घर, ख़ज़ाना।पिय= आत्मा। सत्त= आत्मा। सुकृति= पवित्र रहनी। घैला= घड़ा। लेजुर= रस्सी। डफोरि= झकझोरकर। गज ओबारि= हाथी निकल जाय ऐसे दरवाजा वाला स्थल। धन= धनि, दुलहिन। धवराहर= ऊपरी तल। वरमी= झुकी हुई। नौरंगिया= नारंगी का पेड़। मरकै= मरमराता है। नाउर= नाई।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति कहती है कि मैं दुख की काली रात में जन्म लिया और मनोविकारों के भवसागर में पड़ गयी। मैं भ्रांतियों की नींद में बेभान होकर सो गयी और कुबुद्धि का खजाना हो गयी॥ 1॥ इतने में सद्गुरु मिल गये और उन्होंने मुझे आत्मज्ञान देकर जगा दिया। मैं निर्वेदपूर्वक व्याकुल होकर जाग उठी और मेरा दृश्य-मोह का भ्रम-फंदा टूट गया। मैं अखंड, अनंत स्थायी शांति पा गयी॥ 2॥ सद्गुरु ने उपदेश देकर मेरे प्रियतम आत्मा को मुझे मिला दिया और मेरे प्रियतम ने मुझे हृदय से लगा लिया। मेरे प्रियतम आत्मा ने मुझे अपनी दासी जानकर मुझे परम पद—अखंड शांति दिया॥ 3॥

आत्मज्ञान और पवित्र रहनी का घड़ा श्रद्धा की रस्सी में बांधकर अब मैं सत्संग के जलाशय से झकझोरकर ज्ञान का पानी भरती हूं। अब मेरे प्रियतम पति आत्मदेव मुझसे अभिन्न हो जाने से मैं सदा के लिए भाग्यवती अहिवाती हो गयी। इसलिए मांग भर सेंदुर सदा के लिए चढ़ गया॥ 4॥ मेरी संशय रूपी सासु संसार रूपी बड़े सभागार में सोती है और मोह रूपी ननद खुले आंगन में सो रही है—ये दोनों मुझसे अलग होकर मृत हो गयी हैं। और मैं प्रियतम आत्मा की दुलहिन अपने पति के साथ ऊंची अटारी पर सोती हूं, अपितु आत्मा से एकमेक होकर ज्ञान में जागती हूं॥ 5॥ यह मनोवृत्ति और आत्मा का प्रगाढ़ मिलन अनंत सुखसागर का दृश्य है। यहां आत्मिक आनन्द का मंद गति से झिर-झिर वायु बहता है और शांति का अमृत रस प्रवाहित होता है। पवित्र रहनी की नारंगी की शाखाएं झुक-झुककर तथा सद्गुण रूपी चंदन वृक्ष की शाखाएं विचार-पवन से हिल-हिलकर मरमराहट की आवाज

कर रही हैं॥ 6॥ उक्त नारंगी और चंदन-वृक्ष की शाखाओं पर विवेक रूपी हंस चढ़कर सब समय निर्णय के शब्द बोलता है। उसे सुनकर मैं आत्मलीनता की मस्ती में पागल बनी रहती हूं। जिससे अन्य कुछ सुहाता नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं इस आनन्द उत्सव में उसी प्रकार मंगल गीत गाता हूं जिस प्रकार नाई या भांट किसी लौकिक उत्सव में मंगल गीत गाते हैं॥ 7॥

**विशेष**—संत श्री पलटू साहेब अपनी बातें कहीं-कहीं अलंकारों के घटाटोप में कहते हैं। सार यह है कि जीव अनादिकाल से जड़ दृश्य के मोह में उलझा है। सद्गुरु के उपदेश से सुज्ञ जीव स्वरूपज्ञान पाकर जड़ दृश्य से पूर्ण उदास हो जाता है और अपने आप में पूर्ण संतुष्ट होकर कृतार्थ हो जाता है।

## मंगल-शब्द-78

**मातु पिता सुत बन्धु, कोऊ नहिं अपना हो।**
**छिन में होत परार, सकल जग सपना हो॥ 1॥**
**माया रूपी नारि, रहत संग लागी हो।**
**हंसा कीन्ह पयान, प्रेत कहि भागी हो॥ 2॥**
**धावन धाये लोग, बेगि रथ साजा हो।**
**करहिं अमंगलचार, कहाँ गये राजा हो॥ 4॥**
**लाइ दिह्यो मुख आगि, काठ बहु भारा हो।**
**पुत्र लिहे कर बाँस, सीस तकि मारा हो॥ 4॥**
**हैं बैरिन के मूल, तिन्हैं हित जाना हो।**
**पलटू दास गुरुज्ञान, बूझि अलगाना हो॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—परार= पराया। हंसा= जीव। प्रेत= मरा हुआ, मृत। बैरिन= शत्रुओं।

**भावार्थ**—माता, पिता, पुत्र तथा बंधु-बांधव कोई अपना नहीं है। सारे साथी क्षण में पराये हो जाते हैं। सारा संसार स्वप्न है॥ 1॥ विषयासक्ति रूपी माया-नारि जीव के साथ लगी है और उसी के भुलावन में जीवन बीत जाता है। अन्त में जीव शरीर छोड़कर चल देता है। उसे संगी-मित्र मृत कहकर डरवश भाग खड़े होते हैं। मृत के पास अकेला रहना कठिन हो जाता है॥ 2॥ लोग दौड़ पड़े, लकड़ी की अर्थी सजाने लगे। प्रेमी-मित्र इस अमंगल में रीति के अनुसार व्यवहार करने लगे और विलाप कर कहने लगे

मेरा राजा कहां गया॥ 3॥ लकड़ी की चिता बनाकर उस पर उसे लिटा दिया और ऊपर से भी लकड़ी का भार लाद दिया तथा उसमें आग लगा दी गयी। पुत्र हाथ में बांस लेकर मृतक के सिर को देखकर उस पर मारने लगा॥ 4॥ विषयासक्ति एवं मोहमाया शत्रुओं की जड़ है। इसी से सारे मनोविकार शत्रु पैदा होते हैं, परन्तु मनुष्य ने इसे ही भूलवश अपना हितकारी माना है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं सद्गुरु से आत्मज्ञान समझकर माया-मोह से अलग हो गया हूं॥ 5॥

## 18. आत्मस्थिति की मस्तानगी

शब्द-79

**साधो देखि परो क्या गाई, तत्त में तत्त समाई॥टेक॥**
**कसर रहै तौ कुन्दन नाहीं, खरा भये क्या खोलै।**
**बकुला सेती हंस भयो है, पाछिल बोल न बोलै॥ 1॥**
**बिष परपंच मिटा भा इस्थिर, मनि गन अजगर सोई।**
**जौं लगि छाछ रहै घिव माहीं, तौं लगि चुप ना होई॥ 2॥**
**जौं लगि तोई डोलै बोलै, तौं लगि माया माहीं।**
**मगन भये पर अब क्या बोलै, हरि हैं अब हम नाहीं॥ 3॥**
**भूख पियास एकौ नहिं लागै, छुटि गई दुचिताई।**
**पलटू दास जो ऐसा जोगी, बोलै कौन बड़ाई॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—कुन्दन= सोना। तोई= जल। मगन= मग्न, आत्मलीन। हरि= ब्रह्म। हम= अहंकार।

**भावार्थ**—हे साधो! जब आत्मसाक्षात्कार हो गया, तब उसको दूसरों से क्या बताते फिरना। वह तो ऐसी अवस्था है कि आत्मा अपने आप में लीन हो गया॥ टेक॥ जब तक कसर है तब तक सोना नहीं है। यदि खरा सोना हो गया तो क्या बोलना! अर्थात जब तक असंतोष है तब तक सच्ची दशा नहीं है और जब सच्ची दशा आ गयी, तब विवाद कहां? जब बकुला से हंस हो गया, तब पिछली दशा की तरह राग-द्वेष की बात नहीं करता॥ 1॥ जिसके मन के भीतर का विषय-प्रपंच नष्ट हो गया, वह अपने आप में स्थिर हो गया। वही ज्ञान-मणियों से संपन्न अजगरवृत्ति वाला स्थिर संत है। मक्खन को तपाकर घी बनाते समय जब तक उसमें छाछ रहता है, तब तक वह चुप

न होकर कलकलाता रहता है। इसी प्रकार साधना में चलते समय जब तक विवादप्रियता है तब तक परिपक्वता नहीं है॥ 2॥ जब तक मन में राग-द्वेष की लहरें डोलती बोलती हैं, तब तक साधक माया में ही डूबा है। जब राग-द्वेष त्यागकर आत्मलीन हो गया तब वह क्या विवाद करेगा? उस दशा में तो अहंकार मिट जाता है, इसलिए वह ब्रह्म हो जाता है, महान हो जाता है॥ 3॥ इस दशा में सांसारिक भोग और स्वामित्व की भूख प्यास एवं आशा-तृष्णा नहीं रह जाती। इस दशा में मन दुविधा में नहीं रहता कि वह संसार की मिथ्या चमक-दमक में भी ललचाये। वह तो एकनिष्ठ आत्मलीन होता है। पलटू साहेब कहते हैं कि जो ऐसा योगी है, यदि वह विवाद करे तो उसकी क्या बड़ाई होगी। वह तो आत्मप्रदर्शन से रहित आत्मलीन होता है॥ 4॥

## 19. श्री पलटू साहेब का वैराग्य

शब्द-80

**समुझि देखु मन मानी, पलटू निरगुन बनियाँ॥टेक॥**
**चारि बेद कै टाट बिछावत, तेहि चढ़ि करत दुकनियाँ॥ 1॥**
**सत्य सेर मन प्रेम तराजू, नाम के मारत टेनियाँ॥ 2॥**
**सुरति सबद कै बैल लदाइनि, ज्ञान के गोंनि लदनियाँ॥ 3॥**
**सहर जलालपुर मूँड़ मुड़ाइनि, अवध तोरिनि करधनियाँ॥ 4॥**
**पलटू दास सतगुरु बलिहारी, पाइनि भक्ति अमनियाँ॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—टेनियां=टेनी, छोटी अंगुली। मारत टेनियां=टेनी मारना, माल कम चढ़ने के लिए तराजू की डांड़ी को उंगली से दबा देना, कम तौलना। गोनि=टाट का थैला। अमनियां=अमन, चैन, शांति।

**भावार्थ**—देखो, गुणातीत आत्मा को समझा और मन उसे माना। पलटू बनिया निर्गुण शैली का साधक है॥ टेक॥ वह चारों वेदों का टाट बिछाकर और उस पर चढ़कर दुकान करता है॥ 1॥ सत्य का सेर और मन का बाट है, प्रेम का तराजू है और सतनाम का टेनी मारता है॥ 2॥ निर्णय शब्दों में मन की लगन रूपी बैल पर आत्मज्ञान की गोनी लदाता है॥ 3॥ जलालपुर शहर में उसने मूड़ मुड़ाया और अयोध्या नगरी में करधन तोड़ी॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं सद्गुरु को न्योछावर हूं। उन्हीं की कृपा से भक्ति और शांति मिली॥ 5॥

## 20. वैराग्य तथा स्वरूपस्थिति की मस्ती

शब्द-81

**चाहौ मुक्ति जो हरि को सुमिरौ, हम तो हरि बिसराया हो॥टेक॥**
**सुमिरत नाम बहुत दिन बीते, नाहक जनम गँवाया हो।**
**मुक्ति बिचारी करै खवासी, पिय कौ हम अपनाया हो॥ 1॥**
**साहिब मेरा मुझको सुमिरे, मैं ना सीस नवावौं हो।**
**बैठा रहौं सौक में अपने, केकर दास कहावौं हो॥ 2॥**
**बूझी बात खुला अब परदा, क्योंकर साच छिपावौं हो।**
**जैसन देखौं तैसन भाखौं, मैं ना झूठ कहावौं हो॥ 3॥**
**संका नाहिं करौं काहू की, हमसे बड़ कोउ नाहीं हो।**
**पलटू दास कवन है दूजा, हमही हैं सब माहीं हो॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—खवासी= सेवकाई, सेवा। सौक= प्रसन्नता, उमंग।

भावार्थ—यदि मुक्ति चाहते हो तो हरि का स्मरण करो। हमने तो हरि को भुला दिया है॥ टेक॥ नाम जपते बहुत दिन बीत गये हैं और उससे कोई आध्यात्मिक लाभ नहीं हुआ। व्यर्थ में जीवन खो दिया। मैंने जब से प्रियतम आत्मा में स्थिति पा ली, तब से बेचारी मुक्ति मेरी सेवा में लगी रहती है॥ 1॥ मेरा साहेब निरंतर मेरा स्मरण करता है। मैं उसको सिर नहीं झुकाता हूं। मैं निरंतर अपनी आत्मस्थिति के आनन्द में बैठा हूं। मैं अन्य किसका दास कहला सकता हूं?॥ 2 आत्मा की बात समझ ली और अविद्या का परदा हट गया। अब उस सच को क्यों छिपाकर रखूं॥ 3॥ अब मुझे किसी बात की शंका नहीं है। मेरे आत्म-अस्तित्व से बड़ा कोई और कुछ नहीं है। पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मा के अलावा उसके ऊपर कौन दूसरा स्वामी है। जो सब प्राणियों में आत्म-ज्योति जल रही है, वह मेरी ही सजाति है॥ 4॥

**विशेष**—कहने में द्वैत लगता है, किन्तु तथ्यतः अपना अस्तित्व अद्वैत है। अद्वैत का अर्थ है अन्य से रहित अकेला, निराधार, असंग, केवल, शेष, बक़ा।

शब्द-82

**निंदरिया मोरी बैरिन भई॥ टेक॥**
**की कोइ जागै जोगी भोगी, की राजा की चोर।**
**की कोइ जागै संत बिबेकी, लगन राम की ओर॥ 1॥**

**जागे से परलोक बनतु है, सोये बड़ दुख होय।**
**सतगुरु लीन्हे जो जन जागै, करतम करता होय॥ 2॥**
**स्वारथ लीन्हे सब जग जागै, परमारथ जगै न कोय।**
**परमारथ को जो जन जागै, भजन बन्दगी होय॥ 3॥**
**काम क्रोध लीन्हे जो जागै, गये जिन्दगी खोय।**
**ज्ञान खरग लिहे पलटू जागै, होनी होय सो होय॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—निंदरिया= नींद, असावाधनी, माया-मोह में डूब जाना। खरग= खड्ग, तलवार।

**भावार्थ**—माया-मोह की नींद मेरी शत्रुणी हो गयी॥ टेक॥ योगी जागता है; भोगी, राजा और चोर भी जागते हैं अथवा वे कोई संत विवेकी जागते हैं जिनकी लगन अंतरात्मा से हो जाती है॥ 1॥ मोह-माया से सावधान होकर उससे हटने से शाश्वत शांति मिलती है और मोह-माया में डूबने से बड़ा दुख होता है। सद्गुरु से आत्मबोध पाकर जो जागता है, वह कृत्रिम से कर्ता हो जाता है—अबोध में जो स्वयं को कठपुतली समझता था, आत्मबोध हो जाने पर वह समझ लेता है कि मैं अपने कर्मों का कर्ता-विधाता हूं॥ 2॥ भोग-स्वार्थ के लिए तो सारा संसार जागरूक है, पर-सेवा और आत्मा के कल्याण के लिए बहुत कम लाग जागरूक होते हैं। जो लोग अपने आत्मा का उद्धार करते हैं और दूसरों की सेवा करते हैं उन्हीं की भजन-बंदगी सच्ची है॥ 3॥ जो लोग काम-क्रोधादि में पड़े उन्हीं में बढ़े-चढ़े हैं, उनका जीवन नष्ट हो जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं आत्मज्ञान की तलवार लेकर सावधान हूं। इसका परिणाम माया पर विजय और आत्मशांति निश्चित है॥ 4॥

## शब्द-83

**जो कोइ राखै कदम फकीरी, कफनी खुसी की डारै हो॥टेक॥**
**सादी गमी एक करि जानै, झूठ कभी ना भाखै हो।**
**दुसमन दोस्त एक है दोऊ, इन्हें एक घर राखै हो॥ 1॥**
**दावा दुई दूरि होइ जावै, सो दुरवेस कहावै हो।**
**हेलुवा घूसा कोऊ चढ़ावै, हँसि हँसि दोऊ खावै हो॥ 2॥**
**सीस दिहा तब अब क्या रोना, मनी मान को खोवै हो।**
**दम दम याद करै साहिब को, नेकी दस्त में बोवै हो॥ 3॥**

**दहसति नाहिं करै किसहू को, जिकिर अपानी खोलै हो।**
**पलटू रोसन इहै कमाली, तनहा होइ जब डोलै हो॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—सादी= शादी, खुशी, उत्सव। गमी= ग़मी, शोक का समय। दावा दुई= द्वैत एवं अनात्मा पर अधिकार। दुरवेस= दरवेश, फकीर, संत। घूसा= घूंसा, मुट्ठी का प्रहार, चोट। साहिब= सद्गुरु। दस्त= हाथ। दहसति = दहशत, भय। जिकिर= जिक्र, चर्चा, निर्णय। रोसन= रोशन, प्रकाशित। कमाली= पूर्णता। तनहा= अकेला।

**भावार्थ**—यदि कोई फकीरी के रास्ते पर कदम रखे तो वह प्रसन्नता की कफनी अपने ऊपर डाल ले—हर हालत में प्रसन्न रहे॥ टेक॥ हर्ष और शोक वाली घटनाओं को समान समझे। असत्य कभी न बोले। शत्रु और मित्र में समान दृष्टि रखे। अपने हृदय में इन दोनों के प्रति हितकामना रखे॥ 1॥ द्वैत पर-अनात्म वस्तुओं पर अपना अधिकार जमाने का संकल्प छोड़ दे। ऐसा करनेवाला ही सच्चा दरवेश एवं फकीर हैं। कोई हलुआ दे और कोई घूंसा मारे, दोनों को हंस-हंस कर स्वीकार करेगा॥ 2॥ जब फकीरी में कूद पड़ा, अपना सिर दे दिया तब किस बात के लिए रोना रहा? अपने मन के अहंकार को खो दे। प्रति श्वास अपने सद्गुरु के उपदेश की याद करे और अपने हाथ से भलाई के बीज बोवे॥ 3॥ किसी का भय न करे, आत्मज्ञान की चर्चा देश, काल तथा पात्र देखकर करता रहे। पलटू साहेब कहते हैं कि फकीरी का यही पूर्ण प्रकाशित स्वरूप है। सब समय अपने को अकेला समझकर असंग भाव, केवल दशा में जीवन व्यतीत करे॥ 4॥

## शब्द-84

**भेद भरी तन कै सुधि नाहीं, ऐसी हाल हमारी हो॥टेक॥**
**पुरुष अलख लखि मन मतवाला, झुकि झुकि उठत सम्हारी हो॥ 1॥**
**घायल भये नाद के लागे, मरमा है सबद कटारी हो॥ 2॥**
**टकटक ताकि रही ठगमूरी, आपा आप बिसारी हो॥ 3॥**
**सिथिल भई मुख बचन न आवै, लागि गगन बिच तारी हो॥ 4॥**
**सखि पलटू अलमस्त दिवानी, गोबिंदनन्द दुलारी हो॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—भेद= रहस्य, मर्म, आत्मलीनता। नाद= शब्द, आत्मज्ञानपरक उपदेश। मरमा= मर्म वाली। ठगमूरी= ठगमारी, स्तंभित। गोबिंदनन्द= गोविन्द साहेब, पलटू साहेब के सद्गुरु।

**भावार्थ**—आत्मस्थिति की लवलीनता से मुझे शरीर की सुधि नहीं है। मेरी ऐसी दशा है॥ टेक॥ जड़ दृश्य-पार चेतन आत्मा का बोध पाकर मेरा मन उसी में डूबकर मस्त हो गया है। शरीर झुक-झुक जाता है। अपने को सम्हाल कर उठता हूं॥ 1॥ सद्गुरु के आत्मज्ञानपरक उपदेश मन में लग जाने से मैं आहत हो गया हूं। सद्गुरु की ज्ञानपरक शब्द-कटारी मर्मभेदी है॥ 2॥ मैं देहाभिमान को भूलकर स्तंभित हो एकटक देखता रहता हूं कि संसार कैसा सारहीन है॥ 3॥ मैं सब प्रकार से शांत हो गया हूं। मुख से बात नहीं आती है। मेरी प्रपंच-शून्यता की समाधि लगी है॥ 4॥ पलटू सखी अलमस्त दीवानी है, क्योंकि वह सद्गुरु गोविन्द साहेब की दुलारी पुत्री है॥ 5॥

**विशेष**—पलटू साहेब कोमलता प्रदर्शन में अपने लिए स्त्रीलिंग शब्द का प्रयोग करते हैं। यह उनकी भावुकता है।

## शब्द-85

**देखो इक बनियाँ बौराना, ज्ञान की करै दुकाना॥टेक॥**
**बेचै अमृत विष सम लागै, गाहक कोऊ न आवै।**
**खारी माँगै खाँड़ दिखावै, आपुहि से बगदावै॥ 1॥**
**देइ उधार बिना वादे पर, सबसे पूछै लेवो।**
**जो लेवै सो खुस होइ जावै, कबहुँ न कहै कि देवो॥ 2॥**
**छिमा तराजू पुरा बाट लै, सबसे मीठी बोलै।**
**नाम रतन की ढेरा लागी, बिना दाम वह तोलै॥ 3॥**
**कुंजी सुरत सबद का ताला, जोग जुगति से खोलै।**
**पलटू दास सत्त का सौदा, आठ पहर ना डोलै॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—बगदावै= बिगाड़े; लौटावे। वादे= शर्त। पुरा= पूरा।

**भावार्थ**—देखो, एक बनिया पागल हो गया है। वह आत्मज्ञान की दुकान करता है॥ टेक॥ वह आत्मज्ञान रूप अमृत बेचता है, परन्तु वह लोगों को विष की तरह लगता है। आत्मज्ञान का ग्राहक नहीं आता। लोग पुत्र, धन, पद, ऋद्धि-सिद्धि रूपी नमक मांगते हैं, किन्तु वह बनिया आत्मज्ञान रूपी खांड़ दिखाकर मानो स्वयं ग्राहकों को अपनी दुकान से लौटा देता है॥ 1॥ बनिया बिना शर्त के अपना माल उधार पर

देता है और लोगों को पुकार-पुकार कर पूछता है—क्या आत्मज्ञान लोगे? यदि कोई आत्मज्ञान का सौदा लेता है तो वह आनन्दमग्न हो जाता है। बनिया उससे कभी नहीं कहता है कि आत्मज्ञान सौदा के बदले में मुझे कुछ दो॥ 2॥ बनिया क्षमा की तराजू पर सत्य का बाट रखकर अपना माल तौलता है और सबसे मीठा बोलता है। सतनाम रूपी रत्न की राशि लगी है। वह बिना दाम लिये उदारतापूर्वक तौलता रहता है॥ 3॥ वह मनोवृत्ति की कुंजी से शब्द के ताले को योग-युक्ति से खोलता है। पलटू साहेब कहते हैं कि वह बनिया सदैव सत्य का सौदा बेचता है और चौबीसों घंटे अपनी दुकान से नहीं हटता है॥ 4॥

**विशेष**—यह बनिया स्वयं पलटू साहेब ही हैं जो सद्गुरु हैं और आत्मज्ञान का खरा सौदा देते हैं। इस पद में बनिया शब्द का अर्थ सद्गुरु है।

## शब्द-86

**हमको क्या जरूर वे, साहिब हाल हजूर वे॥टेक॥**
**गैब तख्त बादसाह भया दिल, बजै अनाहद तूर वे॥ 1॥**
**ना जानौं दहुँ कौन पिलावै, अरस पियाला नूर वे॥ 2॥**
**छिन छिन पल पल कल न परतु है, रोम रोम भरिपूर वे॥ 3॥**
**जगमग जोति छत्र सिर ऊपर, ऐसा अजब जहूर वे॥ 4॥**
**पलटू दास आस अब किसकी, दुरमति भागी दूर वे॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—साहिब=स्वामी। हाल हजूर=वर्तमान में उपस्थित। गैब= अदृश्य। तूर=एक बाजा, तुरही। अरस=अर्श, मुसलमानों द्वारा माना गया सबसे ऊंचा आठवां स्वर्ग। नूर=प्रकाश। जहूर=प्रकट प्रकाश।

**भावार्थ**—आत्मा परमात्मा है जो सब समय स्वतः रूप में विद्यमान है। इस बोध के बाद मुझे अन्य क्या आवश्यकता है?॥ टेक॥ अदृश्य आत्मतत्त्व मेरी स्थिति का आसन है। अब मेरा मन बादशाह हो गया है। अब सब समय आत्मानुभव रूपी अनाहतनाद का बाजा बज रहा है॥ 1॥ मैं नहीं समझता कि उच्चतम ज्योतित स्वर्ग का प्याला कौन पिला रहा है—निष्काम बोधवान को आत्मशांति का सुख स्वतः होता है॥ 2॥ क्षण-क्षण, पल-पल आत्मसुख का प्याला पीता हूं। अब उसके बिना चैन नहीं है। आत्मशांति से रोम-रोम भरपूर आनन्दमग्न है॥ 3॥ सिर के ऊपर जगमग ज्योति का छत्र है जो अद्भुत प्रकट प्रकाश है—आत्मज्ञानी के मन-मस्तिष्क सब समय आत्मज्ञान से

ज्योतित रहते हैं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि अब किसकी आशा-तृष्णा शेष है? भोग और सम्मान पाने की दुर्बुद्धि दूर हो गयी है॥ 5॥

## 21. माया का पर्दाफाश

शब्द-87

**माया तू जगत पियारी वे, हमरे काम की नाहीं।**
**द्वारे से दूर हो लंडी रे, पइठु न घर के माहीं॥ 1॥**
**माया आपु खड़ी भइ आगे, नैनन काजर लाये।**
**नाचै गावै भाव बतावै, मोतिन माँग भराये॥ 2॥**
**रोवै माया खाय पछारा, तनिक न गाफिल पाऊँ।**
**जब देखौ तब ज्ञान ध्यान में, कैसे मारि गिराऊँ॥ 3॥**
**ऋद्धि सिद्धि दोउ कनक समाजी, बिस्नु डिगन को भेजा।**
**तीन लोक में अमल तुम्हारा, यह घर लगै न तेजा॥ 4॥**
**तू क्या माया मोहिं नचावै, मैं हौं बड़ा नचनियाँ।**
**इहवाँ बानिक लगै न तेरी, मैं हौं पलटू बनियाँ॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—लंडी= कुलटा, व्यभिचारिणी। डिगन= गिरना। अमल= अधिकार। तेजा= शक्ति, जोर। बानिक= दावं, छल-बल।

**भावार्थ**—हे माया! तू जगत के लोगों के लिए बहुत प्यारी है; परन्तु मेरे काम की नहीं है। हे कुलटा! तू मेरे दरवाजे से दूर भाग जा। मेरे घर में घुसना नहीं॥ 2॥ माया स्वयं नेत्रों में काजल लगाकर और मोतियों से मांग भराकर आगे खड़ी हो गयी और नाचने-गाने तथा वासना-उत्तेजक भाव बताने लगी॥ 2॥ माया रोती है, थककर पछाड़ खाकर गिर पड़ती है और कहती है कि मैं क्या करूं, इसे कभी थोड़ा भी असावधान नहीं पाती हूं। मैं इसे जब देखती हूं तब यह ज्ञानचर्चा या ध्यान में रहता है। इसे कैसे मारकर गिरा दूं?॥ 2॥ विष्णु ने ऋद्धि-सिद्धि को भेजा, जो स्वर्णिम साज-सज्जा युक्त हैं कि जाओ, पलटू को माया-मोह में विचलित कर दो। किन्तु पलटू ने उनसे कहा कि तीनों लोकों में तुम्हारा अधिकार है, किन्तु मेरे हृदय-घर में तुम्हारा बल नहीं लगेगा॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि हे माया! तू मुझे क्या नचायेगी? मैं स्वयं बड़ा नचनियां हूं—मैं वैराग्य-साधना में नाचता

हूं। खबरदार! यहां तेरा छलकपट का दावं नहीं लगेगा। मैं पलटू बनिया हूं॥ 5॥

## शब्द-88

संतो बिस्नु उठे रिसियाय, माया किन्ह जीतिया॥टेक॥
माया को लिया बुलाय, गोद लै पूछन लागे।
तीन लोक की बात, प्रगट करु मोरे आगे॥ 1॥
माया रोवन लागि, खोल कर मूँड़ दिखावै।
दै जूतिन की मार, मोहि बनिया दुरियावै॥ 2॥
दिहा इन्द्र को त्रास, अपसरा तुरत पठाओ।
नाना रूप बनाय, जाइ के तुरत डिगाओ॥ 3॥
उतरी अपसरा आय, अवधपुर जहँवाँ बनियाँ।
सोरहो किये सिंगार, चंद्रमुख मधुर बचनियाँ॥ 4॥
छुद्रघंटिका पायल, बाजै रतन जड़ाऊँ।
ऋतु बसंत की आनी, मोतिन से माँग भराऊँ॥ 5॥
नाचै गावै राग, भाव धै बाँह बतावै।
बनियाँ लाय समाधि, डिगै ना लाख डिगावै॥ 6॥
क्या तुम भये फकीर, नारि तुम सुन्दर बिलसौ।
सोना रूपा लेहु, माया को जनि तुम तरसौ॥ 7॥
इन्द्र लोक तुम लेहु, होहु बैकुंठ के राजा।
ताको हमरी ओर, तुम्हैं हम बहुत निवाजा॥ 8॥
ऋद्धि सिद्धि तुम लेहु, मुक्ति तुम लेहु अघाई।
तीन लोक में फिरै तुही, ना आन दुहाई॥ 9॥
हम सब दाबहिं गोड़, फूलन की सेज बिछाई।
मानौ बचन हमार, तुम्हैं है राम दुहाई॥10॥
बनियाँ हँसा ठठाइ, पलक को नाहिं उघारी।
तुहरे बहुत भतार, रहिउ ना तुही कुआरी॥11॥
आगि लगै बैकुंठ, लौंड़ी है मुक्ति हमारी।
इहाँ से होहु तू दूरि, माया तू भई अनारी॥12॥
हम जोगी बेकाम, खसम तुम खोजो मोटा।
ब्रह्मा बिस्नु महेस, तुम्हारे लायक ढोटा॥13॥
हमरे सबद बिबेक, लगहि चूतर में सोंटा।
आबरूह लै भागु, पकरि कै कटिहौं झोंटा॥14॥

**चली अपसरा हारि, जाय बैकुंठ में भागी।**
**ब्रह्मा बिस्नु महेस की, रहै कचहरी लागी॥15॥**
**अपसरा कहै पुकार, सुनो सत बचन हमारा।**
**बनियाँ डिगै को नहिं, उहाँ ना अमल तुम्हारा॥16॥**
**अपना चाहौ भला, जाइ कै लावहु सेवा।**
**उलटि देइ बैकुंठ, बचै ना सुर मुनि देवा॥17॥**
**पलटू दास अपार, पार ना पावै कोई।**
**करै अपसरा सोर, देवतौ उत्रिन होई॥18॥**

**शब्दार्थ**—रिसियाय= क्रुद्ध, क्रोध के आवेग में। त्रास= भय, धमकी। छुद्रघंटिका= क्षुद्र घंटिका, एक प्रकार की करधनी जिसमें घटियां या घुंघरू लगे रहते हैं। पायल= पैर में पहनने का एक घुंघुरूदार आभूषण, पाजेब, नुपूर। निवाजा= कृपा किया। गोड़= पैर। भतार= पति। लौंड़ी= दासी। ढोटा = बालक। चूतर= चूतड़। आबरूह= आबरू, इज्जत, प्रतिष्ठा। अमल= अधिकार। उत्रिन= उऋण, ऋणमुक्त, कर्तव्यमुक्त।

**भावार्थ**—(जब माया ने कहा कि पलटू बनिया मेरे अधीन नहीं हो रहा है, तब) हे संतो! विष्णु क्रोध में भभक उठे और उन्होंने कहा—माया को किसने जीत लिया है?॥ टेक॥ उन्होंने माया को लाकर अपनी गोद में बैठा लिया और उससे पूछने लगे कि तू तीनों लोकों की बात मेरे सामने प्रकट कर॥ 1॥ माया रोने लगी और वह अपना सिर खोलकर दिखाने लगी और कहने लगी कि देखो, पलटू बनिया ने मेरे सिर में जूते की मार देकर मुझे खदेड़ दिया है॥ 2॥ इतना सुनकर विष्णु ने इन्द्र को बुलाया और उन्हें धमकाया और कहा कि तुरन्त अप्सरा को पलटू के पास भेजो। वह उन्हें साधना से विचलित कर दे॥ 3॥ इन्द्र की आज्ञा पाकर अप्सरा अयोध्या में उतर आयी और जहां पलटू बनिया थे वहां पहुंच गयी। अप्सरा ने सोलहों श्रृंगार कर रखा था। उसका मुख चन्द्रमा के समान सुन्दर था और उसके वचन लुभावने मीठे थे॥ 4॥ उसकी कमर में घूंघरूदार करधनी थी, पैरों में झुनझुनीदार नुपूर थे। वे सब रत्नजटित थे और बज रहे थे। उसने अपनी रूप शोभा से वसंत ऋतु की बहार ला दिया। उसने मोतियों से मांग भर रखा था॥ 5॥ वह पलटू के सामने नाचती थी, गाती थी, हाथों से भाव बताती थी। परंतु पलटू बनिया ने तो चित्त समेटकर समाधि लगा रखी थी। लाख डिगाने पर भी वह डिगने वाला नहीं था॥ 6॥

अप्सरा ने पलटू बनिया से कहा—तुम क्या फकीर बन बैठे हो? तुम सुन्दरी नारियों के साथ विलास करो। तुम मुझसे सोने-चांदी के खजाना लो। माया के लिए तुम मत तरसो॥ 7॥ तुम इन्द्रलोक ले लो और स्वर्ग के राजा बन जाओ। तुम मेरी ओर देखो। मैंने तुम्हारे ऊपर बड़ी कृपा की है, तब मैं तुम्हारे पास आयी हूं॥ 8॥ तुम मुझसे ऋद्धि-सिद्धि लो और पूरी मुक्ति भी लो। तीनों लोक में केवल तुम्हारी जय-जयकार होगी, अन्य की कोई पूछताछ नहीं रहेगी॥ 9॥ हम अप्सराएं नित्य तुम्हारे अंगों की सेवा करेंगी, तुम्हारे लिए फूलों की शय्या बिछायेंगी। राम की शपथ खाकर कहती हूं, मेरी बात मान लो॥ 10॥

पलटू बनिया आंखें बिना खोले जोर से हंस पड़ा और कहा—तुम्हारे बहुत भर्तार हैं। तुम कुंआरी नहीं हो॥ 11॥ तुम्हारे बैकुंठ को आग लगे और मुक्ति तो मेरी दासी है॥ हे माया! तू मूढ़ हो गयी है, जो मुझसे छेड़खानी करती है। यहां से हट और दूर हो जा॥ 12॥ मैं योगी हूं, तुम्हारे लिए निरर्थक हूं। तुम कहीं बड़ा भर्तार खोजो। तुम्हारे योग्य तो ब्रह्मा, विष्णु, महादेव जैसे रंगीले लड़के उपयुक्त हैं॥ 13॥ मेरे पास शब्दों का विवेक है। तुम्हारे चूतड़ पर मोटी लाठी पड़ेगी। तू अपनी मर्यादा बचाकर भाग जा, अन्यथा तुम्हें पकड़कर तुम्हारा झोंटा काट लूंगा॥ 14॥

अप्सरा पलटू बनिया से हारकर भागी और बैकुंठ जा पहुंची। वहां ब्रह्मा, विष्णु व महादेव आदि की कचहरी लगी थी॥ 15॥ अप्सरा ने जोर से कहा—हे पंच साहेबो! मेरी बात सुनो। पलटू बनिया माया के प्रलोभन से डिगने वाला नहीं है। उसके ऊपर आप लोगों का कोई अधिकार नहीं है॥ 16॥ इसलिए यदि आप लोग अपना कल्याण चाहते हो तो अयोध्या जाकर पलटू बनिया की सेवा करो। अन्यथा वह तुम्हारे बैकुंठ को उलट देगा और देवता, मुनि सब नष्ट हो जायेंगे। कोई जीवित नहीं बचेगा॥ 17॥ पलटू बनिया अपार अजेय है। उसके ऊपर किसी का वश नहीं चल सकता। ऐसा कहकर अप्सरा हल्ला मचाने लगी। ब्रह्मादि देवता भी अपने हाथ-पैर पटककर कर्तव्य-मुक्त हो गये॥ 18॥

**विशेष**—पुराणों और महाकाव्यों में ऐसी गाथाएं हैं। उसी के अनुसार पलटू साहेब ने अपनी माया-विजय पर कल्पना उतार दी है। पलटू साहेब कवि-हृदय थे। वे जो कहना चाहते थे काव्य में उतार देते थे। न कहीं जानदार माया है, न अप्सरा है, न बैकुंठ है, न ब्रह्मा, विष्णु, शंकर एवं इन्द्र हैं। यह सब केवल शब्दों का बावेला है। बात इतनी ही है कि कल्याण चाहने

वाले को मोह-माया से दूर रहना चाहिए। पलटू साहेब का उक्त कथन उनकी गर्वोक्ति नहीं है, किन्तु साधिकारोक्ति है। माया से मुक्त पुरुष ही ऐसा अधिकारपूर्वक कह सकते हैं।

### शब्द-89

**माया भूत भुताना साधो, आलम सब अभुवाता है॥टेक॥**
**बूढ़ा बारा सब अभुवाता, काहू के सुधि नाहीं है।**
**घर घर फिरी दुहाई उसकी, सब के घट में वाही है॥ 1॥**
**राजा परजा सब के लागा, सब कोऊ बौराना है।**
**इसके मारे सब जग मरिगा, बुढ़वा भूत सयाना है॥ 2॥**
**जोरू बेटा मुलुक खजाना, उस ही की सब छाया है।**
**दुइ दल होइ के हाकिम लड़ता, बकता माया माया है॥ 3॥**
**मार के आगे भूत भी नाचै, हादी ने जब दागा है।**
**ऐसे भूत को कौन छुड़ावै, हादी के भी लागा है॥ 4॥**
**पलटु दास यह भूत पुराना, तीनि लोक में जागा है।**
**हमरे है सतगुरु कै सोंटा, लै के दौरे भागा है॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—भुताना= भूत से ग्रस्त। आलम= संसार, जनसमूह। दुहाई= मुनादी, घोषणा। हादी= हिदायत करने वाला, मार्गदर्शक, उपदेष्टा ज्ञानी, मुखिया, नेता।

**भावार्थ**—हे साधो ! माया रूपी भूत से ग्रस्त होकर सभी मनुष्य हाथ-पैर पटककर अभुवा रहे हैं॥ *टेक*॥ बालक से लेकर बूढ़े तक सिर पटक-पटककर अभुवा रहे हैं। किसी को अपने आप में सावधानी नहीं है। घर-घर में माया-भूत की घोषणा है कि मेरा सब पर अधिकार है। सबके मन में माया-भूत बसा है॥ 1॥ राजा-प्रजा सबको माया-भूत लगा है, इसलिए सब पागल बने भटकते हैं। माया-भूत की मार से सारा संसार मृत है—सब मनुष्य अचेत हैं। यह माया-भूत पुरातन और बलवान है॥ 2॥ पत्नी, पुत्र, राज्य और खजाना सब माया-भूत की छाया है। शासक दो दलों में विभक्त होकर आपस में लड़ते हैं और कहते हैं कि दुनिया की माया मेरी है, मेरी है॥ 3॥ परन्तु जब मार पड़ती है तब भूत भी भागता है। जब ज्ञानी ने ज्ञान का गोला दागा तब माया-भूत भाग खड़ा हुआ। ऐसे प्रबल माया-भूत से जीव को कौन छुड़ावे, क्योंकि यह माया-भूत ज्ञानोपदेष्टा को भी लगा है॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि यह माया-भूत पुरातन है। यह पूरे संसार

में अपना अधिकार रखता है। मेरे पास सद्गुरु का दिया हुआ आत्मज्ञान का सोंटा है जब मैं उसको लेकर माया-भूत पर टूट पड़ा, तब वह भाग खड़ा हुआ॥ 5॥

**विशेष**—दृश्य-जगत का मोह माया-भूत है। इसी में उलझकर सब दुखी हैं। दूसरों को उपदेश करने वाले भी उसी घेरे में हैं। वे जब उससे पूर्ण सावधान हो जाते हैं और मोह से पार हो जाते हैं, तब वे सच्चे ज्ञानी हैं। उन्हीं के उपदेश से दूसरे लोग भी माया-मोह से छूटने का बल पा सकते हैं।

## शब्द-90

**हम तो बेपरवाही मियाँ वे, हमको अब का चाही॥ 1॥**
**दिल दिल्ली मन तख्त आगरा, चलै सबर दे माहीं॥ 2॥**
**ज्ञान ध्यान की फौज हमारी, दफ्तर नाम इलाही॥ 3॥**
**दुनिया दीन दोऊ है तालिब, ऐसी है बादसाही॥ 4॥**
**पलटू दास दूरि भई दूई, सादी गमी कोइ नाहीं॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—सबर= सब्र, संतोष। दे= के। इलाही= ईश्वर, ईश्वरीय। तालिब= इच्छुक। दूई= द्वैत, अनात्म। सादी= शादी, खुशी, प्रसन्नता।

**भावार्थ**—हे मिया! मैं तो निष्फिक्र हूं। मुझे अब क्या चाहना रह गयी? ॥ 1॥ मेरा दिल दिल्ली का राज्य है और मन आगरा की राजगद्दी है। मेरा शासन संतोष में चलता है॥ 2॥ आत्मज्ञान और आत्मलीनता की मेरी सेना है और कार्यालय खुदा का नाम है॥ 3॥ मेरी आत्मशांति की ऐसी बादशाही है कि संसारी और धार्मिक दोनों क्षेत्र के लोग इसके इच्छुक हैं॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा द्वैत दूर हो गया है। अब मेरे जीवन में न हर्ष है और न शोक॥ 5॥

**विशेष**—खुदा वस्तुतः स्वयंभू आत्मा है। खुद-आ—खुदा, स्वयं भू आत्मा। आत्म-चिंतन ही खुदा-नाम का स्मरण है॥

## शब्द-91

**मुस्किल है प्यारे कठिन, फकीरी रिंदा काम॥ 1॥**
**फाका फकर सबर दिल आवै, धुनि लागी हर जाम॥ 2॥**
**रूखा सूखा गम का टुकड़ा, सुबह मिलै या साम॥ 3॥**
**हक्क हलाल आप से आवै, लेना और हराम॥ 4॥**
**पलटू दास सोई ठहरेगा, मुद्दा हुआ तमाम॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—रिंदा= मस्तानगी, बंधनरहित दशा। फाका= भूखा। फकर= फ़क्र, फकीरी, आवश्यकता से अधिक न चाहना। सबर= सब्र, संतोष। जाम= याम, पहर, तीन घंटे का समय, काल। गम= सहनशीलता, संतोष। हक्क= हक़, अधिकार, स्वत्व, सत्य। हलाल= जायज, उचित। हराम= त्याज्य। मुद्दा= मुद्दआ, उद्देश्य, प्रयोजन। तमाम= पूरा।

**भावार्थ**—हे प्यारे मुमुक्षु! फकीरी के पथ पर चलना कठिन है। यह मस्तानगी एवं निर्बंधता का काम है॥ 1॥ समय से भूखा रह जाना पड़े तो चिंता नही। आवश्यकता से अधिक संग्रह न करे। हृदय में संतोष रखे और हर समय अंतर्मुखता एवं आत्मचिंतन में लगन लगी रहे॥ 2 रूखा-सूखा संतोष का टुकड़ा सुबह मिले अथवा शाम को, उद्वेगशून्य होकर निर्वाह करे॥ 3॥ जो बिना मांगे स्वाभाविक ढंग से अपने आप आ जाय, वही फकीर के लिए उचित अधिकार है। इसके आगे ग्रहण करना त्याज्य है॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मशांति में वही स्थिर होगा जिसके मन की सारी इच्छाएं समाप्त हो गयी हैं॥ 5॥

## शब्द-92

**कुलुफ कुफर को खोलौ मुलने, मुरदा होय के डोलौ॥टेक॥**
**जो तुम चाहौ भिस्त आपनी, खुदी खूब को खोवौ।**
**हवा हिरिस को बसि में राखौ, रूह पाक को धोवौ॥ 1॥**
**तसबी एक रहै बेदाना, दिल अंदर में फेरौ।**
**पाक मुहम्मद नजर परैगा, दिल गुम्मज में हेरौ॥ 2॥**
**जाहिर चसम को दूरि करौ तुम, अन्दर धसि कै पैठौ।**
**असमान के बीच रखाना है इक, उस हुजरे में बैठौ॥ 3॥**
**कीजै फहम फना को लै कै, नूर तजल्ली अपना।**
**पलटू दास मकाँ हू हू का, दीद दानिस्तन सुनना॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—कुलुफ= कुलफ़त, चिंता, मनस्ताप। कुफर= कुफ़्र, नास्तिकता। भिस्त= बहिश्त, स्वर्ग। खुदी= ख़ुदी, अहंकार। हिरिस= हिर्स, तृष्णा। रूह= चेतन आत्मा। पाक= पवित्र। तसबी= जपने की माला। रखाना= रख़ना, खिड़की, झरोखा, दीवार का मोखा। हुजरे= मस्जिद की कोठरी। फहम= समझ, ज्ञान। फना= फ़ना, नाश, मृत्यु। नूर= प्रकाश। तजल्ली= प्रकाश। हूहू= अल्लाहहू का संक्षेप। दीद दानिस्तन= जान समझकर।

**भावार्थ**—हे मुल्ला ! चिंता एवं मनस्ताप नास्तिकता है। इसको दूर फेंक दो और अहंकार मारकर अत्यंत विनम्रतापूर्वक जीवन-निर्वाह करो॥ टेक॥ यदि अपना स्वर्गवास चाहते हो तो अहंकार को अच्छी तरह नष्ट कर दो। विषय-तृष्णा के तूफान को अपने वश में करो। मूलतः पवित्र आत्मा पर जो मन द्वारा मैल आ गया है उसको धो दो॥ 1 एक माला ऐसी होना चाहिए जो बिना दाने के हो॥ उसको अपने मन में फेरो—विचार को शुद्ध करो। फिर तुम्हारे दिल-गुंबज में पवित्र मुहम्मद के उपदेशों का साक्षात्कार होगा। अतएव उनके उपदेशों का सार अपने हृदय में ही खोजो॥ 2॥ बाहरी चाम की आंखों से दिखते हुए दृश्यों का मोह दूर करके अपने भीतर में प्रवेश कर अपने आत्मा में स्थित होओ। संकल्प-शून्यता रूपी आकाश के बीच में एक झरोखा है। उस शांति-कमरे में स्थित होओ॥ 3॥ अपनी आत्मज्योति के प्रकाश में समझ पक्की करो और शरीर-संसार की नश्वरता को दृष्टि में रखते हुए भोगों से विरक्त होकर आत्मा में अनुरक्त होओ। पलटू साहेब कहते हैं कि जो 'अल्लाहू' का घर है, खुदा का तख्त है, वह हृदय में है। वहीं से हू-हू की आवाज आती है—आत्म अस्तित्व का बोध प्रकट होता है। उसे समझ-बूझकर सुनो—आत्मानुभव में डूबो॥ 4॥

## शब्द-93

**मुरसिद जात खुदाय की, दरगाह बताया।**
**परवर पाक दिगार को, दिल बीच मिलाया॥ 1॥**
**बंदगी दम दम की भरौं, दानिस्त दिखाया।**
**तिनुका ओट पहाड़ है, बिन चस्म लखाया॥ 2॥**
**कुदरति देखि सुभान की, दिल हौल है मेरा।**
**मौजूद रहै वजूद में, बिन तसबी फेरा॥ 3॥**
**तख्त चढ़े दुरवेस हैं, बातैं आफरीनी।**
**मुअज्जिज हैं असमान में, औ साफा सीनी॥ 4॥**
**छत्र फिरै सिर नूर का, सब बुजरुग हारे।**
**पलटू दास मिलि खाक में, हम खोजि निकारे॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—मुरसिद= मुरशिद, सद्गुरु। जात=ज़ात, जाति, कुल, वंश, अस्तित्व, स्वयं, खुद। दरगाह= ड्योढ़ी, द्वार। परवर पाक दिगार= पाक परवर

दिगार, पवित्र, पालन करनेवाला, ईश्वर। दानिस्त= ज्ञान, अनुभव। चस्म= चश्म, आंख। कुदरति= कुदरत, प्रकृति। सुभान= सुबहान, पवित्र, स्वतंत्र ईश्वर। हौल= भय, विकलता, आंदोलन। वजूद= अस्तित्व, स्थिति। तसबी= फेरने की माला। दुरवेश= दरवेश, फकीर, संत। आफरीनी= आफ़रीनी, अत्यंत प्रशंसनीय। मुअज्जिज= मुअ़ज़्ज़िज़, महत्त्वपूर्ण। साफा सीनी= शुद्ध हृदय। नूर= प्रकाश, आत्मज्ञान। बुजुर्ग= वृद्ध या माननीय। खाक= ख़ाक, धूल, मिट्टी।

**भावार्थ**—फकीरों ने बताया है कि सद्गुरु खुदा का अस्तित्व है और वही कल्याण का द्वार है। सद्गुरु ने ऐसा बोध दिया कि पाक परवरदिगार अल्लाह तुम्हारे दिल में है॥ 1॥ उन्होंने हृदय में स्थित चेतन अस्तित्व का अनुभव करा दिया। मैं उसी की बंदगी श्वास-श्वास में करता हूं। जैसे आंख के सामने खड़े तृण की आड़ में पर्वत छिपा हो, वैसे अविद्या के कारण अपना चेतन अस्तित्व विस्मृत है। सद्गुरु ने बाहरी आंखों से हटकर अनुभव की आंखों से उसे दिखा दिया॥ 2॥ हृदय-निवासी ईश्वर की कुदरत देखकर मेरा मन आंदोलित है। मैं अपने वजूद में मौजूद रहूं—अपने अस्तित्व में स्थित रहूं, यही प्रयत्न है। बिना माला के मेरे अंदर आत्म-स्मरण रूपी जप है॥ 3॥ स्वरूपस्थिति के सिंहासन पर फकीर चढ़ जाता है। यह बात अत्यन्त प्रशंसनीय है। मन की मलिनता से उठकर पवित्रता के आकाश में स्थिर हो जाना महत्त्वपूर्ण दशा है। यही साफासीनी है—शुद्ध हृदय का लक्षण है॥ 4॥ ऐसे संत के सिर पर ज्योतित आत्मज्ञान का छत्र घूमता है। संसार के सभी माननीय उसके सामने नतमस्तक होते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने अपने अहंकार को धूल में मिलाकर आत्मस्थिति का स्वराज्य खोज निकाला है॥ 5॥

## शब्द-94

**काल आय नियराना है, हरि भजो सखी री॥टेक॥**
**सीत बात कफ घेरि लेहिंगे, करिहैं प्रान पयाना है।**
**तीनिउँ पन धोखे में बीते, अब क्या फिरै भुलाना है॥ 1॥**
**घाट बाट में रोकै टोकै, माँगे गुरु-परवाना है।**
**पलटू दास होय जब गुरुमुख, तब कुछ मिलै ठिकाना है॥ 2॥**

**शब्दार्थ**—तीनिउँ पन= बाल, युवा, वृद्ध। गुरु परवाना= गुरु का प्रमाण पत्र।

**भावार्थ**—हे मित्रो! मृत्यु का समय निकट आ गया है। हरिभजन करो—आत्मशोधन करो॥ टेक॥ देखते-देखते एक दिन शीत, वात और कफ घेर लेंगे और प्राण पखेरू उड़ जायेंगे। तुम्हारी तीनों अवस्थाएं माया-मोह के धोखे में बीत गयीं, अंत में क्या कल्याण कर सकोगे? आज भी क्यों भूले घूमते हो?॥ 1॥ यमराज घाट-बाट में रोके-टोकेगा और गुरु का प्रमाण पत्र मांगेगा। पलटू साहेब कहते हैं कि जब मनुष्य सद्गुरु के उपदेश पाकर आत्मबोध में संतुष्ट होगा, तब उसे कुछ स्थिरता मिलेगी॥ 2॥

**विशेष**—अपने कर्मों के संस्कार यम हैं। वे कर्म-फल देते हैं; अतएव कर्म सुधार करते रहें।

शब्द-95

**मैं बलिहारी जाउँ जेहि मुख, हरि जस उचरै॥टेक॥**
**जतिन नीच होय फिर कुष्टी, सरबरि करै न कोई।**
**कोटि कुलीन होय ब्रह्मा सम, ता सम तुलै न कोई॥ 1॥**
**जेकँहै सिव सनकादिक खोजैं, सुर मुनि ध्यान लगावैं।**
**सो हरि उनके पीछे पीछे, संख चक्र लिये धावैं॥ 2॥**
**कोटिन तीरथ उनके चरनन, मुक्ति है उनकी चेरी।**
**पहुँचत हैं बैकुंठ सोई, पद रज जै जै केरी॥ 3॥**
**जो सुख हरि घर दुर्लभ देखा, सो उनके घर माहीं।**
**पलटू दास संत घर हरि हैं, हरि के घर अब नाहीं॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—कुष्टी= कुष्ट रोग से पीड़ित कोढ़ी। सरबरि= बराबरी।

**भावार्थ**—जो मनुष्य हरि-यश का गायन करता है—आत्मज्ञान की चर्चा करता है, मैं उसके सामने नतमस्तक हूं॥ टेक॥ वह लौकिक दृष्टि से तथाकथित नीच जाति का हो, यहां तक कुष्ट-रोग से पीड़ित हो, किन्तु उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। जो करोड़ों गुणा उत्तम कुल का माना जाता हो, यहां तक ब्रह्मा के समान हो, किन्तु पवित्रात्मा आत्मलीन के समान वह नहीं हो सकता॥ 1॥ शिव-सनकादि जिसे खोजते हैं और देवता, मनुष्य और मुनि जन जिसका ध्यान करते हैं, वह हरि शंख-चक्र लेकर पवित्रात्मा आत्मलीन संत के पीछे उनकी सेवा में दौड़ते हैं॥ 2॥ उन आत्मलीन संतों के चरणों में मानो करोड़ों तीर्थ हैं और मुक्ति उनके चरणों की दासी है। जो लोग उन संतों की पद-रज अपने सिर पर चढ़ाकर उनका गुण गाते हैं, वे ही बैकुंठ में

पहुंचते हैं—सब कुंठाओं से मुक्त आत्मशांति पद पाते हैं॥ 3॥ जो परमशांति का सुख विष्णु के घर में भी नहीं है, वह उन शांतात्मा संतों के हृदय में है। पलटू साहेब कहते हैं कि संतों के पास ही हरि हैं, संत अपने आत्मा से अलग हरि को खोजने नहीं जाते हैं॥ 4॥

**विशेष**—पलटू साहेब गाथात्मक कथनों को लेकर आत्मज्ञान और आत्मशुद्धि की विशेषता बताते हैं। पौराणिक गाथाएं समाज में फैली हैं। इसलिए उसके आधार में आत्मज्ञान और आत्मशुचिता की बात समझाना सरल रहता है।

### शब्द-96

**सिर धुनि धुनि पछिताउँ, देखि जग रीती हो।**
**विषय लहर गै सोय माया जग जीती हो॥ 1॥**
**माया रूप जाल सकल जग बाझा हो।**
**ज्ञानी जोगी जती परे तेहिं माँझा हो॥ 2॥**
**बूड़ैं औ उतराय माया के सागर हो।**
**कोउ नहिं सकै बचाय माया नट नागर हो॥ 3॥**
**तिरगुन फाँसी हाथ ठगिनि यह माया हो।**
**सुर मुनि देइ गिराय तनिक नहिं दाया हो॥ 4॥**
**काम क्रोध की लहर सकल जग जागै हो।**
**चिंता डसै सरीर नींद नहिं लागै हो॥ 5॥**
**चतुर सकल संसार माया मँह राचा हो।**
**अहमक पलटू दास भागि कै बाचा हो॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—बाझा= बझा, फंसा हुआ। माँझा= में, उसमें। नटनागर= चक्कर में डालकर फंसाने में चतुर। राचा= मोहित, डूबा हुआ। अहमक= अहमक़, बेवकूफ, मूर्ख।

**भावार्थ**—मैं संसार का चाल-चलन देखकर अपना माथा ठोक लेता हूं और पश्चाताप करता हूं। लोग विषय-भोगों की लहर में पड़कर असावधान हो गये हैं। माया ने सारे संसार को जीत लिया है॥ 1॥ माया रूपी जाल में सारा संसार फंसा हुआ है। यहां तक कि ज्ञानी, योगी और त्यागी भी माया में उलझे हैं॥ 2॥ माया-मोह के समुद्र में सारे जीव डूबते-उतराते बहते जा रहे

हैं। माया छल-बल करने में चतुर है। इस कारण कोई उससे बचने की शक्ति नहीं रखता है॥ 3॥

यह माया ठगिनी त्रिगुण की फांसी हाथ में लेकर घूम रही है। यह देवता, मनुष्य और मुनियों को भी अपने फांस में फंसाकर उन्हें पटक देती है। उसके मन में किसी के प्रति दया नहीं है॥ 4॥ संसार के सारे लोग काम-क्रोध की तरंगों में बहते हैं और उन्हीं में आनन्द मनाते हैं। इसलिए उनके शरीर में चिंता सांपिनि डसती है और उन्हें शांति की नींद नहीं लगती॥ 5॥ संसार के सारे लोग अपने को बुद्धिमान मानते हैं और माया-मोह में डूबे रहते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि जो मूर्ख हैं वे दुनिया की मोह-माया से भागकर बच जाते हैं॥ 6॥

**विशेष**—माया कोई जानदार स्वतंत्र सत्ता नहीं है जो जीव को विवश कर सके। वस्तुतः मन के मोह की प्रबलता ही माया है। माया-मोही मनुष्य उचित-अनुचित रूप से धन तथा भोग वस्तुएं बटोरकर उनके भोग में अपने को चतुर मानता है। पलटू साहेब व्यंग्य में कहते हैं कि जो मनुष्य भोगों के प्रति मूर्ख होता है वह उनसे भागकर अपने को बचा लेता है।

### शब्द-97

**हरि चरनन चित लाओ हो सरि हैं सब काज॥टेक॥**
**काल बली सिर ऊपर हो तीतर को बाज।**
**चुंगल तर चिचिऐहौ हो जब मिलै मिजाज॥ 1॥**
**भजन बिना का तरे तरान हो रैयत बिनु राज।**
**बिना पिता कै बालक हो रोवै बिनु साज॥ 2॥**
**देव पित्र उपवासी हो परि है जम गाज।**
**बहुत पुरुष कै नारी हो बिस्वै नहिं लाज॥ 3॥**
**काम क्रोध बिनु मारे हो का दैहौ सिर ताज।**
**पलटु दास धिक जीवन हो सब झूँठ समाज॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—मिजाज= मिज़ाज, मन की दशा। रैयत= प्रजा। साज= ताल, स्वर। पित्र= मरे हुए पितर। उपवासी= उपासक। गाज= वज्र, बिजली। बिस्वै= वेश्या।

**भावार्थ**—अज्ञान के हरण करने वाले सद्गुरु-संत रूपी हरि की चरण भक्ति में मन लगाओ तो तुम्हारा सब काम बन जायेगा॥ टेक॥ सावधान!

शक्तिशाली काल तुम्हारे ऊपर बैठा है। वह वैसे ही तुम्हें धर दबोचेगा जैसे तीतर को बाज पक्षी। जब तुम्हें अपने मन में मौत की दशा का अनुभव होगा तब तुम उसके चंगुल में फंसे रोओगे॥ 1॥ आत्मबोध-आत्मशोध रूपी भजन-साधना के बिना जीव संसार-सागर से कैसे तर सकता है? जैसे बिना शासक-राजा के प्रजा बलवान बदमाशों से पीड़ित होती है और जैसे माता-पिता का आश्रय पाये बिना बालक असंयत दीन होकर रोता है, वैसे आत्मबोध बिना जीव दुख पाता है॥ 2॥ कल्पित देवी-देवता और मृत पितर के उपासकों के ऊपर वासना रूपी यमराज का वज्र गिरेगा। बहुत पुरुषों से लगने वाली वेश्या नारी निर्लज्ज होती है वैसे एक आत्मा को भुलाकर नाना देव-गोसैय्या में उलझे हुए लोग अशांत भटकते हैं॥ 3॥ काम-क्रोध को मारे बिना सिर पर ताज लगाकर बैठेने से क्या लाभ होगा? पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मबोध, आत्मशोध और आत्मशांति के बिना जीवन व्यर्थ है और सब दुनियवी साज-समाज निरर्थक है॥ 4॥

## शब्द-98

**काटौं फंदा करम का, जो होवै मेरा।**
**उलटि लिखौं तेहि भाल में कोइ सकै न फेरा॥ 1॥**
**जा खोजत ब्रह्मा भूले सुर मुनि बहुतेरा।**
**सो पद दैहौं ताहि को जिन मोको हेरा॥ 2॥**
**मरन जियन में सब परा दुख सहत घनेरा।**
**करम के बसि फाँसी फँसे मुए गुरु औ चेरा॥ 3॥**
**भरम छुड़ावौं ताहि को आवागवन निबेरा।**
**सत्तलोक पहुँचाय को नहिं लावौं देरा॥ 4॥**
**अमर लोक बैठाय के तहवाँ द्यों डेरा।**
**सुखी करौं तेहि जन्म को जो पलटू केरा॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—भाल= मस्तक। चेरा= चेला, शिष्य। द्यों= दूंगा। केरा= का।

**भावार्थ**—(पूर्ण सद्गुरु अधिकारपूर्वक कहते हैं)—जो मनुष्य मुझको समर्पित हो जायेगा, मैं उसका कर्म-बंधन काट दूंगा और उसके मस्तक में बंधन का उलटा मोक्ष का प्रमाण-पत्र लिख दूंगा, जिसको कोई उलट नहीं सकेगा॥ 1॥ जिस कैवल्य पद की खोज करते-करते ब्रह्मा, देवता और मुनिजन आदि बहुतेरे परोक्ष मान्यताओं के जंगल में भटक गये, उस

स्वरूपस्थिति पद को मैं उसको दूंगा जो मेरे उपदेश को मानकर उसके अनुसंधान में लग जायेगा॥ 2॥ जन्म-मरण के चक्कर में सब जीव अत्यंत दुख सह रहे हैं। वासनात्मक कर्मों की फांसी में लटककर संसार के गुरु और चेले अपना पतन कर रहे हैं॥ 3॥ किन्तु जो स्वरूपबोध स्वीकार लेगा, उसका सब भ्रम छुड़ाकर और उसके आवागमन के कर्मबंधन काटकर उसे तुरंत स्वरूपस्थिति रूपी सतलोक में पहुंचा दूंगा॥ 4॥ उसको आत्मस्थिति रूपी अमरलोक में स्थिर कर उसका वहां स्थिर मुकाम कर दूंगा। पलटू साहेब कहते हैं कि जो मेरे आत्मज्ञान को स्वीकार कर लेगा, उसके जीवन को मैं आनंदित कर दूंगा॥ 5॥

**विशेष**—यह पूर्ण सद्गुरु का समर्पित शिष्य के लिए साहस-प्रदान है। वस्तुतः सद्गुरु केवल उपदेश कर सकता है, शिष्य को स्वयं साधना से मन को जीतकर स्वरूपस्थिति में ठहरना होता है।

### शब्द-99

**मत कोउ गहो वह पद निरबान॥ टेक॥**

**घर के हित सब बैरी होइ हैं, सुनि गुनि बेद पुरान॥ 1॥**
**अलख नाम सोई से हित करु, राम नाम गलतान॥ 2॥**
**राँध परोसिन गारी दैहैं, लोग कहैं बौरान॥ 3॥**
**सद्गुरु साहिब मिले मसूका, आसिक ह्वै पलटू अलगान॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—निरबान= निर्वाण, प्रपंचशून्य मुक्ति । मसूका= माशूक़, प्रियतम। आसिक= आशिक़, प्रेमी, अनुरक्त।

**भावार्थ**—(ग्रंथकार व्यंग्य में कहते हैं)—कोई मोक्ष पद का रास्ता मत पकड़ो॥ टेक॥ परिवार के हितैषी लोग वेद-पुराण सुनकर और मनन कर तुम्हारे शत्रु हो जायेंगे। वे कहेंगे कि वेद-पुराण के सब ऋषि-मुनि गृहस्थ थे, तुम विरक्त होकर घर का नाश क्यों कर रहे हो?॥ 1॥ परंतु साधक! जिसको अदृश्य नाम से कहा जाता है, उस द्रष्टा आत्मा में ही मन जोड़ो। उसको रामनाम से भी याद किया जाता है, उस अंतर्द्रष्टा आत्मा में लीन रहो॥ 2॥ इससे आसपास के लोग तुमको गाली देंगे और लोग तुम्हें कहेंगे कि यह पागल हो गया है॥ 3॥ पलटू साहब कहते हैं कि मुझे जब प्रियतम सद्गुरु मिल गये तब उनके आत्मज्ञान के उपदेश से मैं उनमें अनुरक्त हो गया और सांसारिकता से अलग हो गया॥ 4॥

शब्द-100

**कौन भक्ति तोरी करौं राम मैं, कौन भक्ति तोरी करौं।**
**तुझ में महैं तुही है मुझ में, कौन ध्यान लै धरौं॥ 1॥**
**मरौं नहीं मारे काहू के, नाहि जराये जरौं।**
**कैसन पाप पुन्न है कैसन, सरग नरक नहिं डेरौं॥ 2॥**
**तीरथ बर्त ध्यान नहिं पूजा, बिना परिस्त्रम तरौं।**
**पलटू कहै सुनो भाइ साधो, संत चरण सिर धरौं॥ 3॥**

**शब्दार्थ**—डेरों= डरों।

**भावार्थ**—हे राम! मैं तुम्हारी कौन-सी भक्ति करूं? मैं तुम में हूं और तुम मुझमें हो, फिर किसका ख्याल करके ध्यान करूं?॥ 1॥ मैं किसी के मरने से मर नहीं सकता न जलाने से जल सकता हूं। अब पाप कैसा है और पुण्य कैसा है? अब स्वर्ग का प्रलोभन नहीं रहा और नरक का डर नहीं रहा॥ 2॥ न मैं तीर्थ करता हूं, न उपवास करता हूं, न पूजा करता हूं। मैं बिना परिश्रम मुक्त हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि हे भाई संतो! सुनो, मैंने अपना सिर संतों के चरणों में समर्पित कर दिया है॥ 3॥

शब्द-101

**मौनी मुख से बोल, मौन मनै मन रहु॥टेक॥**
**उनमुनि मुद्रा ध्यान लगावै, मन में उलटि समावै।**
**निरबिकार निरबैर जगत से, सो मौनी मोहिं भावै॥ 1॥**
**अजपा जाप जपै बिनु रसना, सुन्य में तुही अकेला।**
**मौनी मन को राखु निरंतर, तुहीं गुरू तुहिं चेला॥ 2॥**
**भूख लगे पर सैन बतावै, प्यास लगे पर पानी।**
**मन तरसत है बोलै कारन, कौन भक्ति तुम जानी॥ 3॥**
**पारब्रह्म पुरसोत्तम स्वामी, सब घट ब्यापक सोई।**
**पलटू कहै सुनो हो मौनी, मौन काहि से होई॥ 4॥**

**शब्दार्थ**—उनमनि= संसार से उदास। मुद्रा= विशेष ढंग से स्थिरता। व्यापक= शक्तिशाली।

**भावार्थ**—हे मौनी! मुख से बात कर, किन्तु मन को मौन कर॥ टेक॥ संसार से उदासीन होकर आसन जमा और मन को संकल्प-शून्य करके शांत

हो जा। जो साधक मन का निर्मल है और सबसे निर्वैर है, वह मौनी है। वह मुझे अच्छा लगता है ॥ 1 ॥ जीभ को हिलाये बिना आत्म-स्मरण रूपी अजपा जाप कर, जब मन शून्य हो गया तब तू अकेला रह जाता है। हे साधक! तू अपने मन को निरंतर मौन रख—संकल्प-शून्य रह, तब तू ही गुरु है और तू ही शिष्य है॥ 2 ॥ हे मौनी! भूख लगने पर तू संकेत से भोजन मांगता है और प्यास लगने पर पानी मांगता है। तुम्हारा मन बोलने के लिए लालायित है, परन्तु तूने जीभ को बांध रखा है। तुमने इसमें कौन-सी भक्ति समझ रखी है॥ 3 ॥ जो परब्रह्म परमात्मा स्वामी है, वह तो सबके दिल में शक्तिशाली रूप में बैठा है। पलटू साहेब कहते हैं कि हे मौनी! तुम किसके लिए मौन साधते हो?॥ 4 ॥

शब्द-102

**कोइ कोइ संत सुजान, जानै बस्तु आपनी॥टेक॥**
**जिन जाना तिन ही सुख पाया, और सबै हैरान॥ 1 ॥**
**संग्रह त्याग नहीं कुछ एकौ, नहीं मान अपमान॥ 2 ॥**
**सम्पति बिपति अस्तुती निन्दा, ना कुछ लाभ न हान॥ 3 ॥**
**पलटू दास खोजत सब मरिगा, परा रहै चौगान॥ 4 ॥**

**शब्दार्थ**—चौगान= मैदान।

**भावार्थ**—कोई-कोई बिरले संत अपनी आत्म-वस्तु को जानते हैं॥ टेक॥ जिसने अपने आत्मस्वरूप को समझा, वे स्थिर शांति पाये, शेष लोग बाहर खोजते फिरे और दुखी हुए॥ 1 ॥ जिसने अपने स्वरूप को समझकर उसमें स्थिति पायी, उसे न संग्रह का लोभ है और न त्याग का अनुभव है और न उसे सम्मान की भूख है और न अपमान को लेकर दुख है॥ 2 ॥ उसके लिए संपत्ति-विपत्ति, स्तुति-निन्दा तथा मान-अपमान व्यर्थ हो गये॥ 3 ॥ पलटू साहेब कहते हैं कि संसार के लोग सत्य खोजते-खोजते मर जाते हैं, परन्तु वह तो मैदान में खुला पड़ा है। वह है अपना आत्म-अस्तित्व॥ 4 ॥

शब्द-103

**गाफिल में क्या सोवता, सुन मुरख अनारी।**
**साहिब से दिल लाय ले, यह अरज हमारी॥ 1 ॥**
**जोरू बेटा कौन का, किस का है भाई।**
**मुलुक खजाना कौन का, कोउ संग न जाई॥ 2 ॥**

**हाथी घोड़ा तंबुवा, आवै केहि कामा।**
**फूलन सेज बिछावते, फिर गोर मुकामा॥ 3॥**
**आलम का पातसा हुआ, तूही कुल कुल्ला।**
**यह सब ख्वाब की लहर है, दरियाव का बुल्ला॥ 4॥**
**पाव घरी में कूच है, क्या देरी लावै।**
**पलटू की सत राम है, तोहि काल बुलावै॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—तंबुवा= तंबू। गोर= कब्र। आलम= संसार जनसमूह। पातसा= बादशाह, सम्राट। कुलकुल्ला= सर्वेसर्वा। दरियाव= समुद्र, नदी। सतराम= नमस्कार।

**भावार्थ**—हे भोला एवं मूर्ख! सुन, असावधान होकर माया-मोह में क्या सोता है? मेरी विनती है कि तू सद्गुरु स्वामी से मन लगा और अंततः आत्मा-स्वामी में डूब॥ 1॥ किसकी कौन पत्नी है, किसका कौन पुत्र है और किसका कौन भाई है? देश और खजाना किसके हैं? याद रख! कोई और कुछ तेरे साथ चलने वाला नहीं है॥ 2॥ हाथी, घोड़े, तंबू आदि अंत में किस काम आयेंगे? जो राजे-महाराजे फूलों से सजी शय्या पर सोते थे, वे एक दिन कब्र में अपना स्थान बना लिये॥ 3॥ हे मनुष्य! तू दुनिया का सम्राट हो गया और तू ही सर्वेसर्वा हो गया। परन्तु ध्यान रख, यह सब स्वप्न की तरंगें हैं और समुद्र के बुलबुले के समान क्षणिक हैं॥ 4॥ घड़ी की चौथाई में ही इस संसार से चल देना होगा। तू कल्याण-कार्य में क्या विलंब करता है? पलटू साहेब कहते हैं कि मैं तुम्हें नमस्कार करके सावधान करता हूं, तुम्हें काल बुला रहा है॥ 5॥

## शब्द-104

**मन बच कर्म भजो करतार। भजन बिना नहिं पैहो पार॥ 1॥**
**नहिं मोरे मात पिता सुत नार। माया मोह झूँठ घरबार॥ 2॥**
**ना हम केहु के कोउ न हमार। झूँठी प्रीति कर संसार॥ 3॥**
**नर्क सर्ग नहिं वार न पार। बिनु सतगुरु कौन निस्तार॥ 4॥**
**मन के जीते पलटू जीति। अजर जरै तो निबहै प्रीति॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—करतार= ज्ञान-विज्ञान का कर्ता आत्मा।

**भावार्थ**—मन, वचन और कर्म से ज्ञान-विज्ञान के कर्ता निज आत्मतत्त्व का चिंतन करो। आत्मबोध, आत्मशोध और आत्मस्थिति के बिना भवसागर से पार नहीं पाओगे॥ 1॥ मेरे शुद्ध आत्म अस्तित्व में न माता है, न पिता है,

न पुत्र है, न पत्नी है। घरबार का मोह भी व्यर्थ है, क्योंकि यह सब असत्य है॥ 2॥ न हम किसी के हैं और न कोई हमारा है। संसार के लोग असत्य वस्तुओं से ही मोह करते हैं॥ 3॥ आत्मबोध हो जाने पर उसको न नरक जाना है और न स्वर्ग। जब अपने आप में स्थिति हो गयी तब कहीं वार-पार करना नहीं बचा। परन्तु सद्गुरु के उपदेश से आत्मबोध पाये बिना जीव का कल्याण कौन कर सकता है?॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मन को पूर्णतया जीत लेने पर अपनी पूरी जीत है। जब अजर अमर-आत्म ज्योति का ज्ञान-दीप निरंतर जलने लगता है, तब साधना का प्रेम अखंड हो जाता है॥ 5॥

शब्द-105

**केहि बिधि रामनाम अनुरागै, दिल का भरम न भागै॥टेक॥**
**बिनु खाये चित चैन न होवै, खाये आलस लागै।**
**बूझि बिचारि दोऊ हम देखा, मन माया नहिं त्यागै॥ 1॥**
**रैयत एक पाँच ठकुराई, दस दिसि है मौआसा।**
**रजो तमो गुन खरे सिपाही, करहिं भवन में बासा॥ 2॥**
**पाप पुन्य मिलि करहिं दिवानी, नगरी अदल न होई।**
**दिवस चोर घर मूसन लागे, माल धनी गा सोई॥ 3॥**
**इतने बैरी रहैं जीव के, उलटि पवन जब जागै।**
**गुरु का ज्ञान बान लै पहुँचै, ब्रह्म अगिनि दै दागै॥ 4॥**
**काया घेरि अमल करु जोरा, धर्म द्वार मन माँगै।**
**पलटू दास मूल धै मारै, पुलकि पुलकि तब पागै॥ 5॥**

**शब्दार्थ**—रैयत= प्रजा। मौआसा= ठग। दिवानी= दीवानी, निर्णय। अदल= न्याय। अमल= अधिकार, कब्जा।

**भावार्थ**—राम नाम से प्रेम किस प्रकार से करे? मन का भ्रम नहीं जाता है॥ टेक॥ भोजन किये बिना मन को विश्राम नहीं मिलता। परन्तु भोजन कर लेने पर आलस्य लगता है। मैंने दोनों स्थितियों पर बूझ-विचार कर देख लिया। मन मोह-माया को छोड़ता नहीं है॥ 1॥ प्रजा तो एक जीव है और उसके ऊपर बलात शासन करने वाले पांच हैं—आंख, नाक, कान, जीभ और चाम। शरीर के सभी द्वारों पर मानसिक-विकार रूपी ठग बैठे हैं। रजो और तमोगुण प्रबल सिपाही हैं जो शरीर-भवन में बसे हुए हैं और नित्य जीव को सताते हैं॥ 2॥

पाप और पुण्य की वासनाएं मिलकर निर्णय देती हैं जो ठीक नहीं रहता है, इसलिए शरीर-नगर में न्याय का शासन नहीं रहता है। काम-क्रोधादि चोर विवेकप्रधान मानव-तन रूपी दिन में हृदय-घर में आत्मज्ञान-धन की चोरी करते हैं और मालधनी जीव मोह में सोया है॥ 3॥ जीव के इतने शत्रु शरीर में बसते हैं। जब जीव अपने मन-पवन को संसार से घुमाकर अपने आप में जग जाय और सद्गुरु के दिये हुए स्वरूपज्ञान का बाण लेकर मनोविकारों से लड़ने के लिए युद्ध में पहुंचे तब आत्मज्ञान की आग विवेक-बंदूक में भर कर दाग दे॥ 4॥ हे साधक! इस शरीर-गढ़ को फेरकर इस पर जबर्दस्त अधिकार जमा लो और मन को यही आज्ञा दो कि वह धर्म-द्वार एवं संयम से जीवन का व्यवहार करे। पलटू साहेब कहते हैं कि जब साधक अपने मौलिक ज्ञान आत्मबोध में स्थिर होकर मनोविकारों को मारता है, तब वह आत्मशांति में पुलकित होकर आत्मलीनता में परिपक्व होता है॥ 5॥

# साखी

## साखी : सद्गुरु-1

**संत संत सब बड़े हैं, पलटू कोऊ न छोट।**
**आतम-दरसी मिहीं है, और चाउर सब मोट॥ 1॥**
**पलटू ऐना संत हैं, सब देखै तेहि माहिं।**
**टेढ़ सोझ मुँह आपना, ऐना टेढ़ा नाहिं॥ 2॥**
**वहि देवा को पूजिये, सब देवन कै देव।**
**पलटू चाहै भक्ति जो, सतगुरु अपना सेव॥ 3॥**
**सतगुरु केरे सबद की, लागी मन में चोट।**
**पलटू रन में बचि गया, कादिर ही की ओट॥ 4॥**
**माहातम जानै नहीं, मेंड़की गंगा बीच।**
**पलटू सबद लगै नहीं, कतनौ रहै नगीच॥ 5॥**
**पलटू सतगुरु सबद की, तनिक न करै बिचार।**
**नाव मिली केवट नहीं, कैसे उतरै पार॥ 6॥**

**शब्दार्थ**—मिहीं= महीन, उत्तम। ऐना= दर्पण। कादिर= क़ादिर, समर्थ।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि सभी संत बड़े हैं, कोई छोटा नहीं है। जो आत्म-साक्षात्कार कर लिये हैं वे संत महीन चावल की तरह उत्तम हैं,

शेष लोग मोटे चावल की तरह हैं॥ 1॥ पलटू साहेब कहते हैं कि संत जन दर्पण की तरह हैं। सब लोग उनमें अपना स्वरूप देख सकते हैं। अपना मुंह सुंदर तथा कुरूप होता है। इसमें दर्पण का दोष नहीं है॥ 2॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जो सब देवताओं के ऊपर हैं उस सद्गुरु देव की पूजा करो। यदि तुम सच्ची आत्मभक्ति चाहते हो तो अपने सद्गुरु की सेवा करो॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि सद्गुरु के आत्मज्ञानपरक शब्दों की चोट मन में लग गयी, इसलिए समर्थ सद्गुरु का आधार लेकर मन के युद्ध में विजयी हो गया॥ 4॥ मेंढकी गंगा-जल में रहती है, परन्तु वह उसके महत्त्व को नहीं जानती। पलटू साहेब कहते हैं कि इसी प्रकार कितने अयोग्य शिष्य समर्थ सद्गुरु के अति निकट रहकर भी उनके ज्ञानोपदेश के प्रभाव से रहित रहते हैं॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे शिष्य सद्गुरु के शब्दों पर थोड़ा भी विचार नहीं करते। नाव तो मिल गयी है, परन्तु केवट नहीं है, तो नदी पार कैसे जा सकते हैं?॥ 6॥

## साखी : चेतावनी-2

**पलटू यहि संसार में, कोऊ नाहीं हीत।**
**सोऊ बैरी होत है, जाको दीजै प्रीत॥ 1॥**
**पलटू नर तन पाइ कै, मूरख भजै न राम।**
**कोऊ ना सँग जायगा, सुत दारा धन धाम॥ 2॥**
**बैद धनंतर मरि गया, पलटू अमर न कोय।**
**सुर नर मुनि जोगी जती, सबै काल बसि होय॥ 3॥**
**पलटू पल में कूच है, क्या लावो बड़ि देर।**
**अबकी बार जो चुकहू, फिर चौरासी फेर॥ 4॥**
**बजा नगारा कूच का, लदा न एकौ ऊँट।**
**पलट तलबी अस भई, तन भी गया है छूट॥ 5॥**
**जो दिन गया सो जान दे, मूरख अजहूँ चेत।**
**कहता पलटू दास है, करि लै हरि से हेत॥ 6॥**
**पलटू नर तन पाइ कै, भजै नहीं करतार।**
**जमपुर बाँधे जाहुगे, कहौं पुकार पुकार॥ 7॥**
**पलटू नर तन जातु है, सुन्दर सुभग सरीर।**
**सेवा कीजै साध की, भजि लीजै रघुबीर॥ 8॥**
**पलटू सिष्य जो कीजिये, लीजै बूझ बिचार।**
**बिन बूझे सिष करौगे, परिहै तुम पर भार॥ 9॥**

**दिना चारि का जीवना, का तुम करौ गुमान।**
**पलटू मिलिहैं खाक में, घोड़ा बाज निसान॥10॥**
**पलटू हरि जस गाइ ले, यही तुम्हारे साथ।**
**बहता पानी जातु है, धोउ सिताबी हाथ॥11॥**

**शब्दार्थ**—तलबी= बुलावा। गुमान= भ्रम, अहंकार। बाज=बाजा। निसान = निशान, ध्वजा, पताका, झंडा। सिताबी=शिताबी, शीघ्रता।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि इस संसार में कोई मेरा मित्र नहीं है। जिससे प्रेम किया जाता है, वह भी बैरी बन जाता है॥ 1॥ मनुष्य-शरीर पाकर भी मूर्ख राम-भजन नहीं करता। याद रखो, पुत्र, पत्नी, धन तथा घर कुछ भी जीव के साथ चलने वाला नहीं है॥ 2॥ धन्वंतरि वैद्य भी मर गये। कोई देहधारी अमर नहीं है। देवता, मनुष्य, मुनि, योगी, त्यागी आदि सब काल के अधीन हैं॥ 3॥ क्षण-पल में तो देह छोड़कर चल देना है। कल्याण-कार्य में क्यों अधिक विलम्ब कर रहे हो? यदि अबकी सब वासना छोड़कर मुक्त नहीं हुए तो पुनः चौरासी चक्र में घूमोगे॥ 4॥

कूच का नगारा बज गया, किन्तु एक ऊंट पर भी माल न लाद पाया—मौत का समय आ गया, किन्तु कल्याण का काम थोड़ा भी नहीं हुआ। मौत का ऐसा बुलावा आया कि देह भी छोड़कर जाना पड़ा॥ 5॥ जो दिन धोखे में बीत गये, उनको लेकर पछतावा मत कर। हे मूर्ख! आज भी मोह की नींद भंग कर और आत्माराम में मन लगा॥ 6॥ मैं पुकार-पुकार कर कहता हूं, कि उत्तम नर तन पाकर आत्मशोधन में नहीं लगा। यदि वासना का त्याग नहीं किया तो उनमें बंधकर पुनः संसार में भटकेगा॥ 7॥ यह मानव-शरीर भजन-साधन करने के लिए उत्तम है, अतएव इससे साधु की सेवा करो और रघुनाथ का भजन करो—आत्मा में मन लगाओ॥ 8॥

पलटू साहेब कहते हैं कि हे गुरुओ! अच्छी तरह समझ-बूझकर तथा बहुत दिन तक जांच-परखकर किसी को साधु-शिष्य बनाओ। बिना पूर्ण परख किये किसी को साधु-शिष्य बनाओगे तो तुम्हारे ऊपर बोझ लद जायेगा॥ 9॥ चार दिन का जीवन है, इसका अभिमान क्या करते हो? याद रखो, तुम्हारे घोड़े, बाजे-गाजे और ध्वजा-पताका एक दिन मिट्टी में मिल जायेंगे॥ 10॥ तुम सत्संग में आत्मज्ञान प्राप्त कर लो। आत्मबोध तथा आत्मशांति ही तुम्हारे साथ चलने वाला उत्तम पाथेय है। पानी बहता जा रहा है, जल्दी हाथ धो लो—मानव जीवन का उत्तम समय बीता जा रहा है, जल्दी अपना कल्याण कर लो॥ 11॥

## साखी : राम-प्रेम-3

**राम नाम जेहि मुखन तें, पलटू होय प्रकास।**
**तिनके पद बंदन करौं, वो साहिब मैं दास॥ 1॥**
**तन मन धन जेहि राम पर, कै दीन्हों बकसीस।**
**पलटू तिनके चरन पर, मैं अरपत हौं सीस॥ 2॥**
**राम नाम जेहि उच्चरै, तेहि मुख देहुँ कपूर।**
**पलटू तिनके नफर की, पनहीं का मैं धूर॥ 3॥**
**पलटू ऐसी प्रीति करु, ज्यों मजीठ को रंग।**
**टूक टूक कपड़ा उड़ै, रंग न छोड़ै संग॥ 4॥**
**आठ पहर जो छकि रहै, मस्त आपने हाल।**
**पलटू उनसे सब डेरै, वो साहिब के लाल॥ 5॥**
**करम जनेऊ तोड़ि कै, भरम किया छयकार।**
**जेहि गोबिंद गोबिंद मिले, थूक दिया संसार॥ 6॥**
**पलटू सीताराम से, हम तो किहे हैं प्रीति।**
**देखि देखि सब जरत हैं, कौन जक्त की रीति॥ 7॥**
**पलटू बाजी लाइहौं, दोऊ बिधि से राम।**
**जो मैं हारौं राम को, जो जीतौं तौ राम॥ 8॥**
**पलटू हमसे राम से, ऐसो भा ब्यौहार।**
**कोउ कितनौ चुगली करै, सुनै न बात हमार॥ 9॥**
**पलटू जस मैं राम का, वैसे राम हमार।**
**जाकी जैसी भावना, तासे तस ब्यौहार॥10॥**

**शब्दार्थ**—बकसीस=बख़्शिश, भेंट, समर्पण। नफर=नफ़र, नौकर। मजीठ=एक लता, जिसे उबालने पर लाल रंग निकलता है जो पक्का होता है। छयकार=नष्ट। गोबिन्द=गोविन्द साहेब, पलटू साहेब के गुरु। बाजी=बाज़ी, दावं, शर्त।

**भावार्थ**—पलटू साहब कहते हैं कि जिसके मुख से राम नाम निकलता है, मैं उसके चरणों की वंदना करता हूं। वह मेरा स्वामी है और मैं उसका दास हूं॥ 1॥ जिसने अपने तन, मन और धन राम को समर्पित कर दिये हैं, मैं उसके चरणों पर अपना सिर समर्पित करता हूं॥ 2॥ जिसके मुख से राम

नाम का उच्चारण होता है, मैं उसके मुख में कपूर देना चाहता हूं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं उसकी जूती की धूल हूं॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि राम से ऐसा अविचल प्रेम करना चाहिए जैसे मजीठ का पक्का रंग। कपड़ा फटकर टूक-टूक हो जाता है, परन्तु मजीठ का रंग कपड़े से नहीं उतरता॥ 4॥ जो अपनी आत्मलीनता की दशा में आठों पहर डूबे रहते हैं, उनका सब सम्मान करते हैं। वे सद्गुरु के सच्चे शिष्य हैं॥ 5॥

जिनको श्री गोविन्द साहेब जैसे सद्गुरु साहेब मिल गये हैं उन्होंने कर्मकांड का जनेऊ तोड़कर सारे भ्रम को नष्ट कर दिया है और संसार के भोगों को थूक दिया है और उस तरफ कभी देखता नहीं है॥ 6॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैंने सीताराम से प्रेम कर लिया है। लोग इस दशा को देख-देखकर जलते हैं। यह संसार की कैसी रीति है?॥ 7॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं राम से जुआ खेलूंगा और अपने को दावं पर लगा दूंगा। यदि मैं हार गया तो राम का हो गया और जीत गया तो राम मेरे हो गये॥ 8॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मेरा राम से ऐसा मधुर व्यवहार हो गया है कि कोई व्यक्ति मेरे लिए उनसे चुगुली करे, तो वे मेरी शिकायत नहीं सुन सकते॥ 9॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं जैसे राम का हूं, वैसे राम मेरे हैं। यह जगत प्रसिद्धि है कि जिससे जो जैसा व्यवहार करता है उससे वह वैसा व्यवहार करता है॥ 10॥

**विशेष**—पलटू साहेब का राम या सीताराम उनका अपना आत्म अस्तित्व ही है। उनका यह कथन द्वैत जैसा लगता है, परंतु उनका बोध द्वैत-रहित आत्मपरक है। यह उनकी पूरी वाणी से स्पष्ट है।

## साखी : आत्मविश्वास - 4

**मनसा बाचा कर्मना, जिनको है बिस्वास।**
**पलटू हरि पर रहत हैं, तिन्ह के पलट दास॥ 1॥**
**पलटू संसय छूटि गे, मिलिया पूरा यार।**
**मगन आपने ख्याल में, भाड़ पड़ै संसार॥ 2॥**
**ज्यों ज्यों रूठै जगत सब, मोर होय कल्यान।**
**पलटू बार न बाँकिहैं, जो सिर पर भगवान॥ 3॥**
**संत बचन जुग जुग अचल, जो आवै बिस्वास।**
**बिस्वास भये पर ना मिलै, तौ झूठा पलटू दास॥ 4॥**

**पलटू संत के बचन को, ख्याल करै ना कोइ।**
**टुक मन में निस्चै करै, होइ होइ पै होइ॥ 5॥**
**पलटू लिखा नसीब का, संत देत हैं फेर।**
**साच नहीं दिल आपना, तासे लागै देर॥ 6॥**

**शब्दार्थ** —टुक= थोड़ा। नसीब= भाग्य, प्रारब्ध।

**भावार्थ**—जो साधक मन, वचन, कर्म से आत्मविश्वास में पूर्ण है और सब समय आत्माराम में स्थित है, पलटू साहेब कहते हैं कि मैं उनका सेवक हूं॥ 1॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मन का संदेह मिट गया है। आत्मा ही परमात्मा है और वही मेरा प्रियतम है। अब सब समय अपने आत्मबोध में डूबा हूं। संसार के राग-द्वेष चूल्हे भाड़ में जायं॥ 2॥ मुझसे संसार के लोग जैसे-जैसे रूठते हैं, वैसे-वैसे मेरा कल्याण होता है। यदि मेरे सिर पर भगवान है—मन में आत्मबोध दृढ़ है तो मेरा बाल भी बांका नहीं होगा॥ 3॥ संतों द्वारा दिये हुए आत्मबोध पर यदि दृढ़ विश्वास आ जाये और आत्मविश्वास हो जाने पर यदि अविचल शांति न मिले तो पलटू दास झूठा है॥ 4॥ पलटू साहेब कहते हैं कि संतों के आत्मज्ञानपरक वचनों पर लोग ध्यान नहीं देते। यदि मनुष्य उन पर थोड़ा भी विश्वास करे तो यह बात पक्की है कि उसे सच्चा शांति-सुख मिलेगा॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि संत जन मनुष्य के भाग्य को बदल देते हैं—बंधन प्रवाह को मोक्ष की तरफ मोड़ देते हैं। अपने मन में आत्मबोध पर दृढ़ विश्वास न होने से शांति मिलने में विलंब लगता है॥ 6॥

## साखी : सूरमा – 5

**धुजा फरक्कै सुन्य में, अनहद गड़ा निसान।**
**पलटू जूझा खेत पर, लगा जिकर का बान॥ 1॥**
**लगा जिकर का बान है, फिकर भई छयकार।**
**पुरजे पुरजे उड़ि गया, पलटू जीति हमार॥ 2॥**
**नौबत बाजै ज्ञान की, सुन्य धुजा फहराय।**
**गगन निसाना मारिकै, पलटू जीते जाय॥ 3॥**
**बखतर पहिरे प्रेम का, घोड़ा है गुरु ज्ञान।**
**पलटू सुरति कमान लै, जीति चले मैदान॥ 4॥**

**दसो दिसा मुरचा किहा, बाती दिहा लगाय।**
**काया गढ़ में पैसि कै, पलटू लिहा छुड़ाय॥ 5॥**
**पलटू कफनी बाँधि कै, खींचौ सुरति कमान।**
**संत चढ़े मैदान पर, तरकस बाँधे ज्ञान॥ 6॥**
**सोई सिपाही मरद है, जग में पलटू दास।**
**मन मारै सिर गिरि पड़ै, तन की करै न आस॥ 7॥**
**सिर पर कफनी बाँधि कै, आसिक कबर खोदाव।**
**पलटू मेरे घर महैं, तब कोउ राखै पाँव॥ 8॥**

**शब्दार्थ**—धुजा= ध्वजा, पताका, झंडा। फरक्कै=लहराती है। अनहद =अनाहतनाद, सीमातीत। निसान= निशान, डंका, नगाड़ा। जिकर= जिक्र, चर्चा, स्मरण, आत्मस्मरण। फिकर= फिक्र, चिंता। छयकार= क्षयकार, नष्ट। नौबत= मांगलिक बाजा। निसाना= निशान, लक्ष्य। कमान= धनुष। बाती= बत्ती, पलीता। पैसि= घुसकर। आसिक= आशिक, प्रेमी, आत्मलीनता का अनुरागी। कबर= कब्र।

**भावार्थ**—मनोवृत्ति की पताका प्रपंचशून्य में लहराती है और अनंत कालातीत आत्मबोध का नगाड़ा बजता है। पलटू साहेब कहते हैं कि मुझे आत्मचिंतन का बाण लग गया और मैं दुनिया से मर गया॥ 1॥ आत्मचिंतन का बाण लगते ही सांसारिक चिंता नष्ट हो गयी। पलटू साहेब कहते हैं कि मेरे देहाभिमान के पुरजे-पुरजे उड़ गये और मेरी जीत हो गयी॥ 2॥ अब मेरे दरवाजे पर आत्मज्ञान का मांगलिक बाजा हर समय बज रहा है और संकल्प-शून्य की ध्वजा लहरा रही है। मन के आकाश में लक्ष्य बेधकर मैंने वासना को जीत लिया है॥ 3॥ इस युद्ध में मैंने प्रेम का कवच पहना, आत्मज्ञान के घोड़े पर बैठा और मनोवृत्ति रूपी धनुष लेकर मानस-युद्ध क्षेत्र को जीत लिया॥ 4॥

मैंने दसों दिशाओं में मोर्चाबंदी की और आत्मज्ञान का पलीता सुलगा दिया, और काया-गढ़ में घुसकर आत्मा को वासना-बंधनों से छुड़ा लिया॥ 5॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मृत्यु की कफनी शरीर में बांधकर मनोवृत्ति रूपी धनुष पर आत्मज्ञान का बाण खींचो। संत आत्मज्ञान का तरकस बांधकर मन के युद्ध-मैदान पर धावा बोल देते हैं॥ 6॥ पलटू साहेब कहते हैं कि संसार में वही वीर योद्धा है जो अपने मन को मार दे, अहंकार-सिर कटकर गिर पड़े और शरीर की आशा न करे॥ 7॥ पलटू साहेब कहते हैं

कि मेरे घर में तभी कोई प्रेमी पैर रखे जब अपने सिर पर मृत्यु की कफनी बांधकर अपने शरीर के लिए कब्र खोद ले॥ 8॥

**विशेष**—नाम-रूपात्मक देह का अहंकार पूर्ण विसर्जित होने पर ही अनंत आत्मिक संतोष मिलता है।

साखी : सच्चा साधक-6

**जैसे काठ में अगिन है, फूल में है ज्यों बास।**
**हरिजन में हरि रहत है, ऐसे पलटू दास॥ 1॥**
**मिंहदी में लाली रहै, दूध माँहिं घिव होय।**
**पलटू तैसे संत हैं, हरि बिन रहैं न कोय॥ 2॥**
**छोड़ै जग की आस को, काम क्रोध मिटि जाय।**
**पलटू ऐसे दास को, देखत लोग डेराय॥ 3॥**
**अस्तुति निन्दा कोउ करै, लगै न तेहि के साथ।**
**पलटू ऐसे दास को, सब कोइ नावै माथ॥ 4॥**
**आठ पहर लागी रहै, भजन तेल की धार।**
**पलटू एसे दास को, कोउ न पावै पार॥ 5॥**
**सरबरि कबहुँ न कीजिये, सबसे रहिये हार।**
**पलटू ऐसे दास को, डेरिये बारम्बार॥ 6॥**
**पलटू हरिजन मिलन को, चलि जइये इक धाप।**
**हरि जन आये घर महैं, तो आये हरि आप॥ 7॥**
**दुष्ट मित्र सब एक हैं, ज्यों कंचन त्यों काँच।**
**पलटू ऐसे दास को, सुपने लगै न आँच॥ 8॥**
**ना जीने की खुसी है, पलटू मुए न सोच।**
**न काहू से दुष्टता, ना काहू से रोच॥ 9॥**
**काम क्रोध जिनके नहीं, लगै न भूख पियास।**
**पलटू उनके दरस से, होत पाप को नास॥10॥**
**नरक सरग से जुदा है, नहीं साध आसाध।**
**ना जानौं मैं कौन हूँ, पलटू सहज समाध॥11॥**

**शब्दार्थ**—सरबरि= बराबरी, समानता। धाप= थोड़ी दूर, एक मील, जितना एक बार में दौड़ा जा सके।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि जैसे काष्ठ में आग रहती है और फूल में सुगंधी रहती है, वैसे ज्ञानीजन में परमात्मा रहता है॥ 1॥ जैसे मेंहदी

में लाली और दूध में घी रहता है, वैसे संत में परमात्मा रहता है। कोई प्राणी परमात्मा के बिना नहीं रहता है—आत्मा-परमात्मा एक बात है॥ 2॥ जगत की आशा कामना छोड़ देने से काम, क्रोधादि मनोविकार मर जाते हैं। ऐसे संत को देखकर लोग उनका आदर करते हैं॥ 3॥ किसी के द्वारा स्तुति-निन्दा पाकर जो उनसे प्रभावित नहीं होता, ऐसे ज्ञानीजन के सामने सब सिर झुकाते हैं॥ 4॥ तैल धारावत जो चौबीसों घंटे आत्मचिंतन और आत्मस्थिति में रहता है, ऐसे ज्ञानी की रहनी की अन्य लोग थाह नहीं पाते॥ 5॥

जो किसी की बराबरी नहीं करते हैं और सबसे हारकर रहते हैं, ऐसे ज्ञानी की मर्यादा करो॥ 6॥ संत से मिलने के लिए चल कर जाओ और यदि वे घर में आ गये हैं, तो समझ लो परमात्मा स्वयं आ गये॥ 7॥ जो शत्रु-मित्र में समता रखते हैं और कंचन-कांच को समान समझते हैं, ऐसे ज्ञानी को स्वप्न में भी दुख नहीं होता है॥ 8॥ न जीने में प्रसन्नता है और न मरने की चिंता है, न किसी से घृणा है और न किसी में मोह है॥ 9॥ जिनके मन में काम-क्रोध नहीं है और जिनको भोग-सम्मान की आशा-तृष्णा नहीं है, उनके दर्शन से मनोविकार नष्ट होता है॥ 10॥ सहज समाधि में लीन रहने वाले साधक के लिए न नरक है न स्वर्ग है, न अच्छा है और न बुरा है, वह तो यह भी नहीं जानता कि मैं कौन हूं।11॥

**विशेष**—संकल्प-शून्य दशा में जीव द्रष्टा नहीं रहता, अपितु चेतन मात्र रहता है। वहां 'मैं कौन हूं' नहीं सोचा जाता। वहां शांत मात्र है॥

## साखी : साधु-सत्संग-7

**बृच्छा बड़ पर स्वारथी, फरै और के काज।**
**भवसागर के तरन को, पलटू संत जहाज॥ 1॥**
**जिन देखा सो बावला, को अब कहै सँदेस।**
**दीन दुनी दोउ भूलिया, पलटू सो दुरबेस॥ 2॥**
**की तौ हरि चरचा महैं, की तो रहै इकन्त।**
**ऐसी रहनी जो रहै, पलटू सोई संत॥ 3॥**
**पलटू तीरथ को चला, बीचै मिलि गे संत।**
**एक मुक्ति के खोजते, मिलि गई मुक्ति अनंत॥ 4॥**
**साधु बचन साचा सदा, जो दिल साचा होय।**
**पलटू गाँठि में बाँधिये, खाली परै न कोय॥ 5॥**
**काम क्रोध तो है नहीं, नहीं लोभ नहिं मोह।**
**पलटू जो है सोई है, नहीं हेत नहिं द्रोह॥ 6॥**

**संगति ऐसी कीजिये, जहवाँ उपजै ज्ञान।**
**पलटू तहाँ न बैठिये, घर की होय जियान॥ 7॥**
**सतसंगति में जाइ कै, मन को कीजै सुद्ध।**
**पलटू उहाँ न जाइये, जहवाँ उपजि कुबुद्ध॥ 8॥**

**शब्दार्थ**—दुरबेस= दरवेश, फकीर, संत। हेत= मित्रता, मोह। द्रोह= वैर। जियान= हानि।

**भावार्थ**—वृक्ष बड़े परोपकारी होते हैं। वे अन्य के लिए फलते हैं। इसी प्रकार संतजन लोगों को भवसागर से तारने के लिए जहाज होते हैं॥ 1॥ जिसने आत्मसाक्षात्कार कर लिया वह अपने में ही मस्त होता है। अब उस स्थिति का उपदेश कौन करे? पलटू साहेब कहते हैं कि जो आत्मलीनता में मग्न होकर साम्प्रदायिकता और दुनियादारी दोनों को चित्त से उतार देता है, वह सच्चा संत है॥ 2॥ जो या तो आत्मज्ञान की चर्चा में रहता है या एकांत आत्मलीनता में; जो इस प्रकार की रहनी में रहता है, वह संत है॥ 3॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं तीर्थों में चला, इतने में संत मिल गये। मैं एक मुक्ति खोज रहा था, परन्तु संत मिलने पर अनंत मुक्ति मिल गयी॥ 4॥ संत के उपदेश सदैव सच्चे होते हैं, यदि अपना दिल सच्चा हो और उनके उपदेशों को अपने हृदय में बसा ले, तो शांति मिलने में संदेह नहीं है॥ 5॥ संतों में काम-क्रोध तो होते नहीं हैं। उनमें लोभ-मोह भी नहीं होते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि संत जो अपना आत्म-अस्तित्व है उसी में रहते हैं। वे न किसी से मोह करते हैं और न वैर करते हैं॥ 6॥ ऐसी संगति करो जहां व्यवहार तथा अध्यात्म का ज्ञान उत्पन्न हो। सावधान! वहां न बैठना जहां जीवन में रहे हुए सद्‌गुण भी नष्ट होने लगे॥ 7॥ सत्संग में जाकर अध्यात्म ज्ञान का लाभ लो और मन को शुद्ध करो। किन्तु वहां न जाना जहां कुबुद्धि पैदा हो॥ 8॥

## साखी : उपदेश-8

**पलटू गुनना छोड़ि दे, चहै जो आतम सुक्ख।**
**संसय सोइ संसार है, जरा मरन को दुक्ख॥ 1॥**
**तरकस बाँधि तीन ठौ, पलटू हरि के लाग।**
**इन तीनहुँ को नाम है, भक्ति ज्ञान वैराग्य॥ 2॥**
**भक्ति ज्ञान वैराग्य से, तीर निकारा तीन।**
**पलटू इनको मारिये, इक दुनिया इक दीन॥ 3॥**

सुनि लो पलटू भेद यह, हँसि बोले भगवान।
दुख के भीतर मुक्ति है, सुख में नरक निदान॥ 4॥
मन से माया त्यागि दे, चरनन लागी आय।
पलटू चेरी संत की, अंत कहाँ को जाय॥ 5॥
पंडित ज्ञानी चातुरा, इनसे खेलौ दूर।
एक साच हिरदे बसै, पलटू मिले जरूर॥ 6॥
मरते मरते सब मरै, मरै न जाना कोय।
पलटू जो जियतै मरै, सहज परायन होय॥ 7॥
सबसे नीचा होइ रहु, तजि बिबाद को तीर।
पलटू ऐसे दास का, कोऊ न दामनगीर॥ 8॥
पलटू का घर अगम है, कोऊ न पावै पार।
जेकरे बड़ी पियास है, सिर को धरै उतार॥ 9॥
बिन खोजै से ना मिलै, लाख करै जो कोय।
पलटू दूध से दही भा, मथिबे से घिव होय॥10॥
गारी आई एक से, पलटे भई अनेक।
जो पलटू पलटै नहीं, रहै एक की एक॥11॥
जल पषान के पूजते, सरा न एकौ काम।
पलटू तन करु देहरा, मन करु सालिगराम॥12॥
पलटू नेरे साच के, झूठे से है दूर।
दिल में आवै साच जो, साहिब हाल हजूर॥13॥
पलटू यह साची कहै, अपने मन को फेर।
तुझे पराई क्या परी, अपनी ओर निबेर॥14॥
कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर।
समय पाय तरवर फरै, केतिक सींचो नीर॥ 15॥
बृच्छा फरै न आप को, नदी न अँचवै नीर।
पर स्वारथ के कारने, संतन धरैं शरीर॥16॥
ज्ञान देय मूरख कँहै, पलटू करै बिबाद।
बाँदर को आदी दिया, कछु ना कहै सवाद॥17॥
मन हस्ती मन लोमड़ी, मनै काग मन सेर।
पलटू दास साची कहै, मन के इतने फेर॥18॥

**शब्दार्थ**—परायन= पार। दामनगीर= पल्ला पकड़ने वाला, बांधने वाला।

**भावार्थ**—पलटू साहेब कहते हैं कि यदि तुम आत्मशांति का सुख चाहते हो तो मन के संकल्प-विकल्प छोड़ दो। आत्मा से भिन्न कुछ मानकर उसमें डूबा रहना ही संसार-सागर में बहना है और यही जरा-मरण का दुख पैदा करता है॥ 1॥ आत्मज्ञान में स्थित होने के लिए तीन तरकस बांधो, जिनके नाम हैं भक्ति, ज्ञान और वैराग्य॥ 2॥ इन तरकसों से तीर निकालकर दुनिया और दीन के प्रपंच को मार दो॥ 3॥ भगवान हंसकर बोले ऐ पलटू! ध्यान देकर सुनो, विषयों में दुख समझने से मुक्ति मिलेगी और उनमें सुख मानने से तो अंततः नरक है॥ 4॥ मन से माया को त्याग दो, फिर वह तुम्हारे चरणों में लगेगी। माया तो संतों की सेविका है। अंततः वह कहां जायगी॥ 5॥ हे साधक! पंडित, ज्ञानी, चतुर-चालाक लोगों से दूर रहकर साधना करो। यदि दिल में केवल एक सच्चाई बस जाय, तो अवश्य शांति मिल जायगी॥ 6॥

मरते-मरते तो सब मरते हैं, किन्तु सही ढंग से मरना नहीं जानते हैं। यदि मनुष्य शरीर में रहते-रहते देहाभिमान को सर्वथा त्याग दे, तो सहज भवसागर से पार हो जाय॥ 7॥ हे साधक! वाद-विवाद की जगह से हटकर सबसे नीचा होकर रहो। ऐसे साधक को कोई बांध नहीं सकता॥ 8॥ पलटू साहेब कहते हैं कि आत्मस्थिति की दशा लौकिक चमक-दमक से परे है॥ लौकिक जोर से उस दशा में नहीं जाया जा सकता। जिसके मन में परमशांति की पिपासा होती है, वह विनम्र होकर उस दशा में पहुंचता है॥ 9॥ बिना आत्मानुसंधान किये परम शांति नहीं मिलती है, चाहे कोई बाहरी लाख उपाय करे। दूध से दही जमता है। फिर उसको मथने से घी निकलता है॥ 10॥ किसी ने आपको गाली दी, वह एक है। यदि आपने भी पलटकर गाली दी तो वह अनेक हो गयी। यदि गाली देने वाले को गाली न दी जाय तो उसकी गाली अकेली रहकर मर जायेगी॥ 11॥ पानी-पत्थर की पूजा करते-करते कल्याण का एक काम भी न बना। अतएव शरीर को मंदिर तथा मन को सालग्राम बनाकर मन की पूजा करो—मन को शुद्ध करो॥ 12॥

पलटू साहेब कहते हैं कि कल्याण सत्य के निकट है और झूठ से बहुत दूर है। यदि हृदय में सच्चा आत्मबोध हो जाय, तो परमात्मा स्वयं प्रत्यक्ष आत्मा है॥ 13॥ पलटू साहेब कहते हैं कि मैं यह सच्ची बात कहता हूं कि दूसरे से उलझना अपने मन का चक्कर है। तुम्हें दूसरे से क्या प्रयोजन! तुम अपने मन को शुद्ध करो॥ 14॥ सब काम धैर्य धारण करने से अपने समय से होता है। तुम धैर्य छोड़कर क्यों अशांत होते हो? चाहे जितना पानी से सींचो, परन्तु पेड़ तो अपने समय पर फल देंगे॥ 15॥ पेड़ अपने लिए नहीं

फलते हैं और नदी अपने पीने के लिए नहीं बहती है, अपितु ये अन्य के लिए फलते और बहते हैं। इसी प्रकार संतों की आध्यात्मिक स्थिति और शिक्षा मानव मात्र के लिए होती है॥ 16 ॥ यदि मूर्ख मनुष्य को ज्ञानोपदेश करोगे, तो वह विवाद करेगा। यदि बंदर को गुणकारी अदरक दिया जाय, तो वह उसका स्वाद क्या समझ सकेगा॥ 17 ॥ मन हाथी, लोमड़ी, कौआ, और शेर है। यह बात सच है कि मन के बहुत रूप हैं॥ 18 ॥

## साखी : मान-बड़ाई-9

**बड़े बड़ाई में भुले, छोटे हैं सिरदार।**
**पलटू मीठा कूप जल, समुँद पड़ा है खार॥ 1॥**
**सबसे बड़ा समुद्र है, पानी ह्वैगा खारि।**
**पलटू खारि जानि कै, लीन्हों रतन निकारि॥ 2॥**
**पलटू यह मन अधम है, चोरौ से बड़ चोर।**
**गुन तजि औगुन गहतु है, तातें बड़ा कठोर॥ 3॥**
**कहत कहत हम मरि गये, पलटू बारम्बार।**
**जग मूरख मानै नहीं, पड़ै आप से भाड़॥ 4॥**

**शब्दार्थ**— सिरदार= सरदार, श्रेष्ठ, अगुआ।

**भावार्थ**—बड़े कहलाने वाले मान-बड़ाई में अपनी सत्यता को भूल गये और छोटे लोग विनम्रता से सेवक होकर आगे और समूह के रक्षक हो गये। छोटे जलाशय कुएं का जल मीठा होता है किंतु बड़े जलाशय समुद्र का जल खारा होता है॥ 1 ॥ समुद्र सबसे बड़ा जलाशय है, किन्तु उसका पानी खारा होता है। परन्तु समझदार गुणग्राही लोग उससे रत्न निकाल लेते हैं॥ 2 ॥ मन महा नीच है, चोरों से भी बड़ा चोर है। यह सर्वत्र सद्गुण छोड़कर दुर्गुण ग्रहण करता है इसलिए यह कटु है॥ 3 ॥ पलटू साहेब कहते हैं कि हम जैसे असंख्य लोग बारंबार उपदेश देते मर गये, परंतु संसार के मूर्ख लोग उपदेश नहीं मानते। लोग स्वयं दुष्ट आचरण की भाड़भट्ठी में कूदकर जलते हैं॥ 4 ॥

## साखी : दुष्ट और कपटी-10

**पलटू मैं रोवन लगा, जरौ जगत की रीति।**
**जहँ देखो तहँ कपट है, कासे कीजै प्रीति॥ 1॥**
**मुँह मीठो भीतर कपट, तहाँ न मेरो बास।**
**काहू से दिल ना मिलै, तौ पलटू फिरै उदास॥ 2॥**

**पलटू पाँव न दीजिये, खोटा यह संसार।**
**हीताई कर मिलत है, पेट महैं तरवार॥ 3॥**
**पलटू पाँव न दीजिये, यह जग बुरी बलाय।**
**लिहे कतरनी काँख में, करै मित्रता धाय॥ 4॥**
**साहिब के दरबार में, क्या झूठे का काम।**
**पलटू दोनों ना मिलै, कामी और अकाम॥ 5॥**
**हिरदे में तो कुटिल है, बोलै बचन रसाल।**
**पलटू वह केहि काम का, ज्यों नारुन फल लाल॥ 6॥**
**अधम अधमई ना तजै, हरदी तजै न रंग।**
**कहता पलटू दास है, कोटि करै सतसंग॥ 7॥**
**सतगुरु बपुरा क्या करै, चेला करै न होस।**
**पलटू भीजै मोम ना, जल को दीजै दोस॥ 8॥**
**ज्ञान धनुष सतगुरु लिहे, सबद चलावै बान।**
**पलटू तिल भर ना धसै, जियतै भया पषान॥ 9॥**

**शब्दार्थ**—हिताई= मित्रता। बलाय= बला, विपत्ति, व्याधि।

**भावार्थ**—मैं जगत के व्यवहार से झुलसकर रोने लगा। जहां देखो, कपट का व्यवहार है। किससे प्रेम किया जाय?॥ 1॥ जहां पर मुख से तो मीठी बात की जाती है, किन्तु मन में कपट रखा जाता है, वहां मैं नहीं रहता हूं। किसी से मन नहीं मिलता, इससे मैं उदास होकर घूमता हूं॥ 2॥ यह संसार खोटा है, इसलिए ऐसे कपट भरे व्यवहार वाले के पास मत जाइए। लोग ऊपर से मित्रता दिखाते हुए मिलते हैं, किन्तु मन में कसैला भाव की तलवार रखते हैं॥ 3॥ यह संसार भारी विपत्ति है, इसलिए उधर नहीं जाना चाहिए। लोग दौड़कर मित्रता दिखाते हैं, किन्तु बगल में कपट की कतरनी लिये रहते हैं॥ 4॥

सद्गुरु के दरबार में झूठे लोगों से क्या वास्ता? पलटू साहेब कहते हैं कि सकामी और निष्कामी का मेल नहीं खा सकता॥ 5॥ मन में तो कपट-कतरनी है, ऊपर से मीठी बातें करते हैं। नारुन का फल किस काम का जो ऊपर से तो लाल-लाल सुहावना है, किन्तु भीतर से कड़वा॥ 6॥ जैसे हलदी अपना रंग नहीं त्यागती, वैसे निकृष्ट कर्म करने वाले अपना नीच कर्म नहीं छोड़ते। करोड़ों सत्संग मिलने पर भी ऐसे लोग नहीं सुधरते॥ 7॥ सद्गुरु बेचारा क्या करे यदि शिष्य सावधान नहीं होता। यदि मोम नहीं भीगता तो इसमें पानी का दोष नहीं है॥ 8॥ सद्गुरु तो आत्मज्ञान का धन्वा-बाण लेकर

चला रहे हैं, किन्तु शिष्य का हृदय जीवित ही पत्थर बना है, इसलिए ज्ञान का बाण रंच मात्र भी नहीं धंसता॥ 9॥

## साखी : मिश्रित उपदेश-11

**हिंदू पूजे देवखरा, मुसलमान महजीद।**
**पलटू पूजै बोलता, जो खाय दीद बरदीद॥ 1॥**
**पलटू अपने भेद से, कारन पैदा होय।**
**जरि कै बन ह्वैगे भसम, आगि न लावै कोय॥ 2॥**
**चारि बरन को मेटि कै, भक्ति चलाया मूल।**
**गुरु गोबिंद के बाग में, पलटू फूला फूल॥ 3॥**
**हद अनहद दोऊ गये, निरभय पद है गाढ़।**
**निरभय पद के बीच में, पलटू देखा ठाढ़॥ 4॥**
**सुख में सेवा गुरू की, करते हैं सब कोय।**
**पलटू सेवै बिपति में, गुरु-भगता है सोय॥ 5॥**
**पलटू मैं रोवन लगा, देखि जगत की रीति।**
**नजर छिपावै संत से, बिस्वा से है प्रीति॥ 6॥**
**कमर बाँधि खोजन चले, पलटू फिरै उदेस।**
**षट दरसन सब पचि मुए, कोऊ न कहा सँदेस॥ 7॥**
**सिष्य सिष्य सबहीं कहै, सिष्य भया न कोय।**
**पलटू गुरु की बस्तु को, सीखै सिष तब होय॥ 8॥**
**इन्द्री जीति कारज करै, जगत सराहै भोग।**
**जैसे बर्षा सिखर पर, नहीं भींजबे जोग॥ 9॥**
**खोजत गठरी लाल की, नहीं गाँठि में दाम।**
**लोक लाज तोड़ै नहीं, पलटू चाहै राम॥10॥**
**मरने वाला मरि गया, रोवै सो मरि जाय।**
**समझावै सो भी मरै, पलटू को पछिताय॥11॥**
**मुआ है मरि जायेगा, मुए के बाजी ढोल।**
**सुपन सनेही जग भय, सहदानी रहिगे बोल॥12॥**

**शब्दार्थ**—देवखरा= देवस्थान, जड़पिंडी। दीद बरदीद= सामने। उदेस= विदेश, अनात्म। कमान= धनुष।

**भावार्थ**—हिन्दू मिट्टी-पत्थर के देवता पूजते हैं। मुसलमान मसजिद में जाकर शून्य में पुकारते हैं। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं प्राणियों की पूजा

करता हूं, जो सामने खाते हैं॥ 1॥ पलटू साहेब कहते हैं कि जब अपने संघ में परस्पर राग-द्वेष होकर भेदभाव पैदा होता है, तब वैसे ही संघ के विनाश का कारण उपस्थित होता है जैसे जंगल में काष्ठ की रगड़ से आग पैदा होकर जंगल जल जाता है। उसमें बाहर से आग लगाने की आवश्यकता नहीं होती॥ 2॥ सद्गुरु गोविन्द साहेब ने चारों वर्णों की मान्यता मिटाकर तथा मानव मात्र में समता का बरताव कर सच्ची भक्ति चलाई। गुरु गोविन्द साहेब के साधु रूपी उद्यान में पलटू भी एक फूल खिल गया॥ 3॥ हद गृहस्थी-मर्यादा और अनहद साधु-वेष की मर्यादा से ऊपर आत्मलीनता की दशा निर्भय और अविचल पद है। पलटू साहेब कहते हैं कि मैं स्वरूपस्थिति की निर्भय दशा में स्थिर होकर वास्तविकता को देखता हूं॥ 4॥ सब लोग लाभ-सुख की दशा में संत-सेवा करते हैं, जो विपत्तिकाल एवं घाटे की दशा में सेवा करता है, वह सच्चा गुरु भक्त है॥ 5॥ जगत का व्यवहार देखकर मुझे रुलाई आती है। लोग संतों से दूर रहते हैं और वेश्या से प्रेम करते हैं॥ 6॥

पलटू साहेब कहते हैं कि लोग कमर बांधकर देश-विदेश में परमात्मा को खोजने चलते हैं। योगी, जंगम, सेवड़ा, संन्यासी, दरवेश और ब्राह्मण ये छह दर्शन के लोग उसे खोजते-खोजते हैरान हो गये, किन्तु कोई बाहरी परमात्मा का संदेश नहीं बता पाया कि वह कहां है॥ 7॥ सब लोग शिष्य-शिष्य कहते हैं, किन्तु इनमें कोई शिष्य नहीं होता। सद्गुरु की उपदेश-वस्तु आत्मस्वरूप को जो समझे, वह शिष्य होता है॥ 8॥ इन्द्रियजित होने के लिए कमर कसा और कहते हैं कि मैं साधना करता हूं, किन्तु जगत भोगों की प्रशंसा करते हैं, तो उनकी दशा वैसे होती है जैसे पर्वत-शिखर पर वर्षा हुई, किन्तु वह थोड़ा भी नरम न हुआ॥ 9॥ खोजते हैं रत्नों की गठरी, किन्तु उसे खरीदने के लिए पास में एक कौड़ी भी नहीं है। लोग लोक-लज्जा नहीं छोड़ते हैं और राम में रमना चाहते हैं॥ 10॥ मरने वाला मर गया। जो उसके लिए रोता है, वह भी मर जाता है। जो रोनेवालों को समझाता है वह भी मर जाता है। पलटू साहेब कहते हैं कि ऐसे मृत्युमय संसार को लेकर कौन ज्ञानी शोक करेगा?॥ 11॥ पहले के लोग मरे हैं, जो आज के लोग हैं ये भी मर जायेंगे। संसार में तो मृत्यु का ही ढोल बज रहा है। लोग संसार रूपी स्वप्न में मोह करते हैं। मर जाने पर पीछे उनकी कुछ चर्चा ही उनकी पहचान रहती है॥ 12॥